बियाणी जी मित्रों की नजर में

ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं श्रृणुयाम
शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः
स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ।।
यजुर्वेद ३६।३४

बियाणीजी : मित्रों की नज़र में

सम्पादक-मण्डल

डॉ. रामचंद्र गुप्त

सुमन वर्मा

सतीशचन्द्र जैन

बियाणी-ग्रन्थ-प्रकाशन समिति, इन्दौर

ग्रन्थ-प्रकाशन समिति के सभासद

श्री शिवरतन मोहता
श्री लक्ष्मणसिंह चौहान
श्री भँवरसिंह भंडारी
श्री जोहरीलाल झांझरिया
श्री रामनारायण शास्त्री
श्री बाबूलाल पाटोदी
श्री हरिकृष्ण मुछाल
श्री चंदनसिंह भरकतिया
डॉ. उपाकान्त ढोलकिया
चौधरी फैज़उल्लाखाँ
श्री हुकुमचन्द पाटनी
श्री रामेश्वरदयाल तोतला
श्री हीरालाल दीक्षित
श्री कल्याणमल बापना
श्री बापूलाल जोशी
श्री सीताराम अजमेरा
श्री बाबूलाल बाहेती
श्री फकीरचन्द जैन
श्री रमनलाल बावरी
श्री प्रह्लादसिंह नवलखा
श्री मानकचन्द सेठी
श्री शांतिलाल धाकड़
श्री देशमुख एडव्होकेट
श्री सरोजकुमार जैन
डॉ. रामचंद्र गुप्त
श्री सत्यपाल आनंद
श्री चंदनमल लुंकड
श्री मुकुन्द कुलकर्णी
श्री ब्रजमोहन गोयनका
श्री लक्ष्मण रंगशाही
श्री बाबूलाल मालू
श्री जगन्नाथ गौड़

श्री अर्जुन जोशी
श्री रामनारायण लड्ढा
श्री कुसुमकांत जैन
श्री रामनिवास साबू
श्री सुमन वर्मा
श्री सतीशचन्द्र जैन
श्री मोहनलाल केला
श्री सत्यनारायण माहेश्वरी
श्री बाबूलाल गुप्ता

समिति के पदाधिकारी

अध्यक्ष

श्री शिवरतन मोहता

उपाध्यक्ष

श्री लक्ष्मणसिंह चौहान
श्री भँवरसिंह भंडारी
श्री चंदनसिंह भरकतिया
श्री जौहरीलाल झांझरिया
श्री रामनारायण शास्त्री
श्री बाबूलाल पाटोदी

मन्त्री

श्री बाबूलाल गुप्ता

संयुक्त मन्त्री

श्री कुसुमकान्त जैन
श्री मुकुन्द कुलकर्णी

कोषाध्यक्ष

श्री हरिकृष्ण मुछाल

सम्पादक मण्डल

डॉ. रामचंद्र गुप्त
श्री सुमन वर्मा
श्री सतीशचन्द्र जैन

यह प्रयास क्यों ?

प्रस्तुत ग्रंथ 'बियाणीजी मित्रों की नज़र में' को देखकर किसी के भी मस्तिष्क में यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठ सकता है कि आखिर इस ग्रंथ को लिखने तथा ग्रंथ को इन्दौर के नागरिकों द्वारा प्रकाशित कराने का औचित्य क्या है, जबकि श्री बियाणीजी का कार्यक्षेत्र विदर्भ एवं बरार रहा है !

प्रथम प्रश्न के उत्तर में हमारा विनम्र निवेदन है कि राष्ट्रीय जीवन में जितना महत्व उदात्त विचारों एवं सृजनात्मक कृत्यों का है, उतना ही सबल प्रेरणा का। यदि प्रभावशाली विचार तथा निर्माणकारी कृत्य राष्ट्र के वर्तमान जीवन का निर्माण करते हैं, तो स्फूर्तिदायक प्रेरणा राष्ट्र के भावी जीवन का। इस दृष्टि से किसी भी बड़े आदमी के विचारों तथा कार्यों का प्रभाव उसके समय के समाज पर तो आवश्यक रूप से पड़ता ही है तथा उसका व्यक्तित्व उसके जीवन-काल में तो प्रभावशील रहता ही है, पर उससे भी अधिक उसका महत्व भावी पीढ़ी के लिए होता है। उसके संकलित विचार भावी समाज अथवा राष्ट्र के लिए प्रेरणा के स्रोत रूप में कार्य करते हैं। प्रायः देखा जाता है कि विशेष व्यक्तियों का सम्मान उनके जीवन-काल में उतना नहीं हो पाता जितना कि होना चाहिए। इसका कारण यह है कि ऐसे महापुरुषों के विचारों की गति उनके समय के विचारों की गति से कहीं आगे होती है, अतः उनके विचारों को उनके समय का समाज समझने में असमर्थ होता है। सुक़रात, ईसा-मसीह, गैलीलियो, महात्मा गाँधी आदि के विचार उनके समय से बहुत आगे थे। ऐसे महापुरुषों के विचार जितना भावी पीढ़ी का मार्गदर्शन करने में समर्थ होते हैं, उतने उनके समय की पीढ़ी का मार्गदर्शन नहीं कर पाते। यही कारण है कि महापुरुषों के विचारों तथा उनके जीवन के क्रिया-कलापों को संकलित करने तथा उनका विश्लेषण करने की आवश्यकता रहती है।

श्री ब्रजलालजी बियाणी का जीवन भी राष्ट्रीय महत्व का है। वे अपने राजनैतिक जीवन में सफल हुए अथवा असफल इसका बहुत अधिक महत्व नहीं है तथा इसका विस्मरण भी किया जा सकता है, परन्तु उन्होंने अपने विचारों से

जो समाज और राष्ट्र का मार्गदर्शन किया है तथा उसमें स्फूर्ति भरी है, वह सदैव अविस्मरणीय रहेगा। श्री बियाणीजी विचारों के क्षेत्र में क्रांति के पोषक रहे हैं, क्योंकि उनका विश्वास है कि बिना विचारों में क्रांति के मनुष्य को सत्य कर्म और सत्य मार्ग की ओर प्रेरित नहीं किया जा सकता। वे जिस जगह भी रहे तथा उन्होंने जिस वर्ग में भी कार्य किया, मानव जीवन को उन्नतिशील, विवेकपूर्ण तथा कर्मनिष्ठ बनाने का प्रयास किया। उनका जीवन के प्रति दृष्टि-कोण सदैव समन्वयवादी रहा है तथा वे निरन्तर विभिन्नता में एकता खोजते रहे हैं। वे अपने जीवन में एक कर्मठ व्यक्ति रहे हैं तथा उनकी प्रतिभा बहुमुखी है। भारतीय समाज को उन्होंने विचारों तथा कृति के रूप में जो कुछ भी दिया, उसके प्रति वह उनका सदैव आभारी रहेगा। बियाणीजी की इन विशेषताओं को दृष्टि में रखते हुए, उनके मित्र-परिवार ने यह निश्चय किया है कि उनके ७१ वें जन्म-दिवस पर, जो ६ दिसम्बर, १९६५ को पड़ता है, उनके जीवन के विभिन्न पक्षों का अवलोकन करते हुए एक ग्रंथ उन्हें भेंट किया जाए। ऐसा उनकी प्रशंसा की दृष्टि से नहीं किया जा रहा है, किन्तु ऐसा करना इसलिए आवश्यक है कि जिससे भावी पीढ़ी उनके कर्मठ जीवन से प्रेरणा ग्रहण कर सके। अतः इस ग्रंथ को प्रकाशित करने का प्रयास किया गया है।

दूसरे प्रश्न के उत्तर में हमारा कहना है कि यद्यपि उनके राजनैतिक जीवन का कार्यक्षेत्र विशेष रूप से विदर्भ एवं बरार रहा है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि इन्दौर का उनके जीवन से कोई सम्बन्ध ही नहीं है। आपके कुटुम्बी जन लगभग २० वर्ष तक इन्दौर के निकट के स्थानों कालापीपल तथा शुजालपुर आदि में रहे हैं तथा आप अनेकों बार अपने विद्यार्थी मित्रों के पास आकर कई-कई दिनों तक इन्दौर में रहते रहे। प्रजामण्डल के कार्यों के हेतु भी आप अनेकों बार मालवा में आते-जाते रहते थे। इन्दौर की रम्य-भूमि से सदैव आपका लगाव रहा है। आपके कई सगे-सम्बन्धी भी इन्दौर में स्थायी रूप से रहते हैं।

आप सन् १९६२ में स्वास्थ्य की दृष्टि से इन्दौर में निवास करने आए। तबसे आपने अब तक इन्दौर के सामाजिक, शैक्षणिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन में सक्रिय भाग लिया है। राजनैतिक क्षेत्र में भी आपने व्यापक कार्य किया है। प्रान्तीय कांग्रेस की जनसम्पर्क समिति के अध्यक्ष के नाते आपने तीन बड़े-बड़े कैम्पों (भोपाल, इन्दौर और जबलपुर) का आयोजन किया। इस प्रकार वर्तमान मध्यप्रदेश से आपका राजनैतिक सम्पर्क स्थापित हो गया है। सन् १९६३ से आपने 'विश्व-विलोक' नामक एक अत्यन्त उच्चकोटि की विचार-प्रधान पाक्षिक

पत्रिका का प्रकाशन एवं संपादन भी किया है। साथ ही आपने एक विचार-केन्द्र की भी स्थापना की है, जिसका उद्देश्य सभी सामयिक विषयों पर स्वतन्त्रता-पूर्वक विचारों का आदान-प्रदान करना है। इस प्रकार थोड़े ही समय में बियाणीजी का जीवन इन्दौर के सार्वजनिक जीवन से पूर्णरूपेण घुल-मिल गया है, और इनका मित्र परिवार निरन्तर बढ़ता गया है। यह महापुरुषों की विशेषता होती है कि वे जहाँ जाते हैं, वहीं के होकर रह जाते हैं।

अतः उनके इन्दौर के प्रति विशेष प्रेम को देखते हुए यदि यहाँ का मित्र-परिवार उनके प्रति अपना प्रेम प्रकट करता है तो उसके इस प्रयास को किसी भी दृष्टि से अनौचित्यपूर्ण नहीं कहा जा सकता। दूसरे, साथ ही हमारा यह भी कहना है कि बियाणीजी-जैसे श्रेष्ठ पुरुष के व्यक्तित्व को काल और चरित्र की परिधि में बाँधकर नहीं रखा जा सकता। उनके ऊपर सम्पूर्ण राष्ट्र का अधिकार है। अतः उनके जीवन पर ग्रंथ कहीं से भी प्रकाशित हो, इससे कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता। इन्दौर के मित्रों का भी उनके ऊपर उतना ही अधिकार है, जितना कि विदर्भ या बरार के लोगों अथवा अन्य किसी स्थान के लोगों का। अतः इस ग्रंथ का इन्दौर से प्रकाशित किया जाना सर्वथा औचित्यपूर्ण है।

अन्त में हम उन सभी लेखकों तथा महानुभावों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा अथवा भावनात्मक प्रोत्साहन द्वारा हमारे इस सत् कार्य में हमें सहयोग प्रदान किया है। साथ ही इस ग्रंथ को श्री बियाणीजी की सेवा में सहर्ष भेंट करते हुए हम ईश्वर से यह प्रार्थना करते हैं कि उनका भावी जीवन सुखी एवं समृद्ध हो और वे निरन्तर कार्यरत रहें।

इन्दौर :   ग्रन्थ-समिति

दिसम्बर ६, १९६५

अनुक्रमणिका

१. ब्रजलाल बियाणी : जीवन और उसकी मान्यताएँ—सम्पादकीय १
२. एक पत्र—प्रधान मंत्री लालबहादुर शास्त्री .. ४३
३. कर्मयोगी श्री बियाणीजी—संत तुकड़ोजी महाराज .. ४४
४. सहिष्णुता प्रेमी श्री बियाणीजी—न्यायाधीश जे० आर० मुधोलकर ४५
५. दृढ़व्रती बियाणीजी—गजाधर सोमानी .. ४७
६. श्री बियाणीजी : एक शब्द चित्र—डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र .. ५०
७. बियाणीजी की शिष्टता एवं बुद्धिवाद—रिषभदास राँका .. ५५
८. सौन्दर्य प्रेमी भाईजी—रामकृष्ण बजाज .. ६०
९. माहेश्वरी समाज के साहसी प्रवक्ता—मदनगोपाल काबरा .. ६३
१०. श्री बियाणीजी जैसा मैंने पाया—वल्लभदास राठी .. ६७
११. श्री ब्रजलालजी बियाणी—ईश्वरदास जालान .. ७१
१२. भाईजी एक सफल कलाकार—कु० रूपरेखा गुप्ता .. ७३
१३. मृदुता और मानवता के मूर्तिमन्त रूप—डॉ० गोविन्ददास .. ७८
१४. श्री बियाणीजी : एक गतिशील व्यक्तित्व—नारायणदास राठी ८२
१५. हिन्दी की सेवा में बियाणीजी का योगदान—उमाशंकर शुक्ल ८६
१६. भाईजी और संघर्ष—गिरधारीलाल अग्रवाल .. ९१
१७. मुझे बियाणीजी कैसे दिखते हैं—लोकनायक मा० श्री अणे .. ९५
१८. निर्भीक समाज-सेवी—ब्रजमोहनलाल गोयनका .. ९९
१९. सत्तरवर्षीय तरुण श्री बियाणीजी—रामनारायण शास्त्री .. १०२
२०. सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत श्री बियाणीजी—रामकिशन धूत १०५
२१. राष्ट्रीय जागरण के प्रतीक—ताराचन्द बिहाणी .. १११
२२. माननीय बियाणीजी : सेवक तथा साहित्यिक—डॉ०एन०एम०कैलास ११४
२३. बियाणीजी : असाधारण व्यक्तित्व—देवकरन सारडा .. ११७
२४. समाजसेवी तथा स्वतन्त्रता सेनानी भाईजी—काशीनाथ अग्रवाल १२१
२५. बियाणीजी का साहित्यिक रूप—व्यौहार राजेन्द्रसिंह .. १२३
२६. श्री बियाणीजी का कार्यक्षेत्र—भगवन्तराव मण्डलोई .. १२७

२७. सत्य के मार्ग पर—दिनेश एम० जोशी १२८
२८. मेरे अनदेखे मित्र—गोविन्दप्रसाद केजरीवाल .. १३१
२९. बियाणीजी—राजनीति, कला एवं साहित्य के संगमस्थल
—मधुसूदन वैराले १३३
३०. मेरे भाईजी—श्रीगोपाल नेवटिया १३६
३१. जैसा मैंने पाया—सौ० कमला शारदा १३८
३२. एक अडिग व्यक्तित्व—दादाभाई नाईक .. १४१
३३. बियाणीजी एक व्यक्ति के रूप में—बाबूलाल गुप्ता .. १४४
३४. बियाणीजी का ग्रन्थ दर्शन—चन्द्र प्रकाश जायसवाल .. १४७
३५. प्रगतिशील समाज के प्रवर्तक—मुरलीधर मंत्री .. १५३
३६. अजेय महारथी श्री बियाणीजी—शिवचन्द्र नागर .. १५६
३७. बियाणीजी विविध रूपों में—महन्त लक्ष्मीनारायणदास .. १६१
३८. श्री ब्रजलाल बियाणीजी का राजनैतिक नैपुण्य—एम०एन०जुननकर १६२
३९. नवनीत और पारद के मिलन विन्दु श्री बियाणीजी
—दीनदयाल गुप्त १६५
४०. लगन के धनी : बियाणीजी—हरिभाऊ उपाध्याय .. १६८
४१. श्रद्धेय बियाणीजी—श्रीमन्नारायण १६९
४२. प्रबुद्ध और उदार पत्र-संचालक : श्री बियाणीजी
—देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' १७१
४३. विचारक श्री ब्रजलाल बियाणी—ऑ० केप्टन रामप्रसाद पोद्दार १७५
४४. सतत उत्साही एवं कर्मनिष्ठ युगल श्रीमती एवं श्री बियाणीजी
—सौ० पारसरानी मेहता १७६
४५. एक बहुमुखी प्रतिभा—बाबूलाल पाटोदी .. १७८
४६. समाज सुधार के अग्रदूत—नागरमल पेड़ीवाल .. १८०
४७. विदर्भ नेता—बियाणीजी—डॉ० पु० गो० एकबोटे .. १८३
४८. श्री ब्रजलालजी बियाणी की झाँकी—रामनाथ सोनी .. १८६
४९. बियाणीजी एक विचारक के रूप में—एम० एस० परिहार .. १९०
५०. अनेकान्तवादी श्री बियाणीजी—ताराचन्द सुराणा .. १९३
५१. आत्मशक्ति, निर्भीकता, सौजन्य और कर्मण्यता के धनी आदर्श
राजपुरुष—रामेश्वरदयाल तोतला .. १९६
५२. श्री बियाणीजी का दूरदर्शन—सीताराम अजमेरा .. २०२
५३. श्रद्धा के सुमन—ब्रजबल्लभ मूँदड़ा २०५

५४. पहचान की झांकी—गोकुलभाई भट्ट २०७
५५. एक सुखद स्मृति—डॉ० हरेकृष्ण मेहताब .. २०९
५६. कुछ संस्मरण—रा० कृ० पाटिल २११
५७. बियाणीजी एक मुलायम चट्टान—कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर २१३
५८. "कल्पना-कानन" के विचारक-गायक भाईजी—अर्जुन जोशी २१५
५९. बियाणीजी को मैंने कैसा जाना—सदासुख कावरा .. २२३
६०. तपस्वी बियाणीजी—राजबहादुर २२६
६१. ब्रजलाल बियाणी : एक शब्द चित्र—रामनाथ 'सुमन' .. २२७
६२. मेरे पूज्य काकाजी—सौ० सरलादेवी बिरला .. २३२
६३. बियाणीजी के प्रति—डॉ० के० ए० तावरे .. २३३
६४. शान के सजीव स्वरूप—रघुनाथ गणेश (दादा) पण्डित .. २३६
६५. कहानीकार श्री बियाणीजी—श्यामू सन्यासी .. २३८
६६. प्राण जाई पर वचन न जाई—शिवरतन मोहता .. २४४
६७. एक विभूति—आचार्य विनोबा भावे २४५
६८. सेवा एवं संघर्षमय व्यक्तित्व—उदय द्विवेदी .. २४६
६९. हरिजन सेवा कार्य—अनन्त हर्षे २५०
७०. युद्ध मंत्री श्री ब्रजलाल बियाणी—धनजी भाई नारायणदास ठक्कर २५२
७१. 'भाईजी'—एक स्मृति रेखा—सौ० शान्ता पागे .. २५४
७२. भाईजी का स्वभाव—कमलनयन बजाज .. २५७
७३. बियाणीजी एवं उनका साहित्य—लालजी दम्माणी .. २६१
७४. बियाणीजी—एक अभिजात नेता—विश्वनाथ सारस्वत .. २६३
७५. जेल में—नवीन शैली के काव्यमय सम्भाषण
—प्रो. रामचरण महेन्द्र २६९
७६. जैसा मैंने पाया—लक्ष्मण व्ही० रंगशाही.. .. २७३
७७. प्रेरणा स्रोत एवं विनोदी बियाणीजी—श्रीमती राधादेवी गोयनका २७७
७८. कुछ झांकियाँ—व्यक्ति और कृति—विश्वनाथ शुक्ल .. २८०
७९. चिरस्थायी प्रभाव—वल्लभदास मोहता .. २८४
८०. बरार, बियाणीजी व महिलाएँ—श्रीमती शशिकला जोशी .. २८८
८१. गाँधीयुग की देन—बियाणीजी—बद्रीप्रसाद पुरोहित .. २९१
८२. फूल के माधुर्य पर भौंरे का शुक्रिया—ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी २९४
८३. हिन्दू मुस्लिम एकता की कड़ी श्री बियाणीजी
—महेशचन्द्र जोशी ३००

८४. मारवाड़ी समाज के कार्यकर्ता—नथमल झुन्झुनवाल .. ३०२
८५. ढर्रे से अलग नेता—राहुल बारपुते ३०४
८६. विरोधी के भी हितैषी बियाणी—दिनकर वासुदेव पिंगले .. ३०७
८७. निर्भीक व्यक्तित्व—कल्याणराव ३११
८८. श्री बियाणीजी के साथ मेरे १२ वर्ष—विनयकुमार पाराशर .. ३१४
८९. भाईजी की असफलता—फकीरचन्द जैन .. ३१७
९०. विदर्भ केसरी श्री ब्रजलालजी बियाणी—ब० ना० एकबोटे .. ३१९
९१. चिन्तक बियाणीजी—निरंजन जमींदार .. ३२९
९२. समान शीलेषु व्यसने सख्यम्—नारायण अग्रवाल .. ३३१
९३. काकाजी का सान्निध्य—मीरादेवी बियाणी .. ३३२
९४. मानवीय गुणों से सम्पन्न श्री बियाणीजी—कौशलप्रसाद .. ३३३
९५. एक व्यक्तित्व विश्लेषण—चम्पालाल गणपत मेवाड़े .. ३३८
९६. कुशल राजनीतिज्ञ—दादा धर्मधिकारी ३४३
९७. शक्ति और प्रेम की ज्योति—राधाकृष्ण लाहोटी .. ३४५
९८. मा० बियाणी—जीवन का शान्तिपर्व—विशनदास उदासी .. ३५१
९९. भाईजी के जीवन के दो पहलू—मो० बि० झँवर .. ३५४
१००. भाव पुष्पांजलि—गोस्वामी सहदेव भारती .. ३५६
१०१. मेरी पुरानी यादों के बियाणीजी—डॉ०एस०एस० कुलकर्णी .. ३६०
१०२. युग पुरुष श्री ब्रजलाल बियाणी—विश्वम्भरप्रसाद शर्मा .. ३६४
१०३. हिन्दू मुस्लिम एकता के हामी—एस० ए० एम० हादी नखशबन्दी ३७३
१०४. दार्शनिक बियाणीजी—सत्यनारायण गोयनका .. ३७५
१०५. बियाणीजी का कलात्मक जीवन—नन्दकिशोर खण्डेलवाल .. ३७९
१०६. भाईजी एक प्रशासक के रूप में—देवेन्द्र कोचर .. ३८१
१०७. मेरे काकाजी—बाबूलाल बियाणी ३८५
१०८. भाईजी की विशालता—श्रीकिसन नथमल दायमा .. ३८७
१०९. पूँजीवादी अथवा मार्क्सवादी—डॉ० रामचन्द्र गुप्त .. ३८९
११०. जनमानस के राजहंस—रामकृष्ण जाजू .. ३९६
१११. हृदय के धनी और व्यवहार के बादशाह—डॉ० खूबचन्द बघेल ३९८
११२. बियाणीजी की सज्जनता—काका कालेलकर .. ३९९
११३. बियाणीजी की कार्य-पद्धति—सौ० तारा मशरूवाला .. ४००
११४. प्रेरक एवं स्पृहणीय नेता—जवाहरलाल मूणोत .. ४०१

११५. बियाणीजी का स्थायी युवकत्व—दुर्गाप्रसाद सराफ .. ४०२
११६. सादगी और आतिथ्य के प्रतीक—मोतीलाल तापड़िया .. ४०३
११७. सामाजिक एवं राजनैतिक नेता—बाबूलाल मालू .. ४०४
११८. बियाणी युग—श्रीकरण शारदा ४०५
११९. सर्वतोमुखी प्रतिभा—मोहनलाल सुखाड़िया .. ४०६
१२०. शत वन्दन ! (कविता)—रामेश्वरदयाल दुबे .. ४०७
१२१. मृत्युंजय-यज्ञ (कविता)—सतीशचन्द्र जैन .. ४०९

बियाणीजी का विचार-प्रवाह

१२२. विश्व-विषयक मेरी कल्पना (खण्ड १) .. ४१५
१२३. विश्व शक्तियों का प्रवर्तन (खण्ड २) .. ४१८
१२४. विभिन्न विचार (खण्ड ३) ४२३

बियाणी-चित्रावली ४३५-४५८
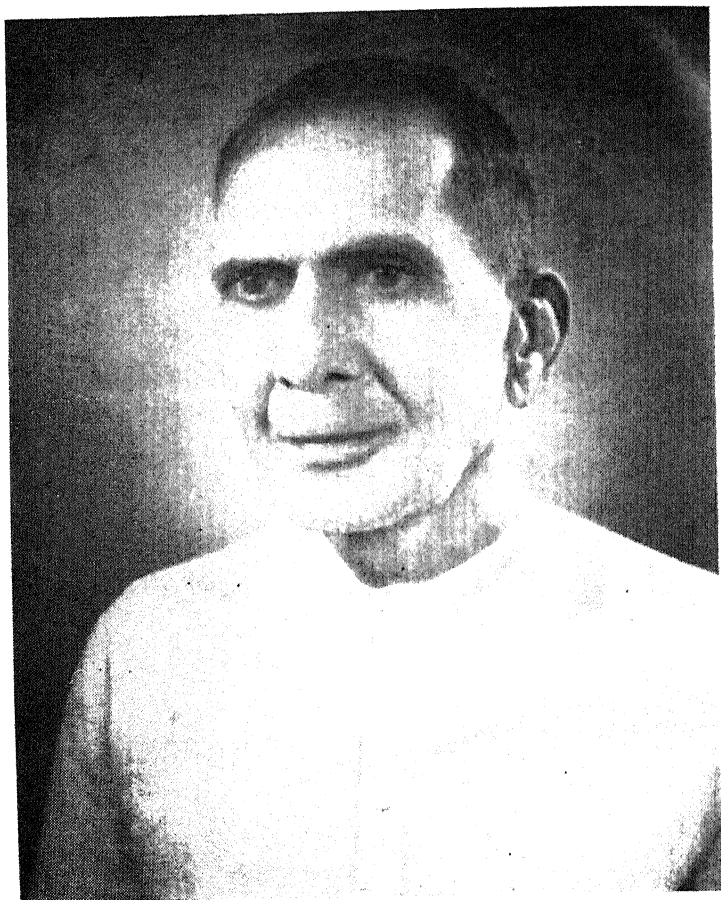
हे ! ऊर्ध्वमुखी
तेजस-तड़ाग
वाणी-विहार
पौरुष-प्रकाम

संकल्प-जयी
नर के नाहर
मानव महान
हे ! विदर्भ-केसरी

क्रान्ति-दूत
शत शत प्रणाम !
शत शत प्रणाम !!

—उषाकिरण

ब्रजलाल बियाणी : जीवन और उसकी मान्यताएँ

आदि और अन्त जीवन के दो भिन्न रूप हैं। एक से यदि जीवन का श्री गणेश होता है तो दूसरे से उसकी इति। पर यह रूप-भिन्नता केवल बाह्य है। आन्तरिक दृष्टि से दोनों में समन्वय है। यही समन्वय वास्तविक सत्य भी है। जन्म में मृत्यु और मृत्यु में नया जीवन छिपा है। वास्तव में जीवन कभी नहीं मरता, केवल उसका रूप-परिवर्तन होता है। यह रूप-परिवर्तन तथा नवीनीकरण विश्व में सर्वत्र देखा जा सकता है। यही जीवन का रहस्य है। जो भी जीवन के इस रहस्य को समझ लेता है, वह निर्भीक होकर जीवन-पथ पर प्रारूढ़ होता है, और जो इस रहस्य को नहीं समझ पाता अथवा मृत्यु से डरता है, वह गतिहीन होकर रह जाता है।

जीवन की सार्थकता इसी में है कि मनुष्य, इस रहस्य को समझकर, जीवन-पथ पर, बाधाओं के बीच, शाश्वत और अनवरत गतिमान बना रहे। जीवन निरन्तर गतिमान होते हुए भी सदैव संघर्षों के बीच पलता और खेलता है। अनेक बार जीवन-महत्ता के मानदण्ड संघर्ष होते हैं। वास्तव में संघर्ष ही जीवन को सँवारते और निखारते हैं।

हम में से प्रायः सभी ने गंगा की धारा का यौवन देखा है। हममें से अनेकों ने उसके पवित्र जल में स्नान करके अपने को धन्य समझा है। कितने ही कलाकारों के स्वर उसके मनोरम तट पर गीत बनकर प्रवाहमान हुए हैं। कौन कह सकता है, रवीन्द्र, निराला, सुमित्रानन्दन, मैथिलीशरण गुप्त तथा अनेकों प्रख्यात कवियों के भावचित्रों पर उसके पुनीत सौन्दर्य की छाया नहीं है। हम उसका वैभव, उसका सौन्दर्य देखते हैं, और लुटे-से रह जाते हैं, पर क्या हमने कभी सोचा है कि उसके वैभव का रहस्य क्या है? यह सोचने का अवकाश किसे, कि यौवनमयी गंगा बनने के लिए उसे हिमालय की विशाल खण्डों से अनवरत जूझना पड़ा है। उसने लोक

की समस्त अपवित्रता को अन्तर की सरल स्निग्ध धारा से पावन भी किया है। मार्ग में प्राप्त होनेवाले श्रद्धोपहार को किसी के चरणों में समर्पित कर स्वयं भी उसमें विलीन हो जीवन-यात्रा की सार्थकता भी प्राप्त की है।

मानव-जीवन भी टकराता, गिरता और उठता चलता है, और अन्त में किसी विराट जीवन-पुंज में विलीन हो जाता है। जिस जीवन में संघर्षों से टकराने तथा उन पर विजय प्राप्त करने की जितनी अधिक क्षमता होगी, वह उतना ही आकर्षक एवं दिव्य होगा, साथ ही उतना ही सत्य भी। संघर्षों से टकराने की क्षमता उस जीवन को पवित्र कर देती है। ऐसे जीवन के लिए जो कोई भी संघर्ष करता है, वह उसी प्रकार अपने को धन्य समझता है जिस प्रकार गंगा के पवित्र जल में अवगाहन करने पर एक श्रद्धालु यात्री।

श्री बियाणीजी का जीवन-विकास भी बहुत कुछ ऐसा ही है। गंगा के जीवन की भाँति, उनका जीवन भी अनेकों कठिनाइयों के शिलाखण्डों से टकराता तथा कन्टकाकीर्ण पथों को पार करता हुआ आगे बढ़ा है। तभी तो उनके जीवन में इतना आकर्षण है कि जीवन-पथ पर चलनेवाले प्रत्येक राहगीर की दृष्टि उस पर अनायास ही पड़ जाती है। वे अपने जीवन के स्वयं निर्माता हैं। अतः हिमालय के सदृश उनमें दृढ़ता है। श्रान्त और लहुलुहान पगों से वे बढ़े हैं, इसी कारण उनमें दूसरों को कांधा देने की क्षमता है। अहंकार इतना कि विन्ध्य झुकता दिखाई दे, और विनय इतनी कि पथ-कण को भी अपनी लघुता पर लज्जा न हो। कठोरता के भीतर सतत निस्पन्दमान वह करुण धारा जो उबलते ज्वालामुखियों को शीतल कर दे, पर वह आत्म-विस्मृति नहीं जो केसर-जाल पर मूषिकों को क्रीड़ा का आमन्त्रण दे। वास्तव में उनका जीवन एक ऐसा संगम-स्थल है जहाँ दृढ़ता, विनम्रता और करुणा तीनों का मिलन एक साथ देखा जा सकता है। गम्भीरता, कोमलता, और सुहृदयता की त्रिवेणी के अजस्र प्रवाह में न जाने कितने ही हृदयों की मलिनता को धो दिया है। ऊपर से देखने में वे एक अत्यन्त साधारण व्यक्ति दिखाई देते हैं, पूर्ण सरलता और सौम्यता की मूर्ति, परन्तु उनके अन्तर्मन में झाँकने से एक ऐसा व्यक्तित्व हमारे सामने आता है, जिसमें एक ओर सागर की-सी गम्भीरता है, तो दूसरी ओर शिशु की-सी सरलता। उनके व्यक्तित्व को ठीक से समझने के हेतु आवश्यक है कि हम उनके पिछले जीवन के पृष्ठों पर दृष्टिपात करें।

आकर्षक व्यक्तित्व

श्री बियाणीजी, जिनका जन्म ६ दिसम्बर १८९५ में हाथरून, जिला अकोला (महाराष्ट्र) में हुआ, मारवाड़ी परिवार के हैं। मारवाड़ी जाति के अधिकांश लोग

व्यापारी होकर भी उदार वृत्ति के होते हैं। इनके पिता, श्री नन्दलालजी, स्वभाव से अन्य मारवाड़ियों की भाँति, केवल उदार ही नहीं, वरन् अत्यन्त सरल एवं धार्मिक प्रवृत्ति के थे। बियाणीजी यद्यपि चार भाई-बहिन थे, परन्तु पिता का इनके ऊपर विशेष स्नेह था। अल्प आयु में ही इनकी माता का स्वर्गवास हो जाने से इन्हें अपने पिता का सम्पूर्ण स्नेह प्राप्त हुआ। जिस समय बियाणीजी लगभग १० वर्ष के थे, उस समय हाथरून में प्लेग के प्रकोप तथा पिताजी की आर्थिक स्थिति बिगड़ने के कारण इनके अन्य भाई-बहिनों को हाथरून से दूर एक सम्बन्धी के पास रहने के लिए विवश होना पड़ा, परन्तु ये अपने पिता के पास ही रहे। पिताजी के अनेक वर्षों तक निकट सम्पर्क में रहने तथा उनका सम्पूर्ण दुलार पाने के कारण, बियाणीजी के स्वभाव में उदारता, सरलता तथा स्नेह-जैसे गुणों का समावेश हुआ।

साथ ही इनके स्वभाव में जो धार्मिक सहिष्णुता तथा नियमितता दिखाई देती है, वह इनके फूफाजी के प्रभाव के कारण है। प्लेग का प्रकोप कम न होने पर इन्हें हाथरून से सिरपुर, (खानदेश) अपनी भुवाजी के पास जाना पड़ा। सिरपुर में इनके ऊपर इनके फूफाजी का प्रभाव पड़ा। इनके फूफा कृष्ण-भक्त थे और उनका बहुत-सा समय पूजा-पाठ में जाता था। वे कृष्ण-भक्त होते हुए भी दूसरे मतावलम्बियों के प्रति उदार भाव रखते थे। इसका पता इस बात से चलता है कि प्रत्येक सायंकाल को नियमित रूप से सिरपुर में होनेवाले सत्संग में प्रायः रामानन्दी और कृष्ण की भक्ति में विश्वास रखनेवाले दोनों ही प्रकार के लोग भाग लेते थे, जिसका संचालन बियाणीजी के फूफा ही करते थे। सत्संग में राम और कृष्ण दोनों पर ही चर्चा होती थी, तथा रामायण और महाभारत दोनों का ही पाठ होता था। बियाणीजी के फूफा स्वयं बालक ब्रजलाल बियाणी से पाठ करवाते थे। बियाणीजी स्वयं रामानन्दी थे, परन्तु सिरपुर के वातावरण में रहकर तथा अपने फूफाजी के प्रभाव के कारण इनमें धार्मिक सहिष्णुता (रिलीजिअस टॉलरेशन) का प्रभाव जागृत हो गया, और वे सभी मतावलम्बियों को समान आदर से देखने लगे। कालान्तर में धार्मिक सहिष्णुता इनके जीवन का अभिन्न अंग बन गई।

इनके फूफाजी का जीवन अत्यन्त नियमित था। प्रातः चार बजे ब्राह्म-मुहूर्त में उठना, नित्य-कर्म से निवृत्त होकर भगवान की पूजा करना तथा आठ बजे तक अपने काम में लग जाना और फिर सायंकाल पाँच या छः बजे तक निरन्तर परिश्रम करना, उनका स्वभाव था। वे अपने नियम के इतने पक्के थे कि उनमें तनिक भी उलट-फेर उन्हें असह्य था। बियाणीजी के शिशु मन पर इसका बहुत प्रभाव पड़ा, और वे भी अपने फूफाजी की भाँति दृढ़ और नियमित व्यक्ति बन बैठे।

अतः बियाणीजी के चरित्र पर इनके पिता और फूफा दोनों के ही जीवन का समान रूप से प्रभाव पड़ा, और यही कारण है कि इनके स्वभाव में उदारता, सहिष्णुता, सहृदयता, दृढ़ता, संयम, नियमितता आदि गुणों का एक साथ समन्वय देखने को मिलता है। इनके व्यक्तित्व में ये गुण कुछ इस प्रकार घुल-मिल गए हैं कि वे जन्मजात-से दिखाई देते हैं। केवल लोकप्रियता प्राप्त करने के हेतु ही ये निर्मित नहीं किए गए हैं, प्रत्युत उनका ध्येय एक ऐसे जीवन का निर्माण करना रहा है, जिसमें सत्य, शिव और सुन्दर तीनों का समन्वय हो। क्योंकि एक दिव्य और समन्वयवादी जीवन की सृष्टि करना लक्ष्य रहा है, अतः आपके सार्वजनिक जीवन-क्षेत्र और व्यक्तिगत जीवन-क्षेत्र की रेखा अत्यन्त सूक्ष्म दिखाई पड़ती है।

बियाणीजी के जीवन पर दो और व्यक्तियों का प्रभाव दिखाई देता है। एक उनकी पत्नी, सावित्री देवी का और दूसरा पूज्यनीय महात्मा गांधीजी का। मारवाड़ी समाज में उत्पन्न होने के कारण इनका विवाह केवल १४ वर्ष की आयु (सन् १६०६ में) में ही कर दिया गया। अपनी स्त्री का इन्हें पूर्ण स्नेह प्राप्त हुआ, जिसने इनके हृदय की कोमल वृत्तियों को अत्यधिक निखारा। इनकी दूसरों के प्रति प्रेम और आतिथ्य-सत्कार की वृत्तियों को निखारने का श्रेय बहुत-कुछ श्रीमती सावित्री देवी बियाणी को है। गृह-व्यवस्था में इनके मेहमानों के प्रति जिस दक्षता और प्रेम के साथ सावित्री देवी का ध्यान रहता है, सम्भव है उसके अभाव में बियाणीजी के स्वभाव में कुछ रुक्षता आ जाती और इनके आदरातिथ्य में बहुत कमी रह जाती।

गांधीजी के सम्पर्क में आप १६२० में आए, जबकि आप मोरिस कालेज नागपुर में एल-एल. बी. (द्वितीय वर्ष) के विद्यार्थी थे। गांधीजी के साथ आपका सम्पर्क २७ वर्षों तक निरन्तर बना रहा, और वह आगे भी बना रहता यदि गांधीजी की मृत्यु १६४८ में न हो जाती। गांधीजी आपको सार्वजनिक क्षेत्र में लाए और आपने उनके आह्वान पर १६२० में अपनी कानून की शिक्षा को तिलांजलि देकर राष्ट्रीय जीवन में प्रवेश किया। यद्यपि अनेक राष्ट्रीय प्रश्नों पर आपका गांधीजी से मतभेद रहा, परन्तु आप उनके सरल स्वभाव तथा कर्मनिष्ठ जीवन और सत्यनिष्ठ तथा संयमी जीवन के केवल प्रशंसक ही नहीं थे वरन् भक्त भी रहे। आज भी आप गांधीजी के सिद्धान्तों का जीवन में विधिवत् पालन करते हैं। नियमपूर्वक प्रातः जल्दी उठना, शरीर-शुद्धि के लिए व्रत करना, असत्य भाषण, परनिन्दा तथा आत्म प्रशंसा से दूर रहना, सबको समान समझना तथा सबका समान आदर करना, दिए गए वचन का दृढ़तापूर्वक पालन करना, सामाजिक कुरीतियों का विरोध

करना, आत्म-शुद्धि पर बल देना आदि कुछ ऐसी बातें हैं जिसने बियाणीजी के जीवन को और भी अधिक सन्तुलित एवं नियमित कर दिया। इन विशेषताओं के कारण ही बियाणीजी का जीवन इतना आकर्षक है तथा उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली बन सका है।

बियाणीजी की दिनचर्या अनुकरणीय है। वे आजकल के प्रधान प्रचलित व्यसनों से बहुत दूर हैं। चाय, पान, सिनेमा, सिगरेट कोई भी उनके व्यसन में सम्मिलित नहीं। आपके आचार-विचार में भारतीयता की पूर्ण छाप है। आपकी दिनचर्या में व्यायाम और स्वाध्याय का नियमित स्थान है। काँच के सम्मुख खड़े होकर कुछ हल्का-सा व्यायाम कर लेना, इनके नियमों में से एक है। व्यायाम के साथ यदि बियाणीजी में कोई व्यसन है तो स्वाध्याय का। इनके जैसे स्वाध्यायशील एवं मननशील व्यक्ति बिरले ही मिलते हैं। साधारणतः प्रातः अथवा जब भी अवकाश हो आप एक-न-एक नए ग्रन्थ का अवलोकन करते ही रहते हैं। अनेकों पत्र-पत्रिकाओं के अतिरिक्त, जो इनके पास बिना मूल्य आती हैं, वे हिन्दी की प्रायः सभी मासिक पत्रिकाएँ मँगाते हैं।

रहन-सहन के साथ ही आपके भोजन का ढंग भी बिल्कुल सादा है। मिष्टान्न का प्रयोग आप बहुत कम करते हैं। हाथ पिसे आटे की रोटी, एक या दो सादे ढंग के बिना मिरची-मसाले के शाक, सलाद, गाय का दूध, सूखे और गीले फल यही आपके भोजन की प्रधान सामग्री है। आपके इस सात्विक भोजन का ही परिणाम है कि ७० वर्ष की अवस्था में भी वे १०-१० और १२-१२ घण्टे तक सतत काम करते रहते हैं। इतना ही नहीं वरन् दो-दो बार पक्षाघात का आक्रमण होने पर भी आप इतनी अवस्था में ५-५ तथा ७-७ दिन का उपवास करते हुए पाए जाते हैं। अभी हाल में आपने पाँच दिन का, १५ जुलाई से लेकर १९ जुलाई तक (१९६५), उपवास, शरीर एवं आत्म-शुद्धि के लिए किया था। उपवास के मध्य में भी आप निरन्तर कार्य करते रहते हैं। कोई भी इनके कार्य करने की शक्ति को देखकर आश्चर्य-चकित हुए बिना नहीं रह सकता। पर यह सब आपके सात्विक जीवन का ही परिणाम है।

इस प्रकार बियाणीजी के व्यक्तित्व में अनेकों तत्त्वों का सम्मिश्रण है। दुबले-पतले, किन्तु लम्बे कद के साथ उनकी दौड़ती हुई चाल उनके उस जीवन का द्योतक है जिसमें तीव्रता है, चपलता है, और है साहस और कर्तव्यपरायणता। उनका चुस्त कुर्ता, उसके सारे लगे हुए बटन, महाराष्ट्रीय युवक "स्टाइल" की कसी हुई धोती, जहाँ एक ओर उनकी कलाप्रियता का द्योतक है वहाँ दूसरी ओर एक नियन्त्रित सैनिक का चित्र भी खड़ा कर देती है। उनकी अलसाई हुई आँखें उनके

व्यस्त एवं परिश्रमी जीवन की द्योतक हैं। किन्तु उन अलसाई आँखों के साथ ओठों पर हर समय नाचती हुई मृदु-मुस्कान के मिश्रण से मानों कार्यचिन्ता और सेवा-उल्लास का पंचामृत बन जाता है। ठीक ही तो है, जिसमें महानता के बीजांकुर निकल कर झाँक रहे हों, वही तो दूसरों के लिए हँसता और रोता है।

उनका चौड़ा उभरा हुआ मस्तक एवं लम्बी और पतली उंगलियाँ उनकी तीव्र, तर्क-युक्त, अकाट्य विचार-धारा एवं लेखन-शक्ति की द्योतक हैं। उनके चौड़े बड़े कान मानों कटु आलोचना एवं विपक्ष तक को निष्पक्षता से सुन लेने के लिए ही हैं। उनके मस्तक पर खिंची हुई बौद्धिक ओज की तीन रेखाएँ उनकी विचार-मग्नता के साथ मानों तीनों प्रकार के तापों से तपे त्यागमय जीवन का संकेत करती हैं। हृदय की उदारता और योग्यता का प्रकाश उनके मुख पर झलकता हुआ प्रतीत होता है। दुबले-पतले, किन्तु निर्विकार शरीर में स्वस्थ हृदय का निवास प्रतीत होता है।

किसी बात की गहराई में उतरे बिना अपना मत निर्धारित करना उनके स्वभाव के सर्वथा प्रतिकूल है। दूसरों के विचारों से सहमत न होते हुए भी उन्हें शान्ति से सुन लेने की आपमें पूर्ण क्षमता है। बियाणीजी की सहिष्णुता उनकी महान विशेषताओं में से एक है। वह शत्रु एवं मित्र सबके लिए अनुकरणीय एवं ग्राह्य हैं। मृदुभाषी वे इतने हैं कि कोई भी व्यक्ति उनकी ओर आकर्षित हुए बिना नहीं रह सकता। सुसंयत मधुर वाणी उनकी अपनी विशेषता है। पर उनके भाषण-सम्भाषण की विशेषता केवल इतनी ही नहीं कि वे मधुर होते हैं। अपनी बात को वे जिस तर्कपूर्ण ढंग से रखते हैं, वह श्लाघनीय है। वे प्रसंग बड़े मजे के होते हैं, जब वे अपने प्रतिपक्षी के मुद्दों को अपनी स्वाभाविक मधुरता से तराशते चलते हैं और अनजाने में ही सब के साथ प्रतिपक्षी भी खिलखिला देता है, पर दूसरे ही क्षण स्वपक्ष को इस सफाई से कटा देख निष्प्रभ हो जाता है। वे बोलना जानते हैं, और समय पर बोलना जानते हैं। अप्रिय सत्य के वे दुर्लभ वक्ता हैं। सच्चे आलोचक, पर परोक्ष नहीं प्रत्यक्ष। चीजों को देखने का उनका अपना दृष्टिकोण है, और उनकी अपनी अभिव्यक्ति। साधारण-से-साधारण वस्तु की अभिव्यक्ति वे अपने ढंग से करते हैं, और इस ढंग से कि पुरानी वस्तु अथवा बात होने पर भी वह नवीन दिखाई दे।

आपकी कोमल देहयष्टि में मस्तिष्क एवं हृदय की ऐसी अचल एवं विशाल प्रतिष्ठा है कि उनमें विचारों की दृढ़ता और संवेदना की गहराई का अनुपम समन्वय है, जो अन्यत्र दुर्लभ-सा है। यही कारण है कि उनकी क्रियाशीलता आश्चर्यकारक है। वे उदार हैं, तथा निर्भीक भी पराकाष्ठा के।

देश सेवक एवं जन-नेता के रूप में

वैसे तो सभी अपने को देशसेवक कहते हैं, पर सच्चा देशसेवक काँटों की शैय्या पर सोता है। देशसेवक वही है, जो अपने स्वार्थ को पूर्ण तिलांजलि देकर तन-मन-धन से राष्ट्र की सेवा करता है। देशसेवक को लोकापवाद-रूपी शरों को वक्ष-स्थल खोलकर झेलना पड़ता है। सेवा की आग में कूदकर आहुति बनना पड़ता है। कभी देशसेवक के पीछे तालियों की गड़गड़ाहट और पुष्पमालाएँ तथा थैलियाँ भेंट होती हैं, तो कभी उसे गालियाँ, अपकीर्ति तथा कारागार के सीखचों में बन्द होना पड़ता है। परन्तु सच्चे देशसेवक को उपरोक्त बातों से न तो हर्ष होता है न शोक। वह तो सेवा इसलिए करता है, क्योंकि उसके पीछे प्रभु की प्रेरणा और भगवान का आशीर्वाद रहता है। मानव-जीवन में फल की आकांक्षा न रखकर "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" के गीता के उपदेश को सामने रखकर, कर्मवीर बनकर अपनी जीवन-यात्रा सफल करनी चाहिए। बियाणीजी का यही उद्देश्य अपने प्रारम्भिक जीवन से रहा है।

बियाणीजी ने, गांधीजी के आह्वान पर, १९२० में कालेज की पढ़ाई को छोड़कर राष्ट्रीय जीवन में प्रवेश किया। गांधीजी के अहिंसात्मक असहयोग के पंचमुखी कार्यक्रम को नागपुर (१९२०) का समर्थन प्राप्त होने से सारे देश में बहिष्कार की आँधी-सी आ गई थी। स्कूलों, कालेजों एवं अदालतों का बहिष्कार जोरों पर था। इसी समय बियाणीजी ने कानून की पढ़ाई को तिलांजलि देकर कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण की। कानूनी पढ़ाई को छोड़कर राष्ट्रीय आन्दोलन में कूदना, बियाणीजी जैसे मारवाड़ी युवक के लिए कोई साधारण कार्य नहीं था। उन दिनों भारत में, विशेषकर मारवाड़ी समाज में, वकील बनना जीवन में सफलता की अन्तिम सीढ़ी समझा जाता था। इस दृष्टिकोण से बियाणीजी का उस समय का त्याग कोई साधारण त्याग नहीं था। लेकिन जिसको अपने समाज, अपने प्रान्त और अपने राष्ट्र की पददलित और पराधीन जनता का वकील बनना था, वह सरकारी अदालत में खत्म होनेवाली वकालत तक ही सीमित कैसे रह सकता था ? इस सीमित वकालत की ओर बढ़े हुए कदमों को समेट लेने के पश्चात् बियाणीजी ने जिस व्यापक और विस्तीर्ण क्षेत्र की ओर कदम बढ़ाया, उसमें आपके जीवन का विस्तार सतत और निरन्तर होता चला गया। गंगोत्री के छोटे-से रूप में बहने वाली गंगा की पवित्र और निर्मल धारा का प्रवाह मैदान में बढ़ता हुआ उत्तरोत्तर विराट रूप धारण करता गया है। उसके गर्भ से निकलनेवाली लहर का रूप भी कितना विशाल है। ठीक उसी प्रकार १९२०-२१ में असहयोग की गंगोत्री में से सूक्ष्म रूप में जन्म

लेनेवाले बियाणीजी के सार्वजनिक एवं राष्ट्रीय जीवन का निरन्तर और उत्तरोत्तर विकास होकर वह विराट रूप धारण करता गया। सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में गंगा के गर्भ से निकलनेवाली नदी की भाँति अपना विकास करनेवाले कितने ही ऐसे युवक हैं, जिन्होंने बियाणीजी से स्फूर्ति और प्रेरणा ही नहीं,दीक्षा तक ली है।

बियाणीजी ने अपने प्रान्त में कांग्रेस के संगठन हेतु तथा गांधीजी के असहयोग आन्दोलन को सफल करने के लिए जो कार्य किया, वह सेठ जमनालालजी बजाज के अतिरिक्त और किसी ने नहीं किया। गांधीजी के असहयोग आन्दोलन को उदारवादी लोग एकाएक अपना न सके। विपिनचन्द्र पाल तथा ऐनी बेसेण्ट सरीखे प्रसिद्ध कांग्रेसियों ने तो असहयोग आन्दोलन से असहमति प्रदर्शित करते हुए कांग्रेस से ही त्यागपत्र दे दिया, और वे उदारवादियों से मिल गए। इससे कांग्रेस के संगठन में काफी कमजोरी आ गई। महाराष्ट्र की स्थिति सब प्रान्तों से अधिक शोचनीय थी। आदरणीय लोकमान्य तिलक के स्वर्गवास के बाद महात्मा गांधी के असहयोग को महाराष्ट्र न अपना सका। 'प्रतियोगी सहयोग' में विश्वास रखनेवालों के लिए असहयोग और बहिष्कार को एकाएक अपनाना सम्भव भी नहीं था। 'शठं प्रति शाठ्यम्' का राग अलापनेवालों के लिए राजनीति में सत्य और अहिंसा के धार्मिक तत्वों को स्वीकार करना प्रायः असम्भव ही था। नागपुर में उठा हुआ विरोध किसी प्रकार अन्य प्रान्तों में तो कुछ शान्त सा हो गया, परन्तु महाराष्ट्र, विशेष-कर बरार और मराठी मध्य प्रान्त में, यह उग्र रूप से वर्षों तक बना रहा। दो-चार को छोड़कर प्रायः सभी नेता और कार्यकर्ता उसका विरोध करते रहे। उन प्रान्तों के प्रायः सभी समाचारपत्रों में उसका उपहास, विरोध और निन्दा की जाती रही। कांग्रेस कमेटियों के पदाधिकारी बने हुए लोग भी उसमें नीचे से सुरंग लगाने का ही षड्यन्त्र रचते रहे। बरार प्रान्त के इस आड़े समय में लाज रखनेवालों और देश की व्यापक राजनैतिक जागृति में उसके गौरव की पताका को ऊँचा रखनेवालों में बियाणीजी का नाम सबसे प्रथम लिया जा सकता है। यद्यपि आज बरार का अपना कोई निजी अस्तित्व नहीं है तथा वह महाराष्ट्र का एक अभिन्न अंग बनकर प्रगति कर रहा है, परन्तु स्वतन्त्रता से पूर्व तथा उसके बाद के कुछ वर्षों तक उसे प्रतिक्रिया-वादी शक्तियों तथा निजाम के दमनचक्र से बचाने का एकमात्र श्रेय बियाणीजी को ही है। इस युग का यदि आपको बरार का निर्माता कहा जाय तो किसी भी प्रकार की अत्युक्ति नहीं होगी।

मराठी मध्य प्रान्त विदर्भ (जो आज बरार की भाँति महाराष्ट्र का एक अंग है) के भी आप भाग्य निर्माता कहे जा सकते हैं। गांधी युग के आरम्भ में बियाणीजी

ने विदर्भ को प्रतिक्रियावादी शक्तियों से बचाकर नए मार्ग का अनुसरण कराया था। विदर्भ प्रेम के नाम पर सर्वस्व न्यौछावर कर देनेवाले बियाणीजी ने, प्रत्येक विदर्भीय हृदय पर ही नहीं, अपितु स्वदेशाभिमान का अर्थ समझनेवाले भारत के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में अपने लिए एक उच्च स्थान पा लिया है। विदर्भ की जनता को प्रकाशित करनेवाला यह एक अनमोल हीरा है। आपने विदर्भ में राष्ट्रीय महा-सभा के आदेशानुसार, संगठन निर्माण कर, हर आज़ादी की लड़ाई में विदर्भ का स्थान बनाए रखने के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया। बियाणीजी सत्याग्रह की लड़ाई में एक बहादुर सिपाही के समान दिखाई दिए, अतः इनके साहस और देश-प्रेम की प्रशंसा जितनी करें उतनी थोड़ी है। अपने नेतृत्व में आपने कर्त्तव्य से और अमृतवाणी से विदर्भ की आम जनता में आज़ादी की भावना को अमर बना दिया। यदि आपको 'विदर्भ-केसरी' की उपाधि से विभूषित किया गया है, तो इसमें कोई अत्युक्ति नहीं है।

विदर्भ कांग्रेस के सच्चे अर्थों में आप संस्थापक हैं, तथा महात्मा गांधी और कांग्रेस के संदेश को विदर्भ की सम्पूर्ण जनता तक ले जाने का एकमात्र श्रेय आपको ही है। आप विदर्भ कांग्रेस के १३ वर्षों तक अध्यक्ष तथा ३० वर्षों तक 'अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी' के सदस्य रहे। स्वतन्त्रता संग्राम में आपने चार बार जेल-यात्रा की, और लगभग साढ़े छः वर्षों तक आप बन्दी के रूप में रहे। कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में आप सी. पी. और बरार की व्यवस्थापिका सभा, (Legislative Council) पुराने मध्यप्रदेश और बम्बई की व्यवस्थापिका सभाओं, देश की राज्यसभा, लोकसभा और विधान सभा के सदस्य रहे। साथ ही पुराने मध्यप्रदेश में आपने कई वर्षों तक वित्त-मंत्री के पद पर भी कार्य किया। विदर्भ में आपने इण्टक की स्थापना की, तथा मध्यप्रदेश मन्त्रि-मण्डल में आने से पूर्व, आप उसके अध्यक्ष पद को सुशोभित करते रहे।

बियाणीजी सदैव विदर्भ को एक स्वतन्त्र प्रान्त बनाने के पक्ष में रहे। इसके हेतु आपने कांग्रेस तक से युद्ध किया, तथा इसी प्रश्न को लेकर आपने १९५९ में बम्बई व्यवस्थापिका सभा की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया, और 'नाग विदर्भ आन्दोलन समिति' में सम्मिलित हो गए। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् आपने वन सत्याग्रह (Forest Satyagraha) किया और दो बार जेलयात्रा की। पिछला चुनाव इसी प्रश्न को लेकर लड़ा गया, जिसमें दुर्भाग्य से जनता का निर्णय आपके विपक्ष में रहा। पर आपने जनता के निर्णय का पूणरूपेण स्वागत किया, और 'नाग विदर्भ आन्दोलन समिति' से त्यागपत्र दे दिया। राजनीति में उतार-चढ़ाव एक

साधारण वस्तु है। परन्तु इस बात से किसी भी प्रकार इन्कार नहीं किया जा सकता कि बियाणीजी ने राजनीति के विभिन्न क्षेत्रों में तथा प्रत्येक स्थिति में अपने उत्तर-दायित्व को पूर्ण लगन और तन्मयता के साथ निभाते हुए कार्य किया। आपकी निस्वार्थ सेवा के लिए केवल बरार और विदर्भ ही नहीं प्रत्युत सम्पूर्ण देश ही उनका सदैव आभारी रहेगा।

सार्वजनिक सेवा एवं निर्माण-कार्य

बियाणीजी मारवाड़ी समाज के एक जगमगाते रत्न हैं। स्वर्गीय श्री जमना-लालजी बजाज को छोड़कर समाज-सुधार क्षेत्र में आप सर्वप्रथम व्यक्ति हैं, जिन्होंने स्त्रियों को परदे से मुक्त करने की आवाज़ उठाई। वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह, मृत्युभोज आदि कुरीतियों को बन्द करने के लिए आपने पिकेटिंग आदि किए। दहेज प्रथा का विरोध किया। अपनी लड़कियों की शादी कलात्मक एवं सुधारक ढंग से की। वे मनुष्यों को ईश्वर की धरोहर समझते हैं, न कि मनुष्य की। जिस प्रकार गौ-दान और द्रव्य-दान होता है, उसी श्रेणी में मनुष्य को नहीं रखा जा सकता। वह चाहे तो अपना दान कर सकता है, परन्तु किसी भी मनुष्य को यह अधिकार नहीं, कि वह अपनी स्वर्ग प्राप्ति की आशा से किसी मनुष्य को दान करे।

आपने माहेश्वरी समाज और माहेश्वरी सभा को, जो मारवाड़ी समाज-सुधार के कार्य में संलग्न थी, विघटन से बचाया। माहेश्वरी समाज और माहेश्वरी सभा के लिए १९२२ का कोलयार आन्दोलन एक विकट कसौटी था। जिन महानु-भावों के व्यक्तित्व और प्रभाव के कारण महासभा, और समाज अपने 'सत्य' और 'सत्व' पर अडिग बना रहा, उनमें श्रद्धेय जाजूजी के बाद यदि किसी का नाम लिया जा सकता है, तो वे आदरणीय बियाणीजी हैं।

माहेश्वरी महासभा और माहेश्वरी समाज के पिछली एक चौथाई सदी के इतिहास की पृष्ठभूमि में बियाणीजी के सार्वजनिक जीवन की प्रवृत्तियों को बताया जा सकता है। इस रूप में बियाणीजी द्वारा सामाजिक क्षेत्र में किया गया निर्माण भी बहुत विशाल और व्यापक है। लेकिन सामाजिक दृष्टि से किए गए व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन का निर्माण भी अत्यन्त उपयुक्त और विस्मयजनक है। उसका विषद इतिहास समाज के युवकों के लिए प्रकाश स्तम्भ का काम दे सकता है। श्रीमती जानकीदेवी बजाज के समान श्रीमती सावित्रीदेवी बियाणी भी कभी परदे में बन्द रहनेवाली सवा सोलह आने वैसी ही मारवाड़ी महिला थीं जो घर पर आनेवाले मेहमान के साथ न तो बात कर सकती थीं, और न ही प्यास लगने पर उसको पानी का गिलास तक अपने हाथों से दे सकती थीं। रसोई के दम घोंटनेवाले

धुएँ में भी वे मुख पर लम्बा परदा तानकर चूल्हे के पास बैठकर खाना बनाया करती थीं। वेषभूषा और आभूषणों की दृष्टि से भी मारवाड़ी महिलाओं का ऐसा ही हाल था। परन्तु १९२९ में धामणगाँव की महासभा में पण्डाल में से स्त्रियों के लिए परदा करने के निमित्त लगाई गई कनात को आपने खोलकर फेंक दिया था। आज तो वे सामाजिक क्षेत्र में बियाणीजी से भी दो कदम आगे हैं। अपनी पुत्रियों, श्रीमती कमला शारदा और श्रीमती सरला बिरला, का जिस रूप में उन्होंने निर्माण किया है, उससे यह कल्पना भी नहीं की जा सकती कि उनका जन्म किसी परदेवाले घर में हुआ होगा। आपने अपने पुत्र श्री कमलकिशोरजी को उच्चतम शिक्षा दिलाई, उसे अनुसन्धान हेतु विलायत भेजा तथा उसका विवाह पंजाब के खत्री घराने में किया। आप सदैव अन्तर्जातीय एवं अन्तर्प्रान्तीय विवाहों के पक्ष में रहे हैं, जोकि भारतीयों की संकुचित मनोवृत्ति को समाप्त करने के हेतु परमावश्यक है। इस प्रकार सामाजिक दृष्टि से पारिवारिक जीवन का इस क्रमिक किन्तु दृढ़ता के साथ किए गए निर्माण तथा विकास की कहानी अत्यन्त उत्साहप्रद है। राजनैतिक दृष्टि से किए गए निर्माण से इस निर्माण का महत्व कहीं अधिक है। सामाजिक निर्माण की नींव पर ही राजनैतिक निर्माण की दृढ़ दीवारें खड़ी की जा सकती हैं। बियाणीजी का जीवन इस बात का प्रत्यक्ष साक्षी है।

अपने प्रान्त के मारवाड़ी समाज में राष्ट्रीय चेतना पैदा कर उसको राष्ट्र सेवा के मैदान में सिपाही बनाकर खड़ा कर देना, और हँसते-खेलते बड़ी से बड़ी कुर्बानी करने के लिए उसको तैयार कर देना बियाणीजी का ही काम था। महाराष्ट्र, विशेषकर बरार के मारवाड़ियों और वहाँ के निवासियों, में जो सामन्जस्य पाया जाता है उसका श्रेय भी आपको ही दिया जाना चाहिए। महाराष्ट्र प्रान्त के मारवाड़ी समाज की आज जो प्रतिष्ठा, सम्मान एवं गौरव है, उस सबका निर्माण आपने ही किया है।

आपके प्रयत्नों से सैकड़ों बहनें परदे के पाप से मुक्त हुई हैं। आप वर्षों से परदा प्रथा के अनुसार होनेवाले विवाहों में सम्मिलित तक नहीं होते हैं। इसका समाज पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा है। स्त्रियों के सम्बन्ध में आपके विचार पूर्ण क्रान्तिकारी एवं परिवर्तित परिस्थितियों के अनुकूल हैं। आप स्त्रियों के पुरुषों से मोक्ष (Divorce) प्राप्त करने के पूर्ण पक्ष में हैं। आप लिखते हैं:—
"पुरुषों ने अपनी स्त्रियों को बेचा है, दाँव पर लगाया है। अपनी धर्म रक्षा के लिए अपने लाड़ले लालों को मारकर उनका माँस पकाया है। फिर मैं धर्म पालन के निमित्त पति से अलग होऊँ तो कौन आश्चर्य है। नवीनता भले ही हो।"

बियाणीजी के ये विचार स्वतन्त्रता से बहुत पहले के हैं, जबकि हिन्दू समाज में स्त्रियों के पतियों से मोक्ष प्राप्त करने की बात सोची भी नहीं जा सकती थी, अतः इन्हें क्रान्तिकारी कहना ही ठीक होगा। परन्तु आज की बदली हुई परिस्थितियों में हम इन विचारों का व्यावहारिक रूप देख सकते हैं तथा ये विचार समयानुकूल एवं न्यायसंगत कहे जा जाते हैं।

बियाणीजी विवाह को प्रेम का बन्धन मानते हैं, न कि स्त्री या पुरुष का क्रय-विक्रय। वे लिखते हैं:—"विवाह प्रेम का बन्धन है, उसकी जड़ पवित्र प्रेम ही हो सकता है। उसकी जड़ों में आर्थिक जल का सिंचन, अनावश्यक ही नहीं, हानिकारक भी है। ज्यों-ज्यों समाज की आर्थिक-व्यवस्था में परिवर्तन होगा, लड़के-लड़की में अपने व्यक्तित्व का स्वाभिमान निर्माण होगा, व्यक्तिगत जीवन की प्रतिष्ठा को अक्षुण्ण बनाए रखने की प्रबल भावना जागृत होगी और स्त्री-पुरुषों की समानता का व्यवहार स्थापित होगा, तब दहेज के समान किसी भी प्रथा का समाज में अस्तित्व नहीं रहेगा।" (दैनिक विश्वमित्र कलकत्ता २०-१०-६४)। बियाणीजी का विश्वास है कि जैसे-जैसे सामाजिक जीवन पवित्र होगा, वैसे-वैसे ही दहेज आदि सामाजिक कुरीतियाँ भी समाप्त होती जाएँगी। सामाजिक जीवन को पवित्र बनाने के लिए युवक वर्ग को इस ओर अपने उत्तरदायित्व को समझना चाहिए तथा उसके लिए भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

किसी भी समाज को बियाणीजी जैसा रत्न पाकर गर्व हो सकता है। समाज की जिस प्रकार सेवा आपने की है, उसे बाहर के लोग कम जानते हैं, क्योंकि उनका इस समाज से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। साथ ही एक विशेषता यह भी है कि आप अपने समाज की सेवा करते हुए कभी भी साम्प्रदायिकता के रोग के शिकार नहीं हुए। छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी जातिगत सभाओं में भी उन्होंने अपनी राष्ट्रीय चेतना को अक्षुण्ण रखा है। इन सेवाओं के फलस्वरूप १९६४ में आपको 'अखिल भारतीय मारवाड़ी सम्मेलन' का सभापतित्व ग्रहण करना पड़ा।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार के लिए आपने बरार में सर्वप्रथम प्रयत्न किया। बरसों प्रान्तीय समाचार समिति के संयोजक रहे। बरार जैसे अहिन्दी भाषी प्रान्त से 'नव राजस्थान' नामक हिन्दी साप्ताहिक पत्र भी निकाला, जिसके संचालन में आपको काफी घाटा भी उठाना पड़ा। दुर्भाग्यवश वह पत्र आगे चलकर बन्द हो गया। आपने कलात्मक और उपयोगी साहित्य के प्रकाशन हेतु तथा लेखकों और कलाकारों को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से 'हिन्द प्रकाशन' नामक एक प्रकाशन संस्था भी स्थापित की जो आज तक उत्तरोत्तर प्रगति कर रही है।

आप मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के दो बार अध्यक्ष चुने गए, तथा वर्तमान में विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आप सभापति हैं। आपके सत् प्रयत्नों से ही नागपुर में 'मोर हिन्दी भवन' की स्थापना की गई। आज इसी भवन में विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन का कार्यालय है। आप हिन्दी के एक कुशल लेखक हैं, तथा आपके द्वारा लिखित अनेकों लेख, निबन्ध, कहानियाँ और गद्य-गीत प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। आपके द्वारा प्रकाशित पुस्तकों में 'कल्पना-कानन', 'धरती और आकाश', तथा 'विनोबा-जीवन झाँकी' विशेष महत्व की है। आपने हिन्दी साहित्य की जो सेवा की है, उसके लिए हिन्दी जगत् आपका सदैव आभारी रहेगा।

हिन्दी के प्रचार और प्रसार के साथ ही आपने मराठी भाषा की प्रगति के लिए भी प्रयास किया है। जिस समय मराठी भाषा का विदर्भ साहित्य सम्मेलन अकोला में हुआ, वे उसके स्वागताध्यक्ष थे। मराठी में 'मातृभूमि' जैसे प्रसिद्ध समाचार-पत्र की स्थापना भी आपके द्वारा ही की गई। मराठी भाषा पर भी आपका उतना ही अधिकार है जितना हिन्दी पर। जब आप मराठी में बोलते हैं, तब ऐसा प्रतीत नहीं होता कि आप मूल मराठी भाषी नहीं है।

विदर्भ के नेतृत्व के लम्बे इतिहास में बियाणीजी की राजनैतिक और सामाजिक नेता के रूप में जहाँ तक सफल और सिद्धहस्त रहे, वहीं आपने अपना एक स्कूल (School of thought) भी तैयार किया, तथा अनेकों कार्यकर्ताओं और संस्थाओं को जन्म दिया। व्यापारिक क्षेत्र में आपने एक जागृति प्रदान की। बरार चेम्बर ऑफ कामर्स के आप जन्मदाता हैं। राजस्थान प्रिंटिंग प्रेस जैसे प्रमुख छापखाने के आप मैनेजिंग डायरेक्टर तथा अनेक व्यापारिक संस्थाओं के डायरेक्टर रह चुके हैं। आप फेडरेशन ऑफ चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स के कार्यकारिणी के सदस्य भी रहे। राजनीति के समान व्यापारिक क्षेत्र में भी आपकी सलाह मूल्य रखती है।

इस प्रकार बियाणीजी का आज तक का जीवन समाज सेवा और निर्माण कार्य की एक लम्बी कहानी है। विदर्भ और बरार के निर्माणकर्ताओं में आप अग्रणी रहे हैं। वास्तव में विदर्भ के पिछले ४० वर्ष के जीवन में ऐसा कोई भी कार्य नहीं, जिसके साथ कि आपका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में सम्बन्ध न रहा हो।

आप १९६२ से पुनः कांग्रेस में सम्मिलित हो गए हैं, जिससे कि आपने विदर्भ के प्रश्न पर, कुछ समय पूर्व त्यागपत्र दे दिया था। तबसे आप स्थायी रूप से इन्दौर में बस गए हैं, और एक अत्यन्त उच्चकोटि की विचार-गर्भित पाक्षिक 'विश्व-विलोक' का सम्पादन कर रहे हैं।

निर्भीक वक्ता

बियाणीजी ने जो कुछ भी लिखा है अथवा जो कुछ भी कहा है, उस सबमें हमें उनकी स्पष्टवादिता एवं निर्भीकता के दर्शन होते हैं। उनकी स्पष्टवादिता एवं निर्भीकता उनके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता है। आज हमें देश में सर्वत्र ऐसे लोगों के दर्शन होते हैं, जो अपनी भाषा न बोलकर दूसरों की भाषा बोलते हैं। ऐसे लोगों में न अपना हृदय होता है और न अपना मस्तिष्क। दूसरों की गाथा गाना तथा दूसरों के बल पर जीना ही ऐसे लोगों के जीवन का लक्ष्य होता है। इस प्रकार के लोग समाज तथा देश दोनों के लिए ही घातक होते हैं। आज जो देश के जीवन में सर्वत्र गिरावट दिखाई देती है, उसका मुख्य कारण ऐसे ही लोगों के हाथों में राष्ट्रीय जीवन की बागडोर होना है। किसी भी देश की उन्नति के लिए आवश्यक है कि वहाँ के लोग न्यायप्रिय, स्पष्टवादी एवं निर्भीक हों। जिस देश में लोग कायर होते हैं तथा उनके विचार उलझे हुए होते हैं, वह देश कभी प्रगति नहीं कर सकता। कायरता द्विविधा को जन्म देती है। द्विविधाग्रस्त मनुष्य अथवा देश कभी भी प्रगलि के पथ पर आगे नहीं बढ़ सकता। जान स्टुअर्ट मिल (John Stuart Mill) ने इसी तथ्य की ओर संकेत करते हुए एक स्थान पर कहा है—"Truth emerges from errors, while confusion leads to death"

बियाणीजी का हृदय विशाल है तथा मस्तिष्क स्पष्ट। क्योंकि उनका जीवन संघर्षों के बीच पला और निखरा है तथा उन्हें जीवन में अर्थ अथवा पद किसी से भी आसक्ति नहीं है, अतः वे निर्भीकतापूर्वक अपने विचारों को व्यक्त करने में समर्थ हैं। आप अपनी बात कहने में कभी भी नहीं हिचकिचाते हैं। साधारण व्यक्तियों की तो बात ही क्या, गांधीजी तथा सरदार पटेल जैसे प्रभावशाली व्यक्तियों के विचारों का भी आपने, उनसे कई बातों में सहमति न होने पर, निर्भी-कतापूर्वक खण्डन किया। आपने गांधीजी के अनुशासन को तो स्वीकार किया तथा उनके आह्वान पर कई बार जेलयात्रा की, परन्तु आप उनके चरखे और खद्दर के द्वारा देश की गरीबी मिटाने के विचार से सहमत नहीं थे। अपना मत आपने कई बार गांधीजी से स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया। इसी प्रकार आपने बरार के निज़ाम राज्य से पृथक्करण के प्रश्न पर सरदार पटेल से टक्कर ली, और अन्त में आप बरार को मुक्त करा कर ही रहे। विदर्भ के प्रश्न को लेकर आपने कांग्रेस तथा मन्त्री पद से त्यागपत्र तक दे दिया। इस प्रकार आपने अपने सक्रिय राजनैतिक जीवन में सदैव निर्भीकतापूर्वक अपने उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु संघर्ष किया। आप कभी भी किसी दबाव में आकर अपने विचारों से विचलित नहीं हुए। ठण्डे मस्तिष्क

से आपने जो भी विचार किया, आप सदैव उस पर वज्र की भाँति डटे रहे। चाहे उसके लिए आपको कुछ भी उत्सर्ग क्यों न करना पड़ा हो। असत्य विचारों को त्यागने के लिए आप जितने तत्पर रहते हैं, उतने ही उत्सुक आप सत्य विचारों को ग्रहण करने में भी रहते हैं। एक बार किसी वस्तु की उपयोगिता एवं सत्यता का विश्वास होने पर, फिर उसे आप कभी भी नहीं छोड़ते। ऐसा वही व्यक्ति कर सकता है, जो निर्भीक हो तथा जीवन में सब प्रकार के प्रलोभनों से दूर हो। यह बात बियाणीजी के जीवन में शत्-प्रतिशत् देखी जा सकती है। राजनैतिक जीवन में आपकी असफलता का मुख्य कारण भी आपकी स्पष्टवादिता एवं निर्भीकता ही है।

लेखन के क्षेत्र में भी आपकी स्पष्टवादिता किसी से छिपी नहीं है। यद्यपि आपने बहुत अधिक नहीं लिखा है, फिर भी आपके द्वारा जो कुछ भी लिखा गया है वह पूर्ण एवं स्पष्ट है। आपके विचार एकदम सुलझे हुए हैं तथा आप प्रत्येक बात को स्पष्ट शब्दों में कहने के आदी हैं। समय और परिस्थितियाँ आपके विचार-प्रवाह को रोकने में असमर्थ हैं। भले ही आपके विचार किसी को अच्छे लगें या बुरे, आप उनका स्पष्टीकरण निःसंकोच भाव से करते हैं। आचार्य विनोबाजी के प्रति आपकी असीम श्रद्धा है, पर फिर भी आप उनके विचारों तथा कार्य करने के ढंग की कटु आलोचना करते हुए देखे गए हैं। उदाहरण के लिए आपने 'विश्व-विलोक' के सम्पादकीय लेखों में विनोबाजी की कार्य पद्धति की तीव्र आलोचना की है। १ सितम्बर, १९६४ के 'विश्व-विलोक' के अंक में आप लिखते हैं—"आचार्य विनोबाजी ने अपनी शक्ति जनता के गिरे हुए या गिरते हुए स्तर को उठाने की अपेक्षा साधारण काम में समर्पित कर दी है, और यह कार्य है भूदान यज्ञ। भूदान का कार्य अपना कुछ स्थान रखता है, पर इस आन्दोलन से जनता में कोई नैतिक शक्ति का निर्माण नहीं हुआ। प्रत्युत हमारी मान्यता है कि भूदान आन्दोलन में सम्पत्ति के कम होनेवाले प्रभाव को कुछ अंश में पुनःस्थापित करने का कार्य किया है।" आप आगे लिखते हैं—"दानदाता की कृपा है, लेनेवाले का अधिकार नहीं। समाज की नव रचना सम्पत्तिशालियों की कृपा से होनेवाली नहीं है। दान का प्रवाह हज़ारों वर्षों से बह रहा है पर दान से गरीबी का विनाश नहीं हुआ, प्रत्युत गरीब परावलम्बी बने हैं। इस कार्य में भी शासन का सहयोग रहा है और शासन ने आचार्य विनोबा भावे के नैतिक प्रभाव का प्रयोग किया है। समय-समय पर शासन के नेता विनोबा से मिलते रहे और विनोबा से अच्छी बात करते रहे और विनोबा तथा उनके साथी शासन के प्रमाण पत्रों या सर्टिफिकेट्स से सन्तुष्ट होते रहे। शासन ने विनोबा की शक्ति का शोषण किया है, और उस शक्ति को अत्यन्त साधारण कार्य में संलग्न होने दिया है।"

आपकी आलोचनाएँ किसी द्वेष भाव से प्रेरित न होकर, उनकी तीव्र अनुभूति तथा परिस्थितियों के विशिष्ट विश्लेषण पर आधारित रहती हैं। बियाणीजी का भारत से अगाध प्रेम है, तथा आपका दृष्टिकोण आलोचनात्मक होते हुए भी पूर्ण राष्ट्रीय है। साथ ही आपके आलोचनात्मक निबन्ध जनसाधारण के कल्याण की भावना को दृष्टि में रखकर लिखे गए हैं तथा उनमें शोषितों और दलितों के लिए आत्मभाव रहता है। सारांश में, यदि उनके लेख और विचार एक ओर स्पष्ट-वादिता एवं निर्भीकता के द्योतक हैं, तो दूसरी ओर वे वर्तमान समाज का मार्ग-दर्शन भी करते हैं। इतना ही नहीं, वरन् उनके विचार भावी पीढ़ी का मार्ग दर्शन करने में भी सक्षम है।

विचार जगत

मनुष्य जीवन के दो पक्ष होते हैं—एक व्यावहारिक और दूसरा चिन्तनपरक। यद्यपि दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है और एक को देखकर दूसरे का पता लगाया जा सकता है, फिर भी संसार में अनेकों व्यक्ति हैं जिनके व्यावहारिक जीवन और चिन्तन में विरोध दृष्टिगोचर होता है। कुछ व्यक्ति अत्यन्त व्यवहार कुशल होते हैं तथा उनके बाह्य जीवन को देखकर हमें यह भ्रम हो जाता है कि इनके विचार भी उतने ही श्रेष्ठ और उदात्त हैं जितना कि उनके जीवन का व्यावहारिक पक्ष। इस श्रेणी के व्यक्ति संसार में सफल होकर भी उच्चकोटि के चिन्तनशील व्यक्तियों में स्थान ग्रहण नहीं कर सकते, और न ही ऐसे व्यक्तियों का महत्व इतिहास की दृष्टि से स्थायी होता है। इसके विपरीत उच्चकोटि के विचारक और विवेकपूर्ण व्यक्ति व्यावहारिक जीवन में बहुत कुछ असफल होते देखे जाते हैं। ऐसे व्यक्ति बहुत कम होते हैं, जिनके विचारों में गहनता होती है तथा वे उनको व्यावहारिक जीवन में ढाल पाते हैं। महात्मा गांधी और विनोबा भावे ऐसे ही व्यक्तियों में आते हैं।

वास्तव में किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का सही मूल्यमापन उसके विचारों को देखकर ही किया जा सकता है। जिस व्यक्ति में चिन्तन की जितनी गहनता होगी वह व्यक्ति उतना ही श्रेष्ठ होगा, तथा उसकी कीर्ति भी उतनी ही स्थायी होगी। विश्व की प्रगति के हेतु श्रेष्ठ विचारों का होना परमावश्यक है। विचारों में क्रान्ति होने पर जीवन में क्रान्ति होना निश्चित है। संसार में किसी भी परिवर्तन के लिए अपेक्षित है कि विचारों में सर्वप्रथम परिवर्तन किया जाय। क्योंकि विचारकों का कार्य संसार को नवीन विचार देना है, अतः उनका मूल्य भी सबसे अधिक है।

श्री बियाणीजी का मूल्य केवल स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानी, सामाजिक कार्य-कर्ता तथा अनेकों संस्थाओं के निर्माणकर्ता के रूप में ही नहीं है, वरन्, इसलिए भी

है कि वे एक उच्चकोटि के विचारक हैं। वास्तव में वे पहले विचारक हैं, और फिर कार्यकर्ता। विचार उनकी खुराक है, अतः इनके अभाव में जीवित रहने की कल्पना करना भी उनके लिए दुर्लभ है। प्रतिदिन कुछ लिखना और पढ़ना तथा मनन करना उनके जीवन का अभिन्न अंग है। उनके विचार उनकी कीर्ति को अमरता प्रदान करने के लिए पर्याप्त हैं। बियाणीजी के व्यक्तित्व का सही मूल्यांकन करने के हेतु उनके विचारों को समझना आवश्यक है।

विश्व-चिन्तन और नैतिकता

बियाणीजी के विचारों पर भारतीय दर्शन की स्पष्ट छाप दिखाई पड़ती है। भारतीय दर्शन में ईश्वर को विश्व का बीज रूप माना गया है। वह निगुर्ण है, निराकार है, फिर भी उसमें सृष्टि को जन्म देने की क्षमता है। बियाणीजी भी इस तथ्य को पूर्णतया स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार 'ईश्वर ने इस सृष्टि का निर्माण किया है, अतः उसके अस्तित्व और शक्ति का सब को ध्यान है। बीज रूपी ईश्वर का विकास या विस्तार विश्व वृक्ष है। निगुर्ण शक्ति का सगुण में रूपान्तर है। विश्व का अर्थ ही रूपान्तर है, और विविधता। पर उस विविधता के गर्भ में एकता विराजमान है। उस एकता में ही ईश्वर की शक्ति का आभास होता है। क्योंकि ईश्वर एक है, अतः बाह्य विविधता में एकता देखी जा सकती है। अर्थात् विश्व में जो विविधता दिखाई देती है, उसके मूल में एकता है'। यह विचार भारतीय दर्शन में सर्वत्र देखने को प्राप्त होता है। बियाणीजी भी इस विचार-धारा से पूर्ण सहमत हैं, परन्तु उनके कहने का ढंग अपना है। वे लिखते हैं—"विश्व-वृक्ष विभिन्नतामय है। उसकी जड़ें हैं, तना है, डालियाँ हैं, पत्ते हैं, पुष्प हैं, फल हैं। जड़ों का रस समस्त वृक्ष का जीवनदाता है और उस रस का वृक्ष के जीवन में भिन्न-भिन्न परिणाम है। विश्व की व्यापकता में जड़ है, चेतन है। निर्माण है, विनाश है। शक्तियों का संघर्ष है। सारा विश्व वृक्ष एकता के आवरण से आच्छादित है, पर उस आवरण के अन्तर्गत विविधता का विकास है"।

इस प्रकार सर्वत्र विविधता में एकता व्याप्त है। विश्व का मूल स्रोत ईश्वर है, वही विश्व का जन्मदाता है तथा उसी में सम्पूर्ण विश्व अन्त में जाकर विलीन हो जाता है। ईश्वर के बिना विश्व की कल्पना भी निर्मूल है। वास्तव में सम्पूर्ण विश्व ही ईश्वरमय है, पर ईश्वर विश्व नहीं। मछली सागर में रहती है, वहीं जन्म लेती है, और वहीं विलीन हो जाती है। मछली सागर नहीं, सागर का भिन्न स्वरूप है। अतः विश्व में सर्वत्र ईश्वर व्याप्त है, पर उसे ईश्वर नहीं समझा जा सकता।

ईश्वर को सम्पूर्ण सृष्टि का स्रोत मानकर भी बियाणीजी केवल ईश्वर के हाथ की कठपुतली मनुष्य को नहीं समझते। मनुष्य में बुद्धि है, विवेक है, जिसके आधार पर वह सत्य की खोज करते हुए सर्वव्यापी निर्णय करता है तथा विश्व को अपने सतत प्रयत्नों से एक सूत्र में बाँधने का प्रयास करता है। इस दृष्टि से बियाणीजी के विचार श्री अरविन्द घोष के विचारों से मेल नहीं खाते। श्री अरविन्द घोष के मतानुसार ईश्वर ही एक मात्र कर्ता है। हम जो कुछ भी करते हैं वह अपनी शक्ति से न करके केवल यन्त्रवत् किसी शक्ति के इंगित पर करते हैं, और हमें संचालित करनेवाली शक्ति ईश्वर है। अतः हमें किसी भी कार्य के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता। इसके विपरीत बियाणीजी मनुष्य को स्वतन्त्र रूप से सभी कार्यों का कर्ता स्वीकार करते हैं। उनके मतानुसार विश्व-वृक्ष का सर्वश्रेष्ठ फल मानव है, तथा उस फल से पुनरपि विश्व-बीज का निर्माण मानव-शक्ति का प्रयास है।

गांधीजी की भाँति, बियाणीजी भी ईश्वर को सत्य रूप में स्वीकार करते हैं। उनके मतानुसार सत्य ईश्वर है, ईश्वर शक्ति है। शक्ति की विजय में सत्य की विजय है। वे लिखते हैं:—"शक्ति नानाविध है। सत्य की विजय के अनेक प्रकार हैं। इसे देखने की शक्ति हम प्राप्त करें। नाश, विकास, गति, ऊर्ध्वगमन, पतन, जन्म, मृत्यु सब में सत्य की विजय का स्वरूप स्पष्ट दिखाई देता है। अर्थात् सत्य की मूल शक्ति विविध रूपों में विश्व के समस्त क्षेत्रों में कार्य करती है। जड़-चेतन समस्त विश्व-शक्तिरूपा है। सत्य रूपी शक्ति से संचालित है। वहाँ निर्माण शक्ति है, वहाँ विनाश शक्ति है और शक्तियों का संघर्ष"।

सत्य के सौन्दर्य को परखने के लिए प्रेम आवश्यक है। प्रेम में सौन्दर्य है, शक्ति है तथा सत्य है। बियाणीजी के शब्दों में प्रेम में निर्माण का दर्शन है। मानव अपने निर्माण से प्रेम करता है। पशु-पक्षी अपने निर्माण से प्यार करते हैं। जड़ पदार्थ का एक कण दूसरे कण से आकर्षित है। इस प्रकार शक्ति का अज्ञात अप्रकट प्रवाह हमारे सारे विश्व में व्याप्त है।

बियाणीजी विश्व की सम्पूर्ण व्यवस्था को सत्य-रूपा मानते हैं, क्योंकि वह ईश्वर की बनाई हुई व्यवस्था है। इस सत्य-रूपा व्यवस्था में मानव ने न्यायरूपी नवशक्ति का निर्माण किया है। पर सत्य उसी प्रकार स्थायी है जिस प्रकार की ईश्वर। मानव का न्याय चल है। विभिन्न स्थानों में विभिन्न अवसरों पर न्याय का भिन्न स्वरूप रहा है। न्याय की सम्पूर्ण रक्षा तभी होगी, जबकि न्याय और सत्य एक रूपा होंगे। सत्य अपनी शक्ति पर टिका हुआ है, पर न्याय को शक्ति

के आधार की आवश्यकता है। सत्य क्रियात्मक शक्ति है, स्वयं प्रभावी है। न्याय स्वयं में निष्क्रिय है। किसी शक्ति के सहारे ही वह क्रियात्मक होता है। अतः मानव का यह कर्तव्य है कि वह सत्य के आधार पर न्याय की प्रस्थापना करे।

बियाणीजी मानव को सत्य का अनुसरण करने की प्रेरणा देते हैं। उनका विश्वास है कि केवल सृजनात्मक शक्ति का अनुसरण करके ही मानव सत्य मार्ग पर आगे बढ़ सकता है। अजस्र शक्ति के प्रयोग द्वारा ही सत्य की प्राप्ति सम्भव है।

निष्क्रिय व्यक्ति सत्य से दूर चला जाता है। जीवन का अर्थ ही क्रियात्मक शक्ति का भरपूर उपयोग करना है। जो व्यक्ति निष्क्रिय एवं निस्सहाय होकर बैठ जाता है तथा मृत्यु से डरता है, वह सत्य की खोज करने में असमर्थ है। गांधीजी भी निर्भयता को सत्य प्राप्ति के हेतु आवश्यक मानते थे। बियाणीजी भी इसी सत्य में विश्वास करते हैं, तथा मनुष्य को अपने को पहचान कर जीवन-पथ पर आगे बढ़ने को प्रेरित करते हैं। वे लिखते हैं:—"मानव का जन्म है तो उसका विनाश भी निश्चित है। जीवन प्रयास है, जीवन प्रकाश है। प्रकाश सायास और सप्रयत्न है। मृत्यु अन्धकार है, अनायास है। अन्त अवश्यम्भावी है। अन्त अनाधीन है। जीवन का प्रभाव मृत्यु है। जीवन विकास प्रयास है, प्रयत्न है और है शक्ति का प्रयोग। प्रयत्न में ही मानवता है। मानव जीवन विश्व में परमेश्वर की सर्वश्रेष्ठ धरोहर है। अतः जीवन के लिए यत्न करना मानव का सर्वोच्च कर्तव्य है, और यही मानव जीवन की सफलता है"।

इस प्रकार बियाणीजी का विश्वास एक ऐसे जीवन में है जो शक्ति से पूर्ण है तथा जो आगे बढ़ने के लिए सदैव लालायित रहता है, क्योंकि शक्ति के प्रयोग द्वारा ही सत्य तथा मानवता की प्राप्ति सम्भव है। पर शक्ति का प्रयोग किसी भी रूप में, विध्वंसात्मक कार्यों के लिए करना बियाणीजी को स्वीकार नहीं। उसका प्रयोग केवल निर्माण के लिए ही होना चाहिए। वे अपने मत को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं:—"मानव के करुण, प्रेम आदि गुणों की शक्ति में और स्वार्थ, द्वेष आदि गुणों में संघर्ष चलता है। गुण की शक्ति के अनुसार हार-जीत होती है। विश्व में सत्य-असत्य शक्ति को शक्तियों के संघर्ष से ही मापा जा सकता है। अतः शक्ति संचय या शक्ति संग्रह और उसके ज्ञानमय उपयोग में ही मानव व जीवन की सफलता या विजय है"।

वास्तव में बियाणीजी का तात्पर्य नैतिक शक्ति से है। अनैतिक शक्ति मानव जीवन तथा आगे चलकर समाज और विश्व को पतन की ओर ले जाती है। उनके अनुसार नैतिक शक्ति ही मानव जीवन के विकास की जड़ है। वे भौतिकवादी

पाश्चात्य दर्शन से सहमत नहीं, जो केवल मनुष्य तथा समाज की भौतिक प्रगति पर ही एक मात्र बल देता है। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं कि वे भौतिक प्रगति में तनिक भी विश्वास नहीं रखते। यहाँ उनका महात्मा गांधी से मतभेद है। गांधीजी का सम्पूर्ण दर्शन आध्यात्मवाद पर आधारित था, और वे इस कारण मनुष्य और समाज की आर्थिक प्रगति––पाश्चात्य ढंग की आर्थिक प्रगति––के बिल्कुल भी पक्ष में नहीं थे। बियाणीजी के दर्शन में पाश्चात्य भौतिकवादी दर्शन और गांधीवाद दोनों का समन्वय दिखाई देता है। वे मनुष्य तथा समाज की आर्थिक एवं भौतिक प्रगति में भी विश्वास रखते हैं तथा साथ ही मनुष्य और समाज के नैतिक चरित्र पर भी बल देते हैं। उनका कहना यह है कि मनुष्य को भौतिक प्रगति के आवेश में नैतिक पक्ष को नहीं भूल जाना चाहिए। उनका विश्वास है कि नैतिक जीवन जितना बलवान होगा उसी प्रमाण में व्यक्ति का विकास होगा। नैतिक दुर्बलता व्यक्ति के विकास की निर्बलता है। समाज या राष्ट्र व्यक्तियों की शक्ति पर पनपता है। अतः जिस देश के व्यक्तियों का नैतिक स्तर गिर जाता है, उस देश की शक्ति भी निर्बल हो जाती है।

नैतिक शक्ति के मूल का विवेचन करते हुए वे बताते हैं कि मानव जीवन में तीन शक्तियों का समन्वय है। ये शक्तियाँ हैं:—(१) भावना की शक्ति, (२) विचार शक्ति तथा (३) विवेक की शक्ति। पर इन तीनों शक्तियों में प्रधान शक्ति विवेक की शक्ति है। मानव जीवन में विवेक शक्ति जितनी बलवान होगी, उतना ही मानव का नैतिक स्तर उच्च और बलवान होगा, और वह सत्य के अधिक निकट होगा।

विवेक मनुष्य को उचित-अनुचित का ज्ञान कराता है, परन्तु उसकी आवाज बहुधा क्षीण रहती है और मनुष्य अन्याय को जानते हुए भी जीवन का अवलम्बन करता है। अतः प्राणी शास्त्र की दृष्टि से तथा समाज शास्त्र की दृष्टि से मनुष्य की विवेक शक्ति जितनी प्रभावी होगी, उतना ही व्यक्ति का नैतिक बल भी प्रभावी होगा। भावना, बुद्धि और विवेक या सद्विवेक बुद्धि इन तीनों में से मानव शास्त्र की दृष्टि से सद्विवेक बुद्धि मानव की सर्वश्रेष्ठ शक्ति है, और इस पर मानव का नैतिक स्तर अवलम्बित है। अतः समाज के नवनिर्माण के मार्ग में सबसे प्रथम कार्य है–इस सद्विवेक को इतना बलवान बनाना कि वह अनुचित कार्य के मोह में न फँसे, और जो न्याय दिखाई देता है उसी मार्ग पर जीवन को निश्चय के साथ ले जा सके।

नैतिक शक्ति का मूल स्रोत यद्यपि मानव के अन्तस्थ में है और वह है उसकी विवेक शक्ति, परन्तु यह अन्तस्थ शक्ति बाह्य शक्ति से प्रभावित होती है और

बाह्य शक्तियाँ अन्तस्थ शक्ति को ढालने का कुछ कार्य करती हैं। बियाणीजी के अनुसार वे बाह्य शक्तियाँ हैं मानव समाज की सामयिक स्थिति और व्यवस्था। इन शक्तियों में सर्वश्रेष्ठ शक्ति है मानव समाज द्वारा निर्मित धर्म-व्यवस्था तथा उस समय की प्रभावी समाज-व्यवस्था। धर्म का मनुष्य की नैतिक शक्ति पर प्रभाव पड़ता है। मानव समाज के आरम्भकाल में धर्म ने मानव को नीति का पाठ पढ़ाया और उस नीति के अवलम्बन के लिए ईश्वरीय शक्ति के भय का उपयोग किया। जब तक इस ईश्वर की शक्ति का भय समाज में प्रभावी रहता है तब तक यह शक्ति विचलित होनेवाले मानव मन को नीति के क्षेत्र में बनाए रखने का कार्य करती है। अतः अन्तस्थ नीति शक्ति निर्बल होने पर भी भय के कारण व्यक्ति नीतिमान बने रहने का प्रयत्न करता है।

इस सन्दर्भ में बियाणीजी राजसत्ता की उत्पत्ति के कारण विवेक शक्ति का कम होना तथा मनुष्य का सांसारिक वस्तुओं के प्रति अत्यधिक आकर्षण बताते हैं। वे लिखते हैं—"जब सांसारिक वस्तुओं का मोह मानव जीवन में प्रभावी होने लगा, तब राजसत्ता ने शासन शक्ति द्वारा व्यक्तियों को नियन्त्रित करने का कार्य किया"। व्यक्ति का निर्बल मन अनीति के लिए चलायमान हो जाता है, परन्तु शासन के दण्ड-भय से वह अपने आपको शासन की सीमा में बनाए रखने का प्रयत्न करता है। विवेक-शक्ति तथा धर्म-शक्ति का भय कम होने पर यद्यपि राज्यसत्ता मनुष्य को नियन्त्रित करने का कार्य करती है, परन्तु यह मानना ही होगा कि भय पर आधारित नीति किसी भी व्यक्ति और राष्ट्र को स्थायी शक्ति प्रदान नहीं कर सकती। वह तो भय प्रभावित नीति है। स्वयं स्फूर्त नीति शक्ति नहीं। नीति सत्ता का सत्य दर्शन निर्भयता में है। इस तर्क से बियाणीजी गांधीजी की भाँति ही सहमत हैं। बियाणीजी गांधीजी की भाँति साध्य की अपेक्षा अच्छे साधन पर अधिक जोर देते हैं। वे कहते हैं—"नीतिमत्ता के क्षेत्र में साध्य की अपेक्षा साधनों का अधिक महत्व होता है।" नीतिमान व्यक्ति उचित साधन का अवलम्बन करता है, किसी वस्तु को प्राप्त करने के लिए वह अनुचित व गौण साधन का उपयोग नहीं करता, और जब उचित साधन का उपयोग करता है तब उसे निर्भय-वृत्ति का अवलम्बन करना ही होता है। अनुचित साधनों का उपयोग निर्भयता के साथ प्रायः नहीं किया जाता। अतः निर्भयता जीवन के कार्य क्षेत्र में बहुत बड़ी शक्ति है, और यह शक्ति व्यक्ति को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नीतिमान रखने का सहारा होती है।

सारे गुणों की शक्ति का स्रोत अभय है, और इसमें से अनेक गुणों का प्रवाह स्रवित होता है। जो जीवन की सरिता को सर्वत्र सन्मार्ग में प्रवाहित करता रहता

है । बियाणीजी भारत की परिस्थितियों का अवलोकन करते हुए लिखते हैं कि देश को आज सर्वश्रेष्ठ आवश्यकता है जीवन के सर्वव्यापी क्षेत्र में सही मार्ग का अवलम्बन, उसका निर्भयता के साथ पालन और जीवन की सर्वव्यापी उँचाई । इसी में व्यक्ति के जीवन की सफलता है, और इसी में है, किसी भी समाज का विकास और शान्तिमय प्रगति ।

बियाणीजी नैतिकता को, आध्यात्मवादियों की भाँति, केवल मनुष्य के अपने आत्मिक विकास के लिए ही आवश्यक नहीं मानते, प्रत्युत्त वे तो इसे सामाजिक व्यवस्था के लिए भी आवश्यक समझते हैं । जैसा कि कहा जा चुका है, बियाणीजी समाज तथा विश्व की कोरी भौतिक प्रगति से सन्तुष्ट नहीं हैं । आज जो सर्वत्र विकृति दिखाई देती है, उसका कारण उनकी दृष्टि में व्यक्ति तथा समाज के नैतिक स्तर की गिरावट ही है । अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए बताते हैं कि मानव समाज की प्रगति या विकास का अर्थ है व्यवस्था । व्यवस्था का आधार है विन्यास, अर्थात् हर वस्तु की या हर व्यक्ति की अपने योग्य स्थान पर स्थापना । व्यवस्था में सर्वत्र सुख है, शान्ति है, सौन्दर्य है । किसी क्षेत्र की व्यवस्था में जब गड़बड़ होती है तब समस्त जीवन अव्यवस्थित, अनियमित और पतनोन्मुख हो जाता है । समाज में न कर्तव्य की पवित्रता रहती है और न अधिकारों का आदर । कर्तव्य की विस्मृति से अन्यों के अधिकारों पर आक्रमण होता है और स्वार्थ सर्वोपरि ध्येय बन जाता है । अधिकारों की माँग जब अपने क्षेत्र से बाहर जाकर अन्यों के अधिकारों में हस्तक्षेप करती है तब व्यक्ति का जीवन संघर्षमय और शोषण प्रधान बन जाता है । निर्बलों से प्राप्त करने की भावना प्रबल हो जाती है और सबलों के अधीन रहने की हीन भावना लाँछनास्पद नहीं गिनी जाती । संक्षेप में मानव का सारा जीवन निम्नस्तर का बन जाता है और समाज में विश्वास का अभाव पैदा हो जाता है ।

बियाणीजी प्राचीन भारत की समाज-व्यवस्था तथा उसके उच्च नैतिक स्तर के प्रशंसक अवश्य हैं,परन्तु वे यह कभी नहीं भूलते कि आज हमारे समाज की दशा अत्यन्त शोचनीय है । वे यह जानते हैं कि प्राचीन भारत के गौरव के गीत गाकर ही हमारा कल्याण नहीं हो सकता । इसके लिए हमें दृढ़ प्रतिज्ञ होकर परिश्रम करना होगा । अपनी गिरावट के मूल कारणों को समझकर उन्हें समाप्त करना होगा । भारत की वर्तमान स्थिति का अवलोकन करते हुए वे लिखते हैं कि आज भारत में सर्वत्र नैतिक पतन दिखाई देता है । जीवन स्तर निम्न कोटि का है । स्वार्थ चारों ओर फैला हुआ है और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सत्य पर से विश्वास उड़ा

हुआ दिखाई देता है। राजकीय क्षेत्र वर्तमान मानव-समाज में जीवन-व्यवस्था का प्रधान क्षेत्र है। उस क्षेत्र में चारों ओर गिरावट है, अविश्वास है, और शासन के बड़े से लगाकर छोटे अधिकारियों तक में भ्रष्टाचार व्याप्त है। धर्म-क्षेत्र—जिसने मानव-समाज को न्याय और सत्य का पाठ पढ़ाया—भी आज निस्तेज दिखाई पड़ता है। धर्म गुरुओं में व्यावहारिक शक्ति का अभाव है और उनका कार्य आज केवल, अपरिणामकारी उपदेशक का रह गया है। आर्थिक क्षेत्र की अवस्था भी ऐसी ही है। जिन व्यापारियों के ऊपर देश का आर्थिक जीवन सन्तुलित रखने का और मानव उपयोगी वस्तुओं को पवित्र बनाए रखने का कर्तव्य है, उस क्षेत्र में आर्थिक असन्तुलन है। इस प्रकार आज सर्वत्र नैतिकता का ह्रास दिखाई देता है। राष्ट्र और समाज के निर्माण के लिए यह स्थिति लाभदायक नहीं, और यह मान्यता सर्वत्र पैदा हो रही है।

इस सामाजिक व्यवस्था के ह्रास के कारण, बियाणीजी की दृष्टि में, समाज-व्यवस्था का व्यक्तिगत रूप है। व्यक्तिगत कल्याण का जीवन पर अधिक प्रभाव रहा है। मानव का लक्ष्य इस विश्व की अपेक्षा परलोक की ओर अधिक रहा है। मोक्ष जीवन का सर्वश्रेष्ठ ध्येय रहा है, और मोक्ष सामाजिक तथा सर्वव्यापी व्यवस्था का अंग न रहकर व्यक्तिगत प्राप्ति का आदर्श है। क्योंकि प्राचीनकाल में प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए ईश्वर प्राप्ति के उद्देश्य से प्रेरित होता था। अतः सामाजिक व्यवस्था का लक्षण गौण होता गया। इसी ध्येय के कारण इस देश में वर्ण, संन्यास आदि व्यवस्था की स्थापना हुई। समाज अनेक विभागों में विभक्त हो गया और समाज की सामयिक शक्ति निर्बल होती गई। धर्म शक्ति, राज्य शक्ति, अर्थ शक्ति, इन तीनों शक्तियों का विभिन्न स्थान निर्मित होता गया, और हर व्यक्ति के अपने क्षेत्र में कार्यरत होने से सम्पूर्ण शक्ति का केन्द्रीय नियन्त्रण निर्बल हो गया। इस प्रकार सारा समाज और व्यक्ति अपने-अपने क्षेत्र में बलवान होते हुए भी सामाजिक क्षेत्र में निर्बल होते गए।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से देश की स्थिति और भी अधिक गिरी है। सर्वत्र दुर्व्यवस्था है। जिस समाज और देश में जीवन के विविध क्षेत्रों के नेतृत्व का विश्वास उठ जाता है उस समाज का कल्याण कठिन हो जाता है। अतः हमें अपने अधिकारों की सीमा में रहकर, अपने कर्तव्यों को पवित्रता और शील शक्ति के साथ निभाना चाहिए। जब तक हम सब अपने व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर कार्य नहीं करेंगे, तब तक हमारी सामाजिक व्यवस्था विकृत ही रहेगी। व्यक्तिगत स्वार्थ और नैतिक शक्ति दोनों में विरोध है। कोई भी समाज नैतिक बल के अभाव

में प्रगति नहीं कर सकता। अतः बियाणीजी एक ऐसी समाज-व्यवस्था में विश्वास करते हैं जिसकी आधार शिला नैतिक शक्ति पर अवलम्बित हो, और नैतिक शक्ति से उनका तात्पर्य किसी आध्यात्मिक शक्ति से न होकर, कर्तव्यों की पवित्रता से है। सुदृढ़ सामाजिक व्यवस्था के हेतु कर्तव्यों के पालन में पवित्रता का होना अनिवार्य है। यही बात आगे चलकर विश्व-व्यवस्था के सम्बन्ध में भी लागू होती है।

कर्तव्य की पवित्रता के हेतु शुद्ध चरित्र की आवश्यकता है। जिस आदमी के पास शुद्ध चरित्र है, जिसका जीवन नैतिकता का अनुसरण करता है अर्थात् जिसके विचार शुद्ध और पवित्र है, वही समाज, देश तथा विश्व की सेवा करने योग्य है। यही कारण है कि बियाणीजी चरित्र पर अत्यधिक बल देते हैं। वे कहते हैं कि जिस व्यक्ति में चरित्रबल नहीं, वह जीवन संघर्षों से घबरा जाता है तथा मृत्यु का आलिंगन करता है। वे लिखते हैं—"इस सारे विश्व-अवलोकन का सार यह है कि हर व्यक्ति को विनाश की अपेक्षा विकास की शक्ति को बलवान बनाना है, मृत्यु की अपेक्षा जन्म को शक्तिशाली बनाना है, अज्ञानमय जड़ जीवन की अपेक्षा ज्ञानमय गतिशील जीवन का निर्माण करना है। यह निर्माण शक्ति मानवीय समाज की जीवित शक्ति का फल है, और वह शक्ति युवकत्व की शक्ति है–जिनका दिल और दिमाग जिन्दा है, जिनमें प्रगति की आकांक्षा है, जिनमें जीवन शक्ति का प्रवाह है, वे नवीनता के पुजारी बनते हैं। जहाँ इस शक्ति का अभाव है, वहाँ चाहे आयु कितनी हो, युवकत्व का अभाव है"। उनके अनुसार युवकत्व का लक्षण है–सतत गति, प्रवाही गति और गति-अवरोध का विरोध और आवश्यकता हो तो संघर्ष। वास्तव में बियाणीजी युवकत्व की इस शक्ति को समाज के निर्माण के हेतु आवश्यक मानते हैं। जिस किसी भी समाज में यह शक्ति लोप हुई कि उसका पतन अवश्यम्भावी है। शुद्ध चरित्र और संघर्ष करने की शक्ति दोनों एक दूसरे के सहयोगी हैं, विरोधी नहीं। चरित्रवान व्यक्ति ही संघर्षों से जूझने की क्षमता रखता है। अतः समाज निर्माण के हेतु, बियाणीजी के मतानुसार, चरित्र-बल तथा संघर्ष करने की क्षमता दोनों का होना अनिवार्य है।

आर्थिक विश्लेषण

आर्थिक क्षेत्र में भी यद्यपि गांधीजी के विचारों की छाया बियाणीजी पर स्पष्ट दिखाई देती है, फिर भी उन्हें पूर्णतः गांधीवादी नहीं कहा जा सकता। बियाणीजी की अपनी मान्यताएँ हैं। आज की सर्वमान्य विचारधारा के अनुरूप बियाणीजी भी पूँजीवाद का खण्डन करते हैं तथा पूँजीवाद को अनेकों सामाजिक बुराइयों की जड़ मानते हैं, फिर भी उनका पूँजीवाद का विश्लेषण मार्क्स अथवा

लेनिन के सिद्धान्तों पर आधारित न होकर, बहुत कुछ भावनात्मक तथा नैतिक दृष्टिकोण पर आधारित है। साथ ही यह भी स्वीकार करना होगा कि वे पूँजीवाद के विरोधी होकर भी उसके इतने कठोर शत्रु नहीं बन सके हैं जितने कि आज के समाजवादी या साम्यवादी। पूँजीवाद के प्रति उनका दृष्टिकोण बहुत अंशों में पश्चिम के ईसाई समाजवादियों (Christian socialists) तथा काल्पनिक समाजवादियों (Utopian socialists) के विचारों से मेल खाता है।

बियाणीजी पर आशावादी विचारों का बहुत प्रभाव है। उनका विश्वास है कि मनुष्य को पूर्ण बनाया जा सकता है। शिक्षा सम्बन्धी सुधारों द्वारा मानव जाति का कल्याण किया जा सकता है। आप आदर्श परिकल्पनाओं को लेकर चलते हैं, और आपको एक आदर्श समाज-व्यवस्था की स्थापना में पूर्ण आस्था है। आप क्रान्ति और वर्ग संघर्ष के विरोधी हैं; आपका दृष्टिकोण मानवतावादी है तथा आप उच्च वर्गों से दरिद्रों की सहायता करने की अपील करते हैं। आपका कहना है कि मनुष्य को आर्थिक लाभ की धुन को छोड़कर अपने हृदय में मानवीय करुणा को स्थान देना चाहिए।

बियाणीजी एक कुशल व्यवसायी तथा आदर्शवादी हैं। वे मजदूरों और मालिकों के पारस्परिक सम्बन्धों को प्रतियोगिता की अपेक्षा सहयोग पर आधारित करने के पक्ष में हैं। उनका विश्वास है कि निजी सम्पत्ति, धार्मिक कटुता, और सामाजिक बुराइयाँ प्राकृतिक-व्यवस्था के मार्ग में सबसे बड़ी बाधाएँ हैं। अपनी अनेकों लघुकथाओं में उन्होंने बताया है कि मजदूर विनिमय मूल्य का उत्पादन करता है और वह अपने परिश्रम की पूरी कमाई पाने का हकदार है। यद्यपि बियाणीजी पूँजीवाद के विरोधी हैं, फिर भी वे इस पक्ष में नहीं कि निजी सम्पत्ति का उन्मूलन कर दिया जाए और पूँजीपतियों तथा भूस्वामियों से अनर्जित अतिरेक छीन लिया जाए। वे तो सहकारिता के आधार पर मजदूरों और मालिकों की कठिनाइयों को हल करने के पक्ष में हैं। उनके अनुसार अतीत का सावधानी से निरीक्षण करके ही भविष्य के निर्माण की दिशा निश्चित की जा सकती है। वे एक स्थान पर बताते हैं कि इतिहास हमें सीखाता है कि संसार के भौतिक साधनों का शान्तिपूर्वक दोहन करने के लिए मानव-साहचर्य की शनैः शनैः उन्नति करना आवश्यक है। यदि विज्ञान और धर्म के बीच समुचित सामंजस्य स्थापित किया जाए और सहकारिता के आधार पर समाज की रचना की जाए तो इस युग की अनेकों समस्याओं का हल हो सकता है। प्रेम तथा सहानुभूति पर आधारित धर्म एकता और समन्वय का सबसे अच्छा साधन है। वे उत्पादन में होनेवाली अपव्ययता

को निन्दनीय ठहराते हैं और कहते हैं कि व्यवस्था तथा सामंजस्य मनुष्य के आर्थिक हितों के लिए अत्यन्त आवश्यक है। उनका कहना है कि ईश्वर ने विश्व की रचना समरूपता के आधार पर की है, अतः मनुष्य को एक ऐसा सामाजिक संगठन बनाना चाहिए जो उसी प्रकार सुव्यवस्थित और समरूप हो। पदार्थ जगत में गुरूत्वाकर्षण के सिद्धान्त का जो महत्व है, वही मनुष्यों नें साहचर्य के सिद्धान्त का है।

संक्षेप में, बियाणीजी प्रतियोगिता के बजाय सहयोग को अधिक महत्व देते हैं। वे उन व्यक्तिवादी सिद्धान्तों का खण्डन करते हैं जिनके अनुसार स्वार्थ से प्रेरित होकर आचरण करनेवाले प्राकृतिक मानव को व्यवहार की स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए। वे विद्यमान सामाजिक-व्यवस्था पर प्रहार करते हैं, किन्तु उनका विश्वास है कि इसका निराकरण व्यक्ति के नैतिक सुधार द्वारा ही सम्भव हो सकता है।

बियाणीजी धन-संग्रह की प्रवृत्ति को बहुत बुरा समझते हैं। उनके अनुसार यह प्राकृतिक नियमों के सर्वथा विरुद्ध है। धन-संग्रह से सामाजिक क्षेत्र में दहेज प्रथा जैसी अनेकों बुराइयों को बढ़ावा मिलता है। आर्थिक क्षेत्र में पूँजीवाद पनपता है। यह प्रवृत्ति समानता की जड़ को काटती है, और मनुष्य में शोषण करने की प्रवृत्ति को जागृत करती है। यद्यपि बियाणीजी स्वअर्जित व्यक्तिगत सम्पत्ति के विरोध में नहीं हैं, परन्तु उनके मतानुसार उसे दूसरों के शोषण के लिए उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। शारीरिक परिश्रम से कमाया हुआ धन नैतिक नियमों के अनुकूल है, जबकि दूसरों के श्रम पर अर्जित किया हुआ धन अनैतिक होता है। इसी कारण बियाणीजी व्यक्तिगत सम्पत्ति के पक्ष में होते हुए भी पूंजीवादी-व्यवस्था का डटकर विरोध करते हैं।

उनका विश्वास है कि मानव मानव समान है, तथा सबको जीवित रहने का पूर्ण अधिकार है। जीवित रहने के लिए मनुष्य परिश्रम करता है चाहे वह परिश्रम किसी भी कोटि का हो। सब परिश्रम नैतिक है। दूसरों के परिश्रम का अपहरण करना अनैतिक है। गरीबी और अमीरी के कारणों का विश्लेषण करते हुए वे 'कल्पना-कानन' में लिखते हैं:—"अधिक श्रम करवाकर कम देना इसमें अमीरी की जड़ है और परिश्रम के प्रमाण से कम लेना यह गरीबी का कारण है। जीवन में नकद रोजगार कर! उधारी में किसी को फायदा नहीं। आशामय उधारी ने क्या व्यक्ति और क्या मुल्क सब का नाश किया है। उधारी करना और उधारी देना दोनों अन्यायपूर्ण है तथा दोनों में पूंजीवाद की जड़ पनपती है। यदि मनुष्य को अपने परिश्रम का यथोचित फल प्राप्त होता रहे, तोभाखेंकमा ।भीरस ईस

न मरे और कोई भी गरीब न रहे । अमीरी दूसरों का अपहरण करने से ही पनपती है" ।

इस प्रकार बियाणीजी एक ओर ग़रीब वर्ग को अपने परिश्रम का उचित फल प्राप्त करने के हेतु प्रेरित करते हुए दिखाई देते हैं और दूसरी ओर धनिक वर्ग को अपने, उत्तरदायित्व को समझते हुए, श्रमिक वर्ग को उसके श्रम का उचित मुआवज़ा देने के लिए सम्बोधित करते हुए दिखाई पड़ते हैं । यहाँ यह स्पष्ट कर देना उचित होगा कि यद्यपि स्वभाव से आप साम्यवादी नहीं हैं और न ही आप साम्यवादियों के इस तर्क से सहमत हैं कि सबको साम्यवादी-व्यवस्था द्वारा समान किया जा सकता है, पर फिर भी आप उनके 'From each according to his capacity to each according to his needs.' के सिद्धान्त से बहुत कुछ अप्रत्यक्ष रूप में सहमत हैं । वास्तव में आपका दृष्टिकोण मानतावादी है तथा मानवीय गुणों को प्रोत्साहित करके ही आप समाज में समानता स्थापित करने के पक्ष में हैं । आप मनुष्य के नैतिक चरित्र पर अत्यधिक बल देते हैं, और बात भी ठीक है कि यदि मनुष्य का नैतिक चरित्र अच्छा हो और सब विवेकपूर्वक कार्य करने लग जाएँ तो संसार की अनेकों समस्याएँ आप ही आप सुलझ जाएँ, और संसार में आज जो संघर्ष दिखाई देता है वह समाप्त हो जाय ।

अतः बियाणीजी शान्तिपूर्ण ढंग से तथा सहयोग के आधार पर सुन्दर सामाजिक-व्यवस्था की कल्पना करते हैं । फिर भी कभी-कभी आप में संघर्ष की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है । आपका विश्वास है कि कभी-कभी संघर्ष होना जीवन यापन के लिए तथा सामाजिक-व्यवस्था को सुचारु ढंग से चलाने के लिए परमावश्यक है । इस दृष्टि से आपका दृष्टिकोण बहुत अंशों में उपयोगितावादी तथा प्रेगमेटिक (Pragmatic) कहा जा सकता है । उदाहरण के लिए आप अपनी लघु-कथा 'पेट के लिए' में यह अप्रत्यक्ष रूप में स्वीकार कर लेते हैं कि पेट के लिए अनाज के गोदामों को लूटना अनैतिक नहीं है । इसके पीछे उनका एक अत्यन्त ठोस तर्क है जिससे, सम्भव है, कोई भी इन्कार नहीं कर सकता । वे कहते हैं कि मानव जीवन की मूल आवश्यकताएँ पृथ्वी में से उत्पन्न होती हैं । किसान परिश्रम करके भूमि से अनाज उत्पन्न करते हैं, पर फिर भी उनमें अपने पेट के लिए अनाज खरीदने की शक्ति नहीं । इसके विपरीत जो लोग खेतों में परिश्रम नहीं करते पर उनके पास अतुल्य धनराशि है, वे धन की शक्ति पर अनाज संग्रह कर लेते हैं और मनमाने दामों पर उसे बेचते हैं । ग़रीब, मजदूर और किसान धन के अभाव में संकट ग्रस्त रहते हैं । ऐसी दशा में पर्याप्त अनाज होने पर भी अकाल की परिस्थिति निर्मित हो जाती है । अकाल की परिस्थिति में, बियाणीजी के मतानुसार, यदि ग़रीब वर्गों के लिए अनाज

का कोई उचित प्रबन्ध नहीं हो पाता है तो उसे धनिक वर्ग के अनाज गोदामों को लूटने का अधिकार हो जाता है। पेट की भूख शान्त करने के लिए की गई लूट अनैतिक नहीं है। वे व्यंगपूर्वक लिखते हैं—"पेट के लिए जनता द्वारा लूट का अपराध करना तथा पुलिस द्वारा हत्या का अपराध करना (गोली चलाकर) दोनों ही समान हैं"। इस प्रकार बियाणीजी शान्ति में विश्वास रखते हुए भी कभी-कभी जीवन सम्बन्धी नैतिक प्रश्नों पर जनता को विद्रोह के लिए प्रेरित करते हैं।

जीवित रहना बियाणीजी के लिए एक नैतिक प्रश्न है। समाज के किसी भी अंग को यह अधिकार नहीं कि वह उसे मनुष्य से छीनने का दुस्साहस करे। ऐसा होने पर संघर्ष होना अनिवार्य है। यही प्रकृति का भी नियम है। जो सरकार या जो समाज-व्यवस्था मनुष्य को जीवन की सुरक्षा प्रदान नहीं करता, वह हेय है, अतः उसे त्यागना मानव प्रगति के हेतु आवश्यक है। जीवन की सुरक्षा का प्रश्न एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। इसकी अवहेलना किसी भी स्थिति म नहीं की जा सकती। नैतिकता जीवन से परे कोई वस्तु नहीं। प्रत्येक नैतिक प्रश्न का विवेचन जीवन की सुरक्षा तथा उसकी प्रगति को दृष्टि में रखकर ही किया जाना चाहिए। वास्तव में नैतिक वही है जिससे जीवन की सुरक्षा होती है। अतः विशेष परिस्थितियों में लूट-मार करना तथा शोषण के विरुद्ध विद्रोह करना नैतिक है।

बियाणीजी इन्हीं तर्कों के आधार पर कुछ व्यक्तियों को अत्यन्त समृद्ध बनाने की अपेक्षा समाज के बड़े भाग के लिए जीवन की साधारण आवश्यकताओं का प्रबन्ध करना अधिक आवश्यक समझते हैं। उनके विचार में मनुष्य समाज का आदर्श कुछ व्यक्तियों के ही हाथ में धन-दौलत न देकर प्रत्येक मनुष्य को जीवन निर्वाह योग्य सुविधा देना होना चाहिए। किसी देश की सफलता अथवा समृद्धि, बियाणीजी के विचार में, देश में लखपतियों की संख्या से नहीं, प्रत्युत भूखे मरनेवाले लोगों से लगाई जानी चाहिए। जिस देश में कोई भी मनुष्य भूख की ज्वाला से तड़पता न हो, वह देश, लखपतियों और करोड़पतियों के न होते हुए भी, समृद्ध और सम्पन्न है।

बियाणीजी, गांधीजी के विपरीत, भौतिक विकास में विश्वास करते हैं, हालाँकि आप, गांधीजी की भाँति, भारतीय संस्कृति के प्रशंसक रहे हैं। देश की प्रगति के हेतु आप घरेलू उद्योग धन्धों को आवश्यक मानते हैं। परन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि आप बड़ी-बड़ी मशीनों का उसी प्रकार विरोध करते हैं, जैसे गांधीजी करते थे। आपकी तुलना इस दृष्टि से श्री नेहरू से की जा सकती है तथा आपका मार्ग मध्यम मार्ग है। अर्थात्, आप कल-कारखानों तथा छोटे-छोटे उद्योग धन्धों दोनों को ही भारत की विशेष परिस्थितियों को दृष्टि में रखते हुए आवश्यक

समझते हैं । बियाणीजी का विश्वास बहुत कुछ भारत के आधुनीकरण में है । वे चाहते हैं कि भारत भी भौतिक क्षेत्र में उसी प्रकार प्रगति करे जिस प्रकार कि पाश्चात्य देशों ने की है । पर आप आधुनिक वितरण प्रणाली से सन्तुष्ट नहीं हैं ।

बियाणीजी, गांधीजी के शिष्य होकर भी, गांधीजी के चरखे के प्रोग्राम में विश्वास नहीं करते । उनका विश्वास है कि देश की प्रगति केवल चरखा तथा छोटे गृह उद्योगों से नहीं की जा सकती, प्रत्युत उसके हेतु हमें बड़े-बड़े कल-कार-खानों की सहायता लेनी होगी । अतः बियाणीजी का दृष्टिकोण, गांधीजी की भाँति आध्यात्मिक न होकर, पाश्चात्य भौतिक सभ्यता की छाप लिए हुए तथा अधिक व्यावहारिक है । पर जहाँ तक विदेशी वस्तुओं के आयात का प्रश्न है, बियाणीजी के विचार बहुत कुछ गांधीजी के विचारों से मेल खाते हैं । बियाणीजी, जहाँ तक सम्भव हो, विदेशी वस्तुओं के आयात के पक्ष में नहीं हैं, पर वे भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बन्द नहीं कर देना चाहते । जो वस्तुएं विदेश में भारत की अपेक्षा अधिक सस्ती बनती हैं, उन्हें वे बाहर से लाने के पक्ष में हैं । विदेश से केवल उन्हीं वस्तुओं की आयात के वे विरुद्ध हैं, जिनसे देश की आर्थिक हानि की सम्भावना है । जहाँ तक बन सके वे आत्मनिर्भरता के पोषक हैं ।

प्रतिक्रियावादिता और मध्यकालीनता (mediaevalism) आज निन्दा-त्मक शब्द बन गए हैं, परन्तु विचारशील व्यक्ति किसी वस्तु के गुण-दोष का निर्णय उसके नाम मात्र से नहीं करते । मध्यकालीन व्यवस्थाओं में भी गुण हो सकते हैं और आधुनिक बातों में भी दोष । बियाणीजी सरीखे विचारक किसी आर्थिक-व्यवस्था का मूल्यांकन उसकी नवीनता या उत्पादन-क्षमता मात्र से न करके उसके सामाजिक परिणामों से करते हैं । उनकी दृष्टि में मनुष्य और उसका सुख-दुख अपरिमित अर्थसंचय से अधिक महत्व की वस्तु है । ऐसे विचारक उत्पादन प्रणाली के विषय में भले ही प्रतिक्रियावादी दिखाई पड़ें, पर आर्थिक-व्यवस्था के सामाजिक पक्ष में उनके विचार महान क्रांतिकारी होते हैं । बियाणीजी के सम्बन्ध में यह बात पूर्णतः सही उतरती है ।

बियाणीजी, गांधीजी की भाँति, प्रत्येक मनुष्य को अपनी जीविका के लिए कुछ शारीरिक परिश्रम करने को कहते हैं । इसे वे 'रोटी के लिए परिश्रम' (bread labour) की संज्ञा देते हैं । यह सिद्धान्त पहले रूसी लेखक टी. एम. बान्डारेफ़ द्वारा प्रतिपादित हुआ था और उससे लेकर टॉल्सटाय ने इसे प्रसिद्ध किया । गांधीजी इसे ईश्वरीय नियम कहते थे । बियाणीजी इसे नैतिक सिद्धान्त की संज्ञा प्रदान करते हैं ।

यदि इस सिद्धान्त को बौद्धिक दृष्टिकोण से भी देखा जाय तो यह स्पष्ट है कि बिना शारीरिक परिश्रम के मनुष्य को भूख भी नहीं लगती। इसलिए जो लोग जीविकार्थ शारीरिक परिश्रम नहीं करते—जैसे धनी या बुद्धिजीवी लोग, वे खेलकूद कर, कसरत करके या घूमने जाकर क्षुधा-देवी को आमन्त्रित करते हैं। अतः बियाणीजी का कहना है कि प्रत्येक मनुष्य को शारीरिक श्रम करना आवश्यक है। पर बुद्धिवादी होने के नाते वे बौद्धिक परिश्रम को हेय नहीं मानते, जिस प्रकार कि गांधीजी मानते थे। बौद्धिक परिश्रम को भी वे उतना ही महत्व प्रदान करते हैं जितना कि शारीरिक परिश्रम को। इतना ही नहीं, वरन् कभी-कभी तो वे बौद्धिक परिश्रम को शारीरिक श्रम से कहीं अधिक महत्व देते हैं, क्योंकि उनका विश्वास है कि बिना बौद्धिक परिश्रम के समाज के विचारों में क्रान्ति नहीं की जा सकती, और न ही उसका नवीनीकरण सम्भव है। समाज को जितनी आवश्यकता खाद्य पदार्थों तथा कपड़े आदि की है, जिनके उत्पादन के हेतु शारीरिक परिश्रम करना अनिवार्य है, उतनी ही उसे सुन्दर और सबल विचारों की भी है। वे स्वयं भी विचारों के जगत में अधिक रहते हैं तथा निरन्तर अध्ययन और लेखन द्वारा रूढ़िग्रस्त समाज को नई दिशा दिखाते रहते हैं।

गांधीजी आधुनिक, औद्योगिकता मशीनों द्वारा बड़े पैमाने पर केन्द्रीभूत उत्पादन, और बड़े-बड़े मिलों व कारखानों को मानवजाति के लिए अभिशाप मानते थे। इनके विरुद्ध उनका मुख्य अभियोग यह था कि इन्हीं के द्वारा एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र द्वारा अथवा एक व्यक्ति द्वारा अन्य व्यक्तियों का शोषण सम्भव हुआ है। अतः मशीनों द्वारा बड़े पैमाने पर होनेवाली उत्पादन प्रणाली न केवल भारत के लिए, किन्तु समस्त संसार के लिए हानिकर है। जब तक यह रहेगी शोषण का अन्त नहीं हो सकता। इसके विपरीत बियाणीजी का तर्क है कि बिना उद्योगीकरण के भारत की दुर्दशा मिट नहीं सकती। अतः वे भारी उद्योगों द्वारा भारत की आर्थिक उन्नति करने के पक्ष में हैं। उनका कहना है कि आज हम प्राचीन-काल की अर्थ-व्यवस्था द्वारा प्रगति नहीं कर सकते।

परन्तु उद्योगीकरण के पक्ष में होकर भी बियाणीजी बहुत कुछ उत्पादन के विकेन्द्रीकरण के पक्ष में हैं। प्रत्येक स्थान में रहनेवालों की आवश्यकता की अधिकांश वस्तुएँ वहीं बने और उनकी खपत भी वहीं हो। इस प्रकार वे उद्योगीकरण के साथ-साथ छोटे-छोटे गृह उद्योगों को स्थापित करने के पक्ष में भी हैं। बियाणीजी गलाकाट प्रतिद्वन्द्विता अथवा शोषण का विरोध करते हैं। उनके अनुसार भारी उद्योगों तथा गृह उद्योगों दोनों का समान रूप से विकसित होना अत्यन्त अनिवार्य है।

पूँजी के उपयोग के सम्बन्ध में बियाणीजी के विचार ग्रीन (T. H. Green) के विचारों से मेल खाते हैं। ग्रीन की भाँति बियाणीजी का भी मत है कि पूँजी का उपयोग स्वभावतः सामाजिक होता है (Capital is social in its use)। बिना दूसरों को काम दिए, उनमें वितरण किए, पूँजी का उपयोग हो ही नहीं सकता। दूसरे, वह धन को सार्वजनिक हित के कार्यों में भी लगाएगा जैसे जलाशय आदि निर्माण करना, विद्यालय स्थापित करने आदि में। भूमि सरीखे उत्पादन के साधनों का भूमिहीन लोगों में सीधे वितरण किया जायगा। इस प्रकार अहिंसा और प्रेम के मार्ग से साम्यवाद का लक्ष्य-समता-प्राप्त हो सकता है। बियाणीजी का, गांधीजी की भाँति, विश्वास है कि लोगों की सद्इच्छा तथा उनके विवेक को जागृत करके ऐसा किया जा सकता है। हाँ, कभी-कभी सरकार को इसके हेतु कुछ शक्ति का भी सहारा लेना पड़ेगा, पर वह शक्ति कम से कम होनी चाहिए।

बियाणीजी का कहना है कि जब अहिंसात्मक मार्ग से समता स्थापित की जा सकती है, तो वर्गयुद्ध अनावश्यक है। इतना ही नहीं, वह हिंसापूर्ण होने के कारण अमानुषिक, निषिद्ध एवं त्याज्य है। वास्तव में विनोबाजी और गांधीजी के प्रभाव के कारण बियाणीजी का लक्ष्य वर्गयुद्ध या किसी वर्ग विशेष का आधिपत्य न होकर वर्ग समन्वय (class collaboration) द्वारा सर्वोदय में है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि आप समाज में वर्तमान संघर्ष की उपस्थिति को अस्वीकार करते हैं। बियाणीजी यह पूरी तरह स्वीकार करते हैं कि वर्तमान समाज में संघर्ष है, परन्तु आपके मतानुसार यह संघर्ष पूँजी और श्रम अथवा एक वर्ग और अन्य वर्गों के मध्य न होकर ज्ञान और अज्ञान में है। श्रमिक वर्ग अपनी शक्ति और उसके उपयोग के उपायों को नहीं जानता। मार्क्स की भाँति, बियाणीजी भी श्रम को ही पूँजी मानते हैं। श्रमजीवी इस तथ्य को नहीं जानता कि वह केवल 'ना' कहकर पूँजीपतियों के विशाल उद्योगों को ठप्प कर सकता है। एक बार उसमें यह ज्ञान फैला दिया जाय और अहिंसात्मक रीति से 'ना' कहने और उस पर दृढ़ रहने का पाठ पढ़ा दिया जाय, फिर वह अपने उचित अधिकार आप ही प्राप्त कर लेगा। इस प्रकार वह और पूँजीपति प्रतिद्वन्द्वी न रहकर साझेदार बन जाएँगे।

इस प्रकार बियाणीजी के आर्थिक-विचार गांधीजी तथा विनोबाजी के विचारों से बहुत मेल खाते हैं। आपके विचारों का विस्तृत अध्ययन गांधीवाद की पृष्ठभूमि में सही रूप से किया जा सकता है। आप सर्वोदय के कायल हैं तथा गरीब और अमीर के बीच की खाई को ज्ञान के प्रकाश द्वारा मिटा देना चाहते हैं।

विवेकपूर्ण अराजकता

राजनैतिक क्षेत्र में बियाणीजी का आदर्श विवेकपूर्ण अराजकतावाद है । उनका कहना है कि राजनैतिक शक्ति साध्य (end) न होकर जनता की सर्वाङ्गीण उन्नति का साधन मात्र है । राजनैतिक शक्ति का अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवन का नियमन करने की क्षमता । यदि राष्ट्रीय जीवन इतना पूर्ण हो जाय कि वह स्वयं संचालित हो सके (self-regulated) तो फिर प्रतिनिधियों या सरकार की आवश्यकता नहीं रह जाती । तब विवेकपूर्ण अराजकता की स्थिति स्थापित हो जाती है । इसका अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने पड़ोसियों के हितों में बाधा न डालता हुआ, अपना शासक स्वयं बन जाता है । अतएव आदर्श राज्य तो राज्य और राजनैतिक शक्ति का अभाव है । स्वराज्य का अर्थ बियाणीजी की दृष्टि में सरकार के नियन्त्रण से मुक्ति है । यदि व्यक्ति प्रत्येक या अधिकांश बातों के लिए सरकार पर निर्भर रहा, तो वह स्वराज्य की विडम्बना मात्र है । आत्म-निर्भरता ही स्वराज्य का सार है । पर इसका अर्थ यह नहीं कि बियाणीजी सरकार का सर्वथा विरोध करते हैं । उनका विरोध किसी भी अच्छी सरकार से नहीं है, प्रत्युत वे बुरी सरकार का विरोध करते हैं । साथ ही उनकी मान्यता है कि ज्ञान की वृद्धि के साथ-साथ सरकार की आवश्यकता उत्तरोत्तर कम होती जाएगी और एक समय ऐसा आएगा जबकि विवेकपूर्ण अराजकता स्थापित हो जाएगी । इस दृष्टि से बियाणीजी के विचार थोरो (Thoreau) और टॉल्सटाय से बहुत मेल खाते हैं ।

बियाणीजी इस बात को पूर्णरूपेण स्वीकार करते हैं कि वास्तविक जीवन में अराजकतावादी व्यवस्था की स्थापना सम्भव नहीं है । अतएव राज्य और सरकार आवश्यक हैं । जब तक मनुष्यों में पूर्ण विवेक की जागृति नहीं होती है तब तक वे स्वयं के अनुशासन में नहीं रह सकते । सामाजिक-व्यवस्था को बनाए रखने हेतु अनुशासन की अत्यन्त आवश्यकता होती है । अतः सरकार की आवश्यकता से इन्कार नहीं किया जा सकता । पर व्यक्तिवादी जे. एस. मिल की भाँति आपका मत है कि जो सरकार कम से कम शासन करे और व्यक्ति को अधिक से अधिक स्वतन्त्र छोड़ दे, वही सबसे अच्छी है । आप राज्य की शक्ति की वृद्धि को बड़ी आशंका से देखते हैं । ऊपरी तौर से जान पड़ता है कि राज्य की बढ़ती हुई शक्ति शोषण की रोकथाम करके लोगों का भला कर रही है, पर वास्तव में इससे मानव जाति को बड़ी हानि पहुँचती है, क्योंकि इससे व्यक्ति का व्यक्तित्व, जो सभी प्रकार की उन्नति का मूल है, नष्ट हो जाता है ।

यहाँ यह प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि शक्ति और सरकार के विरोधी होने पर बियाणीजी ने अपने राजनैतिक जीवन काल में मन्त्रीपद क्यों ग्रहण किया ? इसके उत्तर में उपर्युक्त कथन को पुनः दोहराया जा सकता है कि आपका विरोध शक्ति से है, व्यवस्था से नहीं। आप वर्तमान परिस्थितियों में राज्य और सरकार की अनिवार्यता महसूस करते हैं। परन्तु आपने अपने शासन काल में कभी भी शक्ति का अनुचित प्रयोग नहीं किया और सदैव शोषणात्मक नीतियों से दूर रहे। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि जो व्यक्ति एक बार शासक बन जाता है, उसके जीवन में शासन की लालसा सदैव बनी रहती है तथा उसका व्यवहार अपने से छोटों के साथ प्रायः कठोर हो जाता है। इटली के राजनैतिक विचारक मैकियावली इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं, पर बियाणीजी शक्ति और सत्ता के प्रलोभन से सदैव मुक्त रहे हैं तथा आपका व्यवहार सदैव सरल और सौहार्दपूर्ण रहा है। कोई भी आपके अपने मित्रों, कर्मचारियों तथा अनुचरों के साथ व्यवहार को देखकर आश्चर्य कर सकता है। आप अपने अनुचरों को भी पुत्रवत् तथा भाई के रूप में मानकर उनके साथ प्रेम का व्यवहार करते हैं। अतः ऐसे व्यक्ति के सम्बन्ध में 'Power corrupts man, and absolute power corrupts absolutely' वाली लार्ड एक्टन (Lord Acton) की उक्ति सिद्ध नहीं हो सकती।

बियाणीजी, गांधीजी की भाँति, राज्य को केन्द्रित और संगठित हिंसा (Concentrated and organised violence) का स्वरूप मानते हैं। व्यक्ति में आत्मा होती है, पर राज्य आत्मा-विहीन यन्त्र मात्र (Soulless machine) है। राज्य कभी हिंसा से पृथक् नहीं हो सकता, क्योंकि हिंसा ही उसका आधार है। ऐसा राज्य जो हिंसा पर आधारित न हो वास्तविक जगत में मिलना दुर्लभ है। अनुशासन और व्यवस्था के नाम पर राज्य लोगों का दमन करता है। बियाणीजी की दृष्टि में अनुशासन और व्यवस्था दोनों ही ऐसे विषय हैं, जिनकी एक व्याख्या ही हो नहीं सकती। यदि अनुशासन और व्यवस्था का अर्थ एक विशेष प्रकार के नियमों में बँधकर चलना मात्र है, चाहे वे नियम और व्यवस्था किसी को रुचिकर हो अथवा नहीं, तो बियाणीजी की दृष्टि में वह अनुशासन और व्यवस्था दासता (Slavery) से अधिक और कुछ नहीं। डाकुओं के दल में भी अनुशासन और व्यवस्था पाई जाती है, पर क्या उससे समाज को कोई लाभ पहुँचता है ? अतः बियाणीजी के मतानुसार वही अनुशासन श्रेष्ठ एवं लाभप्रद है जो मनुष्य की आत्मा से निकले तथा विवेक पर आधारित हो, तथा जिसमें विचार स्वातन्त्र्य हो। क्योंकि कोई भी राज्य, यहाँ तक कि लोकतन्त्र भी,

पूर्ण सहयोग पर अवलम्बित नहीं रहता तथा उसमें पूरी तरह से विचार स्वातन्त्र्य को स्थान नहीं होता, अतः उसमें दमन और शोषण की सम्भावनाएँ निरन्तर बनी रहती हैं। व्यवहार में वह किसी न किसी रूप में शक्ति का प्रयोग अवश्य करता है, और शक्ति का प्रयोग सदैव जन कल्याण के लिए किया जाय, ऐसा भी नहीं हो पाता, क्योंकि शक्ति का प्रयोग करनेवाले सदैव अपने निजी स्वार्थों से ऊपर उठ नहीं पाते। इस दृष्टि से राज्य हिंसा मूलक है।

व्यक्तिगत सम्पत्ति व स्वामित्व भी हिंसामूलक है, पर तो भी वह राज्य-स्वामित्व से कम हानिकारक है। बियाणीजी गांधीजी के प्रन्यास सिद्धान्त Trusteeship theory) में विश्वास करते हैं। इसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपनी सम्पत्ति को समाज की धरोहर समझे, पर यदि ऐसा सम्भव नहीं तो राज्य-स्वामित्व ही ठीक है। इस प्रकार बियाणीजी व्यक्तिवादी तो हैं, पर आपका मत पश्चिम में प्रचलित व्यक्तिवाद की भाँति पूँजीवाद या व्यक्तिवाद स्वार्थ का समर्थक नहीं है। आप सम्पत्ति का वितरण लोगों की आवश्यकतानुसार चाहते हैं, पर आपकी राय में यह कार्य राज्य की ज़ोर ज़बर्दस्ती द्वारा न होकर यथासम्भव व्यक्तियों के विवेक व हृदय परिवर्तन द्वारा किया जाना चाहिए। इस प्रकार बियाणीजी का व्यक्तिवाद साम्यवादी आदर्श की पूर्ति का विकल्प मार्ग (Alternative Way) है।

जैसा कि कहा जा चुका है, बियाणीजी राज्य की शक्ति को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं, फिर भी वर्तमान परिस्थितियों में जब तक प्रत्येक मनुष्य में पूर्ण विवेक की जागृति नहीं हो जाती तथा वह आत्मा से निकले अपने स्वयं के अनुशासन में बंधकर कार्य नहीं करने लग जाता, वे राज्य व्यवस्था की आवश्यकता स्वीकार करने में नहीं हिचकिचाते। उनकी दृष्टि में लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था ही सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था है। वे लिखते हैं कि—"विश्व प्रगतिशील है, प्रगति उस का धर्म है, अतः भविष्य के गर्भ में प्रगति का कौन सा पहलू है, यह आज अनुमान के बाहर है। पर वर्तमान में जो राज्य प्रणाली है, उसका सर्वश्रेष्ठ अवलम्बन व्यवस्था-शक्ति है। व्यवस्था-शक्ति का स्रोत शासन के कार्यों में है। हर समय और स्थान की व्यवस्था और पद्धति जनतन्त्र की सफलता के लिए नितान्त आवश्यक है।" यद्यपि बियाणीजी राज्य-व्यवस्था के काल में यह स्वीकार करते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति राज्य में बनाए हुए नियमों का पालन करे तथा सर्वदेशीय व्यवस्था बनाए रखने में राज्य को अपना भरसक योग दे, फिर भी व्यक्तिवादी होने के नाते, वे प्रत्येक व्यक्ति को राज्य के बनाए हुए नियमों का शान्तिपूर्वक विरोध करने का नैतिक अधिकार देते हैं। यही गांधीजी के शान्तिमय असहयोग अथवा कानून भंग का सर्वश्रेष्ठ तरीका है। इस

तरीके में व्यवस्था बनी रहती है और साथ ही जनता में नैतिक शक्ति का प्रवाह भी बढ़ता है। अनैतिक या अशोभनीय कार्य का अवलम्बन नहीं होता। यह प्रत्येक व्यक्ति का उत्तरदायित्व है, पर जिन व्यक्तियों के ऊपर राज्य संचालन का भार है उनका कार्य अत्यन्त नाजुक है। राज्य के संचालकों को सोच-समझकर नियमों का निर्माण करना चाहिए तथा दमन की नीति से सदैव दूर रहना चाहिए। साथ ही जनता को भी अपने नैतिक उत्तरदायित्व को समझकर हुल्लड़बाजी से दूर रहना चाहिए तथा स्वस्थ परम्पराओं की स्थापना करनी चाहिए। लोकतन्त्र को बियाणीजी आज तक की राज्य व्यवस्थाओं में सर्वश्रेष्ठ मानते हैं, हालाँकि वह मानव विकास की अन्तिम सीढ़ी नहीं हो सकती। वास्तव में मानव व्यवस्था का अन्तिम रूप क्या होगा, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता, फिर भी बियाणीजी के विचारों का विशद् विश्लेषण करने पर ऐसा प्रतीत होता है, जैसे कि वे विवेक-पूर्ण अराजकता को ही मानवीय व्यवस्था का अन्तिम चरण मानते हैं।

लोकतन्त्र में इस भावी मानवीय व्यवस्था की झलक अवश्य दिखाई देती है, क्योंकि इसमें विचार प्रदर्शन की पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है। जहाँ विचार स्वातन्त्र्य सम्भव नहीं, वहाँ लोकतन्त्र व्यवस्था स्थापित नहीं हो सकती। लोकतन्त्र के सन्दर्भ में बियाणीजी गांधीजी के इस विचार से पूर्णतः सहमत हैं, जो उन्होंने जवाहर-लालजी को सम्बोधित करते हुए व्यक्त किया था। गांधीजी का कथन है कि "We should not be impressed by everything that the king does or does not do. If he has devised something good for us, we should praise him, if he has not, then we shall say so." (राज्य सत्ता जो कार्य करती है और जो कार्य नहीं करती, उसका हम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। यदि राज्य सत्ता हमारे लिए किसी अच्छी योजना का अमल करे, तो हम उसकी प्रशंसा करें पर यदि ऐसा न करें तो हम उसके प्रतिकूल स्पष्ट कहें।) बियाणीजी इस स्वस्थ एवं नैतिक परम्परा को लोकतन्त्र के लिए अनिवार्य मानते हैं।

गांधीजी और विनोबाजी के कार्यों पर दृष्टिपात करते हुए बियाणीजी लोक-तन्त्र की आवश्यकता पर स्पष्ट प्रकाश डालते हैं। वे लिखते हैं कि—"गांधीजी ने स्पष्ट आदेश दिया था कि राज्य सत्ता यदि प्रतिकूल कार्य करे तो हम उसके विषय में स्पष्ट कहें।" इन वर्षों में (भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के वर्षों में) राज्य सत्ता ने अनेक कार्य किए हैं जो उचित नहीं कहे जा सकते, परन्तु देश में कोई भी ऐसी शक्ति नहीं रही और विनोबाजी ने भी सत्ता का स्पष्ट विरोध करने का कार्य नहीं किया। उनकी मान्यता है कि विनोबाजी का सारा कार्य शासन की सहायता

से हुआ है और हो रहा है। जो व्यक्ति या संस्था शासन के मार्ग से कार्य करती है, वह व्यक्ति या संस्था शासन के अनुचित कार्यों का प्रतिकार नहीं कर सकती। भारत की यही दशा हुई है। प्रभावी प्रतिकार प्रायः विलीन-सा हो गया है। आचार्य विनोबाजी ने प्रतिकार के क्षेत्र में प्रभावी कार्य नहीं किया है, और प्रतिकार के अभाव में राज्यसत्ता को नियन्त्रित नहीं रखा जा सकता। बियाणीजी लिखते हैं:—"इस देश में जो राजसत्ता निर्मित हुई है और जो अनेक वर्षों से चल रही है, उसका नेतृत्व इतना महान रहा कि उसका प्रतिकार कुछ कठिन कार्य रहा, और इस कारण देश में राज्यसत्ता सर्वव्यापी बन गई। आचार्य विनोबा ने उस राज्य-सत्ता का सहारा लिया, चाहे कभी सत्ता के कुछ कामों की तीव्र आलोचना की हो, पर वह आलोचना आलोचना ही रही। आलोचना से कुछ मानसिक विचार पैदा होते हैं, पर प्रतिकार की शक्ति निर्मित नहीं होती।" वास्तव में बियाणीजी के मतानुसार प्रतिकार की शक्ति के हेतु उस प्रकार के नेतृत्व की आवश्यकता है, जो स्वयं आगे होकर जिस स्थिति को अनुचित मानता है, उसके निवारण के लिए सारी शक्ति लगा दे। अपना आत्मसमर्पण कर दे। गांधीजी ने यही कहा था। तभी उन्होंने एक शक्ति निर्माण की थी। आज वह शक्ति विलीन हो गई है, और अन्य किसी नेता ने वह जनबल निर्माण नहीं किया है, जो लोकतन्त्र की स्वस्थ परम्परा के लिए आवश्यक है। संक्षेप में बियाणीजी प्रतिकार की शक्ति को लोकतन्त्र अथवा जनतन्त्र की सफलता के लिए आवश्यक मानते हैं। जब इस शक्ति का लोप हो जाता है, तो जनतन्त्र शनैः शनैः कठोर राजतन्त्र में परिणित होता चला जाता है, जो मानव विकास के लिए अशुभ चिह्न है।

मानवतावाद अथवा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद

बियाणीजी के अनुसार मानव जीवन की सर्वश्रेष्ठ शक्ति विचार है। इस शक्ति के सहारे ही मानव इतनी प्रगति कर सका है। विचार शक्ति से एक व्यवस्था निर्माण होती है। नई विचारधारा उस व्यवस्था को परिवर्तित करती है। इस प्रकार मानव की प्रगति में धारा के पश्चात् धाराओं का आगमन हुआ है। मानव की आरम्भिक अवस्था से मानव ऊपर उठता गया और शनैः-शनैः निकट आता गया, और इस विकास क्रम में आज की सर्वश्रेष्ठ धारा है मानवतावाद। यह विचार-धारा सम्पूर्ण मानव समाज को एकरूपा बनाने की ओर लक्ष्य करती है। भिन्न समाज व्यवस्थाएँ इस विचारधारा से निर्मित हुई, और आज मानव समाज में ग़रीब-अमीर का जो गहरा भेद है उसे पाटने का समाजवाद का नया नारा विश्व-व्यापी है। विचार-धारा उस भविष्य-दर्शन की ओर इंगित करती है कि जिसमें

सारे बन्धन शिथिल हो जाएँगे। मानव की नैतिक एकता सर्वश्रेष्ठ होगी, और संघर्षमय मानव की व्यवस्था विनष्ट होकर, राज्य सत्ताएँ समाप्त होकर, मानव नवीन रूप में जीवन व्यवस्थित करेगा। बियाणीजी का विश्वास है कि एक दिन ऐसा अवश्य आएगा जब सम्पूर्ण विश्व मानवता के सूत्र में बँध जाएगा, और राज्यों की सीमाओं के बन्धन शिथिल हो जाएँगे तथा साथ ही राज्य शक्ति का भी लोप हो जाएगा।

विश्व की सर्वांगीण मानवता का निर्माण करने के लिए कौन से मार्ग अथवा साधन का अनुसरण करना श्रेष्ठ होगा? इस विषय पर बियाणीजी का मत अत्यन्त व्यवहारिक तथा तर्कपूर्ण है। वे बताते हैं कि मानव प्रगति के लिए अद्यावत दो साधनों का उपयोग किया गया है, और वे हैं--हिंसा और अहिंसा या शक्ति और समझदारी। धार्मिक संगठनों में प्रायः अहिंसा शक्ति का अवलम्बन किया है, और मानव मन को परिवर्तित करने का प्रयत्न किया है। राजकीय संगठनों में हिंसा या बल का प्रधान स्थान रहा है। उस शक्ति से मानवों को उनकी अधिकार सीमा में सीमित करने का यत्न किया है। आत्मनियन्त्रण धर्म का मार्ग है, तो बाह्य नियन्त्रण राजकीय संगठन का रास्ता है। इन दोनों प्रकार की शक्तियों ने अपना कार्य किया है। आज भी विश्व में दोनों प्रवाह मानव एकता और शान्ति के लिए प्रयत्नशील हैं। एक ओर अहिंसा और शान्ति का प्रचार है, तो दूसरी ओर हिंसा का व्यापक निर्माण और अवलम्बन। अहिंसा अपना कार्य करती है, पर वह सीमित है और जीवन के सब क्षेत्रों में वह क्रियान्वित तथा परिणामकारी नहीं हो सकती। हिंसा का मार्ग सर्वव्यापी है और वह सब क्षेत्रों में प्रभावी है। आज हिंसा शक्ति अपनी चरम सीमा पर पहुँच रही है और पहुँचने का चारों ओर प्रयत्न है। इस परिस्थिति में यह सन्देह होता है कि क्या इस सर्वव्यापी हिंसा शक्ति से मानव का कल्याण होगा या अकल्याण, मानव का विनाश होगा या विकास, कौन सी शक्ति अन्त में विश्व-बन्धुत्व निर्माण करेगी और पृथ्वी पर सुख, शान्ति और समानता का साम्राज्य होगा।

धर्म तथा अन्य संगठनों के द्वारा सदियों के प्रयत्न किए जाने के पश्चात् भी विश्व मानव एकता के सूत्र में नहीं बन्ध सका। प्राचीन काल की अपेक्षा हिंसा शक्ति अधिक प्रभावी हुई है। विज्ञान तथा राजकीय शक्ति ने मानव एकता को अधिक प्रबल और सक्रिय रूप दिया है। हिंसा शक्ति विनाश शक्ति है पर है वह नियन्त्रणक्षम। किसी भी क्षेत्र की असमानता हानिकारक होती है। असमानता में शोषण जन्म लेता है, चाहे वह अहिंसा शक्ति हो और चाहे हिंसा शक्ति। विश्व में हिंसा शक्ति की समानता न हो तो जिसके पास अधिक हिंसा शक्ति होगी, वह

निर्बल शक्तियों का शोषण करेगा। अहिंसा हिंसा की छत्रछाया में पनपती है। हिंसा की शक्ति द्वारा जहाँ व्यवस्था निर्मित की जाती है, वहीं अहिंसा कार्य करती है, पर जहाँ हिंसा का ताण्डव नृत्य होता है वहाँ अहिंसा अप्रभावी है। आज तक कोई ऐसा प्रयोग और उदाहरण नहीं मिला है जिस समय हिंसा के ताण्डव नृत्य के प्रतिकूल अहिंसा ने विजय पाई हो या अहिंसा क्रियात्मक हुई हो। अतः अहिंसा हिंसा की छत्रछाया में मानव मन को परिवर्तित करने का, उसे उन्नत करने का, कार्य कर सकती है तो हिंसा मानव समाज में व्यवस्था बनाए रखने का सफल कार्य कर सकती है। हिंसा-अहिंसा दोनों की आवश्यकता है, दोनों का अपना स्थान है। विकास विनाश की बुनियाद पर निर्मित होता है। विश्व की एक स्थिति दूसरी स्थिति को जन्म देती है, जब कि प्रथम अवस्था का विनाश होता है। आज जो मानव समाज की भिन्नतामय अवस्था है, उसका विनाश होगा तब एकतामय स्थिति का निर्माण होगा। वर्तमान स्थिति में,इस निर्माण में हिंसा का बहुत बड़ा कार्य रहेगा। विश्व में शक्तियाँ निर्माण हो रहा है, और इन शक्तियों का संतुलन ही शान्ति रख सकेगा। अतः सशस्त्र शक्ति का विकास चाहे विनाशकारी दिखाई देता हो, परन्तु विश्व व्यवस्था और अनादिकाल से कार्यरत विश्व नियमों के अनुसार यह शक्ति निर्माण ही अन्त में शक्ति सन्तुलन का स्वरूप धारण करेगी। सर्वव्यापी मानव समाज शक्तिशाली बनेगा, तब ही विश्व में सर्वत्र शान्ति स्थापित होगी। इस प्रकार बियाणीजी हिंसा और अहिंसा दोनों को ही मानव के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक मानते हैं। उनके अनुसार शक्ति सन्तुलन में ही विश्व कल्याण निहित है। वे लिखते हैं––"जिस प्रकार हिंसामय युद्धों में से विश्व एकता के संगठनों का निर्माण हुआ है, उसी प्रकार शनैः शनैः शक्ति के सहारे, मानव की बुद्धि के और समझदारी के बल पर एकतामय शान्तिप्रधान विश्व का निर्माण होगा। कार्य कठिन है, लम्बा है, पर क्रियात्मक विश्वास में ही शक्ति और आशा है"।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बियाणीजी का दृष्टिकोण पूर्ण व्यावहारिक है। अहिंसा में विश्वास रखते हुए भी, वे शक्ति की बात करते हैं। कुछ लोगों को यह बात आश्चर्य में डाल सकती है, परन्तु वर्तमान स्थिति को देखते हुए उनका तर्क समयानुकूल है। शक्तिशाली और निर्बल का कभी मेल नहीं हो सकता, और न कभी हुआ ही है। मेल होने के लिए समान स्थिति का होना आवश्यक है। यही शक्ति सन्तुलन का सिद्धान्त भी है। विश्व में कुछ राष्ट्र बलवान हैं और कुछ राष्ट्र निर्बल, पर यह व्यवस्था उचित नहीं। सब राष्ट्रों के बल में ही शक्तियों का सन्तुलन भी होगा और होगी विश्व-शान्ति। चीन की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए वे कहते

हैं कि अणुबम के निर्माण के साथ ही (चीन द्वारा) चीन को राष्ट्रसंघ में लेने की आशा भी कुछ राष्ट्रों ने की है। इसका अर्थ यह है कि शक्ति की बुनियाद पर ही राष्ट्रसंघ का निर्माण है। आज चीन को यदि राष्ट्रसंघ में स्थान नहीं दिया जाता तो अमेरिका की शक्ति के कारण। पर जैसे-जैसे चीन शक्तिशाली होता जाएगा, उसका राष्ट्रसंघ में स्थान भी निश्चित होता जाएगा। भले ही इस तर्क से लोग सहमत न हों, पर व्यवहार में ऐसा ही देखने को मिल रहा है।

बियाणीजी की मान्यता है कि चीन की अणुबम निर्माण करने की शक्ति से विश्व में शक्तियों के सन्तुलन में परिवर्तन हुआ है। इससे विश्व व्यवस्था में भी परिवर्तन होना अनिवार्य है। वे लिखते हैं—"विश्व खतरे की ओर जा रहा है, तो जा रहा है खतरे के भय से सही रास्ते की ओर भी, यानी समझौते की ओर।" वास्तव में, आज विश्व खतरा और सही रास्ता इन दोनों की बीच झूल रहा है। कहना न होगा कि शक्ति का सर्वव्यापी अवलम्बन अन्तिम रूप में लाभदायक ही होगा। इस दृष्टि से, बियाणीजी की मान्यता है, भारत को भी राष्ट्रीय जीवन के अन्तस्थ क्षेत्र में और बाह्य शक्ति में बलवान बनना आवश्यक है। जो राष्ट्र दोनों क्षेत्रों में बलवान होगा, वही राष्ट्र विश्व मंच पर सम्मान के साथ खड़ा हो सकेगा। बलवान को भय का कारण नहीं होता। भय निर्बल के लिए होता है। अतः बियाणीजी भारत को शक्तिशाली बनने के लिए प्रेरित करते हैं। उनके अनुसार शक्ति के क्षेत्र में जो निर्बल है, वह परावलम्बी है। शक्ति के क्षेत्र में जो आत्म रक्षा कर सकता है, वह बलवान है। भारत को भी, जिस क्षेत्र में भी वह पदार्पण करे, स्वावलम्बी बनना है। इस सब का अर्थ यह नहीं कि बियाणीजी हिंसा शक्ति के समर्थक हैं। बियाणीजी के ऊपर गांधीजी और विनोबाजी का भारी प्रभाव है, और वह अपने स्वभाव से भी हिंसा और शक्ति के विरोधी हैं, तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वे व्यक्तिवाद का समर्थन करते हैं, परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से, उनका विश्वास है, अहिंसा का अनुसरण करना सम्भव नहीं। साथ ही बियाणीजी अधकचरी राजनीति के क़ायल नहीं। उनके अनुसार राजनीतिज्ञ को अपने मस्तिष्क में स्वयं स्पष्ट होना चाहिए। हिंसा और अहिंसा दोनों मार्गों का एक ही साथ अनुसरण करना लाभदायक नहीं। अतः भारत को सम्बोधित करते हुए वे कहते हैं कि यदि भारत हिंसा के मार्ग को नापसन्द करता है, तो वह पूर्णतया अहिंसा के मार्ग का अवलम्बन करे ताकि विश्व में उसकी अपनी विशेषता हो, चाहे अहिंसा के सम्पूर्ण अवलम्ब से उसका विनाश भले ही हो जाए। इस विनाश में भी भारत का अमरत्व होगा, और होगी विश्व को भारत की ऐतिहासिक देन, परन्तु अहिंसा के मार्ग को

त्यागने के पश्चात् और हिंसा के मार्ग का अवलम्बन करने पर, फिर उस क्षेत्र में किसी भी राष्ट्र से निर्बल रहना भारत के लिए ख़तरनाक होगा। बियाणीजी भारत की द्विविधाजनक परिस्थिति से चिन्तित हैं। वे लिखते हैं--"भारत की जिनके हाथों में बागडोर है,उन्हें विचार करना है कि भारत को किस मार्ग से जाना है। निर्भयता में निश्चिन्तता होती है, और भय में द्विविधा स्थिति। आज भारत न अहिंसा की निश्चित अवस्था में है और न हिंसा की निश्चित स्थिति में। वह हिंसा, अहिंसा के बीच डाँवाडोल है। इस स्थिति में लाभ की अपेक्षा हानि होने की अधिक सम्भावना है। अतः भारत को यदि विश्व के राष्ट्रों में अपना समान स्थान निर्मित करना है, बनाए रखना है, तो उसको जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्वावलम्बी बनना होगा। हमारा यह कथन कुछ कटु लग सकता है। अहिंसा शक्ति पर हमारा प्यार है, पर साथ ही भारत के प्रति भी हमारा प्रेम और कर्तव्य है। आज की मानव विकास की जो स्थिति है, उस स्थिति में हमारी व्यावहारिक राय कहना भी हमारा कर्तव्य है। शान्ति से सोचना है और निर्भयता से कार्य करना है।"

बियाणीजी द्वारा व्यक्त इन विचारों के प्रकाश में यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि वे हिंसा और अहिंसा दोनों को ही विकास के हेतु आवश्यक मानते हैं। पर फिर भी उनका विश्वास हिंसा की अपेक्षा अहिंसा में अधिक है, यद्यपि वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए, भारत के लिए वे हिंसा को श्रेष्ठ मानते हैं। उनकी मान्यता है कि अहिंसा का पथ कंटकाकीर्ण है तथा उसके अनुसरण में कभी-कभी सम्पूर्ण जीवन की बलि भी देनी पड़ती है। उसके लिए अत्यधिक आत्मबल की आवश्यकता होती है। आज जबकि भारत चारों ओर से ऐसे पड़ोसियों से घिरा है, जो युद्ध और अहिंसा में विश्वास रखते हैं, भारत के लिए शक्तिशाली बनना नितान्त आवश्यक है। दूसरों के बल पर भारत कब तक अपनी रक्षा कर सकता है ? उसे स्वावलम्बी बनकर अपनी रक्षा करनी होगी। बियाणीजी इस बात से चिन्तित हैं कि भारत के कर्णधार द्विविधापूर्ण स्थिति में हैं तथा वे निर्णय नहीं कर पाते हैं कि भारत के लिए हिंसा का मार्ग श्रेष्ठ है अथवा अहिंसा का। एक ही साथ दोनों मार्गों का अनुसरण नहीं किया जा सकता। यदि भारत अहिंसा की नीति का अनुसरण करता है, तो उसे हर स्थिति में बलिदान के लिए तैयार रहना चाहिए, अन्यथा उसे द्विविधाजनक स्थिति का परित्याग करके अपने को प्रत्येक दृष्टि से शक्तिशाली बनाना चाहिए। क्योंकि आज का युग हिंसा एवं शक्ति का युग है, अतः भारत के लिए भी शक्ति

का मार्ग ही व्यावहारिक दृष्टि से श्रेष्ठ होगा। यदि भारत शक्तिशाली होगा, तब ही वह विश्व के शक्तिशाली राष्ट्रों के मध्य अपना सम्मानजनक स्थान निर्मित कर सकेगा। निःसन्देह बियाणीजी के विचार अन्तर्राष्ट्रीय जगत में पूर्ण व्यावहारिक हैं।

सारांश श्री बियाणीजी के सभी विचार, चाहे वे सामाजिक हों अथवा राजनैतिक अथवा विश्व के तात्विक विवेचन सम्बन्धी, पूर्ण सामयिक एवं व्यावहारिक हैं। उनकी सभी मान्यताएँ, कोरे दर्शन अथवा आदर्श पर आधारित न होकर समय की माँग की कसौटी पर अवलम्बित रहती हैं। वे वास्तविक वस्तुस्थिति से आदर्श का सहारा लेकर पलायन करना नहीं जानते, वरन् उससे जूझने तथा उस पर शालीनता से काबू पाने की पूर्ण क्षमता रखते हैं। उनके उद्बोधन में समय की आवश्यकता परिलक्षित होती है, तथा उनके विचारों का अनुसरण करके देश-काल की अनेक समस्याओं को सुचारु रूप से सुलझाया जा सकता है।

इन्दौर : —सम्पादक मण्डल
सितम्बर ६, १९६५
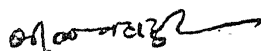
प्रधान मंत्री भवन
PRIME MINISTER'S HOUSE
NEW DELHI

सितम्बर २, १९६५

श्री बृजलाल बियाणी कांग्रेस के प्रमुख और पुराने सेवक हैं। यद्यपि वे अब सत्तर वर्ष के हो चले हैं, फिर भी उनकी कर्मठता बनी हुयी है। अनेक रुकावटें आते हुये भी वे लगातार जन सेवा में लगे रहे। वह कई बार गिरफतार हुये और जेल गये, किन्तु जेल जीवन की कठिनाइयों ने उन्हें तनिक भी नहीं झुकाया। कारागार से बाहर आते ही वे और भी अधिक उत्साह से देश-सेवा में लग जाते रहे।

बियाणी जी ने केवल राजनीति में ही सक्रिय भाग नहीं लिया वरन् वह एक प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता भी हैं। वे मध्य प्रदेश के वित्त मन्त्री रह चुके हैं और इस प्रकार प्रशासन का भी उन्हें अनुभव है। एक लेखक और यशस्वी सम्पादक के नाते बियाणी जी ने साहित्य की जो सेवायें की हैं वे भी कम नहीं हैं।

बियाणी जी के प्रति अपनी हार्दिक सद्भावनायें और शुभकामनायें प्रगट करता हूं।

लाल बहादुर

(लाल बहादुर)

कर्मयोगी श्री बियाणीजी

लेखक

सन्त तुकड़ोजी महाराज

(मोझरी आश्रम में रहते हैं । सन्त; व्याख्याता; भजनीक एवम् साधु संघ के प्रधान कार्यकर्ता ।)

श्री बियाणीजी से मेरा परिचय काफ़ी सालों से रहा है । उनकी लोकप्रियता और उदारता का मुझे परिचय है । वह एक पक्षनिष्ठ कांग्रेस के कट्टर कर्मयोगी रहे हैं । आज भी हैं । स्वयंसेवक से लेकर नेता बनने तक उनकी सीमा बढ़ी हुई मैंने देखी है । उन्हें राज्य-शासन में मन्त्री बनकर भी काफ़ी दिन लगे हुए मैंने देखा है । उनका मन-मिलापी स्वभाव, और अपने मित्रों को ऊँचा उठाने का भरसक प्रयत्न बड़ा ही सराहनीय है ।

आध्यात्मिक और भक्तिवादी विचार में उनका मैंने चिकित्सक स्वभाव देखा है । राजकारण में जिस पहलू की ओर कुशलता की जरूरत होती है उसको बियाणीजी ने अनुभव में लाने का बड़ा ही साहस किया है । वह स्वर्गवासी पूज्य गांधीजी पर बड़ा ही विश्वास रखनेवाले एक कार्यकर्ता हैं । सही बात यह है कि राजकारण का हमेशा चक्कर स्थिर नहीं रहता है, न रहेगा । वह तो एक चलती-फिरती नाव है । तुम उतरो और तुरन्त ही दूसरों के लिए जगह खाली करो-ऐसा ही चलता है, जो बियाणीजी ने किया है, मगर उनकी सेवा को इतिहास और पुराने कार्यकर्ता भूल नहीं सकते ।

हम तो आशा करते हैं कि श्री बियाणीजी फिर अपना कदम बढ़ाएँ और देश-सेवा के लिए अच्छी जगह पर आएँ, ताकि महाविदर्भ का कल्याण हो, बल्कि सारे भारत का ही सहकार्य बढ़ा सकें । ★

सहिष्णुता प्रेमी श्री बियाणीजी

लेखक
जे० आर० मुधोलकर
(न्यायाधीश, भारतीय सुप्रीम कोर्ट, नई दिल्ली।)

श्री बियाणीजी का जीवन सम्पूर्ण बहुमुखी है। अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतन्त्रता संग्राम में लड़नेवाले योद्धा के रूप में बियाणीजी का नाम इतिहास में अमर रहेगा। समाज सुधारक के रूप में, उन्होंने विदर्भ की रूढ़िग्रस्त जनता को चैतन्य करने के लिए अनेकों प्रयत्न किए, तथा अपने व्यक्तिगत जीवन के उदाहरण से उसका मार्गदर्शन किया। विदर्भ के दो प्रमुख धार्मिक समूहों में एकरसता स्थापित करके आपने अत्यन्त सराहनीय कार्य किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात्, बियाणीजी ने अपना सम्पूर्ण जीवन विदर्भ की जनता की समृद्धि के हेतु समर्पित कर दिया। विदर्भ के लोग आपको आपकी निस्वार्थ सेवा और लगन के लिए सदैव स्मरण करते रहेंगे। आपका यह पूर्ण विश्वास था कि यदि विदर्भ के लोग महाकोशल से पृथक होकर एक स्वतन्त्र राज्य के रूप में रहें तो निश्चित रूप से उनकी समृद्धि हो सकेगी। यही कारण था कि आप विदर्भ के स्वतन्त्र अस्तित्व के पक्ष में थे और मुझे यह कहते हुए डर लगता है कि विदर्भ के दूसरे राज्य में मिल जाने से उन्हें बहुत धक्का पहुँचा जिससे वे आज तक मुक्त नहीं हो पाए हैं।

इस तथ्य के बावजूद भी कि वे अनकों वर्षों तक प्रान्तीय कांग्रेस सभा के अध्यक्ष रहे, श्री बियाणीजी में सत्ता के प्रति मोह जाग्रत नहीं हुआ, और वे सदैव पृष्ठभूमि में रहकर ही कार्य करते रहे तथा उनके अनुगामी सत्ता का उपभोग करते रहे। यह सत्य है कि आपने कुछ काल के लिए पहले की मध्यप्रदेश सरकार में मन्त्री के रूप में कार्य किया, लेकिन मेरा विचार है कि वे सदैव अपने को अपने मन्त्रीपद के समय में, पानी से निष्कासित की गई मछली की भाँति समझते रहे और निरन्तर पार्टी के कार्य करने को तथा सीधे जनता के सम्पर्क में रहकर उसकी सेवा करने के लिए लालायित रहे। निस्वार्थ सेवा तथा लज्जा का भाव उनके सार्वजनिक जीवन की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं।

सार्वजनिक जीवन के अतिरिक्त, श्री बियाणीजी के जीवन का एक और भी पक्ष है जिसमें उन्होंने श्रेष्ठता प्राप्त की। आपने अकोला से प्रकाशित होने वाले "मातृभूमि" नामक समाचार-पत्र की स्थापना की और अनेक वर्षों तक आपने उसका सफलतापूर्वक संचालन किया। इसके साथ ही आप लब्ध प्रतिष्ठ लेखक एवं साहित्यकार भी हैं। आपका हिन्दी तथा मराठी दोनों पर ही पूर्ण अधिकार है, और आपने दोनों ही भाषाओं के साहित्य की अभिवृद्धि में अपना पूरा-पूरा योगदान दिया है।

साथ ही मैं उन्हें व्यक्ति और मित्र के रूप में भी नहीं भूल सकता। मैं आपको पिछले २५ वर्षों से जानता हूँ, और इस अवधि में मुझे आपको निकट से देखने का पूर्ण अवसर प्राप्त हुआ है। जहाँ तक मैं समझता हूँ श्री बियाणीजी केवल एक कुशल राजनीतिज्ञ एवं चैतन्य नेता ही नहीं हैं, वरन् आपका हृदय मानवीय भावनाओं से ओतप्रोत है तथा आप दूसरों के दृष्टिकोण को समझने की पूर्ण क्षमता भी रखते हैं। यह ठीक ही है कि आपके मित्र तथा प्रशंसक आपका उचित समय पर अभिनन्दन करें तथा आपसे सम्बन्धित ग्रन्थ प्रकाशित करके आगे आनेवाली पीढ़ी को श्री बियाणीजी को ठीक से समझने का समुचित अवसर प्रदान करें। ★

दृढ़व्रती बियाणीजी

लेखक

गजाधर सोमानी —बम्बई

(उद्योगपति; कई कारखानों के मालिक; मारवाड़ी सम्मेलन के अध्यक्ष तथा लोकसभा के भूतपूर्व सभासद ।)

बियाणीजी ! जब भी यह नाम सामने आता है, तो सहसा ही उस बहु-मुखी व्यक्तित्व का ध्यान आ जाता है जो देश के व्यापक सन्दर्भ में राजनैतिक और सामाजिक आन्दोलनों की एक महत्वपूर्ण कड़ी रहे हैं ।

बात करीब ४२-४३ वर्ष पुरानी है । सन् १९२२ में कलकत्ता में श्रद्धेय श्रीकृष्णदासजी जाजू की अध्यक्षता में माहेश्वरी महासभा का अधिवेशन हुआ । उसमें स्वयंसेवक के रूप में सेवा करने का मुझे भी सुअवसर मिला, ऐसा मुझे स्मरण है ।

श्री बियाणीजी उस अधिवेशन में पधारे थे तथा मुझे स्मरण आता है कि उनके ओजस्वी भाषण एवं मधुरवाणी से लोग मन्त्रमुग्ध हो गए थे । मेरे मन पर उनकी छाप विशेष रूप से पड़ी तथा मुझे उनसे व्यक्तिगत परिचय करने की इच्छा भी हुई ।

मेरी आयु तो उस समय बहुत छोटी थी तथा वे बड़े नेताओं की गिनती में थे । अतः उस समय मैंने उनसे मिलने का प्रयास भी नहीं किया ।

समय-समय पर उनके भाषण और लेख "माहेश्वरी" तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में बड़ी रुचि से पढ़ता रहता था । उनके विचार बड़े क्रान्तिकारी रहे हैं, तथा समाज के अधिकांश लोगों के उस समय के विचारों से मेल नहीं खाते थे । फिर भी उनका ध्येय यही रहता था कि समाज के हर वर्ग को साथ लेकर कार्य करने से ही समाजोन्नति हो सकती है । अतः अपने विचारों को इतनी संजीदगी एवं मधुरता से वे पेश करते थे कि विरोधी पक्षवालों के मन में भी उनके प्रति कटुता उत्पन्न नहीं होती थी, अपितु वे लोग भी प्रेम एवं अपनत्व की भावना से उनका आदर ही करते थे । आवेश के वातावरण में भी वे कभी व्यग्र नहीं होते हैं, और अपनी प्रत्युत्पन्नमति, व्यवहार कुशलता एवं मधुरवाणी से वातावरण में शान्ति उत्पन्न करने की उनमें अपार क्षमता है ।

सन् १९३५ से कलकत्ता से मेरा कार्य क्षेत्र बम्बई हो गया । समय-समय पर उनसे यहाँ मिलना-जुलना होने लगा, और शनैः शनैः जान पहचान ने आत्मीयता का रूप ले लिया । सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं राष्ट्रीय समस्याओं पर आपस में विचार-विनिमय होने लगा । उनके और मेरे विचारों में कभी-कभी मत भिन्नता होते हुए भी इसका हलका सा आभास भी हमें नहीं हुआ, अपितु मेल-मिलाप तथा प्रेम व्यवहार में उत्तरोत्तर अभिवृद्धि होती रही ।

सन् १९४२ में बम्बई के अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के अधिवेशन में 'भारत छोड़ो' का ऐतिहासिक निर्णय किया गया था । उस समय श्री बियाणीजी से बात होने पर उन्होंने कहा था कि कांग्रेस की तो यह स्पष्ट नीति है कि यह आन्दोलन सम्पूर्ण अहिंसक रूप में ही चलाया जाना चाहिए, किन्तु मुझे यह आशंका है कि अंग्रेज सरकार द्वारा देश के नेताओं को जेलों में बन्द कर देने पर परिस्थिति हाथ से निकलकर हिंसा का रूप भी धारण कर सकती है । देशवासियों की स्वाधीनता प्राप्ति की उठती हुई प्रवल भावनाओं के आवेश में ऐसा होना स्वाभाविक ही था । बम्बई से वापस जाते समय स्वतन्त्रता संग्राम के इस अंतिम चरण में अपना योग देने की भावना से उनके मन में काफी उत्साह एवं उमंग दृष्टिगोचर हो रही थी ।

बम्बई में अखिल भारतीय मारवाड़ी सम्मेलन का अधिवेशन श्री बियाणीजी की अध्यक्षता में हुआ, उसका मैं स्वागताध्यक्ष था । उस समय मुझे उनके काफ़ी निकट सम्पर्क में आने का सुयोग मिला । इस अधिवेशन में पहले पहल परदा; दहेज एवं सामाजिक कुरीतियों के सम्बन्ध में प्रस्ताव स्वीकृत किए गए । अतः सम्मेलन के इतिहास में बम्बई अधिवेशन सामाजिक क्रान्ति की दृष्टि से विशेष महत्व रखता है । श्री बियाणीजी की सभा संचालन की अद्भुत योग्यता तथा विलक्षण व मनोमुग्धकारी भाषण शैली के कारण ही इस अधिवेशन में सामाजिक सुधार के विवादास्पद प्रस्ताव प्रथम बार सरलता से स्वीकृत हो सके ।

देश स्वतन्त्र होने के पश्चात् मध्य प्रदेश के मन्त्रिमण्डल में आपको सम्मिलित किया गया । उनके मन्त्रित्वकाल में मुझे वहाँ के मिल-मालिक संघ के समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में जाने का अवसर प्राप्त हुआ था । उस समय उन्होंने मेरे सम्मान में एक आयोजन करके वहाँ के प्रमुख लोगों से मुझे मिलाया था । इस प्रकार अकोला में भी मुझे उनका आतिथ्य प्राप्त करने का सुअवसर प्राप्त हुआ था ।

श्री बियाणीजी का कार्यक्षेत्र विशेषरूप से विदर्भ रहा है । अपनी सेवा, त्याग

एवं विद्वत्ता से मराठी भाषी क्षेत्र में भी वे इतने लोकप्रिय हैं कि आज भी देश में वे 'विदर्भ-केसरी' के नाम से प्रख्यात हैं। यह उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व का द्योतक है। विदर्भ को अलग प्रान्त बनाने के लिए उनको बहुत बड़ा त्याग करना पड़ा। राष्ट्रीय कांग्रेस के तपे-तपाए बड़े नेताओं में वे गिने जाते थे और अगर यदि उस समय कांग्रेस की तथा राज्य सरकार की नीति से सहयोग करते रहते तो उनको कोई भी महत्वपूर्ण पद मिलता, लेकिन वे अपने विचारों पर दृढ़ रहे। इसलिए ऐसा अप्रिय प्रसंग भी उपस्थित हुआ जिसके कारण आपको कांग्रेस से कुछ समय के लिए अलग तक होना पड़ा। इससे यह स्पष्ट है कि वे अपने संकल्प के कितने दृढ़व्रती हैं।

विदर्भ की उनकी माँग के विषय में मतभेद होना स्वाभाविक है। लेकिन यह तो स्पष्ट है कि इस माँग के पहले तथा बाद में भी श्री बियाणीजी के प्रति वहाँ की जनता का जो स्नेह रहा है, वह उनकी लोकप्रियता का द्योतक है।

श्री बियाणीजी जितने ओजस्वी वक्ता हैं, उतने ही प्रभावशाली बड़े लेखक भी। उनके लेखों एवं ग्रन्थों के अनुशीलन से उनके प्रौढ़ एवं परिपक्व विचारों का आभास मिलता है। भाषणों एवं लेखों द्वारा अपने विषय को सुन्दर सुमधुर एवं विवेचनापूर्ण ढंग से प्रतिपादित करने की उनकी शैली निराली है, जिसका श्रोताओं एवं पाठकों पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

अभी बीमारी के कुछ समय पहले से उन्होंने 'विश्व-विलोक' नामक पाक्षिक पत्र निकालना शुरू किया था। मैंने इसकी कुछ प्रतियाँ भी पढ़ी। युग की माँग के अनुसार दी गई पाठ्य-सामग्री सहसा ही पाठकों के मन को आकर्षित कर लेती है।

श्री बियाणीजी अपने आप में एक पूरे ग्रन्थ के पात्र हैं। इसलिए यह जानकर प्रसन्नता होती है कि उनकी विविध प्रवृत्तियों एवं विभिन्न कार्यों के सम्बन्ध में एक ग्रन्थ तैयार होगा और हम सब विस्तार से उनके कृतित्व का व्यापक परिचय पा सकेंगे। ★

श्री बियाणीजी एक–शब्दचित्र

लेखक

डा० बलदेवप्रसाद मिश्र——राजनाँदगाँव

(महाकाव्य के लेखक व भूतपूर्व दीवान, राजनाँदगाँव स्टेट;
हिन्दी के पत्रकार एवं लेखक; 'जनतन्त्र' के सम्पादक ।)

श्री बियाणीजी मेरे उन गिने-चुने मित्रों में से हैं जिनका मेरे मन पर स्थायी प्रभाव पड़ा है, यों तो प्राय: प्रत्येक मनुष्य में कुछ न कुछ असाधारणता, कुछ न कुछ विशेषता होती ही है, किन्तु जिसकी वह असाधारणता जिस मात्रा में समाज के लिए अनुकरणीय बन जाती है वह उसी मात्रा में सम्मान्य अथवा पूज्य बन जाता है । श्री बियाणीजी में ऐसी असाधारणता इतनी बहुमुखी है तथा इतनी उच्चकोटि की है कि अनायास ही सहयोगियों के मन पर स्थायी प्रभाव डाले बिना और उनका आदरभाव आकृष्ट किए बिना नहीं रहती ।

मुझे धुन्धला सा स्मरण है कि मैंने श्री बियाणीजी की असाधारणता का परिचय काँलेज के दिनों ही से प्राप्त किया था, जबकि हम दोनों ही विद्यार्थी थे । उस समय हम लोगों की घनिष्ठता न हो पाई थी । शायद मित्रता भी नहीं हुई थी । उस समय की एक अत्यन्त धुन्धली सी स्मृति ही शेष है । वह श्री भाईजी के भी मन में होगी कि नहीं, यह नहीं कहा जा सकता । (वे मुझसे अनेक अर्थों में बड़े हैं; आयु में भी, अतएव उन्हें भाईजी कहना केवल औपचारिक नहीं है । अपनी विशिष्ट मित्रमण्डली में वे इसी सम्बोधन से सम्बोधित भी हुआ करते हैं ।) कालेज के बाद हम दोनों का क्षेत्र बँट गया । मैं महाकोशल के राजनाँदगाँव, रायपुर और रायगढ़ के अपने जीवन-क्रम में उलझ गया और भाई श्री बियाणीजी से अनेक वर्षों तक मेरी भेंट नहीं हो पाई । फिर भी मुझे "विदर्भ-केसरी" की गौरव-गाथा समाचार-पत्रों में यदा-कदा पढ़ने को मिल ही जाती थी और उस समय आत्मीयता की एक अद्भुत सन्तुष्टि सी मन में सहसा दौड़ जाया करती थी ।

सन् १९४० के आस-पास की बात है जिस समय श्री बियाणीजी का राजनैतिक-व्यक्तित्व अपने प्रखर सौभाग्य पर था; और वे विदर्भ कांग्रेस कमेटी के प्रभाव-

शाली अध्यक्ष की हैसियत से रायपुर पहुँचे थे और स्वर्गीय पं. रविशंकरजी शुक्ल का आतिथ्य ग्रहण करने हेतु उनके घर पधारे थे। मैं भी उस समय वहाँ था। छात्रावस्था के बाद वही हमारा प्रथम मिलन था और ऐसा मिलन जिसमें छात्रावस्था की उस समय कोई विशेष स्मृति शेष नहीं रह गई थी। इस प्रसंग में इतना बता दूँ कि कालेज के बाद कुछ दिनों मैं भी राजनीति में सक्रिय हो चुका था, किन्तु वह सक्रियता दो साल से अधिक नहीं चल पाई और मुझे परिस्थितियाँ रियासत की नौकरी की ओर खींच ले गईं, जहाँ राष्ट्र-सेवा और लोक-सेवा का तो रूप ही बदल गया था। हाँ, केवल मात्र साहित्य-सेवा अपने पूर्व रूप के अनुरूप ही चैतन्य थी। अतएव जब मेरे श्रद्धेय माननीय शुक्लजी ने यह कहकर मेरा परिचय कराया कि मैं भी किसी समय कांग्रेसी कार्यकर्ता था किन्तु इस समय तो केवल साहित्य-सेवक रह गया हूँ तब श्री बियाणीजी ने जिस सहृदयता से मेरा समर्थन किया था उसका प्रभाव अब भी मेरे हृदय में वैसा ही सशक्त है। उन्होंने कहा था कि साहित्य-सेवक का दर्जा किसी राष्ट्र-सेवक या कांग्रेसी कार्यकर्ता से कम नहीं। प्रत्युत उसका दर्जा ऊँचा ही मानना चाहिए। संघर्षात्मक राजनीति के कार्यकर्ता की अपेक्षा बहुत अधिक स्थायित्व एक साहित्य-सृष्टा में होता है। अतएव जो साहित्य-सेवा में संलग्न है वह उसमें जरा भी ढील न होने दे। उसकी विशुद्ध साहित्य-सेवा ही उसके लिए सच्ची राष्ट्रसेवा होगी। यह उस समय की बात है जब संघर्षात्मक राजनीति इतनी सर्वग्राही हो चुकी थी कि हम सरीखे लोगों से भी यही अपेक्षा की जाती थी कि सब-कुछ छोड़कर इस संग्राम में कूद पड़ें।

संघर्षात्मक राजनीति में रजोगुण का पूरा महत्व रहा करता है। सात्विक विचारवाले लोग भी दलों के दलदल से दूर नहीं रह सकते। राग-द्वेष से बचना उनके लिए भी बहुत कठिन रहता है। अतएव यह स्वाभाविक है कि विचार-विभिन्नता के कारण महापुरुष भी एक दूसरे के और विशेषकर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष प्रतिस्पर्धी के विरोधी बन जाएँ और यह सोचते रहें कि विपक्षी उनके मार्ग का रोड़ा बनने के लिए पनपने न पावें। किन्तु असली महत्ता तब है कि जब विचारक अपने विपक्षी की भी विचार-धाराओं और भाव-धाराओं का सहृदयतापूर्वक अध्ययन कर सकें और आवश्यकता पड़ने पर उससे प्रसन्नतापूर्वक सहयोग भी कर सकें। कम से कम, वैयक्तिक कटुता से तो वह दूर ही रहे और इस प्रकार अपनी उदार मानवता पर आँच न आने दें। श्री बियाणीजी ने राजनैतिक जीवन के उत्थान और पतन दोनों देखे है, किन्तु जहाँ तक मुझे उनके जीवन के इस पहलू का पता है,

मैंने अनुभव किया है कि उन्होंने वैयक्तिक कटुता को कभी बढ़ावा नहीं दिया और उदार मानवता को कभी धूमिल नहीं होने दिया।

मेरी घनिष्टता उनसे तब हुई जब हम लोगों ने उन्हें मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अध्यक्ष चुना। यह आवश्यक नहीं हुआ करता कि साहित्य सम्मेलनों का अध्यक्ष कोई बड़ा साहित्यकार ही हो। जो साहित्य तथा साहित्य सम्मेलन की समस्याओं को भली-भाँति समझ सकता और उन्हें तत्परतापूर्वक सुलझा सकता है वह मेरी दृष्टि में अधिक उपयुक्त अध्यक्ष हो सकता है। श्री बियाणीजी ने राजनीति और प्रशासन के महत्वपूर्ण पद सँभालते हुए भी यह अध्यक्षीय भार सहर्ष स्वीकार किया—इसलिए नहीं कि उनके आत्मगौरव अथवा अहं के विस्तार के लिए एक और कुर्सी मिली जा रही है, किन्तु इसलिए कि प्रान्त की हिन्दी साहित्यिक चेतना जगाने में एक फूँक उनकी भी सम्मिलित हो जाए। उन्होंने कभी डींगें नहीं हाँकीं कि वे बड़े साहित्यकार हैं और सदैव अपने सहयोगी साहित्यकारों का यथेष्ट सम्मान करते रहे (मुझे तो उन्होंने भाई ही के समान माना), किन्तु अध्यक्षीय पद से उन्होंने प्रान्तीय हिन्दी सम्मेलन की मर्यादा जिस प्रकार ऊँची उठाई और उसके स्थायित्व के लिए जो कुछ किया वह सदैव अनुकरणीय रहेगा। लक्ष्मी और सरस्वती के नैसर्गिक बैर की कहावत झुठलाकर उन्होंने सम्मेलन के आर्थिक अभाव दूर कराए, श्री रामगोपाल माहेश्वरी के समान सुदक्ष प्रधान-मन्त्री के सहयोग से कार्यालयीन-व्यवस्था का स्तर सम्मेलन के गौरव के अनुकूल ऊँचा किया, सम्मेलन के लिए लाखों की लागत का एक बड़ा भव्य "मोर भवन" बनवाया, जिसका शिलान्यास बड़े विशाल समारोह में श्री जवाहरलाल नेहरूजी ने किया था और जिसमें अब अनेकानेक साहित्यिक गतिविधियाँ संचालित हुआ करती हैं, तथा प्रमुख साहित्यकारों को महीने भर तक पचमढ़ी-निवास का आनन्द देकर पं. रविशंकरजी शुक्ल को अर्पित करने के लिए "शुक्ल अभिनन्दन ग्रन्थ" तैयार कराया जो न केवल अपनी भव्यता के लिए किन्तु अपनी उपयोगिता के लिए भी प्रसिद्ध है। पुराने मध्य प्रदेश का प्रामाणिक बहुमुखी इतिहास साहित्यिक, सांस्कृतिक, औद्योगिक, सब प्रकार का उसमें जिस सुन्दरता से प्रतिबिम्बित हुआ है वैसा अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं। खेद की बात है कि प्रान्तीय विभाजन के कारण विदर्भ और महाकोशल अलग-अलग हो गए। अतएव उस ग्रन्थ की उपयोगिता अब कुछ कम पड़ गई और "मोर भवन" भी अब नए मध्य प्रदेश से अलग जा पड़ा। फिर भी श्री बियाणीजी की अध्यक्षता-विषयक सफलता का उद्घोष ये दोनों वस्तुएँ चिरकाल तक करती रहेंगी,

इसमें कोई सन्देह नहीं । उनकी योग्यता से प्रभावित होकर साहित्यकार बन्धुओं ने एक बार ही नहीं किन्तु लगातार दो बार उन्हें अध्यक्ष चुना ।

इसी प्रसंग में यह भी स्मरणीय है कि श्री बियाणीजी का किसी समय पं. रविशंकरजी शुक्ल से राजनैतिक मतभेद भी रहा है । दोनों अपने-अपने क्षेत्र में अद्वितीय रहे हैं और दोनों की महत्वाकांक्षाएँ टकरा भी चुकी हैं । कौन किससे दबे ? किन्तु जब दोनों ने सहयोग का निर्णय लिया तब वह सहयोग दिखाऊ नहीं रहा । शुक्लजी रहे मुख्य मन्त्री और श्री बियाणीजी रहे अर्थ मन्त्री । इसी काल में शुक्ल अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रणयन हुआ और इसी काल में मेरे निवेदन पर भारत सेवक-समाज की प्रादेशिक शाखा को इतना वार्षिक अनुदान मिला जितना सम्भवत: किसी अन्य प्रादेशिक शाखा को न मिला होगा । प्रान्तीय सम्मेलन को भी इसी कार्यकाल में इतना वार्षिक अनुदान दिया गया जिसका लाभ विदर्भ तो अब तक उठा ही रहा है ।

श्री बियाणीजी अच्छे साहित्यकार नहीं हैं, यह भी बात नहीं है । उन्होंने ग्रन्थ-प्रणयन भी किया है और पत्र-सम्पादन भी किया है । जिन्होंने उनका "कल्पना-कानन" पढ़ा है उन्हें उनके विचारों की मौलिकता का अच्छा पता चल जाएगा और जिन्होंने उनके "विश्व-विलोक" के अंक देखे हैं वे विचारों के प्रतिष्ठापन की उनकी निर्भीकता से प्रभावित हुए बिना न रहेंगे । फिर भाषणों में, वार्तालाप में, बहस में, विवाद में, धैर्य के साथ और तर्क तथा विवेक के साथ अपना पक्ष सुलझे हुए रूप में सहृदय-ग्राह्य रूप में उपस्थित कर देना भी तो ऐसी कला है जिसका साहित्यकारिता से घनिष्ठ सम्बन्ध है । और इस कला में श्री बियाणीजी पर्याप्त रूप से दक्ष हैं । उदात्त भावनाएँ साहित्यकार की निधियाँ हैं । बियाणीजी की ऐसी भावनाओं ने ही उन्हें जीवन के विविध कर्म-क्षेत्रों में अथवा मनोबल के साथ आगे बढ़ने की प्रेरणाएँ दी है । उनकी हृत्तन्त्री चाहे वृन्द-वाद्य के साथ मुखरित हुई हो चाहे एकाकी हो, किन्तु उसकी असाधारणता का स्वर सदैव स्पष्ट रहा है ।

श्री बियाणीजी के आतिथ्य की विशालता भुक्तभोगियों में ही नहीं किन्तु सर्वसाधारण में भी प्रसिद्ध है । मधुर वचन और मधुर जलपान प्रत्येक आगन्तुक के स्वागत के लिए मानों उनके पास सदैव तैयार रहते हैं । उनके माधुर्य में अनोखा लावण्य है । संस्कृत कवियों ने दही को मधुर कहा है "दीर्घ मधुरं मधुरं मधुर द्राक्षा मधुरा सिताऽपि मधुरैव ।" उससे वेष्टित होकर 'बड़ा' अपने लावण्य के लिए प्रख्यात है । दोनों का संयोग अपूर्व रस की वृद्धि करता है । 'बड़ा' यों ही बड़ा नहीं

बन जाता । उसमें सिल-लोढ़े के संघर्ष सहने की क्षमता होनी चाहिए, खारा नमक मिश्रित जल, जिसे आप चाहें तो वेदना के आँसू कह सकते हैं, हजम कर जाने अथवा उसमें भिद जाने की क्षमता होनी चाहिए और दूसरों के स्नेह (जिस शब्द का अर्थ तेल भी है ।) में पूरी तरह सिक्त होने की क्षमता होनी चाहिए । श्री बियाणीजी में इस बड़ेपन अथवा बड़प्पन की प्रचुर मात्रा विद्यमान है ।

प्रसन्नता की बात है कि ६ दिसम्बर १९६५ को श्री बियाणीजी अपनें ऐहिक जीवन के एकहत्तरवें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं । उनके शुभ-चिन्तक मित्र के नाते मेरी जगन्नियन्ता से प्रार्थना है कि वे शतायु हों और अपनी कृतियों से लोक-कल्याण के मार्ग उत्तरोत्तर प्रशस्त करते रहें । ★

बियाणीजी की शिष्टता एवं बुद्धिवाद

लेखक
—रिषभदास राँका—बम्बई
(जैन समाज के प्रधान कार्यकर्त्ता; 'जैन जगत' के सम्पादक।)

बियाणीजी के सम्पर्क को ४० साल से अधिक समय हो गया। उसमें उनकी अनेक विशेषताओं के दर्शन हुए। उनकी भाषा में मिठास, विचारों में प्रगतिशीलता, रहन-सहन में व्यवस्थितपन, अतिथि सत्कार का उत्साह, मैत्री निभाने की वृत्ति और समाज तथा राष्ट्रकी चिन्ता अब तक बनी हुई है। उनकी विशेषताओं के प्रथम दर्शन ४० साल पहले हुए थे, जिन्हें एक साल पहले इन्दौर में मैंने ज्यों का त्यों पाया।

खानपान में सादगी होते हुए सुरुचि का ख्याल न रखा जाता हो ऐसी बात नहीं। ४० साल पहले जब अकोला में उनके यहाँ भोजन किया था और बीच-बीच में कई बार भोजन के अवसर आए, पर जब १९६४ में इन्दौर गया था तब उसी प्रेम और आत्मीयता के साथ भोजन कराया।

बियाणीजी की आत्मीयता खिलाने-पिलाने या अतिथि-सत्कार तक ही सीमित नहीं है, पर अपने साथियों तथा मित्रों के सुख-दुःख में भी वे समरस और तन्मय होकर उनके जीवन की समस्याएँ सुलझाने में भरसक सहायता करते हैं। जिनके काम आए हों ऐसे साथियों तथा मित्रों की संख्या काफी बड़ी है। यह बात दूसरी है कि कई मित्रों में, जिन्हें उन्होंने आगे बढ़ाया, ऐसे कई मित्र कृतज्ञ नहीं कृतघ्न भी बने और बियाणीजी को गिराने का प्रयत्न भी किया। ऐसों की भी संख्या कम नहीं है। पर यह तो मनुष्य स्वभाव की स्वाभाविक कमजोरी है, कि वह कई बार उपकारकर्ता का अपकार भी करता है।

बियाणीजी का व्यक्तिगत जीवन जितना शिष्ट और संस्कारी है, उतना ही उनका सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन भी उज्ज्वल रहा है।

मारवाड़ी समाज में दहेज, पर्दा-प्रथा, स्त्री-अशिक्षा, विधवा-विवाह, मृत-भोज आदि कुरीतियों के खिलाफ उन्होंने जो कार्य किया वह अविस्मरणीय

रहेगा। आज से पचास साल पहले जब सामाजिक क्षेत्र में उन्होंने सामाजिक क्रान्ति का सन्देश दिया तब आज से बिल्कुल ही विपरीत परिस्थिति थी। लेकिन मधुर वाणी, सद्व्यवहार से उन्होंने समाज के अनेक बड़े-बूढ़ों को आकर्षित किया था। प्रारम्भ से ही वे बुद्धिवादी रहे और उनकी तर्क शैली अकाट्य रही है। उनके भाषणों से जनता मुग्ध बने ऐसी वक्तृत्व-शक्ति उनमें थी और है। मारवाड़ी समाज के विविध क्षेत्रों में सेवा की जिससे उनका जीवन स्तर ऊँचा उठे औरराष्ट्र में आदर का स्थान या प्रतिष्ठा पाए ऐसे प्रयत्न और मार्गदर्शन उन्होंने समाज को दिये।

लेकिन उनकी सेवाएँ सामाजिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रहीं, पर उन्होंने राष्ट्रीय क्षेत्र में भी बहुत बड़ा योगदान दिया। नागपुर कांग्रेस में उन्होंने राष्ट्रीय कार्यों में रस लेना शुरू किया था, और बराबर तबसे आजादी मिलने तक जो भी अद्भुत त्याग किया उसे शायद नई पीढ़ी ठीक से जानने में असमर्थ हो, पर विदर्भ में कांग्रेस को उन दिनों जीवित रखने का श्रेय बियाणीजी को था, जब कांग्रेस में रहने या कांग्रेसी कहलाने में खतरा था। वे कई बार जेल गए। कांग्रेस संगठन को सुदृढ़ बनाने के लिए अपने जीवन का उत्तम समय—जबकि वे बारह-बारह, चौदह-चौदह घण्टे काम कर सकते थे—लगाया। यदि अपनी शक्ति और समय बियाणीजी ने व्यवसाय या उद्योग में लगाया होता तो वे निस्सन्देह देश के उच्च उद्योगपतियों में स्थान पाते, लेकिन उन्हें सदा राष्ट्र की ही चिन्ता अधिक रही और व्यवसाय गौण रहा। व्यवसाय भी इसलिए किया कि स्वाभिमान से जीवन-यात्रा चले और सामाजिक तथा राष्ट्रीय कार्यों में व्यवसाय सहायक बन सके।

कोई ऐसा न माने कि जैसे जीवन व्यवहार में असफल होनेवाले ही राष्ट्रीय नेता बनते हैं, वैसे बियाणीजी उनमें से हों। उन्होंने यद्यपि अधिकांश समय सामाजिक और राष्ट्रीय कार्यों में लगाया फिर भी वे व्यवहारकुशल हैं। उन्होंने जो व्यावसायिक काम किए उसमें कुशलतापूर्वक सफल हुए। यह बात दूसरी है कि उनके जीवन का मुख्य कार्य समाज और राष्ट्र-सेवा रहने से वे व्यवसाय की तरफ विशेष ध्यान नहीं दे सके, फिर भी जो कुछ कार्य किया वह सफलतापूर्वक किया।

हमारी उनसे व्यवसाय के विषय में बातें होती रहती थीं; तब वे कहते थे व्यवसाय में सफलता जो जितनी योग्यता रखता है, वह पाता है। यदि मैं अपनी शक्ति का उपयोग व्यवसाय या औद्योगिक क्षेत्र में करता तो निस्सन्देह सफलता पाता, पर मुझे तो लगता है कि आपको भी व्यापार या रचनात्मक सेवा-कार्य का सीमित क्षेत्र छोड़कर राजनीति में आना चाहिए। राजनीति गन्दी है इसलिए

किनारे खड़े होकर दोष देने की अपेक्षा अन्दर कूदकर उसे शुद्ध बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

नासिक कांग्रेस के समय जब उन्होंने मुझे सक्रिय राजनीति में हिस्सा लेने का न्यौता दिया था और उनकी बात ठीक लगने पर भी मुझे तो अपनी वृत्ति के अनुसार बन पड़े, रचनात्मक सेवा करते रहना ही अनुकूल लगा। वे तो सक्रिय राजनीति में रहे और इतनी कुशलतापूर्वक कार्य किया कि जनता ने उन्हें "विदर्भ-केसरी" बनाकर कृतज्ञता प्रकट की। जब कांग्रेस का पुरानी सी. पी. में मन्त्रि-मण्डल बना तो वे मन्त्री बने और महाराष्ट्र में विदर्भ के विलीन होने पर भी वे मन्त्री बने।

उन्होंने अपनी कार्यकुशलता से अपने मन्त्रीत्व-काल में उत्तम कार्य भी किया था और मन्त्रियों की योग्यता व पद उनके कार्य से नापा जाता तो शायद वे बहुत ऊँचे स्थान पर होते, पर मन्त्रीपद योग्यता पर नहीं वरन् जाति, प्रान्त अथवा राजनैतिक कुटिलता आदि बातों से प्राप्त होता है। उसमें भी बियाणीजी का राजस्थानी होना और अपने विचार स्पष्ट रखने के कारण वे राजनीति में परास्त हुए।

हम देश का यह दुर्दैव मानते हैं कि देश में अनेक सुयोग्य व्यक्तियों का उचित उपयोग नहीं लिया जाता। यही कारण है कि कांग्रेस बदनाम हो रही है और देश आज़ाद होने पर भी वह विशेष आगे नहीं बढ़ पाई है। बल्कि कई बातों में तो पिछड़ी है। हम देश में नेतृत्व का अभाव पाते हैं। जिनके हाथों में देश का नेतृत्व हो, वे नेता यदि अपने साथियों की विशिष्टताओं तथा कमजोरी को जानकर उनका उपयोग न ले सकें, उनकी शक्तियाँ राष्ट्र-निर्माण में या राष्ट्र-हित में न लगा सकें, उन नेताओं में हम सच्चे नेतृत्व का अभाव पाते हैं।

हमें गांधीजी, जमनालालजी और सरदार जैसे नेताओं के सम्पर्क में आने तथा काम करने का अवसर मिला था। उस अनुभव से हम कह सकते हैं कि गांधीजी ने जिस तरह अपने साथियों को आगे बढ़ाकर उनसे काम लेकर उन्हें कार्यदक्ष व कार्यक्षम बनाया था, वह प्रक्रिया नेहरूजी के युग में नहीं चल सकी। प्रान्त, भाषा, रिश्ता, सिफारिश आदि के आधार पर सुयोग्य की अपेक्षा ऐसे लोगों को पद या सत्ता सौंपी गई जो न तो सफल सिद्ध हो सके और न देश को ही आगे बढ़ा सके। हमने जो गांधीजी, बजाजजी व सरदारजी को सुयोग्य नेता के रूप में नाम दिए उसका यही कारण है कि उन्होंने कई व्यक्तियों का निर्माण किया था। पर जवाहरलालजी अन्त तक कोई ऐसा वारिस नहीं निर्माण कर सके, जो उनका भार हल्का करता और उन्हें मार्गदर्शन के रूप में देश को लाभान्वित करने का सुअवसर

प्रदान करता। हम यह कहने का साहस तो नहीं कर सकते कि उनमें अन्त तक पद की लालसा बनी रही हो, पर वास्तविकता यह है कि राष्ट्र की चिन्ताओं और प्रधान मन्त्री के भार ने उन्हें जल्दी हमसे बिछुड़ने दिया।

जब बियाणीजी जैसे को हम देखते हैं तो लगता है कि आज भी देश में उत्तम कार्यकर्ताओं का अभाव नहीं है। पर उनका ठीक उपयोग नहीं लिया जाता है। और भारतीय जनता भी पत्थर को पूजनेवाली होने से जीवित नेता का कहना मानकर चलने की अपेक्षा उसकी मरने के बाद पूजा करती है, स्मारक बनाती है और मन्दिर बनाकर पूजा करने में भक्ति की पराकाष्ठा समझती है। बियाणीजी के विषय में यह हो, इसमें आश्चर्य कुछ भी नहीं है।

पर यह सब उनकी विशिष्टता की बात हुई। केवल उनकी विशेषताओं को बताने से उनके व्यक्तित्व का सम्पूर्ण दर्शन नहीं होगा। यहाँ जो मतभेद की बातें हैं, उस पर न लिखना एक तरह उनके प्रति न्याय नहीं होगा। उनकी असफलताएँ या कमजोरियों के विषय में लिखना कठिन होने पर भी उन पर लिखने के लिए मैं इस कारण विवश हूँ कि मैं उन्हें एक मानव मानता हूँ। यद्यपि मानव की दृष्टि से उनमें श्रेष्ठ मानवता का विकास हुआ है, पर मानव में कुछ कमियाँ न हों यह सम्भव नहीं है।

क्योंकि बियाणीजी श्रेष्ठ बुद्धिवादी हैं, इसलिए आज का बुद्धिवाद जहाँ ले जाता है वहाँ जाना स्वाभाविक ही है, और इस दृष्टि से वे समाजवाद के समर्थक हैं। आज का कोई भी बुद्धिवादी समाजवाद से प्रभावित न हो, यह असम्भव है, और बियाणीजी भी उससे अछूते नहीं रह सके। प्रगतिशीलता व समाजवाद के विचारों का प्रभाव आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा चारित्रिक सभी क्षेत्रों में स्पष्ट दिखाई देता है।

हम यह मानते हैं कि आज संसार में समाजवाद के विचारों का प्रभाव अत्यधिक है, पर समाजवाद संसार की समस्याओं को सुलझाने में सफल हुआ हो यह बात समाजवादी या साम्यवादी राष्ट्रों में भी दिखाई नहीं पड़ती। समाजवाद या साम्यवाद की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि उसके द्वारा मानव-जीवन की शक्तियों के विकास की प्रेरणा नष्ट हो जाती है।

इसका यह भी अर्थ नहीं कि आज की तरह पूँजीवाद की विषमता चलने दी जाए। आज की भयानक विषमता भी इष्ट नहीं है, पर पाश्चात्य देशों की विषमता मिटाने के उपाय शायद अधिक विचारणीय हों। यूरोप के कुछ प्रजातन्त्रवादी देशों में विषमता का प्रमाण ८ से १० गुने अधिक नहीं है, जबकि साम्यवादी देशों में

इसकी मात्रा इससे भी अधिक है। इसलिए हम मानते हैं कि भारत के लिए परिश्रम-पूर्वक आत्मविकास का मार्ग ही अधिक श्रेयष्कर होगा। साम्यवाद के विचारों के अनुसार धर्म अफीम की गोली और चारित्र्य सम्बन्धी मुक्त विहार आदि बातें भारतीय संस्कारों के कारण हो या और कोई दूसरा कारण हो, जँचती नहीं है, और सम्भव है इसीलिए बुद्धि और तर्क पर आधारित अकाट्य दलीलों को काटा न भी जाता हो तो भी लगता है कि परिणाम में असफलता अनिवार्य है। और अन्तिम दिनों में प्राप्त बियाणीजी की असफलताएँ बुद्धिवाद की अति का परिणाम हैं।

हम मानते हैं कि विदर्भ का महाराष्ट्र में शामिल होना केवल विदर्भ के हित की दृष्टि से श्रेयष्कर नहीं था और न है। लेकिन यह वास्तविकता होते हुए भी विदर्भ-वासियों का बियाणीजी के साथ मिलना इसलिए सम्भव नहीं था कि जातिवाद उसमें बाधक है। इस वास्तविकता को ध्यान में न लेकर जो निर्णय अपनी बुद्धि की कसौटी पर किए वे ऐसे थे जो असफलता की ओर ले जाते, और हुआ भी यही।

हमें समाज और राष्ट्र की दृष्टि से बियाणीजी की असफलता अत्यन्त हानि-कर मालूम दी, क्योंकि उनकी सेवाओं से राष्ट्र वंचित बना। पर उन्होंने जो राष्ट्र व समाज की सेवाएँ की उसके मुकाबले में यह असफलता नगण्य-सी है। जैसे सुन्दर मुख पर तिल का होना सुन्दरता में वृद्धि करता है, वैसे ही यह असफलता भी उनके व्यक्तित्व की गुरुता बढ़ानेवाली है। क्योंकि इससे यह तो स्पष्ट मालूम हो गया कि उन्हें सत्ता, पद या नेतृत्व से अपने विचारों की स्वतन्त्रता का अधिक मूल्य है तभी उन्होंने यह साहस किया जो खतरे से खाली नहीं था। और बियाणीजी उस खतरे को समझ न सकते हों ऐसा कहना अपने आपके विषय में कुछ अधिक मूल्यांकन करना होगा।

अब उनका स्वास्थ्य ऐसा नहीं है कि उनसे बहुत अधिक काम की अपेक्षा रखी जाए, पर उन्होंने समाज व राष्ट्र की जो अमूल्य सेवाएँ की हैं उसके लिए कृतज्ञता व्यक्त करना प्रत्येक भारतीय और राजस्थानी का कर्तव्य है। हम अपने इस महान सेवक के प्रति आदर प्रकट करते हैं और वे हमारे एक आदरणीय मित्र रहे हैं इसका गौरव अनुभव करते हैं।

★

सौन्दर्य-प्रेमी भाईजी

लेखक
रामकृष्ण बजाज—बम्बई
(स्व० जमनालालजी बजाज के सुपुत्र; काँग्रेस के प्रधान कार्यकर्त्ता; विविध सार्वजनिक कार्यों में रत तथा उद्योगपति ।)

हम सब लोग जो श्री ब्रजलाल बियाणी के निकट सम्पर्क में आए, उन्हें "भाईजी" के नाम से ही जानते हैं और वैसे ही उन्हें मानते भी हैं । वैसे तो वे प्रारम्भ में बराबर पूज्य बापूजी व पिताजी (जमनालालजी बजाज) के पास मिलने के लिए वर्धा आया-जाया करते थे, लेकिन मेरा उनसे विशेष परिचय जेल में हुआ ।

सन् १९४१ में व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन के दौरान जब मुझे गिरफ्तार करके नागपुर जेल ले जाया गया तो भाईजी वहाँ पहले से ही मौजूद थे । पूज्य पिताजी भी उस समय उसी जेल में थे लेकिन उनको स्वास्थ्य आदि के ख्याल से दूर बने हुए एक छोटे से बैरक में अलग रखा था ।

शुरू में मैं जनरल वार्ड में ही रहा । भाईजी भी वहीं थे । जेल पहुँचते ही पता चला कि वहाँ तो जैसे भाईजी का ही साम्राज्य फैला हुआ था । जेल अधिकारी तो सुबह चक्कर लगा जाते थे, लेकिन बाद में अधिकतर व्यवस्था भाईजी के ही जिम्मे थी । जेल अधिकारियों से उन्होंने बहुत अच्छा सम्पर्क बना रखा था । हर किसी क़ैदी की छोटी-मोटी जो कुछ भी आवश्यकता होती उसे पूरा करने में भाईजी को आन्तरिक आनन्द मिलता था । कोई भी बीमार होता तो उसके पास वे बराबर नियमित रूप से जाते, उसकी दवा-दारू, फल, आदि की व्यवस्था अपने खर्चे से किया करते । जेल की चहारदीवार के बीच रहते-रहते लोग तंग भी आ जाते तथा उनका मन भी कभी-कभी उखड़ने-सा लगता । लेकिन तब भी सब लोगों को प्रसन्नचित्त रखने में वे बड़ा हिस्सा लेते और लोगों को खुशी देकर खुद भी खुश होते ।

सन् १९४२ का "भारत छोड़ो" आन्दोलन छिड़ा तब फिर हम लोगों को

साथ-साथ जेल में रख दिया गया। इस समय फिर से एक लम्बी मुद्दत तक उनके सान्निध्य में रहने का मौका मिला।

लगभग २-२।। वर्ष तक यहाँ साथ रहे। फिर उनका व ८-१० साथियों का तबादला दमोह जेल में कर दिया गया। बहुत से राजनैतिक क़ैदी तब तक छूट गए थे। नागपुर जेल लगभग खाली हो गया था। तब मुझे भी तबादला करके दमोह जेल में भेज दिया गया। यह जेल छोटी थी और क़ैदी भी वहाँ थोड़े ही थे। इससे भाईजी को और भी नजदीक से जानने का मौक़ा मिला। यहाँ के जेलर को तो मानो उन्होंने अपना मैनेजर ही बना लिया था। वह प्रतिदिन आकर हम लोगों के साथ खाना खाता तथा रोज शाम को मित्रता के नाते गपशप होती रहती। जेलर और क़ैदी की भावना ही निकल गई थी। दमोह में जो खाना-पीना बनता था वह भाईजी खुद अपनी देख-रेख और विस्तृत आदेशों के अनुसार बनवाते थे। गेहूँ की एक तरह की भाखरी वे बनवाते थे और जो मुझे बहुत पसन्द थीं। जब हम लोग जेल से छूट गए तब एक दिन अचानक एक बड़ा-सा पोस्ट पार्सल मेरे पास आया। पार्सल पर भेजने वाले की जगह पर भाईजी का नाम देखकर कुछ ताज्जुब-सा हुआ और सोचने लगा कि आखिर भाईजी ने क्या भेजा होगा। शायद मैं जेल में कोई चीज भूल आया होऊँगा, वह भेजी होगी। लेकिन पार्सल खोलने पर देखता हूँ तो डिब्बा उन्हीं भाखरियों से भरा पड़ा था, जो मुझे पसन्द थीं। उन्होंने खास याद करके भाभीजी से बनवाकर भिजवाई थीं। इस तरह की छोटी-मोटी लेकिन व्यक्तिगत पसन्दगियों को ख्याल में रखकर उसे निभाना यह भाईजी की विशेषता है। बात तो इसमें कोई बड़ी नहीं थी फिर भी इसमें उनका प्रेम और व्यक्तिगत लगाव स्पष्ट झलकता है। उनके परिचय में आए हुए व्यक्ति ऐसी बातों को लेकर बरबस उनके निकट खिंचते चले आते हैं।

इस जेल के सहजीवन में उनकी संगठन शक्ति, व्यवहारकुशलता, चातुर्य, स्वभाव की नम्रता व मिठास का अधिक परिचय मिला। वे सिर्फ खेल-कूद, मौज-शौक में ही अधिकतर हिस्सा लेते थे सो बात नहीं है। उनकी पोशाक में, रहन-सहन में व कमरे आदि की सजावट में बड़ी सुव्यवस्था रहती थी। हर तरह की सुन्दरता के प्रति उनका बराबर आकर्षण बना रहता था। एक तरह से उनको सौन्दर्य उपासक कहा जाए तो गलत न होगा। इसका मतलब यह नहीं कि बौद्धिक और राजनैतिक विषयों में उनकी रुचि कुछ कम थी। यह हमारा सौभाग्य था कि उस समय पूज्य विनोबाजी भी नागपुर जेल में हमारे साथ ही रखे गए थे। रोज शाम को प्रार्थना के बाद उनका नियमित प्रवचन होता। भाईजी ने न केवल

उसमें पूरा रस लिया बल्कि खुद उन प्रवचनों के नोट्स लिखे और उनके आधार पर एक पुस्तक तैयार करने में सहायता दी। पूज्य विनोबाजी से आग्रह करके इसके प्रकाशन की अनुमति भी उनसे प्राप्त की। यह पुस्तक आगे "स्वराज्य शास्त्र" के नाम से प्रसिद्ध हुई। गांधी साहित्य में इस पुस्तक का एक विशेष स्थान है। इसे पुस्तकाकार रूप में तैयार करने व जनता के समक्ष रखने में सहायक होकर भाईजी ने देश की बड़ी सेवा की है।

प्रारम्भ से ही भाईजी के साथ जो प्रेम का सम्बन्ध बना वह आज तक क़ायम है।

★

माहेश्वरी समाज के साहसी प्रवक्ता

लेखक

मदनगोपालजी काबरा—कुचामन

(सार्वजनिक कार्यकर्ता एवं भूतपूर्व 'कुचामन स्टेट' के कामदार।)

'विदर्भ-केसरी' भाई ब्रजलालजी बियाणी व्यक्ति होते हुए भी एक संस्था हैं, ऐसा कहा जाए तो कोई अत्युक्ति नहीं है। भाई बियाणीजी से मेरा सम्पर्क सन् १६१८ से है। वैसे श्री बियाणीजी के पिता श्री नन्दलालजी कुचामन के ही रहनेवाले थे और स्वयं श्री बियाणीजी का विवाह भी कुचामन में ही मेरे पड़ोस में रहनेवाले लड्ढा के यहाँ हुआ था। बहन सावित्रीजी को ही लेने श्री बियाणीजी एक बार कुचामन आए थे। उस समय से ही उनसे प्रेम का नाता बना और आज तक बना हुआ है। वे भी मुझे अपने छोटे भाई के सदृश्य ही मानते रहे हैं। उस समय श्री बियाणीजी ब्रजलाल नहीं थे, उन्हें लोग बिरदीचन्द ही कहते थे। ब्रजलाल नाम पीछे से श्री बियाणीजी ने बदला था।

श्री बियाणीजी अपने बाल्यकाल से ही होनहार थे और छात्र जीवन में तो उन्होंने अपनी कृतित्व शक्ति का काफी परिचय दिया था। विदर्भ में रहने के कारण उन्हें उच्च कोटि के नेताओं से परिचय प्राप्त करने का सुअवसर भी मिला और उन्होंने अपने आपको भी देश की स्वतन्त्रता के संग्राम में अर्पित कर दिया। इससे उनकी प्रतिभा भी चमकी और वे देश के निर्माताओं की श्रेणी में भी आ बैठे। सामाजिक विचारधारा उनकी प्रारम्भ से ही बड़ी सुलझी हुई और दृढ़ नीति पर आधारित थी। उन्होंने सामाजिक क्षेत्र में प्रवेश करते ही पहले अपने घर का सुधार प्रारम्भ किया और बाद में माहेश्वरी समाज के मंच से अपने विचारों का प्रचार प्रारम्भ किया।

जब आप और बाबू गोविन्ददासजी मालपानी सन् १६२१-२२ में राजस्थान में महासभा के प्रचार के लिए आए, उस समय इनके विचारों से प्रभावित होकर मैंने भी विदेशी कपड़ों का बहिष्कार किया था और शुद्ध खादी पहनना प्रारम्भ कर दिया था। यद्यपि मेरे जैसे व्यक्ति के लिए, जिसका रियासती राजाओं से

घनिष्ठ सम्बन्ध था और जिसको रियासतों के वातावरण में रहना था, यह परिवर्तन बहुत महँगा पड़ा। किन्तु श्री बियाणीजी के विचारों ने मेरे हृदय में भी उन सुधारों के प्रति एक भयंकर बवण्डर मचा दिया था जिससे कि हमारा समाज भयंकर रूप से आज भी राजस्थान में ग्रसित है और धीरे-धीरे सुधार के पथ पर आगे बढ़ रहा है।

इन्हीं दिनों में कोलवार माहेश्वरियों का प्रश्न माहेश्वरी समाज के सामने उपस्थित हो चुका था, और इस प्रश्न का बहुत अधिक उत्तरदायित्व भी हम कुचामनवालों पर था। कुचामन से ही कोलवार माहेश्वरी, माहेश्वरी नहीं हैं, यह एक घटना का निर्णय था। इस निर्णय के पश्चात् श्री रामेश्वरदयालजी बिड़ला ने कोलवार माहेश्वरियों में विवाह कर लिया और इसको लेकर माहेश्वरी समाज में एक बहुत बड़ा गृह-युद्ध प्रारम्भ हो गया था। तमाम हिन्दुस्तान का माहेश्वरी समाज दो दलों में विभक्त हो गया था। एक पंचायत पार्टी बनी, एक महासभा दल रहा। इस कलह में श्री बियाणीजी व श्री श्रीकृष्णदासजी जाजू का योगदान बहुत ही उज्ज्वल रहा। महासभा का नेतृत्व इन्हीं दोनों के हाथों में था और एक कोलवार कमीशन बनकर इस प्रश्न ही का नहीं, प्रत्युत बहिष्कार प्रणाली का बहिष्कार माहेश्वरी समाज से प्रायः समाप्त करा दिया।

भाई बियाणीजी का कण्ठ सुमधुर होने से तथा ओजस्वी वक्ता होने के नाते इनके भाषणों का प्रभाव बहुत अधिक होता रहा, और इन्हें माहेश्वरी समाज में तो "कोकिल कण्ठ" वक्ता आज भी माना जाता है।

श्री बियाणीजी कोरे प्रभावशाली वक्ता ही नहीं, सुप्रसिद्ध साहित्यज्ञ, लेखक और विचारक हैं। आपने छोटी-छोटी कई पुस्तकें भी लिखी हैं। आपकी "जेल में" नामक पुस्तक सन् १९४९ में मुझे प्राप्त हुई थी। आपकी लिखी "विवेक और निर्बलता" की कहानी आपके उच्च विचारक होने का स्पष्ट प्रमाण है। आपके भावना-बल पर उस समय के व्यक्त किए हुए विचार आज भी समाज के लिए उतने ही मार्गदर्शक हैं जितने उस समय थे। आप लिखते हैं "विपत्ति का भार हटाने के लिए भावना बल की, विचार के मार्ग-दर्शन की आवश्यकता होती है। जीवन में दोनों का स्थान और आवश्यकता है। भावना जीवन-सुमन का सौन्दर्य है और विचार उसका सौरभ। सौन्दर्य एकत्रण में जीवन की सम्पूर्णता है। जीवन में प्रधानता किसकी है, इसका निर्णय जीवन का कठिन प्रयास है। भावना बलवान है। जीवन के साथ उसका जन्म है। जीवित रहने की इच्छा उसकी प्रेरणा है। उसकी प्राचीनता अनादिकाल की है। भावना के लाखों वर्षों के पश्चात् विचार

का उद्गम हुआ। मानव-जीवन में यही अवस्था जन्म के साथ प्रौढ़ता प्राप्त करती है। भावना जीवन की बाल्यावस्था है और विचार जीवन की प्रौढ़ स्थिति। भावना विरहित विवेक के आसन पर अटल आसीन व्यक्ति ही स्थितिप्रज्ञ है। भावना के साथ जन्म लेकर विचारों में जीवन की अन्तिम स्थिति यही मानव जीवन की प्रगति का मार्ग है। जीवन का अस्वस्थ संघर्ष भावना और विचार के संघर्ष का परिणाम है। इस संघर्ष के निवारण में ही जीवन की शान्ति है और है बल भी।"

कितनी सुन्दर व्याख्या है और कितने प्रभावशाली ढंग से इसे उपस्थित किया गया है। कुछ वर्षों से तो श्री बियाणीजी द्वारा लिखित लेख इत्यादि इतने गम्भीर और विवेचनाशील होते हैं जिनसे यह कहा जा सकता है कि आपका अध्ययन बहुत गम्भीर होता जा रहा है, और आप अपने विषयों पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करते जा रहे हैं।

पहले आपने अकोला से 'प्रवाह' पत्र निकाला था; उसके बाद अभी-अभी इन्दौर से 'विश्व-विलोक' निकाला। इस पत्र के आपके सम्पादकीय लेख पढ़ने के ही नहीं, प्रत्युत पूर्ण अध्ययन कर जीवन में उतारनेवाले हैं। मैं उनके विचारों का अध्ययन करता रहता हूँ और उनसे उत्पन्न होनेवाली सुन्दरता का वास्तविक पुजारी हूँ। यह सृष्टि वास्तव में मानव के लिए वरदान है। इसमें मनुष्य सुख-दुःखादि द्वन्दों से कुछ सीखता हुआ और समझता हुआ आगे बढ़ने का, उन्नत होने का प्रयास करता रहता है। यह एक स्वाभाविक वृत्ति है कि हम अपने से अधिक उन्नत मानव को देख-सुनकर ही तो उसके अनुरूप बनने की कामना करते हैं। मानव को आगे बढ़ने का सन्देश देनेवाली इस धारणा का मनोवैज्ञानिक रहस्य यही प्रतीत होता है। किसी विशिष्ट व्यक्ति के आदर्श को अपने सामने रखकर उसके व्यावहारिक जीवन को अपने में उतारने की चेष्टा करके ही अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हो सकता है। श्री बियाणीजी का जीवन एक विशिष्ट व्यक्ति का जीवन है ऐसा कहा जाय तो किसी प्रकार की अत्युक्ति नहीं है। मानवतावाद को उन्होंने स्पष्ट किया है और मानव गरिमा की निष्ठा को आगे बढ़ाने का प्रयास किया है।

आप जब महासभा के सभापति थे और श्री ब्रजवल्लभदासजी मूँदड़ा और नन्दकिशोरजी गोयदानी महासभा के प्रधानमन्त्री थे तब एक सैद्धान्तिक प्रश्न को लेकर सभापति व प्रधानमन्त्रियों में मतभेद हो गया था। मैं भी उस समय कार्यकारिणी का सदस्य था। मैंने भी प्रधानमन्त्रियों का पक्ष लिया था किन्तु अन्त में वह प्रश्न श्री बियाणीजी के अनुकूल तय हुआ। उस समय की दृढ़ता और सैद्धान्तिक

विषयों पर आपकी अटलता देखकर यह निश्चित तौर से कहा जा सकता है कि आप व्यक्ति नहीं एक महान संस्था हैं, और आपके विचार व्यक्तित्व से सम्बन्ध नहीं रखते, प्रत्युत समाज आपका विषय है। संघर्षप्रियता के हामी होते हुए भी अनुशासन के सदैव से महान पोषक रहे हैं।

ऐसे महान् व्यक्ति के ७१ वें वर्ष में प्रवेश के अवसर पर ग्रन्थ प्रकाशन कर उनका अभिनन्दन किया जाने का प्रयास वास्तव में एक स्तुत्य प्रयास है। उनकी जीवन के प्रत्येक पहलू से लगी हुई झाँकी आनेवाली पीढ़ियों के लिए उपयोगी होगी इसमें कोई सन्देह नहीं हो सकता है। महान व्यक्तियों के जीवन से कुछ मिलता है और वह कुछ ही वास्तविक जीवन का तत्व है।

श्री बियाणीजी देश और समाज के उत्थान के लिए १०० वर्ष और जिएँ यह मित्रों की मंगलकामना है।

विदर्भ के सामाजिक तथा राजकीय जीवन में बियाणीजी ने महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। जनता के कई आन्दोलनों में उन्होंने प्रभावी नेतृत्व किया और दीर्घावधि तक कांग्रेस की सेवा की। विदर्भ कांग्रेस के अध्यक्ष, विधान सभा के सदस्य तथा मन्त्रीपद की ज़िम्मेदारियों को भी उन्होंने भलीभाँति निभाया है। कई समाचार-पत्रों से और औद्योगिक प्रतिष्ठानों से उनका सम्बन्ध रहा है। इसी प्रकार कई शैक्षणिक और सामाजिक संस्थाओं को भी उन्होंने मार्गदर्शन किया है।

मुझे विश्वास है कि उनका चरित्र पढ़कर नवयुवकों को समाज सेवा और देश-सेवा करने की प्रेरणा प्राप्त होगी। ★

श्री बियाणीजी : जैसा मैंने पाया

लेखक
वल्लभदासजी राठी—अमरावती
(कई कारखानों के मालिक तथा रुई के व्यापारी।)

ब्रजलालजी बियाणी से मेरे परिचय की अवधि लगभग ४० वर्षों की है। इस लम्बी अवधि में मेरा परिचय सहज ही केवल परिचय की सीमा तक न रहकर अत्यन्त घनिष्ठता में बढ़ता गया।

बियाणीजी को अनेक लोगों ने अनेक रूपों में देखा होगा। राजनैतिक नेता के रूप में, सत्ताधिकारी शासक के रूप में, समाज-सुधारक के रूप में, अथवा साहित्यकार के रूप में, किन्तु मेरे लिए वे सदैव एक सुखद मित्र एवं परिजन रहे हैं! हम लोगों की घनिष्ठता केवल हम दोनों की ही नहीं रही, वरन् हम दोनों के परिवारों में भी सघन होती गई। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि वे कितने मेरे अपने हैं। अपने व्यक्तित्व के सम्बन्ध में हम जितना अधिक जानते हैं उससे भी अधिक कठिन उसे अन्य लोगों को बताना होता है। फिर भी मैं यह प्रयास कर रहा हूँ।

बियाणीजी जब कभी अमरावती आते, सदैव मेरे यहाँ ही ठहरते! हम अकोला, इन्दौर, नागपुर जाते, तब उनके यहाँ ठहरते या उनसे मिलते, साथ में बैठते-घूमते। हर समय मैंने पाया कि बियाणीजी हाथ में लिये किसी भी कार्य को पूर्ण करने के लिए अमित उत्साह और धैर्य रखते हैं। एक बार कार्य सामने आने पर उसका जिस सूक्ष्मता से वे विश्लेषण करते, उसकी उपयोगिता पर वाद-विवाद करते, गम्भीरतापूर्वक विचार करते कि सामनेवालों को लगता कि इन तिलों में से तेल नहीं निकलेगा। किसी भी कार्य को पूर्ण करने में इनका सहयोग कठिन होता। किन्तु उस कार्य की उपयोगिता सिद्ध हो जाने पर जिस उत्साह से वे कार्य को प्रारम्भ करते हैं और धैर्य के साथ पूर्ण करते हैं यह भी देखनेवालों को आश्चर्य-चकित किए बिना नहीं रहता। उनका विश्वास सदैव सुविचारित क्रियात्मकता में रहा है, केवल कार्यमात्र में नहीं।

एक ओर जहाँ वे स्वयं किसी कार्य को पूर्ण गम्भीरतापूर्वक सोचने के पश्चात् ही हाथ लगाते हैं, वहाँ वे अन्य लोगों को भी अपने द्वारा प्रस्तावित कार्य पर पूर्ण गम्भीरतापूर्वक सोचने का अवसर प्रदान करते हैं। उन्हें कभी किसी ने अपने प्रभाव में लाकर काम करवाते हुए नहीं पाया। अपनी निज की आवश्यकता हो या सार्वजनिक सामाजिक कार्य, उसको सामनेवाले के समक्ष पूर्ण स्पष्टता से रख देते हैं एवं उस कार्य को करना है या नहीं यह निर्णय लेने का पूर्ण अवसर उसे प्रदान करते हैं। इसका परिणाम यह निकलता है कि जो भी उन्हें उनके कार्य में सहयोग देता है वह हृदय से साथ देता है। स्वार्थी लोग उन्हें धोखा भी दे देते हैं, जैसा कि अक्सर उनके साथ हुआ है।

उनका व्यक्तित्व यों तो बहुत ही सामान्य है। रहन-सहन भी अत्यन्त सादगी-पूर्ण। वेष-भूषा निर्मल-धवल, जो सहज ही उन्हें नेता की प्रतीति कराती है, किन्तु उनके व्यक्तित्व का विशिष्ट गुण है उनकी स्वभावगत कोमलता एवं मधुरता। एक सहज मुस्कराहट उनके अधरों पर किसी से भी बात करते समय छा जाती है, और वे जिससे भी बात करते हैं उसका हृदय इस मुस्कराहट से भीगे बिना नहीं रहता। वह ऐसा अनुभव करता है कि बियाणीजी उसके अपने हैं एवं उसका यह विश्वास फलदायक भी होता है।

उनकी वाणी में एक ऐसी मधुरता एवं शब्दों में अनुभूति की ऐसी गहराई है, जो किसी गायक कवि में ही होती है। यों वे कवि तो हैं ही। कई वर्षों पूर्व जब एक बार यों ही चर्चा छिड़ गई थी, प्रसंगवश बात निकली कि लोकमान्य तिलक यदि स्वतन्त्रता के पश्चात् जीवित होते तो क्या करते ? जैसा कि स्वयं लोकमान्य ने कहा था कि वे गणित के अध्यापक होते। बियाणीजी भी अपने सम्बन्ध में कह उठे थे, मैं अपने जीवन का उत्तरकाल साहित्य-सेवा में बिताना चाहूँगा। वे राज-नैतिक नेता न बने होते, तो यह निश्चित ही है कि वे एक सफल साहित्यकार होते।

यों भी कवि-हृदय होने के नाते स्वराज्य की उनकी अपनी कल्पना है, जिसको मूर्तरूप देने का अवसर उन्हें पूर्णतः प्राप्त नहीं हुआ। उनके राजनैतिक जीवन की सफलता-असफलता के सम्बन्ध में मौन रहना ही मुझे प्रिय है, किन्तु इतना निश्चित है कि स्वराज्य के सेनानी को स्वराज्य के निर्माण का वह सुयोग नहीं मिला जो अपेक्षित था।

बियाणीजी की कार्य-पद्धति एवं स्वभाव की मधुरता ने अनेक युवकों को अपना अनुगामी बनाया है। साथियों में सामाजिकता जगायी है। मुझमें भी

सामाजिक-कार्यों के प्रति जो निष्ठा है, उसका अधिकांश श्रेय बियाणीजी को है। मेरे अनेक सहयोगी उनकी विनयशीलता से बहुत प्रभावित हैं।

बियाणीजी में बच्चों के प्रति अपार प्रेम है, जो कभी-कभी तो मोह की सीमा तक पहुँच जाता है। हमारे यहाँ आने के पश्चात् वे हमारी कुशल मंगल बाद में पूछते हैं, पहले बच्चों को पूछते हैं। घर में बच्चों की अस्वस्थता उन्हें अस्वस्थ कर देती है। एक दिन वे हमारे यहाँ से नागपुर साथ जाने को थे। कार में बैठ चुके थे। कार स्टार्ट हो चुकी थी कि सामने से डाक्टर की गाड़ी ने प्रवेश किया। जब उन्हें बताया गया कि बड़ी बेबी की उँगली जरा-सी तीन दिन पहले कट गई है और बरसात के दिन होने से सैप्टिक के भय से डाक्टर साहब इन्जेक्शन देने आए हैं तो कार ठहरवाकर उतर पड़े तथा कुछ अप्रसन्न-से होते हुए बोले—"पहले तो तुमने कहा ही नही।" बेबी के पास गए, उसे देखा, उससे पूछा और तब लौटकर कार में बैठे। बच्चों के साथ विनोद करना उनका स्वभाव है।

नौकरों पर गुस्सा होते मैंने उन्हें नहीं देखा। मनुष्य को मनुष्य समझते हैं इसीलिए उनमें आत्मीयता की भावना इतनी तीव्र होती है कि 'क्रौंच-व्यथा' एवं सहानुभूति का रूप ले लेती है। उनकी यह क्रोधशून्य प्रकृति, मेरी दृष्टि में, उनकी कमज़ोरी है।

हाँ, उन्हें क्रोध और झुँझलाहट होती है यदि वे स्वयं किसी कार्य में सफलता नहीं प्राप्त कर पा रहे हों।

नियमितता का भी जहाँ तक प्रश्न है अपने व्यक्तिगत दैनिक कार्यों में वे बहुत ही नियमित हैं। सामाजिक कार्यों में अनियमितता उनसे होती है लेकिन यह समस्या उनसे कम, तथा अन्य लोगों के कारण अधिक होती है। उनसे कहा जाता है कि आपको अमुक कार्यक्रम के लिए ८-३० बजे प्रस्तुत रहना है। वे ८-२० से तैयार होकर इन्तजार कर रहे हैं, और उन्हें लेने के लिए कार्यकर्ता ८-५० पर आते हैं। आप उनसे कहें कि कार्यक्रम ९-३० बजे समाप्त हो जाएगा एवं १० बजे आप अन्य कार्यक्रम स्थल पर पहुँच सकेंगे। किन्तु पहला ही कार्यक्रम ११-३० तक लम्बा हो जाता है। बीच का यह समय उनके लिए कितना झुँझलाहट का होता है यह वही अनुमान लगा सकता है, जिसे प्रारम्भ में इस प्रकार के अवसरों पर उनके समीप रहने का अवसर मिला है। सौजन्यतावश वे अपना क्रोध भी बता नहीं सकते। उनकी इस स्वभावगत विवशता की ओर मैं पहले ही इशारा कर चुका हूँ।

उनमें एक विशेषता मैंने और पाई है। वह है उनकी हिन्दी में निष्ठा एवं उसके विकास के लिए सदैव प्रयत्नशीलता। शासन से सम्बन्धित रहे हों या शासन

से बाहर, किन्तु हिन्दी के हित में सदैव रहे। विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन के निर्माण एवं संचालन में उनका क्रियात्मक सहयोग रहा है। अर्थमन्त्रित्व के व्यस्त कार्यकाल में एक बार अमरावती केवल 'भारत हिन्दी पुस्तकालय' के कार्यक्रम के लिए आए थे।

अन्त में मैं उनकी विनोदप्रियता का एक संस्मरण बताकर इस लेख को पूर्ण करूँगा। सामान्यतः जो जितनी अधिक कठिनाइयों को दृढ़तापूर्वक झेलने में सफल हो जाता है, वह उतना ही अधिक सहज विनोदी भी हो जाता है। एक बार उनके अर्थमन्त्रित्व काल में मैं सपरिवार नागपुर उनके यहाँ ठहरा हुआ था। उन दिनों वे कुछ अस्वस्थ थे। भोजन बन्द था। हम सब लोग बैठे बातचीत कर रहे थे। ये काश्मीरी सेब के छिलकों को छील-छीलकर अलग डाल रहे थे। मेरी श्रीमतीजी ने उनसे विनोद किया—"बियाणीजी विटामिन तो छिलकों में होता है, अतः उन्हें ही खाना चाहिए, और आप हैं कि उन्हें यूँही डाले जा रहे हैं।" बियाणीजी ने अपना सेब खाना पूर्ण होने के पश्चात् , प्लेट में उन छिलकों को जमाकर श्रीमतीजी के सामने रख दिया। हम आश्चर्यचकित थे कि वे यह क्या कर रहे हैं ? प्लेट श्रीमतीजी के सामने बढ़ाते हुए उन्होंने कहा "यह विटामिन आपके लिए है, लीजिए।" हम लोगों की हँसी रोके न रुक सकी। इससे उनकी विनोदप्रियता की एक छोटी-सी झलक मिलती है।

इस प्रकार मैंने बियाणीजी को सदैव कर्मठ एवं सफल कार्यकर्ता के रूप में पाया है। उनका व्यक्तित्व प्रेरणा का स्रोत है। उनके दीर्घ एवं स्वस्थ जीवन की मैं कामना करता हूँ ताकि राष्ट्र और समाज उनके मार्ग-दर्शन से अपना हित कर सके।

★

श्री ब्रजलालजी : बियाणी

लेखक

ईश्वरदासजी जालान—कलकत्ता

(बंगाल मन्त्रिमण्डल के सदस्य; मारवाड़ी सम्मेलन के भूतपूर्व अध्यक्ष
तथा मारवाड़ी समाज के आधार स्तम्भ।)

श्रद्धेय ब्रजलालजी बियाणी ६ दिसम्बर १९६५ को अपने जीवन के ७० वर्ष पूर्ण कर ७१ वें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। इस अवसर पर उनके जीवन के कार्यों और विचारों के सम्बन्ध में एक ग्रन्थ का प्रकाशन भी किया जा रहा है। बियाणीजी ने देश के सार्वजनिक जीवन में जो भाग लिया है, वह सर्वविदित है। इनकी वाणी में जो ओज और माधुर्य है, वह हम लोगों को मुग्ध किए बिना नहीं रहती। जब वे बोलते हैं उस समय उनके वाक्यों में जो आकर्षण रहता है, वह बिरले ही मनुष्यों में पाया जाता है। जनता के हृदय में वे पैठ जाते हैं और जो चाहते हैं वह उनसे मनवा लेते हैं। मारवाड़ी समाज में सार्वजनिक जीवन के कार्यकर्ता तो इने-गिने ही रहे हैं, उनमें से श्री ब्रजलालजी बियाणी भी हैं, जिनका नाम चिरस्मरणीय रहेगा। बचपन से ही इनके विचारों में स्वतन्त्रता की, साहस की और कार्य करने की क्षमता रही है। जिस समय भारतवर्ष का समाज पुरानी रूढ़ियों से भरा पड़ा था और जो उन रूढ़ियों के विरुद्ध आगे बढ़ा था, उसे नाना प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ता था, उसका अनुभव वे ही कर सकते हैं, जिन्होंने इस जमाने को देखा है। बियाणीजी ने इस समय सामाजिक क्षेत्र में कान्तिकारी कदम उठाए थे, और इसके कारण जो कुछ उन्हें कष्ट भोगना पड़ा उसे सहर्ष उन्होंने स्वीकार किया। जिन सामाजिक कुरीतियों के विरोध में उन्होंने संघर्ष किया, वे आज बहुत कुछ मिट गई हैं और मिटती जा रही हैं। न केवल सामाजिक क्षेत्र में बल्कि राजनैतिक क्षेत्र में भी वे अग्रणी रहे हैं। जिस समय स्वतन्त्रता का आन्दोलन देश में चल रहा था उस समय भी उन्होंने उसमें बड़ा भाग लिया। कई बार जेल यात्राएँ कीं और स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी उनकी जनसेवा जारी रही। कुछ समय तक मध्यप्रदेश की सरकार के वित्त मन्त्री भी रहे और अपने दायित्व को सफलता-

पूर्वक सम्भाला । जब देश में प्रान्तों का पुनर्गठन हुआ उस समय विदर्भ प्रान्त महाराष्ट्र में मिला । बियाणीजी की इच्छा थी कि विदर्भ एक अलग प्रान्त हो । इसके लिए आन्दोलन भी किया और उसका नेतृत्व भी किया परन्तु कई कारणों से उसमें सफलता प्राप्त नहीं हो सकी । इसके कारण उनके मन में खिन्नता भी आई । दुर्भाग्यवश कुछ समय से उनका स्वास्थ्य भी बिगड़ा हुआ है, जिसके कारण वे आज सार्वजनिक जीवन से प्रायः विरक्त हो गए हैं । यह देश और समाज के लिए एक दुर्भाग्य का विषय है । ऐसे अनुभवी, योग्य, कर्मठ कार्यकर्ताओं का देश में अभाव है । ईश्वर उनको स्वस्थ और आरोग्य करें ताकि वे अपने देश और समाज को अपनी अमूल्य सेवा देते रहें ।

★

भाईजी एक सफल कलाकार

लेखिका

कु० रूपरेखा गुप्ता--इन्दौर

(बी०ए० की विद्यार्थिनी तथा लेखिका)

सृष्टिकर्ता कलाकार द्वारा प्रदत्त मानव-जीवन भावना, कल्पना और संवेदना का अपूर्व प्रवाह है। इसी प्रवाह में बहकर अनेक महान कलाकारों ने इस विश्व-भूमि को सँवारा है और इसमें जीवन फूँका है। यही कारण है कि इस सृष्टि का स्वरूप हमें बरबस ही अपनी ओर आकृष्ट कर उसी में सराबोर करने हेतु विवश कर देता है। वास्तव में कला है ही ऐसी !

यदि हम अपनी मातृभूमि की ओर दृष्टि डालें तो हमें यहाँ पर कला की एक और ही निराली एवं मनोहारी छटा दृष्टिगोचर होगी। इस पावन भूमि पर अनेक ऐसे कलाकारों ने जन्म लिया है, जिन पर भारत को गर्व है। कालिदास, तुलसी-दास, सूरदास, टैगोर, नेहरू और महात्मा गांधी ऐसे ही महान कलाकार हैं, जिन्होंने भारतभूमि को पवित्र कर कृतार्थ किया है। भारतीय सदैव इन कलाकारों को अपने स्मृति कोष का एक अभिन्न अंग बनाए रखेंगे।

वैसे तो जो भी किसी वस्तु का निर्माण करता है, चाहे वह साहित्य का निर्माण करे, चाहे सुन्दर मूर्ति का, या फिर रंगों के विभिन्न बेजोड़ मेल से किसी चित्र का, वह कलाकार की ही श्रेणी में आएगा, किन्तु कला को केवल यहीं तक सीमित करना उसके क्षेत्र को संकुचित कर देना है। यदि कोई शिल्पकार किसी सुन्दर मूर्ति का तो निर्माण कर लेता है किन्तु यदि वह अपनी जीवन मूर्ति को नहीं गढ़ पाता है तो वह सच्चा कलाकार कहलाने का भागी नहीं हो सकता। जीवन के उतार-चढ़ाव में कला का समन्वय ही कलाकार का प्रमुख ध्येय होता है। सच्चा कलाकार वही है जो दु:ख में भी सुख देखे व अपने जीवनक्रम को व्यवस्थित कर उसमें कलात्मकता का पुट देने में समर्थ हो। महात्मा गांधी इसी प्रकार के इस युग के महान कलाकार थे। उन्हें भारतीय जनता ही क्या, सम्पूर्ण विश्व भी युगों तक अपने हृदय में बसाए रहेगा।

इस दृष्टि से यदि हम भाईजी के जीवन का अवलोकन करें तो हमें वे जीवन के एक सच्चे कलाकार के रूप में नजर आएँगे। भाईजी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों ही रूपों में एक पूर्ण सफल कलाकार सिद्ध हुए हैं।

साहित्य-सृजन कला से परे नहीं है। साहित्य एवं कला दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। आज हमारे हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में, कई कलाकार अपने विचारों, भावनाओं एवं कल्पना से हमें जीवन के प्रति एक नया दृष्टिकोण दे रहे हैं और दे चुके हैं, किन्तु वे सफल कलाकार तब तक नहीं कहला सकते जब तक उनके प्रत्येक क्रिया-कलाप में कला के दिग्दर्शन न हों। भाईजी न केवल लेखनी के कलाकार हैं, वरन् जीवन से भी एक अद्भुत कलाकार हैं। भाईजी ने कला का क्षेत्र लेखनी तक ही सीमित कर संकुचित नहीं किया है, वरन् उनके सम्पूर्ण जीवन में हमें कला शाश्वत होती दिखलाई पड़ती है।

भाईजी की सौम्यता एवं भोलेपन से युक्त आभा में हमें कला की स्पष्ट झलक दिखलाई देती है। गौरवपूर्ण, दुबला शरीर व कोमल भावुकता से भरा चेहरा, ये सब उनके व्यक्तित्व को आकर्षक बनाने के साथ-साथ उनके हृदय की निर्मलता, सरलता एवं दयालुता के भी द्योतक हैं। उनके शारीरिक एवं मानसिक दोनों ही रूप कलामय हैं। उनके प्रेममय व्यवहार से मैं भी वंचित नहीं रह सकी हूँ।

जब प्रथम बार मैं भाईजी के घर पर गई तो मुझे जो अनुभूति हुई वह वास्तव में अविस्मरणीय है। उन्होंने बड़े ही दुलार एवं स्नेह से मेरे सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी मुझसे ग्रहण की एवं बड़े ही सुरूचिपूर्ण ढंग से मेरी समस्या का, जो मैं लेकर गई थी, निराकरण किया। मुझे उस समय वास्तव में ऐसा प्रतीत हो रहा था कि पिता अपनी पुत्री को, मधुर पीयूषमय वाणी में, कुछ समझा रहा है। उस दिन से निस्सन्देह रूप से भाईजी के विशाल व्यक्तित्व, गम्भीर विचार व प्रकृति एवं गौरवमय भंगिमा ने मेरे हृदय में अटूट श्रद्धा का स्थान बना लिया। उस दिन उन्होंने मुझे यह तनिक भी न महसूस होने दिया कि मैं किसी नवीन स्थान में आ गई हूँ, यद्यपि एक लम्बे अरसे से उनकी कृतियों के माध्यम से, मेरा उनसे परिचय पहले ही हो चुका था। इस भाँति भाईजी का व्यक्तित्व एक कलापूर्ण व्यक्तित्व है।

भाईजी अत्यन्त शान्त प्रकृति के व्यक्ति हैं। उनके निर्माण कार्य की बहुलता के पीछे यही सबसे बड़ा रहस्य है। वे सदैव कार्यलीन रहना पसन्द करते हैं। उनकी कार्य-संलग्नता एवं निरन्तर कार्य में रत रहने का सर्वोत्तम अनुपम 'वेलोर जेल' के लेखन कार्य के फलस्वरूप 'कल्पना-कानन' जोकि वास्तव में अपने ढंग का नूतन

कल्पना संग्रह है, से लगाया जा सकता है। भाईजी एक कर्मवीर कलाकार हैं, जिनका जीवन सदैव निरन्तर विकास की ओर अग्रसर रहता है। वे मानव जीवन को अविराम नर्तन मानते हैं जो सतत गतिमान रहता है। जहाँ पर जीवन में नर्तन नहीं है और जीवन में विरामावस्था है, वहाँ जीवन का लोप होकर विराम उस पर घटा की नाईं छा जाता है। निस्सन्देह विरामयुक्त जीवन में सरसता व कला-सौन्दर्य का लोप हो जाता है, और कलाकार की आत्मा मृतप्राय हो जाती है एवं कला निर्जीव होकर शनैः-शनैः लुप्त होने लगती है।

अभी एक लम्बे अरसे की भारी अव्यवस्था का सामना करते हुए भी उन्होंने कर्म का साथ नहीं छोड़ा। भाईजी अभी शारीरिक रूप में पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं हो पाए हैं, किन्तु फिर भी वे सदैव पठन-पाठन में लीन रहते हैं। पठन-पाठन या कर्म उनके जीवन का अभिन्न अंग है। वे सही माने में एक कर्मठ व्यक्ति हैं।

कला क्या है ? वास्तव में कला की कोई ठीक परिभाषा नहीं दी जा सकती है। कला स्वयं में पूर्ण है। जीवन की प्रत्येक व्यवस्थित एवं मधुर अनुभूति एवं उसकी अभिव्यक्ति ही कला का रूप धारण कर लेती है। कला मनुष्य की भावनाओं, अनुभूतियों एवं कल्पनाओं की ज्वलन्त अभिव्यक्ति है।

भाईजी के विचारों में, भावों में एक तीव्र चेतना शक्ति है एवं चपलता है, जो सदैव विश्व-चेतना की अनुभूति ग्रहण करती रहती है। उनकी इसी अनुभूति की तीव्रता ने उन्हें एक कलाकार की भाँति कण्टकामय जीवन-पथ पर अग्रसर होने की क्षमता प्रदान की है। उन्होंने अपनी इस अनुभूति के माध्यम से आत्म-दर्शन भी किया है और विश्व-दर्शन भी। वास्तव में आत्म-दर्शन ही तो वह तत्व है, जिसे पाकर कोई भी व्यक्ति सच्चा कलाकार बनता है। भाईजी ने एक सफल कलाकार की भाँति इसकी अनुभूति की है। आत्मा जीवन का एक ऐसा तत्व है जो असत्य से परे, स्थूल से परे, मूर्त से परे चिरन्तन सत्य है। उन्होंने अपनी चेतना शक्ति एवं अनुभूति के माध्यम से ससीम के पट खोलकर असीम की सूक्ष्मता का बड़ी गम्भीरता-पूर्वक अवलोकन किया है। उन्होंने चिन्तन के माध्यम से कल्पना एवं सत्य के मेल की चेष्टा की है।

भाईजी कलाकार की भाँति एक सूक्ष्म निरीक्षक एवं संवेदक हैं। वे उन वस्तुओं में भी जीवन की लहर का स्पर्श पाते हैं जिन्हें हम गौण कहकर त्याग देते हैं। उन्होंने पत्ते-पत्ते का, फूल-फूल का यहाँ तक कि एक जुगनू के मनोभावों तक का सूक्ष्म निरीक्षण किया है और संवेदना प्रकट की है। किन्तु उन्होंने मानव को भी नहीं छोड़ा है। उन्होंने 'पहरेदार,' 'गाड़ीवान' सभी को अपने साहित्य में स्थान दिया है

और उनके प्रति अपनी संवेदना व्यक्त की है । इन साधारण मनुष्यों के प्रति उनके हृदय का प्रेम व करुणा का प्रवाह फूट पड़ा है और उसने सुन्दर कलाकृतियों का रूप ग्रहण कर लिया है । उनके हृदय में एक प्रताड़ित दीप एवं मुरझाए पुष्प के लिए उतनी ही संवेदना है जितनी कि एक दु:खी मानव के लिए । भाईजी की कृतियों में उनके चारों ओर का वातावरण एवं परिस्थितियाँ ही कलापूर्ण ढंग से निखरी हुई हैं ।

भाईजी को सौन्दर्य से अटूट प्रेम है—वैसे मानव स्वभाव से ही सौन्दर्य-प्रेमी होता है, किन्तु सम्पूर्ण लोक की प्रत्येक वस्तु में सौन्दर्याकिन एक कलाकार का ही कार्य है । कला का जन्म ही सौन्दर्यानुभूति से होता है । भाईजी सौन्दर्य के अनुपम दृष्टा हैं । उन्होंने अपने प्रत्येक सौन्दर्यपूर्ण स्वप्न को अपनी तूलिका से अपने जीवन और कृतियों दोनों में ही उतारा है । इसीलिए भाईजी के जीवन की प्रत्येक चेष्टा एवं कृति में सौन्दर्य झलकता है, भले ही उसका अवलोकन न किया गया हो । वे हृदय से कलाकार हैं । जहाँ उन्होंने विशाल विश्व के सौन्दर्य में छोटे से कण के सौन्दर्य का भी अवलोकन किया है, वहाँ उन्होंने पुष्प की सरलता का भी अवलोकन किया है ।

भाईजी को अपनी युवावस्था में अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा है । कभी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी तो कभी स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान जेल गए । फिर भी आपने धैर्य का साथ न छोड़ा । उन्होंने अपने को दु:खों व कष्टों का आदी बनाया जिससे जीवन में समरसता को सुरक्षित रखा जा सके । उन्होंने संघर्षों एवं असफलताओं के बीच सौन्दर्यमय कला की सृष्टि कर जीवन को नवीन ढंग से सँवारा । सुविधाओं व सुख के बीच कलाकार का रहना सरल है, किन्तु असफलताओं, दु:ख, निराशा एवं संघर्षों के बीच भी जीवन का सौन्दर्य बनाए रख जीवन को कलापूर्ण बनाना किसी सधे हुए कलाकार के बूते की ही बात है । भाईजी ने अमूर्त जीवन में मूर्त की, दु:ख में सुख की, अरूप में रूप की, एवं निर्जीव में जीवन की सृष्टि करने हेतु सत्य से परिपूर्ण सौन्दर्य की अटूट साधना की है । उन्होंने सौन्दर्य एवं उपयोगिता दोनों का जीवन में एकीकरण करना चाहा है । सुन्दर भाव सुन्दर है, सुन्दर का निर्माण ही दर्शनीय है, किन्तु कलामय जीवन व्यतीत करना सर्वसुन्दर व सर्वश्रेष्ठ है ।

भाईजी के द्वारा रचित साहित्य से उनकी तीव्र कल्पनाशक्ति एवं भावसौन्दर्य का परिचय मिलता है । भाईजी की कल्पना सदैव अपने निराले ढंग की होती है । भाईजी की रचनाओं में जो कल्पना, भाव-सौन्दर्य व विचार-सौष्ठव मिलता है, वह

वास्तव में सराहनीय है। कलाकार की सम्पूर्ण सफलता उसकी कल्पना व भाव-सौन्दर्य पर ही टिकी रहती है। कल्पना व भाव ही कला के सत्य के प्रथम परिचय हैं, एवं इन्हीं पर कला-सत्य टिका रहता है। किन्तु भावों एवं कल्पना के लिए भी कला में एक सीमा का बन्धन होता है। भाईजी की कल्पना व भाव सदैव कला की परिधि में ही रहते हैं। उनकी कल्पना एवं भाव यथार्थता के घेरे में रहते हैं। यही उनके कलाकार होने की सबसे बड़ी विशेषता है। उनकी कल्पना वास्तविकता से ओत-प्रोत एवं मानव-जीवन के अत्यन्त निकट है। उनकी रचनात्मक कलाकारिता ने, उनकी मधुर कल्पना एवं भावों के उचित समावेश ने उन्हें सौन्दर्य को एक नवीन ढंग देने में बहुत हद तक सहायता दी है।

अन्त में मैं यही कहूँगी कि भाईजी ने अपने सम्पूर्ण जीवन में "सत्यं शिवं सुन्दरम्" को स्थान दिया है, और उन्हें इस कार्य में अभूतपूर्व सफलता भी मिली है। उनके जीवन का साधन ही सौन्दर्यानुभूति है। सत्य को एक साध्य के रूप में सम्मुख रखकर उन्हें अनेक कठिनाइयों से जूझना पड़ा है, और इस सब के अन्त में उनका उद्देश्य रहा है "शिवत्व की प्रस्थापना।"

★

मृदुता और मानवता के मूर्तमन्त रूप

लेखक
डॉ० गोविन्ददास–जबलपुर

(प्रसिद्ध नाटककार एवं साहित्यकार; लोकसभा के सबसे पुराने सदस्य; हिन्दी के कट्टर हिमायती; मारवाड़ी सम्मेलन और माहेश्वरी सम्मेलन के भूतपूर्व अध्यक्ष; अध्यप्रदेश काँग्रेस कमेटी के अनेक वर्षों तक भूतपूर्व सभापति।)

श्री ब्रजलालजी बियाणी से सर्वप्रथम मेरा परिचय हुआ सन् १९२१ में जब अनेक वर्षों के बाद अखिल भारतीय माहेश्वरी महासभा का अधिवेशन अकोला में हुआ। इस अधिवेशन का अल्पवयस्क रहते हुए भी मैं ही अध्यक्ष चुना गया था। परन्तु अधिवेशन के समय मैं एकदम अस्वस्थ हो गया और मेरी अस्वस्थता के कारण इस अधिवेशन की अध्यक्षता की मेरे ताऊ दीवान बहादुर वल्लभदासजी ने। माहेश्वरी महासभा का यह अधिवेशन अनेक दृष्टियों से अत्यन्त महत्वपूर्ण था। एक तो अधिवेशन अनेक वर्षों के बाद हुआ था और इसमें भाग लेने के लिए देश के कोने-कोने से प्रतिनिधि आए थे, दूसरे उसी समय असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ था और यद्यपि यह आन्दोलन राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए था तथापि इसका प्रभाव जीवन के हर क्षेत्र पर पड़ रहा था। तीसरे इसी अधिवेशन में महासभा की नियमावली बनी जिसके अनुसार महासभा का आगे का कार्य चला। इस अधिवेशन के बाद बियाणीजी और मैं दोनों महासभा के मन्त्री हुए। और हम लोगों ने समाज-सुधार के क्षेत्र में साथ-साथ काम शुरू किया। अधिवेशन के बाद ही बियाणीजी जबलपुर आए और तब सर्वप्रथम मेरा जबलपुर में उनसे प्रत्यक्ष परिचय हुआ। तब से अब तक मैंने बियाणीजी को चार रूपों में देखा है:—

(१) व्यक्तिगत सम्पर्क के रूप में, (२) समाज-सुधारक के रूप में, (३) राजनैतिक नेता के रूप में, और (४) साहित्यकार के रूप में।

इन सभी क्षेत्रों में उनका जो सद्‌गुण छाया हुआ रहता था वह है उनकी असीम मदुता। देश के सभी क्षेत्रों में निरन्तर घूमते रहने और अगणित व्यक्तियों से सम्पर्क

रखते हुए भी तथा संसार के प्रायः सभी देशों में घूमने के बाद भी मैंने ऐसा मृदु व्यक्ति कहीं नहीं देखा ।

बियाणीजी का सार्वजनिक जीवन समाज-सुधार क्षेत्र से आरम्भ हुआ । माहेश्वरी समाज की अखिल भारतीय माहेश्वरी सभा और अनेक प्रान्तों की प्रान्तीय सभाओं से उनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध रहा । समाज की कुरीतियों के निवारण में उनका अत्यधिक योग रहा है । आज पर्दा प्रथा प्रायः समाप्त हो गई है, परन्तु इस प्रथा के उन्मूलन का प्रयत्न सन् १९२१ में एक कठिन यत्न था । कितना संघर्ष करना पड़ा पुरानी पीढ़ी से नई पीढ़ी को । और इस संघर्ष में बियाणीजी का शायद उस समय के समाज-सुधारकों में सर्वाधिक योग रहा है । अपनी सामाजिक सेवाओं के उपलक्ष में वे कई प्रन्तीय माहेश्वरी सभाओं, अखिल भारतीय माहेश्वरी सभा और अखिल भारतीय मारवाड़ी सम्मेलन के अध्यक्ष रह चुके हैं । मैं भी समाज-सुधार के क्षेत्र में कार्यकर्ता रहा हूँ-यही नहीं उन्होंने और मैंने इस क्षेत्र में साथ-साथ काम भी किया है और इस दृष्टि से उनके विचारों, कार्यों एवं कार्य-पद्धति का मुझे व्यक्तिगत अनुभव है ।

समाज-सुधार क्षेत्र के बाद बियाणीजी राजनैतिक क्षेत्र में आए । जिस विदर्भ प्रान्त में उनका राजनैतिक कार्य हुआ वह राजनैतिक दृष्टि से काफी जागरूक क्षेत्र है । बियाणीजी की मातृभाषा मराठी न होकर हिन्दी है, वे मारवाड़ी समाज के हैं । विदर्भ में मारवाड़ी समाज के प्रति यत्र-तत्र विद्वेष रहा है । इसका कारण प्रधानतया मारवाड़ियों की व्यापार कुशलता है । देश के दूसरे क्षेत्रों के सदृश विदर्भ का व्यापार भी मारवाड़ियों के हाथ में रहा । उनकी सम्पन्नता का कारण यद्यपि मात्र कार्य कुशलता है , किन्तु जिनमें यह कौशल नहीं है, अनायास ही उस वर्ग की ईर्ष्या का केन्द्र मारवाड़ी समाज बन गया है । ऐसे जागरूक और मारवाड़ियों से विद्वेष रखनेवाले क्षेत्र में बियाणीजी का राजनैतिक उत्थान उनकी महान पटुता का परिचायक है । फिर बियाणीजी ने विदर्भ के अनेक प्रमुख राजनैतिक कार्य-कर्ताओं का निर्माण किया, आर्थिक दृष्टि से तथा और भी विविध प्रकार से उन्हें हर प्रकार की सहायता देकर स्वतन्त्रता के युद्ध में बियाणीजी ने सन् १९३० के बाद विदर्भ के कांग्रेस-संगठन और स्वतन्त्रता संग्रामों का संचालन किया है । सन् १९३० के बाद के हर आन्दोलन में वे जेल गए । उनके जेल जीवनों का भी मुझे व्यक्तिगत अनुभव है । क्योंकि हम लोग अनेक बार जेल में साथ-साथ रखे गए । बियाणीजी के रहन-सहन का स्तर काफी ऊँचा है और इस स्तर के अनुसार ही उन्हें बाहर से खाद्य-सामग्री इत्यादि न जाने क्या-क्या जेल में प्राप्त होता रहा ।

परन्तु मैंने एक बार भी यह नहीं देखा कि इस सामग्री का उन्होंने अकेले उपयोग किया हो। जेल की मुलाकातों के समय जो यह सामग्री आती वह सब साथियों में बँट जाती। और भी नाना प्रकार की सहायताएँ उनसे उनके साथियों तथा साथियों के कुटुम्बों को जेल में और जेल के बाहर प्राप्त होती रहीं। बियाणीजी प्रान्तीय और केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाओं के सदस्य भी रहे हैं। संविधान सभा के वे सदस्य थे तथा स्वतन्त्रता के पश्चात् पुराने मध्य प्रदेश के वित्त मन्त्री बने।

साहित्यिक क्षेत्र में भी बियाणीजी का कार्य काफी देर से आरम्भ हुआ। वे कवि नहीं हैं, परन्तु उनका गद्य-लेखन काव्य से ओतप्रोत रहता है जो उनकी 'कल्पना-कानन' नामक पुस्तक से सिद्ध होता है। 'कल्पना-कानन' के लेख जेल में मेरे सामने लिखे गए और मेरा स्पष्ट मत है कि इन लेखों का इस कोटि के सारे संसार के साहित्य से मिलाप किया जा सकता है। उन्होंने सामयिक पत्रों में भी कुछ लेख लिखे हैं और कुछ समय पूर्व उन्होंने 'विश्व-विलोक' नामक एक पत्र भी निकाला, हिन्दी में अपने ढंग का यह निराला ही पत्र था। यह खेद की बात है कि बियाणीजी का साहित्यिक कार्य इतने विलम्ब से आरम्भ हुआ। मेरी राय है कि यदि उनका यह साहित्यिक कार्य कुछ दशाब्दियों पूर्व शुरू हुआ होता तो वे हिन्दी भाषा के एक चोटी के साहित्यकार होते।

इन सब कार्यों के करते हुए उनके जिन सद्गुणों ने मुझे और उनके अनेक साथियों को प्रभावित किया वह है, उनका मृदुल स्वभाव, उदारता, साथियों को हर प्रकार की सहायता देने की तत्परता, निर्भीकता और साहस। इन सारे गुणों की छाप उनकी हर कृति पर पड़ी है, उनके लेखन पर, उनके भाषणों पर, उनके वार्तालाप पर, उनके व्यवहार पर।

जीवन के इन्हीं उदात्त गुणों के कारण बियाणीजी को स्वातन्त्र्य संग्राम के दिनों में विदर्भ के क्षेत्र में जहाँ मारवाड़ी समाज को उसके यश-ऐश्वर्य और सम्पन्नता के कारण लोग ईर्ष्या की दृष्टि से देखते थे, विदर्भवासियों ने 'विदर्भ-केसरी' नाम से सम्बोधित कर उनसे पथ-प्रदर्शन और प्रेरणा ग्रहण की। विदर्भ-केसरी के रूप में जनता की यह अभिव्यक्ति न केवल उनकी नेतृत्व कुशलता, देशभक्ति एवं व्यक्तित्व की परिचायक है, वरन् उन सभी मानवतावादी गुणों की भी परिचायक है जिनका मैंने ऊपर उल्लेख किया है।

आधुनिक काल के मारवाड़ी समाज के नेताओं में उनका चोटी का स्थान है और अपनी सेवाओं के कारण वे सदा स्मरण रखे जाएँगे। खेद की बात है कि ऐसे नेता का पक्षाघात के कारण आज उपयोग नहीं हो रहा है। मैं भगवान से

प्रार्थना करता हूँ कि वे फिर से पूर्ण रूप से स्वस्थ होकर शत् वर्ष की आयु तक अपना कार्य करते रहें।

बियाणीजी का और मेरा लगभग पैंतालीस वर्ष का साथ रहा है, और जीवन के न जाने कितने क्षेत्रों में उनसे सम्बन्ध रखनेवाले न जाने कितने संस्मरण मेरे मन में सदा उठा करते हैं। ★

श्री बियाणीजी : एक गतिशील व्यक्तित्व

लेखक
नारायणदास राठी—अमरावती
(एडवोकेट; माहेश्वरी समाज और मारवाड़ी समाज के अमरावती जिले के प्रधान कार्यकर्ता ।)

बियाणीजी की चर्चा होते ही एक ऐसा व्यक्तित्व अनायास ही उभर कर सामने आता है, जिसमें अपना एक विशेष आकर्षण है, गौरव है और संवेदना है । विदर्भ की माटी में जन्म लेकर उन्होंने विदर्भ की माटी के सनातन गुणों को अपने में आत्मसात किया है और अपने जीवन की निष्ठा एवं कार्यकलापों द्वारा उनको निरन्तर अभिव्यक्त किया है । कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि वे विदर्भ परिवार के नहीं राजस्थानी परिवार के सदस्य हैं । वास्तव में बियाणीजी ने परिवार की सीमाओं को विस्तार दिया है और उदारता की वाणी दी है । सम्भवत: वे इसीलिए 'विदर्भ-केसरी' हैं ।

हमारी विचार-सरणियों में एक भ्रम चुपके से घुस आया है—पता नहीं वह ब्रिटिश साम्राज्य के समय के भय और निराशा का परिणाम है या किन्हीं और सामाजिक-ऐतिहासिक परिस्थितियों का परिणाम है—कि हम 'व्यक्तित्व' की नापतोल बाह्य वैभव के आधार पर करने लगे हैं । पर वास्तव में व्यक्तित्व के संगठन का सर्वोत्तम अंश होता है, गतिशीलता, कर्मठता तथा जीवन के प्रति सात्विक आस्था और उस पर आचरण । और बियाणीजी के व्यक्तित्व का संगठन भी इन्हीं तत्वों के आधार पर हुआ है; इस तथ्य को कोई भी जो उनके सम्पर्क में आया है पुष्ट ही करेगा । सन् १६४४ में प्रथम बार कानून के विद्यार्थी के रूप में मेरा उनसे साक्षात्कार हुआ और तब से आज तक निरन्तर विभिन्न सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक संगठनों के द्वारा मेरा उनसे सम्पर्क रहा है । गत २० वर्षों के इस दीर्घकालीन सम्पर्क एवं विचार विनिमय ने मेरे समक्ष उनकी एक स्पष्ट आकृति उभार दी है और आज जब मैं उनके विषय में कुछ लिखने बैठा हूँ तो वह आकृति चलचित्र की भाँति मेरी आँखों के सामने चंचल हो उठी है ।

इसका कारण स्पष्ट ही है, बियाणीजी के व्यक्तित्व के आकर्षण एवं कर्मठता में। मैं उनके व्यक्तित्व के उन्हीं गुणों को, और भी अधिक स्पष्ट रूप में, उनके व्यक्तित्व के विषय में अपने हृदय-पट पर अंकित छायाचित्रों को एक-एक करके वाणी देने का प्रयास-मात्र कर रहा हूँ।

विदर्भ का प्रदेश प्रायः भारत का हृदय प्रदेश है। यहाँ पर उत्तर-दक्षिण की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक विचारधाराओं का संगम आदिकाल से होता रहा है। उसकी अपनी विशिष्ट राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है। और उस पृष्ठभूमि का प्रधान स्वर है समन्वय की साधना का। विदर्भ के रंगमंच पर आकर धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक, दार्शनिक एवं साहित्यिक विचार-सरणियाँ एकरस और एकतान होती रही हैं। बियाणीजी ने विदर्भ के जीवन की उसी एकरसता को स्वीकार किया है एवं अपने कार्यों में निरन्तर प्रतिफलित किया है। विदर्भ का सम्बन्ध काफी समय तक हिन्दी भाषा-भाषी प्रदेश से रहा है, परिणामतः मूलतया मराठी प्रदेश होने के बाद भी यहाँ हिन्दी भाषा का प्रभाव सदैव यहाँ के जीवन पर रहा है, और इस प्रकार दो भाषाओं के विशाल अनुभवों को समेटकर यहाँ का जीवन विकसित हुआ है। बियाणीजी ने इसी समन्वित धारा को स्वीकार कर यहाँ के जीवन को प्रभावित और परिचालित किया है। उन्होंने विरोधों को समन्वय और अविरोधों को गतिशीलता प्रदान की है। अपनी इसी साधना को साकार रूप देने के लिए उन्होंने विदर्भ के गाँव-गाँव का विस्तृत पर्यटन किया है। एक ओर उन्होंने मध्यप्रदेश—हैदराबाद के हिन्दी-भाषी जनों की विशेष परिपाटी और संस्कृति को तो दूसरी ओर बरहाड़ के गाँवों की मराठी परिपाटी एवं संस्कृति को एक साथ एक ही रंगमंच पर लाकर विदर्भ के स्वरों को वाणी प्रदान की है। उनको जहाँ सबका प्रेम मिला वहीं सबका विश्वास भी। प्रेम और विश्वास सम्पादन कर वे सदैव आगे बढ़े हैं और भविष्य में उन्हीं के सहारे बढ़ेंगे, इसमें संशय की कोई गुन्जाइश ही नहीं है।

विदर्भ की राजनैतिक जाग्रति के वे अग्रदूत रहे हैं। उनकी सक्रियता, कर्मठता एवं अपने ध्येय के प्रति निष्ठा ने यहाँ की राजनीति को प्रभावित किया है और प्रेरणा प्रदान की है। वे उस समय एक निडर, निर्भय योद्धा की तरह राजनीति के कण्टकाकीर्ण वन में कूदे जब इस ओर आने में लोग भय खाते एवं कतराते थे। ब्रिटिश शासन का आतंक, अपने परिवार, वंश के बन्धन एवं मारवाड़ी जाति की भीरुता उनके निर्भय पगों को एक क्षण के लिए भी विवश नहीं कर सके। विदर्भ के लिए तो यह गौरव की बात है ही, राजस्थानी समाज के लिए भी विशेष

प्रतिष्ठा एवं गौरव की बात है कि उसके एक सपूत ने स्वाधीनता की आवाज को इतनी निर्भयता और नज़दीक से सुना और उतनी ही निर्भयता के साथ जीवन में उतारा भी । सचमुच में बियाणीजी ने समाज को एक प्रतिष्ठा प्रदान की है और सामाजिक जीवन की धारा को एक गौरवसम्पन्न अनुभूति, जिसे लेकर भावी पीढ़ियाँ कभी भी अपने को सराह सकती हैं ।

वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं । और एक गतिशील व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता ही यह होती है कि उसे किसी एक संकीर्ण परिवेश में बांधा नहीं जा सकता, वरन् वह अपनी उदारता की सीमाओं को अधिकाधिक विस्तृत बनाकर सभी को अपने आकर्षण की डोर में बाँध लेता है । बियाणीजी के व्यक्तित्व में यह गतिशीलता अपनी पूरी क्षमता के साथ विद्यमान है । जिन्होंने उन्हें मराठी में धाराप्रवाह बोलते देखा है वे इसे भली प्रकार समझ सकते हैं । वे राजनीति के क्षेत्र में विदर्भ को अग्रसर करते रहे हैं, तो सामाजिक क्षेत्र में प्रेरणा के अजस्र स्रोत की तरह बहते रहे हैं; निरन्तर विकास एवं प्रसार की प्रेरणा देते रहे हैं । सुधार की बीणा उठाकर पता नहीं उन्होंने कितनों का कल्याण किया है और कितनों को उनके सड़े-गले विचारों के गड्ढों में से निकाल कर नवीन भावों की भूमि पर ला खड़ा किया है । राजस्थानी समाज की दकियानूसी परम्पराओं को उन्होंने परिवर्तित किया है और नवीन दिशा निर्देश किया है ।

अकोला में सामान्य रूप से जीवन प्रारम्भ कर वे जीवन के इस यशोशिखर पर पहुँचे हैं । उनकी इस लम्बी यात्रा में समाज का प्रेम और स्नेह उनके साथ-साथ चले हैं । सम्भवतः विदर्भ में तो कोई दूसरा ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसे समाज ने इतना प्रेम, ममता और स्नेह प्रदान किया हो । जिस प्रकार विदर्भ की राजनीति पर उनके प्रौढ़ व्यक्तित्व की छाप है उसी प्रकार विदर्भ के समाज पर उनके स्नेहिल व्यक्तित्व का अंकन स्पष्ट है । वे अपने कार्यों में खरे हैं तो वाणी के भी खरे हैं । यदि राजनैतिक जीवन की अस्थिरताओं, अनास्थाओं को छोड़ दिया जाय तो उनके व्यक्तित्व की उपलब्धियाँ असाधारण हैं । भविष्य का विदर्भ का इतिहासकार जब-जब विदर्भ के सामाजिक-राजनैतिक जीवन की व्याख्या करने बैठेगा तो बियाणीजी के प्रभाव की उपेक्षा करना उसके लिए कठिन ही नहीं असम्भव भी होगा । इसका कारण स्पष्ट है कि वे किसी एक वर्ग, एक जाति, एक समुदाय में बँधकर नहीं चले; सबके होकर, सबका प्रेम और विश्वास अपनी झोली में समेट कर चले हैं । उन्होंने भौतिक विजय के नहीं मन की विजय के मार्ग को अपनाया है । एक ओर जहाँ उन्होंने यहाँ के जीवन की आशा, आकांक्षा को आत्मसात किया

है, वहीं उसको निरन्तर अपनी उदारता से पाला-पोसा है। इसीलिए वे एक के होकर भी सबके हो गए हैं।

यदि उनके 'पत्रकार-जीवन' पर दो शब्द नहीं कहे गए तो शायद उनके व्यक्तित्व का एक विशेष गुण ही बिसार देना होगा। वैसे तो उनके पत्रकार का मूल भी उनकी समन्वय की वृत्ति में ही निहित है। पत्रकार के लिए विरोधों में से अविरोध के स्वर खोज निकालना ही होता है और बियाणीजी ने जीवन-भर इसी कार्य में अपने समय को खपाया है। वे अपनी इस साधना को अपनी पत्रकारिता द्वारा वाणी प्रदान करते रहे हैं। पत्रकार के लिए अपेक्षित सहनशीलता, तीक्ष्ण पर्यवेक्षण शक्ति, विशाल एवं सूक्ष्म अनुभव जैसे जिन गुणों की अपेक्षा होती है वे उनके व्यक्तित्व के स्वाभाविक अंग ही हैं।

वे मानव हैं। और मानव-सुलभ दुर्बलताओं को अपने हृदय में लेकर वे मानवीयता को अभिव्यक्त करते रहे हैं। 'मानव' अगर 'मानव' बनकर रह सके तो फिर इससे बड़ी सार्थकता और क्या हो सकती है। और बियाणीजी ने मानव बनकर जीवन जिया है।

★

हिन्दी की सेवा में बियाणीजी का योगदान

लेखक
उमाशंकर शुक्ल–वर्धा
('जागरण' के सम्पादक; पत्रकार एवं सार्वजनिक कार्यकर्ता; विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन के एक मन्त्री ।)

वर्तमान विदर्भ के निर्माण में श्रीयुत ब्रजलालजी बियाणी का बहुत महत्व का स्थान है। गत ४० वर्षों के विदर्भ प्रदेश के सार्वजनिक जीवन के हर क्षेत्र में उनका अपना कार्य रहा है। उनकी बहुमुखी प्रतिभा राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक, आर्थिक, शैक्षणिक आदि सारे क्षेत्रों में प्रभावरूपेण क्रियात्मक रही है। राजकीय क्षेत्र में तो भारतीय कांग्रेस के क्षेत्र में बियाणीजी और विदर्भ एकार्थी हो गए थे। आज बियाणीजी के जीवन के अनेक पहलुओं में से हिन्दी भाषा के क्षेत्र में उन्होंने जो महान कार्य किया है उसका कुछ अवलोकन करना चाहते हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी की दृष्टि से हमारा कर्तव्य है कि हम उनकी हिन्दी भाषा क्षेत्र में की हुई सेवाओं का संक्षिप्त उल्लेख करें।

विदर्भ मराठी भाषा-भाषी क्षेत्र है। सन् १९३० तक विदर्भ में अकोला के समान जिले के स्थान पर भी हिन्दी प्राथमिक स्कूल तक नहीं था। यह प्रदेश बियाणीजी का कार्य क्षेत्र रहा है। अकोला में उनकी प्रथम अंग्रेजी क्लास से मैट्रिक तक की पढ़ाई हुई। तत्पश्चात् मॉरिस कॉलेज, नागपुर में कानून के प्रथम वर्ष की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए और सन् १९२० में असहयोग आन्दोलन में कालेज छोड़ सार्वजनिक सेवा के क्षेत्र में उन्होंने अपने जीवन को लगाया। अकोला उनका कार्य स्थल रहा और समस्त विदर्भ उनका क्रियात्मक कार्यक्षेत्र।

श्रीयुत बियाणीजी की पढ़ाई मराठी भाषा के माध्यम से हुई। हिन्दी उन्होंने कभी पढ़ी नहीं। कालेज में आने के पश्चात् नागपुर में हिन्दी की किताबों को पढ़-कर हिन्दी भाषा से उनका सम्बन्ध स्थापित हुआ। हिन्दी भाषा का अध्ययन न करने के कारण उनकी भाषा में कभी-कभी हिन्दी व्याकरण की अशुद्धियाँ रह जाती हैं और मराठी भाषा के शब्द भी उनके साहित्य-सृजन में प्रवेश करते हुए दिखाई

पड़ते हैं। कॉलेज में हिन्दी से उनका सम्पर्क आरम्भ हुआ परन्तु हिन्दी भाषा का प्रेम और उसका अधिकार उनके जीवन पर हावी न हो सका। वे मराठी भाषा-भाषी इस नाते ही कार्य करते और उनकी अपनी जो कौटुम्बिक मातृभाषा मारवाड़ी थी उसका उन पर ममत्व के नाते गहरा असर था। बियाणीजी आरम्भ से ही सार्वजनिक जीवन के विविध क्षेत्रों में दिलचस्पी रखते थे। भाषा के क्षेत्र में उनके कार्य का आरम्भ हिन्दी मारवाड़ी इन दो भाषाओं के संघर्ष से प्रारम्भ हुआ। मारवाड़ी समाज में उस समय एक वाद की लहर थी हिन्दी और मारवाड़ी के बीच। इस प्रश्न को लेकर नागपुर के साप्ताहिक पत्र 'मारवाड़ी' में उस समय के बम्बई के एक सालिसीटर मारवाड़ी मित्र और बियाणीजी के बीच उनके कॉलेज अध्ययन काल में ही काफी विवाद चला। अनेक लेख लिखे गए। बियाणीजी ने अपनी कुशाग्र बुद्धि के अनुसार मारवाड़ी भाषा का या राजस्थानी भाषा का प्रश्न बहुत विस्तार के साथ प्रतिपादित किया। बियाणीजी का दृष्टिकोण काफी मान्य रहा। उस समय मारवाड़ी समाज में राजस्थानी भाषा की एक हवा थी। बियाणीजी के जीवन में आदर्श के साथ क्रियात्मक शक्ति है। राजस्थानी भाषा के अपने निर्णय को अमल में लाने की दृष्टि से धामणगाँव के उनके एक मित्र और मारवाड़ी भाषा के कट्टर पक्षपाती श्रीयुत नारायणजी अग्रवाल के साथ उन्होंने मारवाड़ी हितकारक मण्डल की स्थापना की। उसके जरिए से मासिक पत्र निकाला। उसमें उन्होंने अनेक लेख लिखे और मारवाड़ी भाषा में 'विजयादशमी' और 'बाल रामायण' ये दो पुस्तकें भी लिखी, जो प्रकाशित हुई हैं।

जीवन के समस्त क्षेत्रों में बियाणीजी प्रगतिशील व्यक्ति रहे हैं। धीरे-धीरे उनके विचारों ने पलटा खाया। राष्ट्र की दृष्टि से और व्यापक दृष्टि से उन्होंने सोचा और इस निर्णय पर पहुँचे कि राजस्थानी भाषा की अपेक्षा हिन्दी भाषा का उपयोग और प्रचार राष्ट्र की दृष्टि से और मारवाड़ी समाज की दृष्टि से भी अधिक लाभदायक है। उनके विचारों में और कृति में क्रान्ति हुई। मारवाड़ी भाषा की सेवा का मार्ग उन्होंने त्यागा और राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा में उनका योगदान आरम्भ हुआ।

बियाणीजी के जीवन का प्रधान कार्य राजकीय क्षेत्र रहा। उस समय गांधी-युग आरम्भ हुआ था। चारों ओर सक्रिय राष्ट्रीय शक्ति निर्माण की प्रभावी लहर थी। उस राजकीय लहर में बियाणीजी ने अपनी सम्पूर्ण शक्ति समर्पित की। और विदर्भ में राष्ट्रीय चेतना का और कांग्रेस को बलवान बनाने का कार्य किया। राष्ट्रीय सन्देश शहरों और देहातों में फैलाया और कांग्रेस संगठन में अनेक उच्च

पदों पर रहते हुए उन्होंने प्रभावी कार्य किया। उन्होंने अपना राजकीय कार्य अकोला को केन्द्र बनाकर आरम्भ किया। शनैः-शनैः उनका राजकीय क्षेत्र और व्यापक होता गया। यद्यपि श्रीयुत बियाणीजी की शिक्षा की दृष्टि से मराठी उनकी भाषा थी। मराठी में वे खूब अच्छा लिखते और बोलते थे, परन्तु उन्होंने निश्चय किया कि विदर्भ के सार्वजनिक कार्यों में वे हिन्दी का प्रयोग करेंगे। उन्होंने अपना सारा कार्य हिन्दी भाषा से आरम्भ किया। वे हिन्दी में व्याख्यान देने लगे। विदर्भ मराठी भाषा-भाषी प्रान्त, क्या शहरों और क्या देहातों, में सर्वत्र बियाणीजी ने हिन्दी में प्रचार कार्य प्रारम्भ किया। कई जगह उसका विरोध हुआ। मराठी भाषा में बोलने की माँग हुई। परन्तु बियाणीजी अपनी बात पर अटल रहे और इधर-उधर के विरोध के बावजूद भी उनका हिन्दी भाषा में बोलने का कार्य चलता ही रहा। बियाणीजी एक अच्छे वक्ता हैं, उनके व्याख्यानों का असर है और उनके व्याख्यान के लिए जनता आकर्षित होती है। उनका प्रभाव भी पड़ता है। कुछ समय के पश्चात् विदर्भ की जनता बियाणीजी के हिन्दी व्याख्यानों की आदी हो गई और यहाँ तक स्थिति आ पहुँची कि जब कभी कोई मराठी में बोलने का आग्रह करता तो साधारण जनता "हिन्दी में बोलो" की पुकार लगाती। बियाणीजी ने अपने कार्य से विदर्भ को कांग्रेसमय बनाया पर साथ ही भाषा की दृष्टि से विदर्भ के सार्वजनिक क्षेत्र को हिन्दीमय बनाने का श्रेय भी श्रीयुत बियाणीजी को है। राष्ट्रभाषा हिन्दी की एक बहुत बड़ी सेवा श्रीयुत बियाणीजी ने की।

साहित्य की दृष्टि से भी बियाणीजी ने विदर्भ में बहुत बड़ा कार्य किया। विदर्भ में प्रथम हिन्दी मासिक 'राजस्थान' नाम से प्रकाशित करना आरम्भ किया। उसके पश्चात् 'राजस्थान' को साप्ताहिक का रूप दिया। साप्ताहिक राजस्थान के सम्पादन का कार्य श्री सत्यदेवजी विद्यालंकार, श्री रामप्रसादजी हुरकट आदि साहित्य-सेवियों ने किया। सन् १९३० के आन्दोलन के पश्चात् उन्होंने 'नव राजस्थान' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया। 'नव राजस्थान' के सम्पादन का कार्य श्री रामनाथजी सुमन तथा श्री रामगोपालजी माहेश्वरी समान साहित्यिकों के हाथों में रहा। 'प्रवाह' हिन्दी मासिक भी उनके द्वारा प्रकाशित किया गया और उसके सम्पादन का कार्य श्रीयुत गोविन्दजी व्यास, श्री विजयकुमार पाराशर, श्री शिवचन्द्र नागर आदि व्यक्तियों ने किया। हिन्दी के लिए इतने सारे प्रकाशन कार्य उन्होंने किए पर सफलता न मिली। पर इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दी भाषा के लिए विदर्भ की हिन्दी जनता में और अहिन्दी जनता में राष्ट्रभाषा के लिए ममत्व निर्माण हो सका।

विदर्भ में हिन्दी के प्रचार की दृष्टि से हिन्दी साहित्य सम्मेलन का आयोजन भी उन्होंने अकोला में किया, जिसके उद्घाटन के लिए स्वर्गीय टण्डनजी पधारे थे। नागपुर में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हुआ; उसके स्वागताध्यक्ष श्रीयुत बियाणीजी थे और अध्यक्ष श्री राजेन्द्र बाबू। इस सम्मेलन में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की स्थापना की गई। स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् राष्ट्र के संविधान निर्माण का कार्य संविधान परिषद् के द्वारा आरम्भ हुआ। संविधान में राष्ट्रभाषा का प्रश्न अत्यन्त विवादग्रस्त रहा। काफी मतभेद हुआ। कांग्रेसदल में कुछ संघर्ष भी हुआ। श्रीयुत टण्डनजी हिन्दी भाषा के पक्ष का नेतृत्व करते थे। श्रीयुत बियाणीजी ने टण्डनजी के इस कार्य में सम्पूर्ण सहयोग दिया और इस संघर्ष का अन्तिम परिणाम "हिन्दी" भारत की राजकीय भाषा घोषित हुई।

विदर्भ के चार जिलों में हिन्दी के क्षेत्र में इस प्रकार श्रीयुत बियाणीजी का व्यापक कार्य चल ही रहा था। विदर्भ के नागपुर विभाग से भी उनका सम्बन्ध था और इसी नाते नागपुर अधिवेशन के वे स्वागताध्यक्ष बने थे। सन् १९५२ में श्रीयुत बियाणीजी भूतपूर्व मन्त्रिमण्डल में आए। वे अर्थमन्त्री थे। इस मन्त्रित्व-काल में श्रीयुत बियाणीजी ने राष्ट्रभाषा की महान सेवा की। हिन्दुस्तान में मध्यप्रदेश प्रथम प्रदेश रहा कि जहाँ प्रादेशिक भाषाओं को राज्यभाषा का स्थान प्रदान किया गया। उस समय के मध्यप्रदेश की दो भाषाएँ थीं—हिन्दी और मराठी। दोनों भाषाओं में प्रायः सारा राजकीय कार्य करने का निर्णय किया गया। इसका श्रेय उस समय के मुख्यमन्त्री श्री रविशंकर शुक्ल और श्रीयुत बियाणीजी को ही है।

मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन कई वर्षों से स्थापित था। उसके अधिवेशन होते थे, उसके कार्यालय भी थे परन्तु नियमित और व्यवस्थित कार्य नहीं था। अपने मन्त्रित्व-काल में श्रीयुत बियाणीजी मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति निर्वाचित हुए। गोंदिया में अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन के पश्चात् श्रीयुत बियाणीजी ने हिन्दी भाषा की और हिन्दी साहित्य सम्मेलन की बहुत बड़ी स्थायी सेवा की। मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन का कोई कार्यालय नहीं था। वह इधर-उधर भटकता था। श्रीयुत बियाणीजी ने अध्यक्ष बनते ही तुमसर के अपने तीन मित्रों से सवा लाख रुपया प्राप्त किया और इतनी ही रकम शासन से देने का निर्णय कर नागपुर में उत्तम स्थान पर मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन का विशाल भवन निर्माण करवाया। सम्मेलन में स्थायित्व आया और

नागपुर में हिन्दी भाषा का एक बहुत बड़ा केन्द्र उनके द्वारा स्थापित हुआ । जहाँ तक मेरा ध्यान है प्रयाग हिन्दी साहित्य सम्मेलन के पश्चात् नागपुर का ही इतना बड़ा विशाल हिन्दी भवन है । हिन्दी की सब प्रकार की प्रवृत्तियाँ इस भवन में सुचारु रूप से संचालित हो रही हैं । श्रीयुत बियाणीजी दूसरी बार भी मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति निर्वाचित हुए । सम्मेलन के कार्य को उन्होंने व्यवस्थित रूप दिया । सतत क्रियात्मक कार्यालय का निर्माण किया । सम्मेलन के जिला अधिवेशन की योजना बनाई गई और हिन्दी के क्षेत्र में व्यापक कार्य चारों ओर नियमित रूप से होने लगा ।

इस बीच राज्य पुनस्संगठन के कारण राज्यों का पुनर्विभाजन हुआ । विदर्भ मध्यप्रदेश से अलिप्त किया गया और महाराष्ट्र में उसका समावेश हुआ । अतः सम्मेलन का क्षेत्र भी विभाजित हुआ । अब विदर्भ के ८ जिलों का अलग विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन बनाया गया, जिसके सभापति श्रीयुत बियाणीजी ही हैं । श्रीयुत बियाणीजी ने विदर्भ हिन्दी साहित्य की जो श्रीवृद्धि की है और नए साहित्यकारों और कवियों को प्रोत्साहन देने की जो परम्परा निभाई है उसके लिए वे गौरव के पात्र हैं ।

श्रीयुत बियाणीजी ने संस्था के प्रचार कार्य के साथ साहित्यिक क्षेत्र में लेखन का कार्य भी किया । 'कल्पना कानन','धरती और आकाश' 'जेल में'एवं 'विनोबा' ये चार उनकी प्रकाशित पुस्तकें हैं । अनेक समाचारपत्रों में, साप्ताहिकों में, और मासिकों में उनके सदा लेख प्रकाशित होते रहते हैं । उनकी लघु कथाएँ अपना एक विशिष्ट स्थान रखती हैं । उन्होंने गद्यकाव्य भी लिखा है । इस प्रकार साहित्यिक क्षेत्र म सर्वांगीण कार्य करते हुए वर्तमान में प्रकृति की दृष्टि से श्री बियाणीजी प्रायः इन्दौर में रहते हैं । कुछ समय पूर्व उन्होंने 'विश्व-विलोक' इस पाक्षिक पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया था, जिसके वे स्वयं सम्पादक थे । 'विश्व-विलोक' हिन्दी भाषा में अपने ढंग का एक निराला पत्र था । वह बुद्धिप्रधान और विचार प्रवर्त्तक पाक्षिक पत्र था । इस प्रकार बियाणीजी ने राष्ट्र भाषा हिन्दी के क्षेत्र में सर्वांगीण सेवा की है और उनके जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी उनका कार्य यदि प्रभावी और संस्मरणीय है तो राष्ट्रभाषा हिन्दी के क्षेत्र में भी उनका कार्य ऐतिहासिक है ।★

भाईजी और संघर्ष

लेखक

गिरधारीलाल अग्रवाल बी० ए० साहित्यरत्न–अचलपुर शहर

(हिन्दी साहित्य के एक लेखक ।)

'विदर्भ-केसरी' ब्रजलालजी बियाणी का पूर्ण जीवन संघर्षमय जीवन है। भाईजी का जीवन और संघर्ष एक दूसरे के पूरक हैं, जीवन ही नहीं उनका काव्य, उनका लेख, उनका साहित्य, यहाँ तक कि उनका कृष शरीर भी संघर्षों से ओत-प्रोत है।

जन्म को लीजिए, एक सुखी परिवार में जन्म होता है, परन्तु घर की परिस्थितियाँ बदल जाती हैं। भाईजी के जन्म के साथ ही संघर्ष प्रारम्भ होता है और सुखी घर गरीबी में परिवर्तित होता है। आर्थिक स्थिति क्षीण हो जाती है। साथ ही बचपन में ही मातेश्री का स्वर्गवास हो जाता है। इससे गहरा संघर्ष और क्या हो सकता है? माँ की ममता सबसे बड़ी सम्पत्ति है। भाईजी आर्थिक संघर्ष को शायद सच्चा संघर्ष न समझते और न कभी समझा है, परन्तु यह ईश्वरीय कोप महान कटु हुआ। बचपन में माँ का चले जाना बालक का जीवन जाना है। माँ रहित वियोगी बालक ममता रहित हो जाता है। इस प्रकार भाईजी के जन्म के साथ ही संघर्ष प्रारम्भ हो जाता है।

विद्यार्थी जीवन का संघर्ष भी कठिन परीक्षा का काल था। "पढ़ाई का प्रारम्भ और अन्त" साथ ही हो गया था। कहने का तात्पर्य है कि पढ़ाई प्रारम्भ हुई कि समाप्ति का अवसर भी आ गया, परन्तु भाईजी का जीवन संघर्षमय था तथा प्रारम्भिक अवस्था से वे संघर्ष करने के आदी हो चुके थे। अतः अपने को पूर्णतया हिम्मत से शिक्षा-क्षेत्र में प्रवेश कर दिया तथा एक महान संकटमय जीवन बिताकर अपनी शिक्षा चालू रखी। अकोला में आकर व तंग परिस्थितियों में रहकर भी जहाँ न निवास की व्यवस्था, न भोजन की व्यवस्था, न शुल्क व पुस्तक-व्यवस्था आपने दुःख की चिन्ता न करते हुए अपने संघर्षमय जीवन को पार करने का हठ संकल्प किया। परन्तु संघर्ष एक तरफ से नहीं आते, ईश्वर परीक्षा लेता है, वह चारों ओर से संकट

में डालकर मनुष्य को कठोर से कठोर संकट या दुविधा में पटकता है, और अन्तिम अवस्था में उसे पार लगाता है । यह घटना भाईजी के जीवन पर भी सिद्ध होती है । एक ओर गरीबी व शिक्षा लेने की प्रबल इच्छा, दूसरी ओर जाति-प्रथा के मुताबिक परिवारवालों ने १३ वें वर्ष में ही विवाह कर दिया । विद्यार्थी जीवन में यह एक और बन्धन निर्माण हो गया, परन्तु बियाणीजी ने परिस्थितियों से संघर्ष कर अपने उद्देश्य पर पहुँचने की पराकाष्ठा दिखा दी । नागपुर के विधि महाविद्यालय में पढ़ते समय राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के लिए कालेज छोड़ दिया । परिवारवालों की इच्छा थी कि ब्रजलाल एक वकील बने तथा काफी पैसा पैदा करे, परन्तु देश की आवाज़ के साथ भाईजी परिवार की सुख-सुविधा का विचार न कर एक महान यज्ञ में कूद गए । परिवारवालों के अरमानों पर पानी फेर दिया । आपके पिताजी ने जी-तोड़ कोशिश की परन्तु सब व्यर्थ । इस प्रकार परिवार के साथ भी भाईजी का संघर्ष रहा, परन्तु देशसेवा के लिए ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ब्रिटिश शासन काल में स्वतन्त्रता की लड़ाई में पूर्णतया संघर्षमय जीवन भाईजी ने बिताया । कर्मठ कांग्रेसी, विदर्भ के भाग्य-विधाता 'विदर्भ-केसरी' का जीवन उस सुमन के समान है जो कांटों में रहकर मुस्कुराता रहता है ।

भारत आज़ाद हुआ । हमने देखा कि त्यागमय जीवन बितानेवाले कांग्रेसी नेताओं के हाथ में सत्ता आई । यह निर्विवाद सत्य है कि प्रत्येक कांग्रेसी को त्याग के बदले कुछ न कुछ मिला । पद, अधिकार आदि मिलने पर बहुत से लोगों का जीवन बदल गया । यहाँ मैं गहराई में नहीं जाना चाहता, परन्तु इस व्यक्ति का, जिसका सम्पूर्ण जीवन संघर्षमय बीता, क्या आजादी के बाद भी जीवन-संघर्ष का अन्त हुआ ? भाईजी की लेखनी, भाषण, विचार आदि सभी वस्तुएँ संघर्षमय हैं ? हमें याद है, जब १५ अगस्त, सन् १९४७ को भारत आज़ाद हुआ, सब तरफ आनन्द की लहर दौड़ रही थी, नेताओं की खुशी का पार न था, परन्तु विदर्भ के प्रान्ताध्यक्ष एक महान शक्ति से संघर्ष कर रहे थे । बरार पर एक महान संकट आया हुआ था । १५ अगस्त, सन् १९४७ को सम्पूर्ण भारत में तिरंगा झण्डा लहराया जाएगा परन्तु बरार में तिरंगे के साथ निज़ाम का झण्डा भी रहेगा । ब्रिटिश-काल में बरार पर निज़ाम व ब्रिटिश इस प्रकार दो झण्डों का आधिपत्य था, परन्तु १५ अगस्त को केवल भारतीय तिरंगा ही रहे, यह विदर्भ जनता की इच्छा थी । प्रान्ताध्यक्ष के नाते बियाणीजी ने एक जन-परिषद् बुलायी । निर्णय लिये गए ।

विदर्भवाले एक हृदय से बियाणीजी के साथ थे, बियाणीजी की आवाज जनता की आवाज थी ।

१५ अगस्त के पहले इस बात का निर्णय हो जाना था । दिल्ली तक आवाज़ पहुँची । दिल्ली से बियाणीजी को बुलावा आया, परन्तु इनकी एक ही आवाज़ थी कि विदर्भवाले तिरंगा ही लहराएँगे, दूसरा नहीं ।

सम्पूर्ण भारत में १४ अगस्त की रात्रि सजावट की रात्रि थी । नेताओं में आनन्द की लहर थी, परन्तु विदर्भ-केसरी तार और टेलीफोन पर संघर्ष कर रहे थे, रात्रि के बारह बजे तक भाषण चल रहे थे, 'विदर्भ-केसरी' की आवाज़ विदर्भ के लिए गूँज रही थी । आवाज जनता की सच्ची थी, भाईजी के साथ विजय थी । १५ अगस्त को केवल तिरंगा ही विदर्भ में लहरा और सदा के लिए निज़ाम का झण्डा विदा हो गया ।

जिस प्रकार भाईजी को स्वयं जन्म के समय संघर्ष करना पड़ा, वह आजादी के जन्म से भी करना पड़ा । इतना ही नहीं सी.पी. और बरार में कांग्रेसी तत्वों की रक्षा के लिए कांग्रेस नेताओं के साथ भी संघर्ष करना पड़ा । यदि भाईजी अपने तत्वों की नजरअन्दाज कर जाते और सुखमय जीवन बिताना चाहते तो आप काफी वैभव प्राप्त कर सकते थे, परन्तु आप स्वयं सुख नहीं चाहते थे ।

सन् १९५२ के चुनाव में सभी राजनैतिक दलों ने एक होकर भाईजी के खिलाफ मोर्चा बनाया, परन्तु विजयश्री भाईजी के हाथ थी । वित्त मन्त्री बने, परन्तु उनका तो जन्म केवल संघर्षों के लिए हुआ है । भाईजी के तत्व तो खरे तत्व हैं, जिन पर भाईजी के मित्र न टिक सके । जातीयवाद आदि कई कारणों से अथवा पद के लोभ से भाईजी के खरे शिष्य भाईजी के राजनैतिक विरोधी बन बैठे । जिसकी छत्र-छाया में पले-पढ़े और बने वे ही तत्व न पाल सके ।

राज्य पुनर्गठन की याद हमें है, भाईजी की आवाज जनता की आवाज रही । यह हमने देखा । राज्य पुनःविभाजन में विदर्भ बना, हमने सोचा कि भाईजी का यह अन्तिम संघर्ष था, जिस पर उन्हें विजय मिली; परन्तु नहीं । विचार बदल दिया, द्विभाषी प्रान्त बना, जिसमें विदर्भ, महाराष्ट्र, गुजरात मिलाकर एक बम्बई प्रान्त बना । कांग्रेस हाईकमान का आदेश एक सेनानी की तरह भाईजी ने स्वीकार किया । सन् १९५७ के चुनाव में फिर भाईजी बम्बई विधान सभा के लिए बहुमत से चुने गए ।

विदर्भ पर अन्याय हो रहा था । विदर्भीय नेतागण पद प्राप्त कर अमन-चैन से कुर्सियाँ तोड़ रहे थे । पद देकर नेताओं की आवाज बन्द कर दी गई थी । द्विभाषी

बम्बई असफल हो रहा था, परन्तु सब चुप थे । विधान सभा का सत्र चल रहा था, एक दुबले-पतले नेता का हृदय जल रहा था । सब जैसे सो रहे थे । परन्तु विदर्भ-केसरी का जो जीवन अभी तक संघर्षमय बीता वह कैसे चुप रह सकता था । बम्बई विधान सभा में एक आवाज उठी । सच्चे हृदय की आवाज थी । राज्य-पाल की धन्यवाद-सम्बन्धी बहस चल रही थी । भाईजी ने आवाज उठाई । द्विभाषी बम्बई प्रान्त असफल रहा । गुजरात, महाराष्ट्र और विदर्भ अलग-अलग प्रान्त बनाए जाएँ । आवाज उठते ही सन्नाटा छा गया । सरकारी बेंचों पर बैठे मन्त्रियों के होश उड़ गए । सभागृह से तालियों की आवाज उठी । 'विदर्भ-केसरी' पर आरोप लगाया गया—अनुशासन भंग किया ! परन्तु इनको कांग्रेस से बाहर कौन कर सकता था, जबकि वे कांग्रेस के जन्मदाता थे ।

भाईजी को पागल तक बनाया गया परन्तु हमने देखा इसी व्यक्ति की आवाज सत्य हुई । तीन महीने बाद ही द्विभाषी प्रान्त टूट गया, परन्तु पदलोलुप भाईजी के दोस्तों ने भाईजी का साथ न दिया । कांग्रेसी तत्व, जो भाईजी की रग-रग में भरे थे, संघर्षकर उठे और भाईजी ने कांग्रेस छोड़ दी । महाराष्ट्र विधान सभा से त्याग-पत्र दे दिया ।

विदर्भ आन्दोलन की आवाज उठी । आन्दोलन काफी सफल रहा, परन्तु सन् १९६२ के चुनावों में सरकारी हथकण्डे व जातीयवाद से भोली-भाली जनता का मत कांग्रेस-पक्षीय बना लिया गया । भाईजी का स्वास्थ्य हिल गया, लेकिन अपना संघर्ष न छोड़ा । आपने परिस्थितियों के कारण विदर्भ छोड़ दिया, परन्तु आज भी भाईजी का हृदय विदर्भ के लिए है और विदर्भीय जनता भाईजी के साथ है ।

विदर्भ प्रान्त नहीं बना । आज प्रत्येक विदर्भवाला भाईजी की याद कर रहा है, तथा विदर्भ प्रान्त बने इसके लिए आतुर है । भाईजी का जीवन अभी तक पूर्ण संघर्षमय रहा है । आज भी वे हर तत्व के लिए संघर्ष कर रहे हैं । उनका स्वास्थ्य पिछले दो वर्ष से गिर गया है, फिर भी वे आज कांग्रेस के तत्वों के लिए संघर्ष करने के लिए तत्पर हैं । ईश्वर उनको स्वास्थ्यमय जीवन देकर उन्हें शतायु बनाए ताकि हम उनकी छत्र-छाया में बैठकर एक कर्मयोगी के स्वप्न पूर्ण कर कांग्रेस पर लगे आरोपों को साफ कर सकें, और एक शक्तिशाली कांग्रेस को पवित्र कहाने के अधि-कारी बन सकें ।

★

मुझे बियाणीजी कैसे दिखते हैं

लेखक
लोकनायक मा. श्री. अणे
(भूतपूर्व सदस्य, वाइसराय कौन्सिल; भूतपूर्व राज्यपाल, बिहार; लोकसभा के सदस्य ।)

मेरी व भाईजी की पहली भेंट सन् १९१८ अथवा १९ में यात्रा के दौरान रेलगाड़ी के डिब्बे में हुई ऐसा मुझे याद आता है । इसके पहले मैंने उनका नाम सुन रखा था । उनसे हुए थोड़े से सम्भाषण पर से मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि इस युवक में देशभक्ति की ज्योति जग उठी है । और इस कारण से राजनैतिक उथल-पुथल से प्राय: उदासीन रहनेवाले मारवाड़ी समाज और अन्य व्यापारी-वर्ग में राजनैतिक कार्यकर्ताओं से सहयोग की प्रवृत्ति उत्पन्न करने में इनका बहुत कुछ उपयोग हो सकेगा । उनके अभिजात विनय एवं प्रेमपूर्ण स्वभाव तथा देश के कार्य को समझ-बूझकर करने की तड़प आदि गुणों का मेरे मन पर प्रभाव पड़ा । उस समय उनके बोलने की शैली से उनकी श्रवण मधुर वक्तृत्व की क्षमता प्रकट हुई । उस समय जब कि मेरा और उनका भाषण मराठी में हुआ, उनके मराठी शब्दों के उच्चारण जिसकी जन्मभाषा बिल्कुल मराठी हो ऐसे सुशिक्षित मराठी युवक के उच्चारण के समान थी और यह देखकर मुझे आश्चर्य हुआ । इस युवक में मारवाड़ियों की व्यवहारकुशलता तो होनी ही चाहिए, पर इसके साथ महाराष्ट्रियन समाज से समरस हो जाने की पात्रता भी है ऐसा मुझे आभास हुआ । आगे जैसे-जैसे उनसे मेरा परिचय बढ़ता गया वैसे-वैसे उनमें सार्वजनिक कार्यकर्ता के लिए आवश्यक सभी गुण विद्यमान हैं इस पर मेरा विश्वास बढ़ता गया ।

सन् १९२० में कलकत्ता में महात्मा गांधी के अहिंसात्मक असहयोग कार्यक्रम के प्रस्ताव को राष्ट्रीय महासभा के विशेष अधिवेशन में मञ्जूरी मिली और उसी वर्ष दिसम्बर में नागपुर में आयोजित सामान्य अधिवेशन में कलकत्ता के उपरोक्त प्रस्ताव को राष्ट्रीय सभा ने प्रचण्ड बहुमत से पास कर अपनी स्वीकृति की मुहर लगाई । उस समय विदर्भ राष्ट्रीय सभा के अध्यक्ष श्री वीर वामनराव

जोशी थे। सन् १९२१ में उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया और उन पर 'गुनाह साबित हुआ' ऐसा मानकर न्यायाधीश ने उन्हें दो वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दिया। विदर्भ कांग्रेस कमेटी के उस समय के प्रमुख सभासद तात्या साहब ताम्बे और संभाजीराव गोखले ने मुझे स्वयं आकर सूचना दी कि श्री वामनराव जोशी के कारावास के कारण रिक्त कमेटी के अध्यक्ष स्थान पर मेरा निर्वाचन किया गया है। उन्होंने मेरे अधिकार में अध्यक्ष के दफ्तर के प्रतीक स्वरूप कुछ कागजात भी दिए। उस समय कांग्रेस कमेटी के सचिव का कार्य श्री मोहरील वकील करते थे और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का कार्यालय अमरावती में था। सन् १९२१ से १९२९ तक मैं विदर्भ कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद पर था। सन् १९२९ में मैंने उस पद से त्यागपत्र दे दिया। और श्री वामनराव जोशी पुनः उस स्थान पर नियुक्त हुए। उस समय श्री ब्रजलाल बियाणी विदर्भ कांग्रेस कमेटी के मुख्य कार्यवाहक थे। वे अध्यक्ष वामनरावजी का मन फिरा कर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का कार्यालय अमरावती से अकोला ले आए।

महात्मा गांधी ने जैसे ही सत्याग्रह करने का निश्चय कर दाण्डी यात्रा का कार्यक्रम जाहिर किया, मैं पुनः राष्ट्रीय सभा का सभासद होकर सत्याग्रह स्वयंसेवकों में मेरा नाम शरीक किया जावे ऐसा आवेदनपत्र मैंने विदर्भ कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष वामनरावजी के पास दिया। प्रत्युत्तर में उन्होंने मुझे कांग्रेस में पुनः प्रवेश के लिए मेरा अभिनन्दन किया ऐसा याद आता है। उस समय के कार्यवाहक श्री ब्रजलालजी बियाणी ने विदर्भ सत्याग्रह की मुहिम कैसे यशस्वी की जा सके इस पर विचार-विमर्श के लिए अकोला में आयोजित की जानेवाली सभा में उपस्थित होने का निमन्त्रण दिया। यवतमाल की जिला शाखा में विदर्भ के नमक सत्याग्रह की तुलना में जंगल का सत्याग्रह किया जा सके तो अधिक यशस्वी हो सकेगा ऐसा विचार उठने के कारण इस सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक क्या योजना बनाई जाए इस सम्बन्ध में उन्होंने मुझसे परामर्श लिया था। अकोला जाने पर बियाणीजी तथा अन्य सभासदों ने जंगल सत्याग्रह का नेतृत्व मुझे करना चाहिए कहकर उसकी शुरुआत यवतमाल जिले से मेरे मार्गदर्शन में हो यह निश्चित किया। अकोला में लिये गए निर्णय और पुसद में किए जानेवाले सत्याग्रह की तारीख में केवल दो या तीन सप्ताह की अवधि रही होगी। इस समय श्री ब्रजलालजी बियाणी की कार्यतत्परता, संगठन चतुरता और कार्य सिद्धि के लिए दिन-रात एक कर देने का हौसला और दूसरों में भी उतना ही उत्साह उत्पन्न करने की सामर्थ्य आदि गुणों को अहर्निश देख रहा था। हाथ का काम कितना ही

परिश्रमपूर्ण हुग्रा हो तो भी उसके कष्ट का ग्राभास ग्रपने चेहरे पर न ग्राने देते हुए ग्रत्यन्त प्रसन्न मुद्रा से ग्रपने सहयोगी मित्रों को ग्रधिक-से-ग्रधिक कार्य करने के लिए प्रवृत्त करने की उनकी क्षमता का वर्णन करना सम्भव नहीं। मैं देखता था कि उन्होंने बरार के ग्रपने ग्रासपास के चारों जिलों में ग्रपने ग्रनुयायी सहकारियों तथा गांधीजी के सिद्धान्तों के ग्रनुरूप चलने वाले युवकों एवं महिलाग्रों का ग्रच्छा खासा दल बना लिया है। उनके कार्यक्रमों की योजना में भव्यता के साथ सौन्दर्य एवं सौष्ठव का पुट मिलता था जो लोगों के मन को ग्राकर्षित करती थी ग्रौर जिसमें परम दिव्यता का गुण दिखाई देता था। गांधीवाद में इनकी परम निष्ठा है। विदर्भ राष्ट्रीय सभा को गाँव-गाँव फैलाने का काम जिस तरह बियाणीजी के हाथों विदर्भ शाखा के सूत्रधार होने के बाद हुग्रा उनके पहले के ग्रध्यक्षों के कार्याकाल में नहीं किया गया था, ऐसा कहने में मुझे कोई संकोच नहीं। विदर्भ को गांधीवादी बनाने में यद्यपि ग्रनेकों के प्रयत्न कारणी भूत हुए हैं, ग्रनेकों के त्यागमय जीवन के उदाहरण भी उपयोगी हुए हैं, परन्तु इस कार्य में निरन्तर उपयोगी रह सके इसलिए ग्रावश्यक साधन सामग्री एवं उत्साही जन-बल उपलब्ध करा देने में भाईजी के यत्न, प्रभाव व मार्गदर्शन का बहुत बड़ा हिस्सा है। ग्रौर इसी कारण भाईजी एकबार ग्रध्यक्ष-पद पर ग्रभिस्थित हो जाने के बाद मन्त्री पद पर ग्रारूढ़ होने तक विराजमान रहे।

स्वर्गीय जवाहरलालजी को देश में जो स्थान प्राप्त हुग्रा था वह स्थान विदर्भ में निस्सन्देह भाईजी को प्राप्त हुग्रा तथा उस स्थान से उन्हें खींचकर नीचे लाने की बात ग्रसम्भव समझकर बहुत से समझदार मन मारकर रह जाते थे। किन्तु कुछ कारणों से भाईजी के जितने मित्र हैं उससे भी ग्रधिक उनके शत्रु हैं। यह विचित्र विडम्बना मैंने ग्रपनी ग्राँखों से तो नहीं देखी पर कानों से बीमारी के वक्त बहुत कुछ सुना करता था। ग्रौर उसमें भी ग्राश्चर्य तथा विस्मयपूर्ण बात यह थी कि उनकी ग्रोर शत्रु दृष्टि से देखनेवाले एक समय में बियाणीजी के बहुत बड़े चहेते तथा समर्थक थे। इनमें ग्रनेक तो महान पुरुष व कुछ महान बहिनें भी थीं। श्री वीर वामनरावजी जोशी के पत्र में ब्रजलालजीके विरुद्ध काफी सख्त लेख ग्राया करते थे। उसी तरह निकट रहनेवाली मित्र-मण्डली भी उनके काफी विरुद्ध थी ऐसा मुझे दिखाई देता था। मैं इस चर्चा की ग्रधिक मीमांसा यहाँ करना नहीं चाहता।

श्री ब्रजलालजी नाग-विदर्भ समिति के ग्रत्यन्त प्रखर एवं जाज्वल्य ग्रग्रदूत थे ग्रौर यह कहने में ग्रतिशयोक्ति नहीं होगी कि उन्होंने पिछले चुनाव तक

उस कार्य के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया था। वे अकोला क्षेत्र से समिति की ओर से चुनाव में लोक सभा के लिए खड़े हुए थे। पर उसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। अकोला में उनके बहुत से व्यक्तिगत शत्रु थे यह इस कटाकटी के निर्वाचन में उनकी असफलता का एक कारण होना बहुत सम्भव है। लोकमत ने विरुद्ध निर्णय दिया इसलिए नाग-विदर्भ की माँग निराधार है—ऐसा उनका कहना चुनाव के निरपेक्ष तत्वज्ञान की दृष्टि से समर्थनीय है। विदर्भ के इस महान पुरुष के चरित्र में सामान्य मनुष्य की बुद्धि की समझ में न आनेवाली ऐसी कुछ अकल्पनीय बातें हैं जिसका उल्लेख न करना मुझे अनुचित लगा और इसीलिए मैंने किया।

सौभाग्य से भाईजी की मनोरचना दार्शनिक की मनोरचना है। उन्हें आत्म-निरीक्षण करने की आदत है, इसलिए अपने विरुद्ध विपरीत सितारों के कारण जिनके मन दूषित हो गए, वह केवल गैर समझी के कारण हुए हैं, वस्तुतः उसके लिए कोई आधार नहीं है, ऐसी आस्था उनके आत्म-निरीक्षण से बनी हुई है। इस प्रकार की आस्था बनने के कारण उनपर घोर व कठोर शब्दों का प्रहार होने के बावजूद भी उन्होंने अपने मन की स्थितप्रज्ञता विचलित न होने दी और न प्रतिपक्ष के विषय में मन में दुर्भावना ही आने दी। इस कसौटी पर उनका संयम विलक्षण है। और इस सम्बन्ध में उनकी तुलना स्वर्गीय पूज्य डा० मुञ्जे से की जा सकती है। विदर्भ के इस प्रभावी सपूत को परमेश्वर दीर्घायु करे और पहले की तरह उनकी क्षीण हुई शक्ति उन्हें फिर से प्रदान करे तथा उनकी परिपक्व बुद्धि के मार्गदर्शन के आशीर्वाद से भारत की नई पीढ़ी को दीर्घकाल तक लाभ मिलता रहे, जगन्नियन्ता के चरणों में यही मेरी एकमात्र प्रार्थना है। ★

निर्भीक समाज-सेवी

लेखक
व्रजमोहनलाल गोयनका—बम्बई-इन्दौर
(ग्रन्थ-समिति के एक सम्मानित सदस्य तथा उद्योगपति ।)

मेरा जन्म अकोला का है और वहीं मेरा लालन-पालन शिक्षा-दीक्षा भी हुई, जो श्री बियाणीजी की कर्मभूमि रही है ।

श्री बियाणीजी हमेशा भाईजी के उपनाम से सम्बोधित किए जाते रहे हैं, अत: इस लेख में मैं भी उसी नाम का उपयोग कर रहा हूँ ।

भाईजी से मेरा परिचय सन् १९३० से है, जब मैं विलायत यानी लन्दन से लौटा था, उस समय सनातनधर्मी वयोवृद्ध लोगों का समाज में पूर्ण वर्चस्व था, इसलिए समाज-सुधारकों का प्रभाव नहीं के बराबर था । उस समय जो थोड़े-बहुत पढ़े-लिखे नवयुवक नई विचारधारा को पसन्द करते थे और समाज-सुधार करना चाहते थे, उनकी वयोवृद्ध लोगों के खिलाफ खड़े होने की या उन लोगों की नाराजगी झेलने की हिम्मत न होने के कारण कोई आगे आ नहीं रहा था । ऐसे समय में सच्चे साहसी, निष्ठावान समाज-सुधारक के नाते भाईजी अग्रणी बने । उनका दर्शन मुझे पहली बार मेरे जीवन में हुआ या यों कहिए कि कहीं से मेरे जीवन ने उनके नेतृत्व में नया मोड़ लिया । वह नीचे की घटना से पाठकगण समझ सकेंगे :

सन् १९३० में, जैसा कि मैंने ऊपर लिखा है, विलायत से लौटकर जैसे ही घर आया, वैसे ही मेरे वयोवृद्ध पितामह ने पंचों को और पण्डितों को बुलाया और पूछा कि इसको घर में प्रवेश कराने के लिए क्या-क्या करना होगा ? तब किसी ने कहा कि श्रीमन्त का बेटा-पोता है, इसे हरिद्वार भेजकर तथा सतचण्डी हवन वगैरह कराकर शुद्ध कराना चाहिए । किसी ने नासिक भेजने का सुझाव दिया और किसी ने अकोला में ही ब्राह्मण-भोजन, प्रायश्चित वगैरह कराकर शुद्ध करने की राय दी । इन सारी परिस्थितियों में मेरे लिए बड़ी समस्या और मानसिक उलझन पैदा हो गई, और मैं बड़ी परेशानी महसूस करने लगा, कारण मुझे नीचे की मंजिल में एक अलग कमरे में रखा गया, जहाँ मेरे खाने के बर्तन, कपड़े वगैरह अलग से रखे

जाते थे और अलग नौकर रखा गया जो मेरे कपड़े-बर्तन वगैरह साफ करता था, ताकि कुटुम्ब के और बर्तनों तथा कपड़ों से अलग रहें। हमारे यहाँ भोजन की पाकशाला और ठाकुरबाड़ी ऊपर की मंजिल में थी, जहाँ मुझे प्रवेश नहीं मिला।

जब उपरोक्त प्रायश्चित की बातें चल रही थीं तब मैंने पूज्य दादाजी से तथा कतिपय पंचों से और पण्डितों को शपथपूर्वक बता दिया था कि मैंने वहाँ न किसी तरह का अभक्ष भक्षण किया है न मदिरा-पान वगैरह किया है, न मुझे वहाँ करने की जरूरत ही पड़ी, कारण लन्दन में उस समय श्री बिरलाजी का आर्यन भवन नाम का शुद्ध शाकाहारी होटल था, जिसमें ब्राह्मण रसोइया तथा उनका परिवार काम करता था। मैंने यहाँ तक भी कहा कि सिगरेट वगैरह तक भी नहीं पी और न आज भी पीता हूँ। फिर भी वे लोग किसी बात को नहीं मानते हुए यही कहते रहे कि मैंने विदेश भ्रमण तो किया है इसलिए बड़ों के संतोष के लिए उनकी इच्छा-नुसार करना ही होगा वरना मेरे लिए सारे कुटुम्बियों को जाति-बहिष्कृत होने का डर था।

इस तरह की मानसिक उलझनों और पसोपेश में पड़ा हुआ मैं भाईजी से मिला और पूछा कि क्या किया जाय? तब उन्होंने कहा कि हिम्मत से मुकाबला करो और कहो कि समाज भले ही मुझे ठुकरा दे, परन्तु मैं इस तरह का अपनी आत्मा के विरुद्ध झूठा प्रायश्चित वगैरह नहीं करूँगा। कारण मैंने इस तरह का कोई कृत्य ही नहीं किया है, जिसके लिए यह सारा आडम्बर करना पड़े। उसमें उन्होंने पूर्ण साथ देने का आश्वासन दिया, अतः इस हिम्मत भरे कथन से मेरी हिम्मत बढ़ी और प्रायश्चित करने की जो चर्चाएँ चल रही थीं तथा उसके लिए तिथि वगैरह निश्चित की जा रही थी तब मैंने साफ कह दिया कि मैं यह कुछ नहीं करूँगा। यह सुनते ही मेरे कुटुम्ब में ही नहीं, परन्तु सारे समाज में बड़ा तहलका मच गया, कारण उस समय अकोला के मारवाड़ी समाज में मेरे पितामह अग्रणी माने जाते थे, इस कारण उनकी स्थिति बड़ी विचित्र हो गई। बाद में ठीक भी हुई परन्तु वह मुझ पर काफी नाराज हुए तथा यहाँ तक हुआ कि मुझे घर से निकाल दिया गया। उसी समय देश में गांधीजी का आन्दोलन चल रहा था जिसका संचालन भी बड़ी योग्यता से और लगन से भाईजी कर रहे थे। वहाँ से उनका मेरा सन् १९३३ तक हर प्रवृत्ति में साथ रहा, बाद में स्वर्गीय पूज्य जमनालालजी बजाज मुझे बम्बई लिवा ले गए। तब से मेरा अकोला से सम्पर्क बहुत कम हो गया, फिर भी भाईजी से तो बराबर बना ही रहा और समय-समय पर उनसे प्रेरणा मिलती रही।

मैंने भाईजी को सच्चा समाज-सेवी, और आदर्श सुधारक पाया, जबकि किसी

कि हिम्मत समाज में आगे आने की नहीं थी । उसके बाद तो उनको काफी साथी और अनुयायी मिले और बहुत-सी घटनाएँ घटीं, जिनका कि वर्णन करने से काफी विस्तार बढ़ जाएगा, परन्तु मैं यह अवश्य कहूँगा कि भाईजी के कारण अकोला और अकोला का मारवाड़ी समाज काफी प्रख्यात हुआ, जैसे कि स्वर्गीय जमना-लालजी के कारण वर्धा ।

★

सत्तरवर्षीय तरुण श्री बियाणीजी

लेखक

रामनारायण शास्त्री—इन्दौर

(ग्रन्थ-समिति के सम्मानित सदस्य; प्रसिद्ध वैद्य; जनसंघ के प्रधान कार्य-कर्त्ता तथा अखिल भारतीय मेडिकल बोर्ड के सदस्य ।)

ज्योंही कभी श्री बियाणीजी का स्मरण करता हूं, मेरे नेत्रों के समक्ष अरुणोदय की उभरती ज्योति के समान एक कर्मवीर व्यक्तित्व का साक्षात् रूप प्रकट हो जाता है। ऐसा अनुभव होने लगता है, मानो एक अखण्ड आशा का स्वामी अपनी समस्त शक्ति समेटे संकल्पित जय-यात्रा में निरन्तर समर्थ चरण बढ़ाता ही जा रहा है।

लगभग ५० वर्षों से श्री बियाणीजी का जीवन साहित्य, राजनीति, समाज एवं जीवन के अन्यान्य क्षेत्रों में एक-सा साधनारत रहा है। इस कर्ममयी उपासना ने उनके प्रत्येक शरीराणु और मानसाणु को इतना कर्ममय बना दिया है कि उनका सान्निध्य मात्र "चरैवेति" का संदेशवाहक बन गया है। उनसे मिलते ही नैराश्य और शिथिलता के मेघ छिन्न-भिन्न हो जाते हैं।

मैं चिकित्सक के नाते अनेक बार उनके दर्शन करता ही रहता हूं; ज्वरग्रस्त स्थिति में, पक्षाघात की अवस्था में—जबकि उनकी वाणी भी उनसे विदा हो चुकी थी—निराहार उपवास की दशा में एवं ऐसी दुर्बल परिस्थिति में जिसे चिकित्सक भी चिन्तनीय अनुभव करने लगते हैं, मैंने सर्वदा उनके मुख पर एक-सी आशा की ज्योति, अखण्ड उत्साह, शान्तिपूर्ण निश्चिन्तता और अतुलनीय आनन्द का प्रकाश देखा। भगवान् श्रीराम के लिए कहे गए शब्द सहसा एक दिन मेरे मुख से निकल पड़े—"न मया लक्षितः कश्चित् स्वल्पोप्याकार विभ्रमः।"

गतवर्ष की बात है। श्री बियाणीजी को पक्षाघात के साथ ही उरस्तोय और भयंकर ज्वर का आक्रमण हुआ। निर्दय पक्षाघात ने श्री बियाणीजी की वाणी भी छीन ली थी। ज्योंही वे कुछ प्रकृतिस्थ हुए, उन्होंने संकेतों तथा विविध चेष्टाओं से मेरा ज्ञान कराकर मुझे फोन करने की प्रेरणा दी। मुझे इस व्याधि के आक्रमण

की जैसे ही सूचना मिली, मैं चिन्तित हो उठा, क्योंकि यह पक्षाघात का दूसरा आक्रमण था। मैं सहज ही एक सुन्दर गुलाब का पुष्प लेकर खिन्न मन उनके समीप पहुँचा और शुभकामना के साथ वह पुष्प स्वस्थ हाथ में थमा दिया। श्री बियाणीजी ने गुलाब पर दृष्टि डाली, कुछ देर मेरी ओर देखा फिर सहज उन्मुक्त, कंठ स्वर-रहित, हास्य से मेरी खिन्नता को छिन्न-भिन्न कर दिया। मैंने शरीर का परीक्षण कर चिकित्सक के कर्त्तव्यवश आश्वासन दिया कि वे शीघ्र ही स्वस्थ हो जाएँगे किन्तु उनके मुख का सौम्यहास मानो मुझसे कह रहा था–'वैद्यराज ! मैं अस्वस्थ ही कहाँ हूँ !'

वाणी के अन्तर्धान होने के सम्बन्ध में सभी चिकित्सकों की राय थी—"कुछ कहना कठिन है। छः दिन, छः मास और छः वर्ष—कितना ही समय लग सकता है। यह लुप्त हुई वाणी प्रकट हो भी सकती है और नहीं भी।" तदनन्तर श्री बियाणीजी अकोला चले गए। एक दिन मुझे सूचना मिली कि श्री बियाणीजी का फोन आया है। मैंने समझा कि अकोला से लौटे हुए किसी मित्र के द्वारा उनकी स्वास्थ्य-सूचना होगी। मैंने फोन उठाया। फोन पर स्वयं बियाणीजी थे। उनकी खण्ड-खण्ड उभरती वाणी के इने-गिने शब्द सुनते ही मैं आनन्दविभोर हो उठा। यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि वाणी के प्रकट होने में उपचारों का उतना महत्व नहीं है जितना उनके अप्रतिम आत्मबल का। ऐसे दैदीप्यमान व्यक्तित्व के आत्मप्रकटीकरण की साधनरूपा सरस्वती का पुनः प्रादुर्भाव पुनर्जन्म से कम महत्व नहीं रखता।

मैं उनसे मिलने पहुँचा। वही आनन्दपूर्ण हास्य और प्रसन्न उत्साहमण्डित मुखमण्डल। इस सत्तर वर्ष की अवस्था में अन्तःकरण के तारुण्य का अद्भुत प्रकाश जैसे बिखर रहा हो। उस दिन मैंने प्रत्यक्ष देखा कि आयुष्य के वर्षों की गणना से तारुण्य का सम्बन्ध नहीं है; तारुण्य का अधिष्ठान है—आनन्दमय उत्साहपूर्ण कर्मवीर मन।

अभी-अभी थोड़ा ही समय हुआ है, श्री बियाणीजी ने निश्चय किया कि वे उपवास करेंगे। उनकी अतीव दुर्बल देहयष्टि को देखकर सभी चिकित्सक चिन्तित हो उठे। मुझे बुलाया। मैंने भी इस आयु में लम्बे उपवास का समर्थन नहीं किया। वे बोले—"वैद्यराज ! उपवास का तो मैं निश्चय कर चुका हूँ। पाँच दिन पूर्ण उपवास करूँगा और फिर दूध ही सेवन करता रहूँगा। आप लोग सम्हालनेवाले हैं ही, किन्तु आप निश्चय मानिए—मेरा कुछ बिगड़ना नहीं है।" उपवास के दिनों में, पूर्ण निराहार रहने पर भी, उनके मुखमण्डल पर रंचमात्र भी फीकापन न था। हम लोगों के आग्रह से पलंग अवश्य बिछा दिया गया था किन्तु दिन में मैंने

उन्हें कभी पलंग पर लेटे हुए नहीं देखा। मैं विदा होता तो मेरे मना करने पर भी साथ-साथ विदा करने आते। मैं चकित हूँ, इस सत्तर वर्ष की आयु में इतने रोगों के प्रहार सहकर भी इस दुर्बलकाय व्यक्ति में कैसी प्रखर जीवन की ज्योति है। कहीं भी तो आलस्य, खिन्नता, शिथिलता और नैराश्य नहीं—शरीर और मन का प्रत्येक अणु तारुण्य का प्रतिनिधि है। जगदीश्वर से यही प्रार्थना है कि श्री बियाणीजी का यह चिरतारुण्य चिरायु हो।

★

सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत श्री बियाणीजी

लेखक
रामकिशन धूत—हैदराबाद
(मन्त्री अ० भा० माहेश्वरी महासभा ।)

श्री ब्रजलाल बियाणी एक ऐसी विभूति हैं जिनकी प्रतिभा और शक्ति सार्वजनिक जीवन के किसी एक क्षेत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि सभी क्षेत्रों में उनकी सेवाएँ उल्लेखनीय रही हैं। उनकी विशेष शक्ति राजनैतिक और समाज-सुधार के क्षेत्र में लगी। अपने विद्यार्थी जीवन से ही श्रीबियाणीजी राजनीति की ओर आकृष्ट हुए। सन् १९२० में जिस समय नागपुर कांग्रेस में महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन का शंखनाद किया उस समय श्री बियाणीजी वकालत के प्रथम वर्ष में नागपुर में अध्ययन कर रहे थे। आप वहाँ मारवाड़ी बोर्डिंग हाउस में रहते थे, जिसके संचालक तपोधन श्रीकृष्णदासजी जाजू और सेठ जमनालालजी बजाज थे। इन दोनों महानुभावों के संसर्ग से श्री बियाणीजी समाज-सेवा के कार्य में प्रवृत्त हुए।

उस समय कांग्रेस अधिवेशन में भाग लेने के लिए आनेवाले राजस्थानी प्रतिनिधियों के स्वागत-सत्कार के लिए विशेष व्यवस्था की गई थी। इसके लिए श्री बियाणीजी की अध्यक्षता में मारवाड़ी सेवा-संघ की स्थापना हुई और बड़ी संख्या में मारवाड़ी नवयुवक स्वयंसेवक भर्ती किए गए। सेठ जमनालालजी बजाज की प्रेरणा से मारवाड़ी सेवा-संघ के स्वयंसेवकों ने श्री बियाणीजी के नेतृत्व में बड़ा प्रशंसनीय कार्य किया। श्री बियाणीजी के जिम्मे महात्मा गांधी के निवास-स्थान की व्यवस्था थी। अतः उन्हें गांधीजी के निकट सम्पर्क में आने का अवसर मिला। गांधीजी के विचारों से प्रभावित होकर श्री बियाणीजी ने कालेज छोड़ दिया और देश के हजारों अन्य विद्यार्थियों की तरह देश की स्वतन्त्रता के आन्दोलन में कूद पड़े।

अपनी प्रखर प्रतिभा के कारण वकालत की परीक्षा पास करने के बाद निश्चय ही श्री बियाणीजी एक सफल वकील बनते और विपुल ऐश्वर्य का अर्जन करते,

परन्तु देश के स्वाधीनता ग्रान्दोलन में सम्मिलित होकर उन्होंने राष्ट्र की जो महान् सेवा की वह न हो पाती । श्री बियाणीजी ने विदर्भ कांग्रेस संगठन को जीवन दिया, उसे यशस्वी बनाया ग्रौर बीसों वर्षों तक वहाँ की जनता का ग्रखण्ड नेतृत्व किया । ग्रपनी इन बहुमूल्य ग्रौर दीर्घकालीन सेवाग्रों के कारण ही श्री बियाणीजी विदर्भ-केसरी ग्रौर जननायक कहलाए ग्रौर जनता जनार्दन के हृदयासन पर विराजमान रहे ।

राजनीतिक क्षेत्र के साथ-साथ श्री बियाणीजी समाज-सुधार के क्षेत्र में भी ग्रपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ प्रवृत्त हुए । सन् १९२१ में कालेज की पढ़ाई छोड़ने के बाद ग्रकोला के मित्रों की प्रेरणा से माहेश्वरी महासभा के चतुर्थ ग्रधिवेशन के ग्रायोजन को सफल बनाने में संलग्न हो गए । माहेश्वरी महासभा उस समय समग्र मारवाड़ी समाज की एक प्रगतिशील संस्था समझी जाती थी । श्री कृष्णदासजी जाजू ग्रारम्भ से ही उसके प्रेरणास्रोत थे । उनके पथ-प्रदर्शन में ग्रकोला के माहेश्वरी बन्धु महासभाधिवेशन को सफल बनाने में प्राणपण से जुट गए । श्री बियाणीजी ने इस ग्रधिवेशन को सफल बनाने में उल्लेखनीय योगदान दिया । स्व० वल्लभदासजी मालपाणी की ग्रध्यक्षता में सन् १९२१ में ग्रकोला में महासभा का चतुर्थ ग्रधिवेशन बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न हुग्रा । यहाँ इस महासभा को ग्रनुशासित संगठन का स्वरूप प्राप्त हुग्रा । यह सब श्री बियाणीजी का ही कृतित्व था ।

ग्रकोला ग्रधिवेशन से माहेश्वरी महासभा को श्री बियाणीजी का सक्रिय सहयोग मिलना ग्रारम्भ हुग्रा जो ग्राज तक कायम है । श्री बियाणीजी महासभा के उस समय उपमंत्री चुने गए । श्री कृष्णदासजी जाजू ग्रौर श्री गोविन्ददासजी मालपाणी मन्त्री निर्वाचित हुए थे । ग्रकोला के बाद महासभा का पंचम ग्रधिवेशन १९२२ में श्रद्धेय श्री कृष्णदासजी जाजू की ग्रध्यक्षता में कलकत्ता ग्रौर छठा ग्रधिवेशन श्री रामकृष्णजी मोहता की ग्रध्यक्षता में १९२३ में इन्दौर में सुसम्पन्न हुग्रा । १९२४ में बम्बई में श्री गोविन्ददासजी की ग्रध्यक्षता में महासभा का सप्तम ग्रधिवेशन हुग्रा । कोलवार माहेश्वरी प्रकरण को लेकर इस ग्रधिवेशन में काफी संघर्ष हुग्रा ग्रौर दोनों पक्षों में कोई समझौता न होने के कारण महासभा ग्रधिवेशन की कार्यवाही सभापतिजी को बीच में ही स्थगित कर देनी पड़ी । पण्ढरपुर में महासभा का ग्रष्टम ग्रधिवेशन हुग्रा जिसमें कोलवार माहेश्वरियों के सम्बन्ध में ऐतिहासिक निर्णय किया गया । ग्रकोला ग्रधिवेशन से पण्ढरपुर ग्रधिवेशन तक श्री बियाणीजी महासभा के उपमन्त्री रहे ग्रौर ग्रपनी प्रखर प्रतिभा तथा कार्यक्षमता द्वारा महासभा के सगठन को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया ।

पण्ढरपुर में श्री बियाणीजी को हम महासभा के प्रथम श्रेणी के नेताओं में खड़ा पाते हैं। पण्ढरपुर महासभा के पश्चात् कोलवार संघर्ष के माध्यम से वे माहेश्वरी समाज में सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत के रूप में सामने आए। कोलवार संघर्ष के तूफ़ान से महासभा की किश्ती को बचा ले जानवालों में तपोधन जाजूजी, श्री रामकृष्णजी मोहता और श्री बियाणीजी की त्रिमूर्ति ही प्रमुख थी। पंचायती पक्ष बड़ा प्रबल था। धन और जन दोनों शक्तियाँ उसके पास थी और वह अपनी इस शक्ति के बल पर बिना सत्यान्वेषण या ऐतिहासिक शोध के कोलवारों को गैर-माहेश्वरी बनाने और उनके साथ सम्बन्ध करनेवाले बिड़ला परिवार को बहिष्कृत करने पर तुला था। महासभा ने इस प्रकरण की विधिवत् जाँच कराई और ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर कोलवारों को माहेश्वरी स्वीकार किया। अन्त में महासभा ने समाज के वातावरण को देखते हुए कोलवारों के साथ अन्य माहेश्वरी समुदायों की तरह विवाह-सम्बन्ध किए जाने का निर्णय किया। कोलवार संघर्ष में पंचायती सत्ता ने समाज को सत्य के पथ से विरत करने का जो सबल प्रयत्न किया उसे श्री बियाणीजी और श्रद्धेय जाजूजी के तर्क एवं विद्वतापूर्ण भाषणों ने छिन्न-भिन्न कर दिया। श्री बियाणीजी के भाषण उन दिनों समाज में एक नए जीवन और जागृति का संचार करते थे। इन दोनों महानुभावों के प्रयत्न से महासभा अग्नि-परीक्षा में विजयी होकर निकली।

पण्ढरपुर महासभाधिवेशन में एक महत्वपूर्ण निर्णय सामाजिक बहिष्कार की प्रथा के उन्मूलन का किया गया। कोलवार संघर्ष में सामाजिक बहिष्कार की प्रथा का अतिरेक हो गया था। समाज सुधार के मार्ग में बहिष्कार शस्त्र एक बड़ी बाधा थी। महासभा ने उसका निष्कासन करके सदा के लिए समाज सुधार के मार्ग को निष्कण्टक बना दिया। इस प्रसंग को लेकर समाज में बड़ी गलतफहमी फैली। यह कहा जाने लगा कि सामाजिक बहिष्कार को उठाकर महासभा समाज में उछृंखलता को फैलाना चाहती है। यदि लोगों को बहिष्कार का भय न रहेगा तो अनेक प्रकार के अनैतिक कार्य होने लगेंगे और लोग मनमानी करने पर उतारू हो जाएँगे। श्री बियाणीजी ने अपने ओजस्वी एवं तर्कयुक्त भाषणों द्वारा इन शंकाओं का खण्डन करके समाज में ऐसा वातावरण उत्पन्न किया कि लोग सर्वत्र बहिष्कार-प्रथा के उन्मूलन से प्रसन्न हो उठे। पंचायती सत्ता का यही एक मात्र अवलम्ब था। इसके छिन्न-भिन्न हो जाने से पंचायत प्रभावहीन बन गई और लोगों के ऊपर इस कारण उसका जो आतंक था वह उठ गया। पंचायती सत्ता इस तरह निष्प्रभ और निर्जीव बन गई।

श्री बियाणीजी ने माहेश्वरी महासभा के दशम अधिवेशन (देवलगाँव) के सभापति पद को अलंकृत किया था। अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री बियाणीजी ने उस समय कहा था :

"माहेश्वरी समाज के संघर्ष काल में यहाँ देवलगाँव में ही महासभा को नष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। आज उसी देवलगाँव में पंचायत का अधिवेशन न होकर महासभा का अधिवेशन हो रहा है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि पंचायत की उत्तराधिकारिणी महासभा हो गई है और अब भविष्य में माहेश्वरी समाज में पंचायत के स्थान पर महासभा का साम्राज्य रहेगा। फर्क केवल इतना ही है कि पंचायत का साम्राज्य दण्ड की नींव पर था, महासभा का राज्य प्रेम की बुनियाद पर रहेगा।"

सामाजिक दण्ड-व्यवस्था के सम्बन्ध में श्री बियाणीजी ने अपने भाषण में कहा था—"बहिष्कार-शस्त्र के नाश में हमारी भलाई है। समाज की समयानुकूल प्रगति का मार्ग खुल गया है तथा समाज में शान्ति की स्थापना है। आज का समाज पंचायत के दण्ड के भय से नहीं चलाया जा सकता। वह तो महासभा के जनमत के प्रबल प्रवाह में ही प्रवाहित हो सकता है। दण्ड का स्थान जनमत को, हिंसा का स्थान अहिंसा को, असहिष्णुता का स्थान सहिष्णुता को देने से ही समाज की भलाई हो सकती है। महासभा के प्रचार में मैं उक्त सारी बातें देखता हूँ। और आशा करता हूँ कि समाज शीघ्र ही पंचायत के बहिष्कार-शस्त्र से अपने को मुक्त कर सकेगा।

"पंचायत की दण्ड-प्रणाली ने समाज में कायरता को पैदा किया, प्राचीनता के पवित्र नाम पर व्यक्ति की नैतिकता का नाश किया। समाज को रूढ़ि का गुलाम बना दिया और रूढ़ि ही समाज में धर्म का स्वरूप धारण कर बैठ गई। समाज के व्यक्तियों के जीवन में नवीन प्रयोग करने की शक्ति का पूरा अभाव पैदा कर दिया। मौलिकता तथा नवीन प्रयोग करने की शक्ति समाज की प्रगति के लिए अत्यन्त आवश्यक है।"

बहिष्कार-प्रथा की तरह पंचायत की (परवानगी) प्रथा भी समाज के लिए बड़ी कष्टदायिनी थी। प्रत्येक व्यक्ति को अपने यहाँ किसी भी सामाजिक कार्य को सम्पन्न करने के लिए पंचायत से आज्ञा परवानगी लेनी पड़ती थी। पंचायत की परवानगी के अनुसार चाहे व्यक्ति की शक्ति हो या न हो बिरादरी भोज का आयोजन करना पड़ता था। श्री बियाणीजी ने अपने भाषण में इस परवानगी प्रथा पर भी प्रबल प्रहार किया—"इस प्रथा के कारण गरीबों को अपनी शक्ति

के बाहर खर्च करना पड़ता है। धनिकों को गरीबों को तकलीफ देने का मौका मिलता है। व्यक्तिगत लड़ाई तथा मनमुटाव को सामाजिक रूप देने का यह परवानगी की प्रथा एक साधन है। इसके कारण समाज का वातावरण कलहमय तथा परावलम्बी बना रहता है। बहिष्कार के साथ परवानगी प्रथा को उठाने से समाज में सुधार का मार्ग निष्कण्टक हो जाएगा। आजादी के वातावरण में व्यक्ति अपनी भलाई-बुराई को सोचने में समर्थ होगा। वही समाज ठीक है जिसमें सामाजिक अंकुश कम है। मैं माहेश्वरी समाज के प्रत्येक व्यक्ति को बाह्य-अंकुशहीन पर आत्मविवेक के अंकुश से सीमित देखना चाहता हूँ और देखना चाहता हूँ वह दिन जिस दिन समाज का प्रत्येक व्यक्ति बिना अंकुश और दण्ड-भय के अपने समाज तथा देश की भलाई में रत रहेगा।"

देश में राजनैतिक आन्दोलन के प्रमुख नेता होते हुए भी श्री बियाणीजी का सामाजिक सुधार की प्रवृत्तियों से अटूट सम्बन्ध रहा। इतना ही नहीं आप अपने मौलिक विचारों तथा ओजपूर्ण वाणी और प्रभावशाली लेखनी द्वारा इस दिशा में समाज का मार्गदर्शन करते रहे। माहेश्वरी समाज की प्रत्येक प्रवृत्ति के साथ आपका अटूट सम्बन्ध रहा। ऐसा कोई महासभाधिवेशन नहीं है जिसमें श्री बियाणीजी का प्रमुख योगदान न रहा हो। श्री बियाणीजी उसके प्रेरणास्रोत हैं। राजनैतिक जीवन में अत्यन्त व्यस्त रहने पर भी आपने महासभा के संचालन में सक्रिय योग दिया। श्रद्धेय जाजूजी और बियाणीजी की विचारधारा और कार्यशैली में थोड़ा अन्तर था। श्री जाजूजी सात्विकता की मूर्ति थे। श्री बियाणीजी राजस की मूर्ति हैं। श्री जाजूजी ब्रह्मर्षि थे तो श्री बियाणीजी राजर्षि हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और श्री जवाहरलाल नेहरू में जो अन्तर है वही अन्तर श्री जाजूजी और बियाणीजी में रहा। दोनों ने ही महासभा के संगठन को जीवन दिया परन्तु दोनों की विचारधारा भिन्न रही। गांधीजी त्याग और तपश्चर्या की मूर्ति थे— जवाहरलाल पूरे भोगवादी और सत्ताप्रिय थे। गांधी जहाँ सब कुछ त्यागने की वृत्ति रखते थे, नेहरूजी वहाँ सब कुछ ग्रहण करने और उसका उपभोग करने के इच्छुक रहते थे। यही अन्तर हमारे समाज के इन दो महापुरुषों में रहा।

श्री बियाणीजी ने अपने क्रान्तिकारी और प्रगतिशील विचारों द्वारा मारवाड़ी समाज के हजारों नवयुवकों और नवयुवतियों को राष्ट्र और समाज-सेवा की ओर प्रवृत्त किया। श्री बियाणीजी के जीवन में सदा मौलिकता को स्थान प्राप्त रहा। परम्परावाद और रूढ़िवाद के वह सदा विरोधी रहे। अपने सुदृढ़ और निर्भीक विचारों के कारण श्री बियाणीजी को समाज से बहिष्कृत भी होना पड़ा, परन्तु उन्होंने उसकी परवाह न की और अपने विचारों पर दृढ़ रहे।

अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में भी श्री बियाणीजी ने इसी निर्भीकता के साथ सामाजिक जागरण का शंखनाद किया। श्री बियाणीजी के अध्यक्ष बनने के पूर्व मारवाड़ी सम्मेलन सामाजिक सुधार के कार्यक्रम से अलिप्त था। सम्मेलन के संचालक नहीं चाहते थे कि सामाजिक सुधार के विषयों को लेकर सम्मेलन दलबन्दी का शिकार बने। परन्तु आज के प्रजातन्त्रीय युग में कोई संस्था इस तरह एकांगी नहीं बनी रह सकती, खास तौर पर मारवाड़ी समाज की एक मात्र संस्था—सम्मेलन, जबकि मारवाड़ी समाज उतना प्रगतिशील और समाज सुधार की दृष्टि से समुन्नत नहीं है। श्री बियाणीजी ने मारवाड़ी सम्मेलन के कार्यकर्ताओं को सामाजिक क्रान्ति का संदेश घर-घर फैलाने के लिए प्रेरित किया। आपके सबल नेतृत्व के कारण मारवाड़ी समाज में पर्दा प्रथा के विरुद्ध देशव्यापी आन्दोलन हुआ। अनेक बहिनों और भाइयों का शिष्टमण्डल सारे देश में घूमा। औसर-मौसर, दहेज आदि प्रथाओं के विरुद्ध जनमत जागृत हुआ। श्री बियाणीजी की प्रेरणा से हजारों स्त्री-पुरुषों ने प्रतिज्ञा की कि वे न अपने यहाँ पर्दा रहने देंगे न किसी पर्देवाले विवाह में शरीक होंगे। इस प्रकार की प्रतिज्ञा का यह परिणाम हुआ कि धीरे-धीरे मारवाड़ी समाज से पर्दा प्रथा कम होती गई। आज भी यद्यपि बहुत-सी स्त्रियाँ पर्दा करती हैं परन्तु पर्दे ने जो एक प्रकार के रूढ़ि-धर्म का रूप ग्रहण कर रखा था वह नष्ट हो गया।

श्री बियाणीजी विचार स्वातन्त्र्य के सदा पोषक रहे हैं। उनकी कथनी और करनी में कभी अन्तर नहीं रहा। उन्होंने प्लेटफार्म पर जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया उसे हम उनके पारिवारिक जीवन में पूर्णतया क्रियान्वित पाते हैं। अपने जीवन के संध्याकाल में भी वह समाज में अपने मौलिक विचारों का निर्भीकता के साथ प्रचार करते नजर आते हैं। अपने विचारों को स्पष्टता के साथ व्यक्त करना उनका एक बड़ा गुण रहा है। आज यद्यपि शरीर कृश हो गया है, परन्तु उनकी विचार-शक्ति उतनी ही तेजस्वी है। आगामी ६ दिसम्बर, १९६५ को श्री बियाणीजी की ७१ वीं वर्षगाँठ मनाई जा रही है और "बियाणीजी : मित्रों की नजर में" शीर्षक ग्रन्थ के रूप में उनके असंख्य मित्र उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं। उनके एक नम्र सहयोगी और अनुयायी के रूप में मैं भी अपनी श्रद्धा के ये कुछ शब्द-प्रसून उनकी सेवा में अर्पित करता हुआ परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि श्री बियाणीजी आयुष्मान हों और चिरकाल तक समाज को उनके तेजस्वी नेतृत्व का लाभ मिलता रहे। ★

राष्ट्रीय जागरण के प्रतीक

लेखक
तारचन्द बिहाणी—पूना
(बैंकर तथा सर्राफ एवं सामाजिक कार्यकर्त्ता ।)

उम्र के ७० वर्ष बीतना दीर्घ जीवन ही कहा जा सकता है और यह सौभाग्य श्री ब्रजलालजी बियाणी जैसे अनोखे व्यक्तित्ववाले को मिला है । यह समाज तथा देश के लिए भी सौभाग्य की बात है । इस दीर्घ जीवन का एक-एक क्षण आपकी राष्ट्र-भक्ति एवं समाज-सेवा की दीप-शिखा है, जो आपके जीवन को निरन्तर प्रज्जवलित करती रही है, जिसके फलस्वरूप आपका जीवन तेजस्वी बना हुआ है । अटूट राष्ट्र-भक्ति एवं अविरत समाज-सेवा के आप जीते-जागते आदर्श हैं जो हर भारतीय आबाल-वृद्ध के निश्चय ही प्रेरणास्रोत हैं । राष्ट्र एवं समाज के हम पर अनन्त ऋण होते हैं, यह महसूस करते हुए राष्ट्र एवं समाज के प्रति अपने कर्तव्यों को ध्यानपूर्वक एवं त्यागपूर्वक निबाहना आवश्यक है । इस ध्येय-दृष्टि को आपने सदैव सन्मुख रखा और अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र एवं समाज को समर्पण किया । सफल जीवन इसी को कहा जा सकता है, और आनेवाली पीढ़ी को सत्प्रेरणा ऐसे ही सफल जीवन से प्राप्त हो सकती है ।

जीवन की कई विशिष्टताएँ होती हैं, जिनके कारण वह सफल एवं सम्पन्न होता है । कई विशेषताएँ होती हैं जिससे वह तेजस्वी होता है । ऐसा ही आपके समग्र जीवन का गहरा अभ्यास करने से अनुभव होता है ।

क्या राजकीय और क्या सामाजिक, क्या राष्ट्रीय और क्या अन्तर्राष्ट्रीय, क्या सांस्कृतिक और क्या तात्विक, हर विषय में आपके विचार गहरे एवं अभ्यास-पूर्ण होते हैं जो आपकी प्रखर मेधा के परिचायक हैं । मात्र विचार ही नहीं, उन्हें जीवन में उतारने की दृष्टि से प्रस्तुत गुत्थियों को सुलझाने के उपाय भी पेश कर देना आपकी विशेषता रही है । सामाजिक एवं राष्ट्रीय जागरण के उन दिनों में कई अवसरों पर आपकी यह शक्ति प्रकट हुई और कठिन समस्याएँ सुलझाने में

अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में भी श्री बियाणीजी ने इसी निर्भीकता के साथ सामाजिक जागरण का शंखनाद किया। श्री बियाणीजी के अध्यक्ष बनने के पूर्व मारवाड़ी सम्मेलन सामाजिक सुधार के कार्यक्रम से अलिप्त था। सम्मेलन के संचालक नहीं चाहते थे कि सामाजिक सुधार के विषयों को लेकर सम्मेलन दलबन्दी का शिकार बने। परन्तु आज के प्रजातन्त्रीय युग में कोई संस्था इस तरह एकांगी नहीं बनी रह सकती, खास तौर पर मारवाड़ी समाज की एक मात्र संस्था—सम्मेलन, जबकि मारवाड़ी समाज उतना प्रगतिशील और समाज सुधार की दृष्टि से समुन्नत नहीं है। श्री बियाणीजी ने मारवाड़ी सम्मेलन के कार्यकर्ताओं को सामाजिक क्रान्ति का संदेश घर-घर फैलाने के लिए प्रेरित किया। आपके सबल नेतृत्व के कारण मारवाड़ी समाज में पर्दा प्रथा के विरुद्ध देशव्यापी आन्दोलन हुआ। अनेक बहिनों और भाइयों का शिष्टमण्डल सारे देश में घूमा। औसर-मौसर, दहेज आदि प्रथाओं के विरुद्ध जनमत जागृत हुआ। श्री बियाणीजी की प्रेरणा से हजारों स्त्री-पुरुषों ने प्रतिज्ञा की कि वे न अपने यहाँ पर्दा रहने देंगे न किसी पर्देवाले विवाह में शरीक होंगे। इस प्रकार की प्रतिज्ञा का यह परिणाम हुआ कि धीरे-धीरे मारवाड़ी समाज से पर्दा प्रथा कम होती गई। आज भी यद्यपि बहुत-सी स्त्रियाँ पर्दा करती हैं परन्तु पर्दे ने जो एक प्रकार के रूढ़ि-धर्म का रूप ग्रहण कर रखा था वह नष्ट हो गया।

श्री बियाणीजी विचार स्वातन्त्र्य के सदा पोषक रहे हैं। उनकी कथनी और करनी में कभी अन्तर नहीं रहा। उन्होंने प्लेटफार्म पर जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया उसे हम उनके पारिवारिक जीवन में पूर्णतया क्रियान्वित पाते हैं। अपने जीवन के संध्याकाल में भी वह समाज में अपने मौलिक विचारों का निर्भीकता के साथ प्रचार करते नजर आते हैं। अपने विचारों को स्पष्टता के साथ व्यक्त करना उनका एक बड़ा गुण रहा है। आज यद्यपि शरीर कृश हो गया है, परन्तु उनकी विचार-शक्ति उतनी ही तेजस्वी है। आगामी ६ दिसम्बर, १९६५ को श्री बियाणीजी की ७१ वीं वर्षगाँठ मनाई जा रही है और "बियाणीजी : मित्रों की नजर में" शीर्षक ग्रन्थ के रूप में उनके असंख्य मित्र उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं। उनके एक नम्र सहयोगी और अनुयायी के रूप में मैं भी अपनी श्रद्धा के ये कुछ शब्द-प्रसून उनकी सेवा में अर्पित करता हुआ परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि श्री बियाणीजी आयुष्मान हों और चिरकाल तक समाज को उनके तेजस्वी नेतृत्व का लाभ मिलता रहे।

★

राष्ट्रीय जागरण के प्रतीक

लेखक
ताराचन्द बिहाणी–पूना
(बैंकर तथा सर्राफ एवं सामाजिक कार्यकर्त्ता ।)

उम्र के ७० वर्ष बीतना दीर्घ जीवन ही कहा जा सकता है और यह सौभाग्य श्री ब्रजलालजी बियाणी जैसे अनोखे व्यक्तित्ववाले को मिला है । यह समाज तथा देश के लिए भी सौभाग्य की बात है । इस दीर्घ जीवन का एक-एक क्षण आपकी राष्ट्र-भक्ति एवं समाज-सेवा की दीप-शिखा है, जो आपके जीवन को निरन्तर प्रज्जवलित करती रही है, जिसके फलस्वरूप आपका जीवन तेजस्वी बना हुआ है । अटूट राष्ट्र-भक्ति एवं अविरत समाज-सेवा के आप जीते-जागते आदर्श हैं जो हर भारतीय आबाल-वृद्ध के निश्चय ही प्रेरणास्रोत हैं । राष्ट्र एवं समाज के हम पर अनन्त ऋण होते हैं, यह महसूस करते हुए राष्ट्र एवं समाज के प्रति अपने कर्तव्यों को ध्यानपूर्वक एवं त्यागपूर्वक निबाहना आवश्यक है । इस ध्येय-दृष्टि को आपने सदैव सन्मुख रखा और अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र एवं समाज को समर्पण किया । सफल जीवन इसी को कहा जा सकता है, और आनेवाली पीढ़ी को सत्प्रेरणा ऐसे ही सफल जीवन से प्राप्त हो सकती है ।

जीवन की कई विशिष्टताएँ होती हैं, जिनके कारण वह सफल एवं सम्पन्न होता है । कई विशेषताएँ होती हैं जिससे वह तेजस्वी होता है । ऐसा ही आपके समग्र जीवन का गहरा अभ्यास करने से अनुभव होता है ।

क्या राजकीय और क्या सामाजिक, क्या राष्ट्रीय और क्या अन्तर्राष्ट्रीय, क्या सांस्कृतिक और क्या तात्विक, हर विषय में आपके विचार गहरे एवं अभ्यास-पूर्ण होते हैं जो आपकी प्रखर मेधा के परिचायक हैं । मात्र विचार ही नहीं, उन्हें जीवन में उतारने की दृष्टि से प्रस्तुत गुत्थियों को सुलझाने के उपाय भी पेश कर देना आपकी विशेषता रही है । सामाजिक एवं राष्ट्रीय जागरण के उन दिनों में कई अवसरों पर आपकी यह शक्ति प्रकट हुई और कठिन समस्याएँ सुलझाने में

आपने सहयोग प्रदान किया। यही कारण है कि आपको देश एवं समाज ने नेतृत्व-पद प्रदान किया, जिसके आप सुयोग्य पात्र हैं।

आपका विनम्र स्वभाव ही आपकी एक अनोखी विशेषता है। आपके पास आनेवाला कितना ही बड़ा व्यक्ति कितने ही जोश से कभी आपसे वार्तालाप करने या कभी विरोध करने सामने आ जाए, वह दूसरे ही क्षण नतमस्तक हो जाता है। यह एक ऐसी विशेषता है जो सम्भवत: लाखों व्यक्तियों में से एकाध में ही पाई जाती है। सामाजिक प्रसंगों पर कई प्रसंगों में हमने यह देखा है और हमें महान आश्चर्य हुआ। विनम्रता की चरम सीमा यदि किसी में देखना है, तो आपकी ही मूर्ति आँखों के सम्मुख उपस्थित होती है।

मधुरवाणी आपको ईश्वर की बहुत बड़ी देन है। इतनी मधुर वाणी कहीं हमारे देखने में नहीं आई, और इससे ईश्वर की आस्तिकता का भी साक्षात्कार हुए बिना नहीं रहता। मधुरवाणी के फलस्वरूप ही आप समाज में अजातशत्रु हैं। आपकी वाणी जब प्रारम्भ होती है तो हमें "माँ सरस्वती" का ही साक्षात्कार होता है। आप जब बोलना प्रारम्भ करते हैं तो श्रोता सुनते थकता नहीं, यह एक अजीब बात है। सुननेवाला मन्त्रमुग्ध हो जाता है। जब वक्तृत्व की अमृतधारा बहती है तो श्रोता उसके अन्त न होने की कामना करता है। मधुरवाणी, शान्त और बोधगम्य वक्तव्य, मेधावी शक्ति खोजपूर्ण शैली में विषय प्रतिपादन करने की विशिष्टता आदि पर जिस प्रकार आपका पूर्ण अधिकार है, इसे एक दैवी शक्ति ही कहा जाएगा।

आपका सात्विक आहार और उसकी मात्रा तथा नियमितता भी आपके व्यक्तित्व को ऊँचा करने में सहभागी बने हैं। सात्विक अन्न ही सात्विक भाव उत्पन्न करने में सहायक होते हैं, यह 'श्री मद्भगवगीता' का बहुमूल्य सन्देश आपने आत्मसात् कर दिखाया है। आपकी यह अमूल्य निधि है, जिसका अनुसरण हुआ तो दुनिया के हिंसात्मक भाव नष्ट हो सकेंगे, ऐसी मेरी धारणा है। इस दिशा में आपका कार्य अवश्य ही सभी को अनुकरणीय है। आपके दीर्घ जीवन में आपका स्वास्थ्य भी इसी से टिका हुआ है जिसके कारण आपकी अखण्ड सेवाएँ देश एवं समाज को प्राप्त हो सकी हैं। संयमशीलता के आप मूर्तिमन्त प्रतीक हैं।

आपके तन-मन-धन त्याग के सम्बन्ध में तो कहना ही क्या है? त्याग ही सफलता की एवं लोकप्रियता की कुंजी होती है। किसी भी प्रकार के लोभ एवं मोह की किञ्चित भी अपेक्षा जहाँ नहीं होती है, आदर एवं सम्मान अपने आप ही चले आते हैं। आपके सम्बन्ध में भी यही बात शत प्रतिशत लागू होती है। पूरे जीवन-भर आपने इसका परिचय दिया है। यह आपके लिए विशेष गौरव का

विषय है। राष्ट्रीय जागरण के हर समय आपने यह सिद्ध कर दिखाया है और अतुल कष्ट भी सहे हैं। राष्ट्र एवं समाज पर आपके अनन्त उपकार हैं।

आप जब भी पूना पधारे हैं, आपने हमें सदैव मार्गदर्शन प्रदान किया है और प्रेरणा दी है। आपके व्यक्तित्व को मैंने कई बार अपनी आँखों से देखा है और आपकी प्रसन्न मूर्ति हमारे सामने बराबर आती रहती है। हम सदैव चाहेंगे कि बार-बार आप अपने दर्शन एवं मार्गदर्शन से हमें उपकृत करते रहें। ईश्वर आपको शतायु करे, यही मेरी कामना है।

★

माननीय बियाणीजी : सेवक तथा साहित्यिक

लेखक
डॉ० एन. एम. कैलास–बम्बई
(शिक्षा उपमंत्री, महाराष्ट्र राज्य।)

मा. बियाणीजी की जीवन के विविध क्षेत्रों की सेवाएँ सर्व परिचित हैं। उनका राष्ट्रीय आन्दोलन में अपना अलग स्थान रहा है तथा उन्हें भारत के सभी कार्यकर्ता राजनैतिक नेता के नाते जानते हैं। उनके संगठन कुशलता, लोकसंग्रह की वृत्ति, मधुर संभाषणकला, श्रोताओं को आकृष्ट करनेवाली भाषाशैली आदि गुण ख्याति प्राप्त हैं, और इसीलिए उनके नेतृत्व का एक वैभवशाली युग विदर्भ के इतिहास में संस्मरणीय रहेगा।

मैं मा. बियाणीजी के सेवा के विविध क्षेत्रों में से सामाजिक सेवा के क्षेत्र को बहुत महत्वपूर्ण मानता हूँ। अखिल भारत भर के राजस्थानी समाज में वे स्वतन्त्रता युद्ध के तपे हुए सेनानी के नाते जितने पहचाने जाते हैं, उतनी ही उनकी ख्याति क्रान्तिकारी समाज-सेवक के रूप में है। सामाजिक क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने के हेतु उन्होंने अव्यवहृत प्रयत्न किया है, तथा सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध खुला विद्रोह करनेवाले सेनानियों में से वे एक रहे हैं। महिलाओं में शिक्षा का प्रसार, विवाह पद्धति में सुधार, नई शिक्षा संस्थाओं का प्रसार तथा दहेज आदि सामाजिक तत्वों का निराकरण ये उनके खासतौर पर काम करने के क्षेत्र रहे हैं। उनके इन्हीं क्रान्तिकारी विचारों के कारण एक समय तो उनके जीवन में ऐसा भी आया जब उन पर बहिष्कार रखने की कार्यवाही समाज के सनातनी अंग द्वारा करने की कोशिश की गई। किन्तु विदर्भ के राजनैतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में उनका प्रभाव इतना था कि इस कार्यवाही का कुछ खास परिणाम नहीं निकला। सामाजिक सुधार जैसे अनेक कार्यक्रमों को उन्होंने अपने स्वयं के कुटुम्ब से प्रारम्भ किया। समाज-सुधार के क्षेत्र में जिन कार्यकर्ताओं को कार्य करना होता है उनके लिए समाज यह कसौटी लगाता है कि वे स्वयं उन तत्वों को अमल में लाते हैं या नहीं जिनका वे प्रचार करते हैं। यदि इस कसौटी पर कार्यकर्त्ता या नेता सफलतापूर्वक

उत्तीण नहीं हुआ तो उसके प्रभाव को अवश्य खग्रास ग्रहण लगता है। मा. बियाणीजी ने स्वयं के जीवन में इन समाज-सुधार के तत्वों को अमल में लाकर यह सिद्ध कर दिया कि उन तत्वों को कितना महत्व देते हैं। मेरी मालूमात के अनुसार उन्होंने जबसे यह निश्चित किया है कि वे उन विवाह समारोहों में उपस्थित नहीं होंगे जहाँ पर्दा-पद्धति के अनुसार विवाह-विधि होगी, तब से वे ऐसे किसी भी समारोह में नहीं गए। निकट सम्बन्धियों के विवाहों के सम्बन्धों में भी उन्होंने इस तत्व का बड़ी बारीकी से पालन किया। अपनी दोनों कन्याओं को उन्होंने उच्च शिक्षा प्रदान करने की पूरी सुविधाएँ दीं तथा उनको विवाहों में पर्दा-पद्धति का त्याग करने के लिए प्रोत्साहित किया। उनकी सुविद्य पुत्रियाँ आज समाज की अग्रगण्य सुधारक महिलाओं में से हैं। उन्होंने अपने पुत्र को भी अति उच्च शिक्षा दी तथा विकास के सभी साधन प्रदान किए। अपने व्यस्त राजनैतिक जीवन में भी उन्होंने सामाजिक सभा-समारोहों तथा सम्मेलनों में उपस्थित होकर बड़ा ही प्रभावशाली मार्ग-दर्शन देकर राजस्थानी समाज को स्पष्ट तथा निर्भीक मार्गर्शन किया और समाज सुधार के मूलगामी क्षेत्र में उन्नति की ख़ातिर अपना पूरा सहयोग प्रदान किया। मैं नहीं समझता कि मा. बियाणीजी की समाजसेवाओं को राजस्थानी समाज कभी भूल सकता है। बल्कि मैं तो यह कहूँगा कि उन्होंने अपने राजनैतिक क्षेत्र के नेतृत्व के कारण राजस्थानी समाज को दूसरे समाजों के बहुत निकट लाने का तथा एक नया सामंजस्य निर्माण करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। राजस्थानी समाज में भी बियाणीजी जैसा प्रभावशाली नेता निर्माण होने के कारण स्वाभावत: ही उस समाज का देश में तथा दूसरे समाजों के बीच गौरव बढ़ा और यह घटना हम सभी के लिए गौरव तथा अभिमान की रही है। मुझे तो ऐसा भी लगता है कि हमने सामाजिक स्तर पर उनकी जो कद्र करनी चाहिए थी उतनी नहीं की। राजस्थानी समाज के नवयुवकों के समक्ष श्री बियाणीजी का जीवन तथा कार्य एक आदर्श तथा अनुकरणीय है, और नवयुवक उससे उचित मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

मा. बियाणीजी की दूसरी विशिष्टता भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। अन्य राज-नैतिक नेताओं के लिए शायद यह अंग सर्व सामान्य नहीं है। वे राजनैतिक नेता होने के साथ ही एक बड़े सृजनशील साहित्यिक के नाते भी हमारे सामने हैं। उनके भाषण जितने मधुर तथा प्रभावशाली होते हैं उतनी ही उनकी लेखशैली तथा उसके साहित्यिक मूल्य प्रभावशाली हैं। पत्र-पत्रिकाओं में अनेक सामाजिक विषयों की मूल्यवान सामग्री आप अपने लेखों के द्वारा समाज को देते हैं। बावजूद इसके

भी उनकी जो कलाकृतियाँ हैं उनकी साहित्यिक क्षेत्रों में काफी सराहना हुई है। उनकी प्रमुख रचना 'कल्पना-कानन' में उनके तमाम साहित्यिक गुण एक समूह में दिग्दर्शित हैं। उनकी कल्पनाशक्ति बड़ी सजग तथा संवेदनशील है। आधुनिक निबन्धों के क्षेत्र में 'कल्पना-कानन' का प्रमुख महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी कल्पना की उड़ान, भाषा की सरलता तथा काव्यमयता और विचार करने का अनोखा ढंग देखने से पाठक आश्चर्यचकित होता है। उनकी कृतियों में जो लालित्य देखा जाता है उसकी तुलना सरिता के अखण्ड निर्मल प्रवाह से ही की जा सकती है। वे अपनी सरल तथा प्रभावशाली भाषा का सृजन करते हैं, जिसके माध्यम से पाठक एक नए कल्पना-लोक में पहुँच जाता है। निरीक्षण की सूक्ष्मता तथा संवेदनशक्ति की गहराई उनकी लेखन की विशिष्टता है। मैं अपेक्षा करता हूँ कि उनके स्वास्थ्य में आवश्यक सुधार होने पर साहित्य को अमूल्य उपलब्धि होगी। मैं इस अभिनन्दन ग्रन्थ के अवसर पर उनके आरोग्य के लिए भगवान से प्रार्थना करता हूँ। ★

बियाणीजी : असाधारण व्यक्तित्व

लेखक
देवकिशन सारडा–सिन्नर (नासिक)
(प्रधान बीड़ी उद्योगपति; विविध क्षेत्रों के सार्वजनिक कार्यकर्ता; साहित्यिक अभिरुचि ।)

विशिष्टता का आकर्षण साधारणतया हर व्यक्ति को रहता ही है । यह विशिष्टता किसी भी रूप में हो सकती है । किसी स्थान में दर्शनीयता को लेकर विशिष्टता होगी, किसी काव्य में नाद मधुरता की विशिष्टता होगी, किसी फल में स्वाद की विशिष्टता हो सकती है तो किसी फूल में गन्ध की । विशिष्टता के यही अलग-अलग रूप अलग-अलग व्यक्तियों में अलग-अलग प्रकार से दिखाई देते हैं । मान्यवर भाईजी के व्यक्तित्व की विशिष्टता अनेकों ने उनके वक्तृत्व में देखी है। स्वाभाविक है कि उनकी वक्तृत्व-विशेष के आकर्षण ने मुझ अपरिचित व्यक्ति को भाईजी का प्रथम परिचय कराया ।

लगभग ७-८ वर्ष पूर्व मुझे यह अवसर मिला था । जलगाँव नगरपालिका द्वारा किसी प्रतिमा के उद्‌घाटन के लिए भाईजी को आमन्त्रित किया गया था, और केवल इसलिए कि उनके बहु-चर्चित वक्तृत्व के श्रवण का लाभ मिलेगा, मैं सिन्नर से जलगाँव गया था । वहाँ पूरा दिन मैंने जलगाँव में भाईजी के अलग-अलग भाषण सुनने में ही बिताया । अलग-अलग जगह पर, अलग-अलग विषय को लेकर, अलग-अलग प्रकार के श्रोताओं के सामने और अलग व्यक्तियों द्वारा अपने विचारों का निश्चयपूर्वक समर्थन अपने अत्यन्त मृदु तथापि अत्यन्त प्रभावी वक्तृत्व द्वारा करते हुए भाईजी का मैंने प्रथम बार दर्शन किया ।

उस समय के उस कार्यक्रम की पार्श्वभूमि विशेष राजकीय परिस्थिति के कारण विशेष रोमांचक थी । संयुक्त महाराष्ट्र की माँग को लेकर पूरे महाराष्ट्र में आन्दोलन की स्थिति थी । महाविदर्भ का अलग नारा लगाकर भाईजी ने इस माँग में एक भारी बाधा-सी उपस्थित कर रखी थी । संयुक्त महाराष्ट्र के एक अभिजात शत्रु इस नाते भाईजी के नाम का परिचय महाराष्ट्रीय पत्रकार जनता

को करा रहे थे। हर रोज किसी-न-किसी वृत्तपत्र में जो थोड़े नामों को लेकर कटु-तम आलोचनाएँ की जाती थीं, उसमें भाईजी का नाम भी एक प्रमुख स्थान रखता था। और इसी संघर्ष के बीच उनका जलगाँव में आगमन हो रहा था। शहर में अलग-अलग समारोहों की तैयारियों के साथ ही अनेक प्रदर्शनों की तैयारियाँ भी बड़े धूमधाम से हो रही थीं। भाईजी के आगमन के सुप्रभात में जलगाँव और भुसावल दोनों शहरों में एक सन्नाटा-सा छाया हुआ था। ऐसी विकट अवस्था को जानते हुए एक आमन्त्रण का निमित्त-सा बनाकर वहाँ आने का निर्णय करनेवाले भाईजी के स्वभाव की संघर्षप्रियता एवं आत्मविश्वास का परिचय स्पष्ट रूप से मिलता है।

जलगाँव के अनेक प्रतिष्ठानों द्वारा एवं संयुक्त महाराष्ट्रवादी निर्देशकों के काले झण्डों से भाईजी का उस दिन भुसावल के एक स्थान पर स्वागत हो रहा था। वहाँ का स्वागत समारोह समाप्त करके भाईजी को लेकर लोग जलगाँव पधारे। आते ही और अधिक उत्साह से फिर एक बार काले झण्डों की सलामी उन्हें दी गई। करीब दस बजे जलगाँव नगरपालिका द्वारा आयोजित प्रथम समारोह में भाईजी उपस्थित हुए। सैंकड़ों निर्देशक अपने काले झण्डों को दिखाते हुए इस निश्चय से खड़े थे कि वे आज किसी हालत में भाईजी का भाषण न होने देंगे। आमन्त्रक चिन्तित थे। वे कुछ मिनट अस्वस्थता से परिपूर्ण थे। तथापि इस परिस्थिति में भी भाईजी कतई चिन्तित नज़र नहीं हुए। सभा में उनका भाषण शुरू होने के समय एक भीषणता जैसा प्रतीत हो रहा था। लेकिन अपनी विशिष्ट पद्धति से अपनी मृदु भाषा से अत्यन्त सरल लेकिन मर्मग्राही भाषा में निर्देशकों को सम्बोधित करते हुए भाईजी ने आत्मविश्वासपूर्वक अपना भाषण शुरू किया। सामने बैठे शान्त श्रोताओं को यह पता भी नहीं चल पाया कि बड़ी-बड़ी गर्जना और घोषणा करनेवाले निर्देशक कब और कहाँ गायब हो गए। लोगों के देखते-देखते थोड़ी ही देर के अन्दर निर्देशकों में से कुछ तो मैदान छोड़कर चले गए थे या सभा के जनसमुद्र में शामिल हो चुके थे। देखते-देखते सारा वातावरण बर्फ के पानी में रूपान्तरित हो गया। इस प्रकार सब मामला ठण्डा हो चुका था। बाद में क़रीब एक घण्टे तक भाईजी के वक्तृत्व का प्रवाह संयुक्त महाराष्ट्र जैसे प्रबल आन्दोलन की तुलना में चलता रहा और श्रोतागण बड़े प्रभावित हो रहे थे। आज ऐसा प्रतीत होता है कि मानो अभी-अभी सारा काण्ड घटित हुआ हो।

श्री बियाणीजी की असाधारण भाषण कला जिसमें मन्त्र-मुग्ध करने की अद्-भुत क्षमता है, इसका परिचय मुझे उस दिन मिला था। इसके बाद तो मैं शीघ्र

ही उनके अधिक निकट आने का अवसर पा गया। सन् १९५८ के शायद मई या जून के माह में भाईजी स्वास्थ्य लाभ करने के लिए देवलाली में विश्राम कर रहे थे। यह मालूम होने पर मैं अपने मित्र को साथ लेकर उनके पास पहुँचा और सिन्नर आने का अनुरोध किया। विशेष परिचित न होते हुए भी बिल्कुल बिना टाल-मटोल किए उन्होंने सिन्नर आने का मेरा निमन्त्रण स्वीकार किया। दूसरे दिन सौ० सावित्रीदेवीजी के साथ वे सिन्नर पधारे। करीब दो घण्टे तक रुके। उनके विषय पर वार्तालाप होता रहा। जिसमें यह देखने को मिला कि किसी भी विषय पर बनाया हुआ विचार भाईजी कितनी गहराई से सोचकर बनाते हैं। एक परास्त दृष्टिकोण से परिस्थिति का परिवर्तन न देखते हुए वह परावर्तन अनिवार्य है यह जानकर और मानकर स्थिति के प्रवाह के साथ चलने का प्रयास व्यक्ति को करना चाहिए यह उस दिन के वार्तालाप में भाईजी के द्वारा व्यक्त किया हुआ सूत्र था।

उसके बाद मैंने अनुभव किया कि भाईजी पत्र-व्यवहार करने में कितने तत्पर हैं। देवलाली से लौटने पर शायद तीसरे ही दिन सिन्नर बुलाने के लिए आभार प्रदर्शन का पत्र आया। वह पत्र पाकर मैं कुछ स्तम्भित-सा हो गया। आदमी बहुत बड़े काम करने के कारण बड़े माने जाते हैं। ऐसी मेरी अल्प मति के अनुसार अनुमानित बड़प्पन था। लेकिन नित्य व्यवहार की छोटी-छोटी बातों में भी असामान्य व्यक्ति अपनी विशेषताएँ रखते हैं, यह मुझे तब मालूम हुआ। और फिर इस बात का अनुभव मैं आज तक करता आया हूँ। मेरी तरफ से शायद महीने दो महीने एक पत्र लिखने में लग जाए, लेकिन भाईजी की तरफ से जवाब आने में लगनेवाला समय बिलकुल नियत-सा है। कभी उस समय में वृद्धि हुई तो मैं यह निःशंक समझ लेता हूँ कि या तो भारतीय डाक विभाग ने अपनी तत्पर सेवा का परिचय दिया है अथवा कोई विशेष बात है जिसने भाईजी के नित्यक्रम में बाधा उपस्थित की है। अन्यथा, भाईजी भले जेल ही में हों, रुग्णशय्या पर या प्रवास में हों, पत्र का जवाब तो यथासमय आने ही वाला है।

कई बार मैं भाईजी का आतिथ्य पाने के लिए अकोला में भी गया हूँ। कई बार केवल पत्र से भाईजी के किसी विशिष्ट विचार पर अपना मतभेद प्रकट करने की धृष्टता भी कर चुका हूँ। लेकिन उनके व्यवहार में वह बात नज़र नहीं आई जो साधारणतया अपेक्षित होती है। अपने से कम तथा उनके विचारों की, परामर्श करने की विशिष्ट पद्धति प्रायः उनमें मुझे देखने को मिलती है। यह पद्धति किसी भी विचार पर या बात पर अधिक गम्भीरतापूर्वक विचार करने से उसका अधिक्षेप

या विक्षेप करने में अधिक विश्वास रखती है। भाईजी को इस पद्धति का अवलम्बन करते हुए मैंने कभी नहीं पाया। विचारों का अधिक्षेप विचारों ही से प्रकट करने का मेरा प्रयास भाईजी को नाराज़ न करेगा। इतना ही नहीं बल्कि नगण्य व्यक्ति से प्राप्त विचार भी अगर अधिक उपयुक्त मालूम होगा तो निस्संकोच भाईजी ने इसे स्वीकार किया है। इसी कारण आयु का अधिकांश भाग जिस नाम से व्यतीत किया उसमें उचित सुधार करने का निर्णय भाईजी कर सके। इससे कोई यह मतलब न निकाले कि भाईजी के विचार चंचल होते हैं या वे बार-बार बदलते रहते हैं। उनके विचारों में फर्क होना इतना आसान नहीं है, लेकिन यह भी निश्चित है कि वह असम्भव भी नहीं है।

अधिक तो क्या लिखूँ ? भाईजी के जीवन के अभूतपूर्व पर्व देखने का भाग्य तो मैंने नहीं पाया कि जिन पर्वों में भाईजी के व्यक्तित्व का निर्माण और विकास हुआ है। मैंने तो उस उत्तुंग व्यक्तित्व के कुछ पहलुओं को देखने का और अनुभव करने का छोटा-सा सौभाग्य पाया है। इतना पहलूदार जीवन इने-गिने व्यक्ति ही व्यतीत कर सकते हैं। जीवन के विभिन्न अंगों में से किसी दो-चार पहलुओं की समृद्धता तो सभी जगह व अनेक व्यक्तियों में देखने को मिलती है। लेकिन हरेक परिचित पहलू पर प्रमाणबद्धता से समृद्ध बनाकर समुचित जीवन को तेजस्वी बनाने में बहुत ही कम लोग कामयाब हुए हैं। सदियों तक भाईजी का जीवन समाज के सामने भव्य और दिव्य बनकर आगत पीढ़ी के इतिहास तथा नवयुवकों के लिए प्रकाश स्तम्भ सिद्ध होगा। वे अपने जीवन की दिशा निर्दिष्ट करेंगे और तूफान से बवण्डरों को साहस के साथ झेलते हुए सदा अपनी दृष्टि अपने प्रेरणा केन्द्र (श्री बियाणीजी) पर स्थिर रखेंगे; इसमें मुझे किंचित मात्र भी सन्देह नहीं है।

★

समाजसेवी तथा स्वतन्त्रता सेनानी भाईजी

लेखक
काशीनाथजी अग्रवाल—धूलिया
(उद्योगपति और व्यवसायी; भूतपूर्व सदस्य, बम्बई विधान परिषद; कांग्रेस के सार्वजनिक कार्यकर्ता ।)

पूज्य भाईजी के प्रथम दर्शन का लाभ सन् १९३३ में जब मैं पूना के कालेज में पढ़ता था तब हुआ । वहाँ पर होनेवाली अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन में वे पूना पधारे थे । उस समय हमारे बोर्डिंग के विद्यार्थियों के सामने आपका एक छोटा-सा भाषण हुआ । उस वक्त आपने जो कुछ उपदेश हमें दिया, वह आज तक जीवन में बहुत सहायक रहा ।

मेरा राजकीय तथा सामाजिक कार्य बहुत सीमित होने के कारण पूज्यनीय भाईजी से मेरा घनिष्ट सम्बन्ध कुछ कम रहा । फिर भी एक पक्ष के और एक विचारधारा के कारण कभी-कभी मिलने का अवसर प्राप्त होता रहा । सन् १९४७ में आप मालेगाँव काकाणी चित्र मन्दिर के उद्घाटन के लिए पधारे थे । तब आपको एकदम निकट से देखने का अवसर मिला । सन् १९५० में अखिल भारतीय कांग्रेस नासिक अधिवेशन में आप पधारे थे । उस समय वहाँ राजस्थानी सम्मेलन में आपका प्रभावशाली भाषण हुआ । श्रोतागण पर आपके ओजस्वी भाषण का गहरा असर पड़ा । विदर्भ जब बम्बई राज्य में सम्मिलित किया गया और एक बड़ा द्विभाषी बम्बई राज्य बना, तबसे आपसे मेरा काफी परिचय हुआ । सन् १९५७ में हमारे शहर के म्युनिसिपलटी के चुनाव में हमने कांग्रेस पार्टी की ओर से मालेगाँव के स्व० भाऊ साहब हिरे की अध्यक्षता में आपका एक भाषण आयोजित किया था । उस सभा में मालेगाँव के करीब सभी स्तर के चालीस हजार आदमी हाजिर थे । भाईजी का भाषण करीब ढाई घण्टे हुआ । सभी लोग आपकी ओजस्वी वाणी से प्रभावित हुए । मेरे मित्र स्व० भाऊ साहब हिरे ने तो कहा कि यह आदमी तो बड़ा बुद्धिशाली और युक्तिवादी मालूम होता है । मैं नहीं जानता था कि आपकी वाणी में इतना प्रभाव होगा । इसके बाद फिर हमने सन् १९६३ के गणेश उत्सव

में आपका कार्यक्रम रखा था। सुबह ६ बजे से रात ११ बजे तक आपके करीब ७-८ जगह व्याख्यान हुए। हर सभा में आपने नए-नए विषय पर प्रकाश डाला। मालेगाँव की जनता आपके भाषणों से बहुत प्रभावित हुई।

यह तो हुई आपकी बुद्धिमत्ता और भाषण-शैली की बात। देश की आज़ादी के लिए आपने जो कुछ त्याग किया और देश-सेवा की, वह सबको मालूम ही है। विदर्भ की जनता आपको कितना चाहती थी यह तो आप अखण्ड १५-२० साल तक विदर्भ प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहे, इसी से स्पष्ट होती है।

राजस्थानी समाज की भाईजी ने अनमोल सेवा की है। पूज्य जमनालालजी बजाज तथा श्रद्धेय जाजूजी के बाद, राजस्थानी समाज को उनके ही मार्गदर्शन का सहारा रहा। डूबते हुए समाज को बचाने के लिए इन्होंने जो अथक परिश्रम किया उसका ऋण राजस्थानी समाज नहीं भूल सकता।

इतनी उम्र में भी आपमें अदम्य उत्साह और काम करने की तत्परता नौजवानों को शर्मिन्दा करनेवाली है।

अपनी उम्र और शारीरिक दुर्बलता, नए-नए काम शुरू करने में आपकी कभी बाधक नहीं हुई। 'विश्व-विलोक' का आरम्भ करते हुए भाईजी से मैंने यही बात कही थी, लेकिन उन्होंने यही जवाब दिया कि मैं अभी एकदम तन्दुरुस्त हूँ, और इस पत्र का मुझ पर कोई भार नहीं है। लेकिन उनके प्रति पूरा आदर रखते हुए भी मुझे यह कहना पड़ता है कि हमारे नेतागण यदि कार्य का इतना बोझ इस उम्र में न उठावें तो उनका मार्गदर्शन का लाभ समाज को और देश को लम्बे समय तक मिलता रहेगा।

समाज तथा देश के प्रति जिस लगन से, उत्साह से, और निष्ठा से आपने कार्य किया है, वह इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा और आनेवाली पीढ़ी को उससे हमेशा प्रेरणा मिलती रहेगी। ★

बियाणीजी का साहित्यिक रूप

लेखक
व्यौहार राजेन्द्रसिह—जबलपुर
(रईस; सार्वजनिक कार्यकर्ता; हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक।)

संसार में भिन्न-भिन्न योग्यताओं और प्रवृत्तियों के मनुष्य पाए जाते हैं, यही विश्व-विधाता की कुशलता अथवा विश्व-प्रकृति का वैचित्र्य है। इसी विभिन्नता के कारण विश्व-वाटिका रंग-बिरंगे फूलों से सुसज्जित होने के कारण मनोहारिणी बन गई है।

कुछ लोग केवल साहित्य सृजन में कुशल होते हैं, कुछ में वक्तृत्व शक्ति प्रबल होती है। कुछ लोग व्यवहार-कुशल होते हैं और कुछ सिद्धान्तों में अटल। कुछ लोगों की मनोवृत्ति तात्विक होती है, और कुछ लोगों की राजनैतिक। कुछ बिरले ही लोग ऐसे होते हैं, जिनको दोनों में कुशलता प्राप्त होती है और विभिन्न प्रवृत्तियों का समावेश होता है।

श्री ब्रजलालजी बियाणी ऐसे ही विशेष व्यक्तियों में से हैं, जिनकी रुचियाँ बहुमुखी हैं, जिनमें विभिन्न प्रकृतियों का मिश्रण है, और जो विभिन्न क्षेत्रों में एक समान योग्यता और कुशलता के कार्य कर सकते हैं। मैंने उनके निकट सम्पर्क में रहकर उनकी प्रकृति और विकृति, रुचियों और मानसिक वृत्तियों, विभिन्न प्रवृत्तियों और कार्यक्षेत्र का सूक्ष्म निरीक्षण करके ये निष्कर्ष निकाले हैं। वैसे तो प्रत्येक मनुष्य में गुण-दोषों का होना स्वाभाविक है, तुलसीदासजी ने कहा है:—

"विधि प्रपंच गुन अवगुन साना।"

हम भी गुण-दोषमय मानव हैं, इसलिए हमें गुण-दोषमय मानव ही प्रिय है। मानव में यह भी विशेषता है कि वह अपने गुणों का सम्वर्धन और दोषों का निराकरण कर सकता है। महापुरुष वही है, जिसमें इस प्रकार की क्षमता हो, जो अपने गुणों की अपेक्षा दोषों को अधिक पहचाने और जीवन भर उन्हें दूर करने का प्रयत्न करता रहे। अक्सर हम देखते हैं कि मित्रों की दृष्टि मित्र के गुणों ही की

ओर जाती है, और शत्रुओं की दृष्टि केवल दोषों की ओर। मित्र का लक्षण भी यही बताया गया है कि:—

"गुन प्रगटहिं अवगुनहिं दुरावा।"

अत: एक मित्र के नाते स्वभावत: मेरी दृष्टि पक्षपातपूर्ण हो सकती है, तो भी मैं निष्पक्ष रूप से विवेचन करने का प्रयत्न करूँगा।

श्री बियाणीजी में मुझे जो सबसे बड़ा गुण दीख पड़ा, वह यही है कि वे अपने दोषों को जानते हैं और मित्रों के सामने प्रगट करने में कभी संकोच नहीं करते। साथ ही वे मित्रों के दोषों को भी जानते हैं, और उन्हें एकान्त में अपने ही दोषों के समान दूर कराने का प्रयत्न करते हैं, यह भी दोष दर्शन की दृष्टि से नहीं, किन्तु दोष-परिहार की दृष्टि से।

विविध कार्यों में व्यस्त रहने के कारण न हम अपने मित्रों को जान सकते हैं और न शत्रुओं को पहचान सकते हैं, बल्कि यह देखा जाता है कि अपना काम निकालने के लिए शत्रु भी ऊपर से मित्रता का व्यवहार करने लगते हैं और हम उन्हें नहीं पहचान पाते। साथ ही खरी-खरी हितचिन्तन की बातें कहनेवाले मित्र के सम्बन्ध में भी हमें गलतफहमियाँ हो जाती हैं। श्री बियाणीजी में अपने मित्रों और शत्रुओं दोनों को पहचानने की प्रखर बुद्धि है, किन्तु मित्रों के साथ आत्मीयता का और शत्रुओं के साथ सौम्यता का बर्ताव करने में भी वे कुशल हैं।

राजनीति तथा लोक-व्यवहार में अकारण ही और कभी-कभी सकारण भी, लोग शत्रु बन बैठते हैं। विश्व-प्रपंच में यह रोका नहीं जा सकता। कोई अजात-शत्रु बनकर पैदा तो हो सकता है, किन्तु, अजातशत्रु रहकर मरना बड़ी कठिन बात है। जीवन के लिए इसका अनुभव तो हम नहीं कर सकते और मरने के बाद तो और भी नहीं कर सकेंगे। हम केवल यह कर सकते हैं, कि अपनी ओर से सबके प्रति मैत्री भाव रखें, और सद्भाव तथा सभ्यता के साथ सबके साथ व्यवहार करें। श्री बियाणीजी में मैंने यह बात पाई है। जो जिस रुचि का होता है, उस समान रुचिवाले मित्र को खोजता है। संस्कृत में सुभाषित है:—

"समान शील व्यसनेषु सख्यम्।"

अंग्रेजी में भी कहावत है:—

"Birds of the same feather flock together."

एक साहित्यिक के नाते मैं भी साहित्यिक रुचि रखनेवाले मित्रों की खोज में रहता हूँ, और इसी कारण श्री बियाणीजी से पहले परिचय, फिर सम्पर्क और अन्त में घनिष्टता स्थापित हो गई। उसका अवसर जेल जीवन में ही अधिक प्राप्त हुआ।

राजनैतिक जीवन में व्यस्त रहने के कारण साहित्य सृजन करने का अवसर जेल के बाहर बियाणीजी को नहीं मिल सका। जेल के एकान्त और शान्त वातावरण में इसका पूरा अवसर मिला। नागपुर जेल में भी उतना शान्त वातावरण और सुविधाएँ प्राप्त नहीं हो सकीं, जो हम लोगों को सन् १९४२ में मद्रास प्रान्त के वैलोर जेल में मिलीं। इस आन्दोलन में जेल जीवन की कोई अवधि तो थी नहीं। श्री विनोबाजी भी हम लोगों के साथ थे। उन्होंने सलाह दी कि जब तक युद्ध चलता है, तब तक हम लोगों को यहीं रहना पड़ेगा, हमें भी बाहर जाने की कोई जल्दी नहीं है। अतः आप लोग निश्चिन्तता के साथ चिन्तन-मनन और साहित्य सेवा के लिए पंचवर्षीय योजना बनाकर इस अलभ्य लाभ का सदुपयोग कीजिए। हम लोगों ने मन ही मन सोचा कि विनोबाजी हम लोगों को भी अपने ही समान त्यागी और संन्यासी बनाना चाहते हैं। पर हम तो ठहरे अवसरवादी त्यागी।

इच्छा हो या अनिच्छा से, जेल जीवन का समय काटना ही था। इससे हम लोगों ने सोचा कि साहित्य-सृजन ही क्यों न किया जाय। उस दिशा में प्रेरित करनेवाले श्री विनोबाजी और सलाह देनेवाले काका कालेलकर सरीखे पुरुषों के साथ में होते हुए यदि इस समय हम लोग लेखन कार्य न करेंगे, तो ऐसा अवसर कब मिलेगा? दूसरे साथी समय काटने के अनेक उपाय करते थे। कोई ताश खेलकर, कोई विभिन्न व्यंजन बनाकर, कोई टैनिस आदि खेलकर, कोई अधिक से अधिक सोने का प्रयत्न करके अपना समय काटते थे। बहुत से लोग भिन्न-भिन्न भाषाएँ सीखने-सिखाने में अपना समय लगाते थे। हम लोगों ने भी दक्षिण की एक भाषा सीखना और उसके बदले में उत्तर भारत की एक-एक भाषा दक्षिणी मित्रों को सिखाना शुरू किया। विनोबाजी ने तो दक्षिण की चारों भाषाएँ एक साथ सीखना शुरू किया। उनकी अद्‌भुत धारणा शक्ति की कोई बराबरी नहीं कर सकता। विनोबाजी के कथनानुसार हम चार-पाँच मित्रों ने अध्ययन और लेखन कार्य की योजनाएँ बनाईं। यद्यपि उसके पहले छूट जाने के कारण पंचवर्षीय योजना पूरी नहीं हो पाई, किन्तु योजनाबद्ध कार्य अवश्य हुआ। सेठ गोविन्ददासजी ने १०० नाटक पूरे करने का निश्चय किया। ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान ने 'कृष्णावतार' काव्य हाथ में लिया और मैंने उपन्यास और नाटक लिखने का नया उद्योग आरम्भ किया। श्री बियाणीजी ने कहा कि मैं कोई साहित्यिक नहीं हूँ, और न आप लोगों के समान कोई योजना बनाऊँगा, मेरी जो इच्छा होगी पढ़ूँगा और जो कल्पना में सूझेगी, वह लिखूँगा और अन्त में उनका 'कल्पना-कानन' निबन्ध-संग्रह तैयार हो गया।

हम लोगों ने एक बात और की, कि दिन में जो कुछ लिखते, उसे रात में एकत्रित होकर एक दूसरे को सुनाते थे। उसे केवल चुपचाप सुनते ही नहीं थे, किन्तु एक दूसरे की कड़ी से कड़ी आलोचना भी करते थे। इस आलोचना के समय मैंने देखा कि बियाणीजी की आलोचक दृष्टि कितनी पैनी और सूक्ष्म थी। एक दूसरे की आलोचना में स्वभावतः खूब आनन्द आता और हम लोग भर पेट हँसते थे। ये क्षण उस जेल-जीवन को अट्टहासों से भर देते थे। बियाणीजी की खरी आलोचनाओं को सुनकर मुझे उनका यह कहना ठीक नहीं जँचा कि वे साहित्यिक नहीं हैं।

उनके निबन्धों को उस समय सुनने और बाद में पुस्तक रूप में पढ़ने से उनकी यह बात गलत सिद्ध हुई। एक साहित्यिक जिस सूक्ष्मता से अपने आसपास की वस्तुओं का निरीक्षण करता है, लोक-व्यवहार को निरखता-परखता, ग्रन्थों का स्वाध्याय करता, अपने अनुभवों को जिस सरल और सरस शैली में व्यक्त करता है, ये सब बातें हमें बियाणीजी के छोटे से छोटे और बड़े से बड़े निबन्धों में मिलती है। जीवन के प्रति उनका जो यथार्थवादी दृष्टिकोण है, वह उनके साहित्य में प्रचुर मात्रा में प्रकाशित होता है। उनका सहज विनोद और तीखा व्यंग जो उनके नित्य जीवन का अंग है, वह उनके लेखों में और अधिक स्पष्ट व सरस होकर प्रकट होता है। छोटी-छोटी घटनाओं से या तथ्यों से एक कवि जो सत्य ग्रहण करता है, वह बियाणीजी की लेखनी में प्रमुख रूप से व्यक्त हुआ है। मगर साहित्य केवल शिक्षण देने के लिए तो नहीं है। वह आनन्द देने के लिए भी है। जब तक लेखक को उसमें स्वयं आनन्द नहीं आवेगा, तब तक वह दूसरों को कैसे दे सकता है? बियाणीजी ने चाहे कम लिखा हो, किन्तु जो कुछ भी लिखा है, उससे उनके हृदय की संवेदनशीलता, चित्त की मुक्त दशा, तथा मस्तिष्क की ग्रहणशीलता प्रकट होती है। इससे अधिक एक साहित्यिक के लिए और क्या चाहिए? ★

श्री बियाणीजी का कार्यक्षेत्र

लेखक
भगवन्तराव मण्डलोई–खण्डवा
(कांग्रेस तथा सामाजिक कार्यकर्ता; भूतपूर्व मुख्यमन्त्री म०प्र०।)

श्री ब्रजलाल बियाणी का मेरा निकट सम्बन्ध द्वितीय महायुद्ध के समय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा संचालित वैयक्तिक सत्याग्रह आन्दोलन में व उसके कुछ समय बाद आखरी स्वतन्त्रता संग्राम "भारत छोड़ो" में हुआ। इन दिनों मुझे अनेक कांग्रेस-नेताओं व श्री बियाणीजी से नागपुर सेण्ट्रल जेल में निकट सम्बन्ध स्थापित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

वैसे तो श्री बियाणीजी विद्यार्थी जीवन में ही राष्ट्रीय विचार-धारा से प्रेरित हो चुके थे व विद्यार्थी जीवन समाप्त होते ही वे सक्रिय रूप से सार्वजनिक क्षेत्र में उतर पड़े। राजनैतिक क्षेत्र तो उनका मुख्य कार्यक्षेत्र था ही व साथ ही सामाजिक व शैक्षणिक क्षेत्रों में भी बड़े लगन व उत्साह के साथ काम करते रहे व सफलता प्राप्त की। प्रारम्भ में उन्हें अपने सार्वजनिक जीवन में स्वर्गीय सेठ जमनालालजी बजाज व स्वर्गीय जाजू से प्रेरणा मिली व आगे तो महात्मा गांधी व आचार्य भावे, राष्ट्रनायक नेहरू जी से प्रेरणा मिली। फलस्वरूप स्वतन्त्रता-संग्राम के सेनानी के नाते उनका बड़ा योगदान रहा। साहित्य क्षेत्र में भी वे बड़ी लगन व निष्ठा के साथ काम करते रहे व मध्य प्रदेश साहित्य सम्मेलन के वे सभापति भी रहे।

श्री बियाणीजी एक लम्बे अरसे तक कौंसिल ऑफ स्टेट के सदस्य रहे, परन्तु पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद वे स्व. पण्डित रविशंकर शुक्ल के मन्त्रिमण्डल में वित्तमन्त्री रहे व मुझे भी सहयोगी के नाते उनके साथ काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वित्तमन्त्री के रूप में उन्होंने मध्य प्रदेश की बड़ी सेवाएँ कीं।

बियाणीजी का कार्यक्षेत्र बहुमुखी रहा। वे एक सफल पत्रकार, साहित्यिक, समाज सुधारक, स्वतन्त्रता संग्राम के वीर सेनानी व कुशल प्रशासक हैं। सौजन्यता व उदारता उनका विशेष गुण है। स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण कुछ समय से सार्वजनिक क्षेत्र में सक्रिय रूप से भाग नहीं ले रहे हैं, परन्तु आरोग्यता प्राप्त होते ही उनका सक्रिय सहयोग देश व प्रदेश को प्राप्त होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। ★

सत्य के मार्ग पर

लेखक

दिनेश एम० जोशी–रतलाम

(एक सफल शिक्षक एवं साहित्यकार।)

"विदर्भ-केसरी" ब्रजलाल बियाणी के संक्षिप्त नाम "भाईजी" में नाग-विदर्भ के लाखों नर-नारियों की पीड़ा व स्नेह निहित है। भाग्य की देवी के चरणों में कुटिलता, नाटकीयता का समर्पण कर सज्जनता व मानवता का परिवेश धारण किए सत्ता की चरम सीमा पर पहुँच जाना लक्ष्य है किन्तु इस नर-केसरी के समान जनता की पीड़ा व दर्द में अपनत्व पाना दुर्लभ है। इस नर-केसरी को प्राप्त अलभ्य प्यार स्नेह व आदर को देखकर राजनीति की सहचरी ईर्ष्या कुण्ठित हो जाती है।

श्री बियाणीजी की कृतित्व से मेरा परिचय उनके द्वारा रचित "सतसइया के तीर" के समान लघु कथाओं के माध्यम से हुआ। बाल्यावस्था से ही 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' व अन्य पत्र-पत्रिकाओं में बियाणीजी की रचनाओं का मैं चातक के समान पठन करता रहा हूँ।

लघु कथाओं के माध्यम से महानतम उद्देश्य की सरलतम अभिव्यक्ति ही मेरी दृष्टि से "बियाणी-दर्शन" है। श्री बियाणीजी का यह सत्यं, शिवं, सुन्दरम् ही लघु से विराट का विशिष्ट पथ है। उनकी साहित्यिक प्रतिभा पर छाई राज-नीति की बदली व समयाभाव ने अत्यन्त अल्प साहित्य ही जन-मानस के समक्ष आने दिया। यह अल्प राशि भी विश्व के सत् साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना सकती है। आवश्यकता है इस बहुमुखी प्रतिभा के धनी एवं प्रतिभा सम्पन्न महामानव के साहित्यिक दृष्टिकोण को समुचित ढंग से प्रकाशन मिले।

इस युगदृष्टा के कृतित्व व व्यक्तित्व का निरूपण "बियाणी-दर्शन" की कसौटी पर निहित है। इस कसौटी को उनकी सरलता व प्रखरता दोनों से अलग-अलग कसना होगा। सरलता—चिन्तन-शक्ति, ज्ञान, विज्ञान व कला का स्रोत

है। राजनीति, वैचारिक क्रान्ति, अपूर्व कार्यशक्ति आदि प्रखरता के पहलू हैं। "बियाणी-दर्शन" मानव की प्रकृत आवश्यकताओं की पूर्ति का समस्यारहित मार्ग है।

बियाणीजी से सर्वप्रथम साक्षात्कार मेरे जीवन का अविस्मरणीय दिवस है। मैं शुजालपुर परगने के एक छोटे-से ग्राम के उच्चतर विद्यालय में कार्यकर्ता था। एक दिन सन्ध्या से पूर्व शुजालपुर के एक पत्रकार मित्र ने आकर आवाज़ दी। उनसे ही पता चला कि 'विदर्भ-केसरी' ब्रजलाल बियाणी इस ग्राम में पधारे हुए हैं। तत्काल पत्रकारजी के साथ चल दिया। ग्राम में एक महाजन के घर पहुँचकर मैंने देखा कि धवल वस्त्रों में एक गौरवर्णीय प्रभावशाली व्यक्तित्व का स्वामी वृद्ध, अबाल, नवयुवकों के बीच अपना-सा बना बैठा मृदु वाणी से मधुरिमा को घोल रहा था। प्रथम दर्शन में सहसा ऐसा नहीं विश्वास हुआ कि जनमानस के बीच 'विदर्भ-केसरी' चर्चा कर रहे हैं। बियाणीजी का जो कल्पना-स्वरूप मैंने बना रखा था प्रत्यक्ष रूप उसके अनुकूल नहीं था। 'विदर्भ-केसरी' के नाम से जानेवाले बियाणीजी शरीर से इतने सौम्य होंगे यह कल्पना से बाहर था किन्तु इस शरीर में स्थित साहस, धैर्य, लगन, कल्पना से परे थी। निकट बैठे ग्राम जनों से इस चर्चा के बीच पता चला कि विदर्भ को दिया गया यह रत्न मालवा के तटीय जिला शाजापुर की सौगात है। मन मालवा के गौरव से अभिभूत हो उठा। मालवा के इस क्षेत्र को देश की अनेक प्रतिभाओं के नन्दन होने का सौभाग्य प्राप्त है।

जन-मानस से चर्चा समाप्त कर बियाणीजी ने हम लोगों की ओर दृष्टिपात किया। प्रारम्भिक परिचय प्राप्त कर आपने हम लोगों को वन-भ्रमण का आमन्त्रण दिया। मैं और पत्रकार बन्धु तत्काल बियाणीजी के साथ हो लिए। ग्राम सीमा समाप्त होते ही मैंने बियाणीजी से उनके जीवन के उभय पक्षों पर चर्चा प्रारम्भ कर दी। चर्चा समाप्त होने के पूर्व ही जिज्ञासु मन की अनेक रहस्यमयी परतें खुल चुकी थीं। बियाणीजी ने कृश-काय से हम नवयुवकों को पछाड़ दिया। बियाणीजी ने चलते हुए रुककर हम मित्रों की ओर देखा, मुस्कराए तथा स्वास्थ्य एवं भ्रमण का महत्व समझा डाला।

उनके प्रवास के मध्य हुए इस ग्राम के दो दिवसीय विश्राम में मेरे उनके राजनैतिक जीवन के प्रति उत्पन्न सारे कलुष को धो डाला। मेरे साहित्यकार मन को 'विदर्भ केसरी' का राजनैतिक व्यस्त जीवन नीलकण्ठ के हलाहल के समान लगता रहा।

श्री बियाणीजी के इस सम्पर्क ने मुझे समझा दिया कि इस महामानव का जीवन

एक त्रिभुज है। साहित्य, राजनीति और सामाजिकता जिसकी तीन समान भुजाएँ हैं।

इस महामानव के जीवन अवलम्बन की समस्त प्रक्रियाएँ साधारण हैं। खान-पान, रहन-सहन, व्यवहार किसी भी वस्तु में आपको असाधारणता का कहीं भी दर्शन नहीं होगा, किन्तु जिस लम्ब पर यह त्रिभुज आधारित है वह लम्ब है सत्पथ। सत्पथ की मञ्जिल पर बढ़नेवाले इस बटोही के निकटतम सम्पर्क में रहनेवाले भली प्रकार जानते हैं कि सत्पथ के दो महान पथिक बापू और विनोबा के समान ही आवृत होनेवाले "बियाणीजी" के सत्पथ में कोई अन्तर नहीं है। केवल बियाणीजी की परम्पराएँ व उसका दर्शन वर्तमान सामाजिकता से तालमेल नहीं खाता है। उसको पहचानने के लिए चाहिए मन की सरलता व तीव्र नैतिक दृष्टि। बियाणीजी का सत्पथ प्राचारिक सत्पथ नहीं है। उस सत्पथ का थोड़ा-सा आभास व उससे विचलित होने की पीड़ा का मर्म विदर्भवासियों के हृदय से पूछा जा सकता है। आज सारा विदर्भ उपेक्षा की ज्वाला से धधक रहा है।

विभिन्नता में एकता के स्वरूप, अपने नाम व्रजलाल के अनुकूल योगिराज कृष्ण के समान तत्वज्ञ इस महामानव की ७१ वीं वर्ष ग्रन्थि पर अपनी श्रद्धा समर्पण का सबसे उत्तम मार्ग तो यह होगा कि हम वर्तमान परम्परा को त्यागें। हम राष्ट्र के युगों से पीड़ित मानव को इन परम्पराओं पर चलकर मुक्ति दिलाने में असमर्थ रहे हैं।

हमारे कर्णधारों को चाहिए कि 'बियाणी-दर्शन' से सर्वदर्शन पाकर सत्पथ से प्रकाशित मार्ग पर देश को अग्रसर करें। ★

मेरे अनदेखे मित्र

लेखक
गोविन्दप्रसाद केजरीवाल–दिल्ली
(साप्ताहिक हिन्दुस्तान के सह-सम्पाक; हिन्दी जगत् के प्रधान कार्यकर्ता।)

उनका मेरा एक परिचय है, और वह कुछ नहीं, केवल यही कि हम दोनों ने कभी किसी का चेहरा नहीं देखा, कभी नहीं मिले, फिर भी एक दूसरे को जानते हैं। इतनी अच्छी तरह जानते हैं कि एक दूसरे के अन्तर को मन ही मन पहचानते भी हैं। अन्तर की पहचान कितनी सुखद होती है। मिलने-जुलने की इसमें कोई औपचारिकता नहीं। आकर्षण-विकर्षण की कोई कुण्ठा नहीं। छोटे-बड़े का कोई भेद नहीं। वहाँ सिर्फ जानना ही जानना होता है। केवल जानना कितना अच्छा होता है। इसमें न जानने का कोई दुःख नहीं। दुःख तो असल में 'न जानने' का हुआ करता है, केवल जानने से बढ़कर और क्या उपलब्धि है ?—— 'जानत तुमहीं तुमहीं होहि जाहि !'

जीवन में मिलन-जैसा कोई सुख नहीं, लेकिन इस मिलन से बढ़कर भी एक बड़ी वात होती है, और वह है——न मिलकर भी लिपट जाने की और न लिखकर भी लिख लेने की।

एक बार वहुत दिनों तक मैंने उनकी खोज-खबर नहीं ली। उनसे उपालम्भ मिला। मैंने उत्तर दिया——"बिना मिले-जुले, बिना पत्र लिखे ही एक दूसरे का कुशल-क्षेम जान लेने में जो मजा है, वह आलिंगन और तार-चिट्ठी में कहाँ ?" बियाणीजी मेरी इस खामख़याली से सहमत नहीं हुए, लेकिन मैंने उसका भी मजा लिया। आज तक मैंने उनके उस पत्र का जवाब ही नहीं दिया। वैसे मेरा जवाब उनको मिल चुका है, यह मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ !

बियाणीजी का एक चित्र मेरे मन ने आँक रखा है। उसे महर्षि व्यास के शब्दों में यूँ समझाया जा सकता है——

> त्यजेत कुलार्थे पुरुषं ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत।
> ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत॥

'स्व' से दूर 'पर' के पास की महती भावना से जो व्यक्ति जीता है, वही दर-असल जीता है ।

बियाणीजी कर्म-पुरुष भी हैं और भावना-पुरुष भी । वह 'विदर्भ-केसरी' भी हैं और 'काव्य-केसरी' भी । वह दहाड़ना भी जानते हैं और कूकना भी । उनकी जीवन-सरिता के दो पाट हैं—कर्म और भावना । जिस तरह नदी के दोनों पाट आपस में नहीं मिलते और न मिलकर भी उसको बांधे रहते हैं, उसी तरह कर्म और भावना के विलक्षण पुंज बियाणीजी कर्मयोगी भी हैं और साहित्यकार भी । साहित्य उनकी भावना है और कर्म उनका जीवन । दोनों का समन्वय ही उनकी साधना का संगम है । ऐसा संगम, जिसने परिचय-अपरिचय को आत्मसात करके मुझ-जैसे क्षीण स्रोत को भी अपने में अन्तरवाही कर लिया है । ★

बियाणीजी—राजनीति, कला एवं साहित्य के संगमस्थल

लेखक
मधुसूदन वैराले—बम्बई
(महाराष्ट्र राज्य के उपमन्त्री; सफल लेखक एवं वक्ता।)

विदर्भ के इतिहास में, खासकर राजनैतिक इतिहास में, श्री बियाणीजी का स्वयं का अपना एक विशिष्ट स्थान है और वह सदा के लिए बना रहेगा। आधुनिक विदर्भ की राजनैतिक जागृति में तथा राष्ट्रीय भावना के प्रसारण में बियाणीजी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। करीब २०-२५ साल से विदर्भ की राजनीति पर उनका असामान्य प्रभाव रहा। हमारी पीढ़ी के जन्म के पूर्व ही वे राष्ट्रीय आन्दोलन में थे। अपनी शिक्षा को तिलांजलि देकर वे राजनैतिक क्षेत्र में देशभक्ति की भावना से प्रेरित होकर कूद पड़े और वह सारा क्षेत्र उनका सम्पूर्ण जीवन बन गया। १९३० से लेकर १९५७ तक उन्होंने विदर्भ में कांग्रेस का संगठन तथा मार्गदर्शन किया। शायद वे ही ऐसे व्यक्ति हैं जो अधिक से अधिक समय तक विदर्भ प्रदेश कांग्रेस के प्रमुख रहे। उनके नेतृत्व में विदर्भ कांग्रेस का विकास हुआ तथा वह अपने वैभव के शिखर पर पहुँची। कांग्रेस के बाहर जो भी प्रगतिशील जनशक्तियाँ अलग-अलग रूप में थीं उन सबको बियाणीजी ने कांग्रेस में लाकर उचित स्थान दिया। विदर्भ की राजनीति में बियाणीजी का सबसे महत्वपूर्ण तथा संस्मरणीय कार्य यही है कि उन्होंने सही अर्थों में कांग्रेस के आन्दोलन को जनताभिमुख बनाया। सत्यशोधक तथा ब्राह्मणेत्तर आन्दोलनों का विदर्भ के ग्रामों तक बड़ा प्रभाव था तथा ये आन्दोलन सामाजिक शोषण के खिलाफ जो विद्रोह प्रकट होना चाहता था उसके प्रतीक थे, अल्पसंख्यकों द्वारा कर्म तथा परम्परा के नाम पर युगों तक किए गए शोषण के खिलाफ ये आन्दोलन खड़े हुए थे। बहुजन समाज सही अर्थों में इन आन्दोलनों से प्रभावित था। श्री बियाणीजी ने इन आन्दोलनों की यह शक्ति समझकर उनसे राष्ट्रीय आन्दोलन को और भी

प्रभावशाली बनाने की कल्पना की और उस कल्पना पर अमल भी किया। विदर्भ के अनेक गणमान्य नेताओं को उन्होंने कांग्रेस में लाकर उनके योग्य स्थान दिए और इसी के बाद विदर्भ के कोने-कोने में कांग्रेस इतनी मजबूती से जम गई कि आज भी कोई उसकी जड़ें नहीं उखाड़ सकता। श्री बियाणीजी के कार्यकाल में तथा बाद में भी कांग्रेस शहरों से देहातों तक पहुँची। शायद ही और किसी नेता ने भाईजी की तुलना में विदर्भ की अधिक यात्रा की हो। उनके यह २५-३० वर्ष रेलों तथा मोटरों में ही बीते। कांग्रेस कार्य के लिए, जब भी वे जेल के बाहर होते, तो भ्रमण करते। उनके जीवन का अधिक समय इन भ्रमणों की एक लम्बी कहानी है। यही कारण है कि इन वर्षों में 'बियाणी' तथा 'कांग्रेस' यह दोनों शब्द विदर्भ में समान अर्थों में माने जाते थे।

बियाणीजी के सफल नेतृत्व के कई कारण थे। राष्ट्रीय आन्दोलनों में वर्षों जेल में जाने के बाद तथा गांधीवादी विचारों के निकट सम्पर्क के बावजूद भी उनकी आधुनिक दृष्टि उनसे निभकर नहीं चल सकी। उनके विचार, आचार तथा जीवन पद्धति ने कभी पुरातन सन्तुलित विचारों को स्थान नहीं दिया। नए युग के नए विचार स्वीकृत करने के लिए उन्हें कभी झिझक नहीं महसूस हुई। उनकी रहन-सहन में भी एक प्रकार की आधुनिक सुरुचि, संस्कृति तथा कलाप्रियता इतनी स्पष्ट रूप से दिखाई देती की उसे कुछ नासमझ लोग दुर्गुण समझ बैठते। उनकी वक्तृत्व-कला उनके व्यक्तित्व का अविभाज्य अंग है। यदि बियाणीजी नेता नहीं बनते तो वे उच्चकोटि के बुद्धिमान अभिवक्ता अवश्य बन सकते थे। उन्होंने जो अपने जीवन में अनेकों भाषण दिए उनमें उनकी बुद्धिमत्ता, विचार कलात्मकता से किन्तु प्रभावपूर्ण पद्धति से रखने की शैली तथा इन सबको व्याप्त करके श्रोताओं के मन पर छा जानेवाली अभूतपूर्व मिठास, यह सब बातें दृष्टिगोचर होती हैं। सीधे सरल उदाहरण देकर तथा प्रतिपक्षियों को निरुत्तर करनेवाली असाधारण बौद्धिक दलीलों के द्वारा जब वे अपनी मधुर वाणी से सभाओं में श्रोतागणों के सम्मुख उपस्थित होते तो उनकी कामयाबी पर शक करना दुश्मन के लिए भी मुश्किल होता था। मेरी धारणा है कि बियाणीजी की मूल प्रवृत्ति साहित्यिक तथा कवि-कलाकार की प्रवृत्ति है। लेकिन उनके कलाकार ने नेता का रूप धारण करने के बाद राजनीति के रुक्ष क्षेत्र में भी अपने साहित्यिक गुणों का भरपूर उपयोग किया। जीवन की कलात्मकता तथा मानवी मन की सुन्दरता से वे कभी विमुख नहीं हुए और उनके जीवन में राजनीति व व्यवहार तथा कला व साहित्य का एक अजीब मनोहर संगम हुआ। कटु सत्यों को भी मधुर रूप देकर जन मानस में वे सहज कुशलता से उतार सकते थे, और इन्हीं कारणों से उनका नेतृत्व एक नई दिशा का

था। उन्हें परिस्थिति की अच्छी परीक्षा थी। प्रगति की जान परिवर्तन की भावना है; यह वे अच्छी तरह जानते थे इसीलिए वे परिवर्तनों से कभी दूर नहीं भागे। परिस्थिति के प्रवाह को परिवर्तन द्वारा प्रगति के मार्ग पर लाने की उनकी कुशलता सराहनीय थी। और इसीलिए मेरे जैसे कई नवयुवक पुरानी पीढ़ी के इस नेता में नवीनता देख सकते थे। उन्होंने बहुत लोकसंग्रह किया। सभी वर्गों के, स्तरों के तथा विचारों के लोगों को एकत्रित कर उनका संगठन के लिए अच्छा उपयोग उन्होंने किया। इसीलिए वे अच्छे संगठनकर्ता माने जाते हैं।

श्री बियाणीजी ने अनेक क्षेत्रों में अपने व्यक्तित्व से महत्वपूर्ण कर्तृत्व की अमिट छाया प्रस्थापित की। 'मातृभूमि' जैसा अच्छे स्तर का मराठी दैनिक उन्हीं की देन है। उन्होंने अनेक शिक्षण संस्थाओं को पूरी मदद देकर शिक्षा के कार्य को बढ़ाया। उनके अर्थमन्त्रित्व के काल में विदर्भ में अनेक नवीन योजनाओं का प्रारम्भ हुआ। अकोला-अकोट मार्ग का रेलवे ओवर ब्रिज तथा पारस का विशाल विद्युत केन्द्र उन्हीं की देन है। अकोला के कृषि महाविद्यालय की प्रारम्भिक नींव उनके समय में रखी गई तथा विदर्भ में और कई भवनों और मार्गों का निर्माण श्री बियाणीजी की प्रेरणा से हुआ। साहित्य के क्षेत्र में जो कुछ उन्होंने किया उससे सभी परिचित हैं। हिन्द प्रकाशन की स्थापना तथा 'प्रवाह' मासिक प्रकाशन उन्हीं की प्रेरणा से हुआ। उनकी कलाकृति 'कल्पना-कानन' के सौन्दर्य से तथा साहित्यिक मूल्यों से सभी भलीभाँति परिचित हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन तथा अन्य संस्थाएँ उनकी सेवाएँ नहीं भूल सकतीं। विदर्भ साहित्य संघ द्वारा उन्होंने जो मराठी भाषा की सेवा करने का प्रयास किया आज भी सभी को याद है। शहर तथा प्रान्त की अनेक छोटी-मोटी सामाजिक, सांस्कृतिक तथा शिक्षा-विषयक गतिविधियों से उनका बहुत निकट सम्पर्क रहा है।

मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि उनके जीवन का विस्तृत परिचय देने के लिए गौरव ग्रंथ का आयोजन किया जा रहा है। मेरे व्यक्तिगत जीवन में श्री बियाणीजी को मैंने बहुत निकट से देखा तथा उनका प्रभाव मुझ पर बहुत गहरा हुआ। मैं स्वयं यह मानता हूँ कि आज जो कुछ भी नगण्य स्थान मुझे मिला है उसमें मा० बियाणीजी के आशीर्वादों का काफी हद तक प्रभाव है। उनके मेरे व्यक्तिगत सम्बन्ध कई बार मतभेदों के बावजूद भी बड़े स्नेह के रहे। सहजीवन का तत्व बहुत हद तक मैंने उन्हीं से सीखा। मैं उनका कुटुम्ब के एक बुजुर्ग के नाते आदर करता आया हूँ, करता रहना एक पवित्र कर्त्तव्य है। पिछले दिनों उनके स्वास्थ्य का समाचार सुनकर बड़ा खेद हुआ। प्रभु से प्रार्थना है वह उन्हें दीर्घायु तथा स्वस्थ रखे और उनके आशीर्वाद हमारी नई पीढ़ी को बराबर प्राप्त होता रहे। ★

मेरे भाईजी

लेखक

श्रीगोपाल नेवटिया—बम्बई

('नवनीत' मासिक के संचालक; उद्योगपति; मारवाड़ी समाज के एक कार्यकर्ता।)

आज से चार दशक पहले बरार में, बम्बई में, मारवाड़ी-समाज में, वणिक-वर्ग में जमनालालजी ही जमनालालजी थे। पारिवारिक, व्यावसायिक और सामाजिक कार्यों के कारण जमनालालजी से व बरार से घनिष्ठता उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई। और उस दौरान में बियाणीजी के सम्पर्क में ही नहीं आना, वरन् उनका अनुज बन जाना मेरे लिए परम स्वाभाविक था।

उन दिनों की बात तो याद नहीं, जब मैं बालक था और जमनालालजी विकसित होते नेता थे, सामाजिक ही नहीं राजनैतिक भी। पर कुछ काल वाद जब अग्रवाल महासभा के रूप में जमनालालजी की सामाजिक प्रगति का विस्तार हुआ, तब मैं भी उस कल का एक पुरजा बन गया था और उसी दौरान में बियाणीजी के सम्पर्क में पहले-पहल आया।

वर्षों तक जैसा उन्हें देखता आया हूँ, वैसा ही उन्हें कई दशक पहले देखने की धूमिल स्मृति अब भी विद्यमान है। कृशतन, सजग संचालन, निरालस, मृदु-भाषण, मिलनसारिता, स्वाभिमानता, ज्वलन्त देश-सेवा, समाज-सुधार-परायणता ये उनके सब गुण मेरे मानस-पटल पर प्रत्येक मिलन के पश्चात् अंकित होते रहते।

उनके अत्यधिक निकट आने का मुझे अवसर तब मिला जब मुझे अकोला में एक औद्योगिक प्रतिष्ठान के सम्बन्ध में जाना-आना पड़ने लगा। अपनी कुशाग्र-बुद्धि और औचित्य-परायणता से उन्होंने मेरी कई समस्याएँ सुलझायीं और मेरा काम सरल बनाया। मैं जानता हूँ, मेरे जैसे कितनों के वे काम आते रहे हैं। किसी भी योग्य व्यक्ति के लिए इस प्रकार दूसरों के लिए उपादेय बनना एक बड़ा महत्व-पूर्ण गुण होता है और बियाणीजी में वह प्रचुर मात्रा में रहा है—ऐसा मेरा विश्वास निजी अनुभव पर आधारित है।

अपने इसी गुण के कारण उन्होंने अनेकों को मित्र बनाया, अनेकों को अनुज

बनाया और उनके वे 'भाईजी' बने। मैं अपने आपको सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मैं भी उनमें एक रहा हूँ जो 'भाईजी' कहते रहे हैं और उनसे लाभान्वित होते रहे हैं।

★

जैसा मैंने पाया

लेखिका
सौ० कमला शारदा–अजमेर
(श्री बियाणीजी की ज्येष्ठ पुत्री; श्रीकरन शारदा की पत्नी; अजमेर के महिला-क्षेत्र की कार्यकर्ती ।)

पूज्य काकाजी की बड़ी लड़की होने के नाते मैंने उन्हें एकदम निकट से देखा है। उनके जैसे कार्यशील आदमी कम ही देखने में आवेंगे। उन्हें किसी भी काम को किसी भी वक्त करने में जरा भी आलस्य नहीं है। मैंने बचपन में देखा कि रोज शाम को ४ बजे से कहीं पास के गाँव में भाषण आदि देने जाते थे और रात का आने का उनका कोई वक्त निश्चित नहीं था। रात को २ बजे आना तो रोज का ही कार्यक्रम रहता था। बल्कि कई बार माँ सुबह ४ बजे उठती तब कहतीं कि काकाजी अभी भी नहीं आए हैं, हम सब चिन्ता करने लग जाते। पर वे तो अपने काम में ही व्यस्त रहते। रात का खाना कब लेंगे इस बात की उन्हें कभी परवाह ही नहीं थी। देश-सेवा ही उनका ध्येय था। इतना काम रहते हुए भी लिखना-पढ़ना उन्होंने कभी नहीं छोड़ा।

कई बार मैंने उन्हें देखा है कि उन्हें तेज बुखार है और किसी सभा में उनका भाषण होना है तो हम सबके मना करने पर भी वे उसमें अवश्य जाते और खूब अच्छा बोलते। उनकी बोलने की कला की सब प्रशंसा करते रहते हैं। अपनी बात को किस तरह सबको समझाया जाय इस कला के वे अच्छे जानकार हैं।

काकाजी को सबसे मिलना-जुलना, सबके साथ खाना खाना इसमें उनकी बड़ी अभिरुचि है। वे स्वयं खाना नहीं खाएँगे तब भी उनकी इच्छा रहेगी कि घर में ४–६ जनों का खाना अवश्य बनना चाहिए और चीजें भी रुचिकर बननी चाहिए। वे स्वयं इस ओर ध्यान देते हैं। उनकी आजकल तबियत ठीक नहीं रहती है फिर भी उनका सब बातों की ओर बराबर ध्यान रहता है।

उनका मन बड़ा कोमल है। जब भी हम उनसे बिदा होकर आवेंगे तब उनकी

आँखों में अवश्य पानी आ जावेगा। उन्हें कई बातें पसन्द नहीं होती हैं, पर हमें पसन्द हो तो वे हमारी खुशी के लिए हमें कभी मना नहीं करेंगे।

पैसों का उनके जीवन में कोई भी मूल्य नहीं है। सब काम शान से होना चाहिए, यह उनकी आन्तरिक इच्छा रहती है। वे कभी किसी पर नाराज़ नहीं होते हैं पर फिर भी हम सब बचपन में उनसे खूब डरा करते थे। काकाजी से कोई भी बात पूछनी हो तो माँ को ही कहते थे। माँ ही पूछकर हमें बताती थीं। बच्चों से उन्हें खूब प्रेम है।

काकाजी ने कई व्यक्तियों को आगे बढ़ाने में पूरी सहायता की है। आज जो चाहे उनकी बुराई करे, पर काकाजी उनकी कभी बुराई नहीं करते। वे उनसे मिलेंगे तब भी उतने ही प्रेम से मिलेंगे। उनमें कभी मैंने अहंकार नहीं देखा। ऊँचे पद पर थे तब भी सबसे मिलते थे और आज भी वैसे ही मिलते हैं।

छोटी-छोटी बातों का उन्हें स्मरण रहता है। पूज्य माँ का उनके जीवन में बड़ा स्थान है। उनसे काकाजी के हर एक काम में पूरी मदद मिलती है। २०-२० घण्टे बिना आराम किए काम करना बड़ा मुश्किल है पर वह सब काम हँसते-हँसते करती हैं। काकाजी जो भी खाना खावेंगे वह स्वयं अपने हाथ से बनाती हैं। उनके हर एक काम का खुद बड़ा ध्यान रखती हैं।

काकाजी का कांग्रेस से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। जब वे पढ़ते थे तब से ही अपनी पढ़ाई पूरी होने के पहले ही कांग्रेस में स्वयंसेवक के रूप में अपना काम शुरू किया। विदर्भ की कांग्रेस में जितना काम उन्होंने किया है उतना शायद ही कोई कर सके। विदर्भ कांग्रेस कमेटी के वे लगातार १३ वर्षों तक अध्यक्ष बने रहे। १९४० में गांधीजी ने उन्हें दूसरे सत्याग्रही के रूप में चुना था।

काकाजी कई बार जेल गए हैं। जब वे रायपुर जेल में थे तब उन्हें वहाँ बहुत कष्ट था। हम सब मिलने गए। तब उन्हें बन्दी के कपड़े पहने हुए देखकर हमारी सबकी आँखों में पानी भर आया था। पर वे उसमें भी खुश थे। जेल में भी वे सबको अपना बना लेते थे। सबको अपनी ओर आकर्षित करने की उनकी शक्ति देखकर बड़ा आश्चर्य होता है। अकोला में उनके भाषण सुनने को हज़ारों की भीड़ लग जाती थी। उनकी वाणी में मिठास व ओज दोनों ही था।

माहेश्वरी व मारवाड़ी समाज में उनका पूरा योगदान रहा है। उन्होंने जो समाज के सम्मुख कहा इसे पहले अपने ही घर में कार्यान्वित किया फिर दूसरों को कहा। दहेज-प्रथा के वे कट्टर विरोधी हैं। जब शारदा एक्ट पास हुआ तब मेरे ताऊजी की लड़की की शादी हुई। शादी में मेरी बहन १४ वर्ष की पूरी नहीं थी, अतः शादी

में काकाजी तो क्या ? हम बच्चे भी नहीं गए। उस वक्त तो हमें बुरा लगा कि घर में ही शादी हो रही है और हम नहीं जा रहे हैं, पर आज सोचते हैं कि वे अपनी बात के कितने पक्के थे तथा वे अपने कर्त्तव्य से कभी विमुख नहीं हुए।

हमारी दोनों बहनों की शादी भी उन्होंने बड़ी सादगी से की। सगाई के दस्तूर का कोई अड़ंगा नहीं किया। बराती भी कम ही बुलाए, पर आवभगत में कोई कमी नहीं रक्खी। शादी पर किसी तरह का दिखावा उन्होंने नहीं किया।

उनकी तबियत ठीक नहीं रहती, फिर भी लेखन-कार्य उन्होंने बन्द नहीं किया है। उनकी लेखन शैली निराली है। छोटे से लेख में भी कोई नवीन बात ही मिलती है।

व्यापारी समाज में उनका स्थान हमेशा ऊँचा रहा है। सब उनसे परामर्श करने आते रहते थे और वे उनको हमेशा अच्छी सलाह देते थे।

काकाजी थोड़े समय के लिए ही मन्त्री रहे, पर उसमें भी अपना काम उन्होंने पूरी कुशलता से निभाया; हरएक व्यक्ति का दुःख-दर्द वे हमेशा सुनते थे।

संक्षेप में, पूज्य काकाजी का समस्त जीवन देश की आज़ादी, आज़ादी की लड़ाई व सेवा में व्यतीत हुआ है, और वे एक अच्छे संगठक, प्रशासक, साहित्य-सेवी व समाज-सेवक के रूप में हमेशा याद किए जाते रहेंगे। हमारे लिए वे एक स्नेह-सरोवर पिता व मार्ग-दर्शक के रूप में हैं। ★

एक अडिग व्यक्तित्व

लेखक

दादाभाई नाईक—इन्दौर

(विनोबाजी के इन्दौर के विसर्जन आश्रम के संचालक; प्रधान भूदानी कार्यकर्ता; पुराने कांग्रेसी कार्यकर्ता ।)

श्री ब्रजलालजी बियाणी से मेरा प्रथम परिचय १९३२ में सिवनी जेल में हुआ था। वहाँ उनसे विशेष परिचय तो न हो पाया फिर भी एक घटना का स्मरण आज भी है। जेल में अक्सर सारी परिस्थितियाँ प्रतिकूल तथा साधनों के अभाव के कारण, जबकि महीनों एक साथ बिताने पड़ते हैं, मनुष्य स्वभाव का सही परिचय हो जाता है। कोई भी व्यक्ति जब वह मुक्त तथा साधन-सम्पन्न हो कुछ समय के लिए अपने स्वभाव को संयत रखकर अपनी छाप अन्य लोगों पर छोड़ सकता है। जेल में अक्सर अधिकारियों से मुठभेड़ के अवसर आते थे। हम लोगों में दो विचार-धाराएँ थीं। एक यह कि जेल में जाने के पश्चात् हमारा अपना कर्तव्य पूरा हो जाता है और जेल की मुसीबतों को पूरी तरह सहना हमारा कर्तव्य है। दूसरी विचार-धारा यह थी कि अन्याय और स्वाभिमान को चोट पहुँचानेवाली घटना कहीं भी हो, हम उसे बरदाश्त न करेंगे। अतः जब कभी जेल अधिकारियों से संघर्ष का अवसर आ जाता था तब हमारी आपस में काफी गरमागरम बहस होती थी, जिसमें कभी कटुता भी रहती थी। मुझे याद है कि ऐसी बहस के दौरान में बियाणीजी हमेशा मधुर पर दृढ़ रहते थे। संघर्ष उनके स्वभाव में नगण्य ही था। अनिवार्य होने पर ही वे संघर्ष में उतरते थे। पर हम सबके आपसी सम्बन्ध मतभेदों के होते हुए भी, आत्मीयता से भरे रखने में सदा बियाणीजी का हाथ रहा है। अनशन के पश्चात् जब किसी साथी को प्रथम फल का रस और दूध पिलाने का अवसर आता था तो सबसे आगे ब्रजलालजी रहते थे जो उसमें शामिल होना स्वीकार न करते हुए भी भूख हड़ताल की पूरी कद्र करते थे और स्वयं नम्रता से पेश आते थे।

ब्रजलालजी के स्वभाव की यह विशेषता थी कि जेल में आनेवाले अपने

साथियों को किसी चीज की कभी महसूस न होने देना । स्वयं सारी सुविधा अपने तक सीमित रखना उन्हें पसन्द न था । उन्हें अकेले उपयोग करना उनके लिए असम्भव था । पर किसी के स्वाभिमान को ठेस न पहुँचे, इतनी दक्षता वे हमेशा रखते थे । उसे अपना बनाकर ही वे सहभोगी बनाते थे । मुझे स्मरण है कि स्वास्थ्य सँभालने की दृष्टि से उनका अपना आहार खास तरीके का नपा-तुला होता था । अतः वे उसमें सावधानी बरतते थे । पर उसी के कारण यदि किसी कार्यकर्ता के घर से आई चीज उनके लिए वह कृतज्ञता से ले जाता था तो उसका दिल रखने के लिए वे बड़े प्रेम से उसके पास बैठकर भाग में शामिल हो जाते थे । और फिर पाचक औषधि या फाका या कुछ कम भोजन करके वे सन्तुलन रखते थे । जेल अधिकारियों के साथ होनेवाले कितने ही संघर्षों में राजनैतिक बन्दियों का स्वाभिमान तथा जेल के नियमों में समन्वय साधकर कितनी ही बार उन्होंने अपनी समय-सूचकता, प्रसंगावधान बुद्धि और सत्य परन्तु प्रिय वाणी से कार्य सिद्ध किया ।

सन् ४०-४१ के वैयक्तिक सत्याग्रह के समय उषाकाल में घूमने के लिए उन्हें कोई साथ चाहिए था । मेरे पास घड़ी न थी और बियाणीजी की समय की पाबन्दी तो मशहूर थी । अतः मुझे उठाने की बात उन्होंने स्वीकार की और महीनों वह बात निभाई ।

उसी समय बियाणीजी के अनुरोध पर उनके कमरे में पूज्य विनोबाजी 'स्वराज्य शास्त्र' की पुस्तक का मजमून मुख से कहते जाते थे और ब्रजलालजी अपनी शीघ्र गति लेखनी से उसे लिखते जाते थे । और चूँकि मैं श्रोता था बाद में उनकी शुद्ध कापी कर लेता था । बापू की 'हिन्द स्वराज्य' पुस्तक जैसी मौलिक मानी जाती है वैसी ही बाबा की 'स्वराज्य शास्त्र' पुस्तक है ।

ब्रजलालजी हिन्दी के साथ मराठी के भी उत्तम वक्ता और साहित्यिक हैं । उनकी अपनी मासिक पत्रिका ऊँचे दर्जे की मानी जाती थी । अकोला में भारत-भर के बड़े-छोटे सब नेता तथा कार्यकर्ताओं का आतिथ्य उन्हीं के घर होता था और उसमें उनकी धर्मपत्नी तो आदर्श गृहिणी ठहरीं । निःसंकोच आत्मीयता से वे लोग अपनापन महसूस करते थे ।

पर इस आतिथ्य से बढ़कर मुझे बियाणीजी के स्वभाव का जो आकर्षण मिला, वह उन्होंने वीर वामनरावजी जोशी को सम्भाल लिया यह उनकी विनम्र साधना के कारण ही है ।

राजनैतिक नेता या मन्त्री के नाते वे भारतीय क्षितिज पर चमक न सके । पर सत्ता के अभिमान से वे भ्रमित नहीं हुए यह कोई कम नहीं है । अपनी शासन

अवधि में वे लकीर के फकीर नौकरशाही को सहज नया मोड़ दे सके तथा कुशलता-पूर्वक जनकल्याण कार्य किया ।

बरार को स्वतन्त्र प्रदेश बनाने के उनके प्रयत्नों से अनेकों का मतभेद रहा । पर अपने ध्येय के लिए उन्होंने सत्ता छोड़ दी और वनवास भी कबूल कर लिया । यह उनके लिए बड़े गौरव की बात है ।

विपरीत परिस्थितियों में अडिग रहकर अपनी लक्ष्यपूर्ति के लिए सतत प्रयत्न करते रहना उनकी विशेषता मानी जाएगी । रचनात्मक कार्यक्रमों को और उनकी सेवाओं को देखा जाय तो वे अधिक ऊँचे दिखते हैं ।

आकस्मिक पक्षाघात के कारण उनकी सेवा में व्यवधान पड़ गया, फिर भी उस भयंकर बीमारी से वे धीरे-धीरे उठ रहे हैं, यही हम सबके लिए समाधान की बात है ।

भगवान उन्हें दीर्घायु एवं स्वस्थ रखें ताकि वे देश की अधिक सेवा कर सकें ।

★

बियाणीजी एक व्यक्ति के रूप में

लेखक
बाबूलाल गुप्ता, बी. ए., 'विशारद'—इन्दौर
(**ग्रन्थ-समिति के प्रधान मन्त्री; प्रसिद्ध व्यवसायी एवं साहित्य-सेवी।**)

मेरे पिताजी और श्री बियाणीजी का परिचय तो अनेक वर्षों से रहा है। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है मैंने श्री बियाणीजी के सम्बन्ध में अपने पिताजी के माध्यम से तथा स्वयं बियाणीजी की रचनाओं के आधार पर बहुत पहले से ही पर्याप्त जानकारी कर रखी थी, परन्तु उन्हें अत्यन्त निकट से देखने और समझने का मौक़ा मुझे तब मिल सका, जबकि वे १९६१ में इन्दौर आकर बस गए। पिछले चार वर्षों से मेरा उनका सम्बन्ध घनिष्ठ से घनिष्ठतम होता गया है, और अब वह एक कुटुम्बीय सम्बन्ध के रूप में परिणत हो चुका है। अत: यहाँ मैं जो कुछ भी लिख रहा हूँ, वह बहुत कुछ अपने निजी ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर ही लिख रहा हूँ।

यूँ तो श्री बियाणीजी का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रतिभाशाली है तथा उनके जीवन के विभिन्न स्वरूप हैं, पर मेरी दृष्टि में उनका सर्वोत्तम स्वरूप एक व्यक्ति के रूप में निखरा है।

प्राय: ऐसा देखने में आता है कि जिसे सत्ता प्राप्त हो जाती है तथा ख्याति मिल जाती है, वह स्वभाव से गम्भीर एवं कठोर हो जाता है तथा वह सदैव दूसरों पर, अपनी सत्ता व ख्याति के मद में, अपने विचारों को लादने का आदी हो जाता है। इतना ही नहीं, वरन् वह अपने को साधारण मनुष्य से ऊपर अतिमानव (Superman) के रूप में मानने लगता है। पर श्री बियाणीजी में यह बात देखने को नहीं मिलती। मैंने उन्हें कभी किसी पर बिगड़ते या दूसरों पर अपने विचारों को थोपते हुए नहीं पाया। प्रखर बुद्धि के तथा तार्किक व्यक्ति होते हुए भी सरलतापूर्वक वे अपने विचारों को दूसरों के समक्ष रख देते हैं, पर उन्हे मनवाने के लिए किसी को मजबूर कभी नहीं करते।

श्री बियाणीजी तर्क करते समय अवश्य गम्भीर हो जाते हैं, पर उसके पश्चात्

उनके अधरों पर शिशु की-सी सरल मुस्कान छा जाती है, जो बरबस ही दूसरों को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है । उनके तर्क अकाट्य होते हुए भी सरल होते हैं । किसी भी प्रश्न को वे मानवीय दृष्टि से सोचने के आदी हैं । मानव-कल्याण की भावना उनमें सर्वोपरि है तथा वे कभी कोई ऐसी बात नहीं कहते जिससे कि दूसरे के हृदय पर आघात पहुँचे । यह मानवीय गुण बिरलों में ही देखने को मिलता है ।

अहं तथा पदलोलुपता आज के व्यक्ति के स्वभाव के अभिन्न अंग बन गए हैं । यही कारण है कि आज समाज बाह्य दृष्टि से प्रगति की ओर अग्रसर होते हुए भी, आन्तरिक दृष्टि से विश्रृंखल होता दिखाई पड़ता है । बियाणीजी के स्वभाव में ये बातें रंचमात्र भी दिखाई नहीं देतीं । आप अत्यन्त सादी प्रकृति के व्यक्ति हैं अहं आपको छू भी नहीं गया है । साधारण से साधारण कार्य को भी करने के लिए आप सदैव तत्पर रहते हैं । आपके सब सहयोगी और मित्र एक ही बात कहते हैं; उनका कहना है कि बियाणीजी अपने प्रतिदिन के साधारण से साधारण काम को भी पूरे मनोयोग से किया करते हैं । उपयोगितावाद के आप गुरु हैं । अपने मन्त्रित्व-काल में आप अनेकों देश-व्यापी राजनैतिक उलझनों और झमेलों में फँसे रहने पर भी छोटी-छोटी बातें भी आपके ध्यान से उतर नहीं पाती थीं । अपने आस-पास रहनेवाले अनेकों व्यक्तियों की दैनिक आवश्यकताओं के प्रति वे सदैव सचेत रहते थे । अनेक कहावतें आपके विषय में प्रसिद्ध हैं । कोई महत्वपूर्ण पत्र किसी दफ्तर में भेजने के बाद वे टेलीफोन पर यह पूछना न भूलते कि वह ठीक स्थान पर पहुँच गया अथवा नहीं ।

बियाणीजी के जीवन में मानवीयता कूट-कूटकर भरी हुई है । दीन-दुखियों के प्रति उनकी सहानुभूति, भारत की स्वतन्त्रता के लिए उनका आन्दोलन, पाप के गढ़े में फँसी हुई पतित स्त्रियों के उद्धार की चेष्टा, यह सब उनके मानव मात्र के लिए प्रेम के ही परिणाम हैं । किसी के भी दुःख की कहानी सुनकर अथवा किसी को दुखी देखकर उनके नेत्र छलछलाने लगते हैं । किसी की सहायता करते समय वे यह भूल जाते हैं कि वह व्यक्ति किस जाति व धर्म का है अथवा वह विश्वसनीय है या नहीं । आपके लिए उसका केवल मनुष्य होना ही पर्याप्त है । अनेकों बार आप अपने सरल स्वभाव के कारण ठगे जा चुके हैं । जिनका आपने उपकार किया है, उनमें से कई व्यक्तियों ने आपको धोखा भी दिया है, परन्तु फिर भी दूसरों का उपकार करना, उनकी, जो कि दुःखी हैं, तन, मन, धन से सेवा करना आपका स्वभाव बन गया है । इस मानवीय पक्ष ने श्री बियाणीजी के व्यक्तित्व को और भी अधिक प्रभावशाली बना दिया है ।

धार्मिक असहिष्णुता और संकीर्णता का बियाणीजी में सर्वथा अभाव है, यह उनके मानवीय दृष्टिकोण का ही परिणाम है । यहाँ तक कि वे वेद आदि हिन्दू धर्म-ग्रन्थों को ईश्वरीय कहना भी नितान्त आवश्यक नहीं समझते । वे वेदों के समान ही बाइबिल, कुरान और जिन्दावेस्ताँ को भी ईश्वरीय समझते हैं । इतना मानते हुए भी वे इनके एक-एक शब्द को ईश्वरीय आज्ञा मानकर उसका पालन करने के लिए अपने को बाध्य नहीं करते । समय के प्रभाव से इन पुस्तकों में अनेक क्षेपक आ गए हैं, और उनकी व्याख्या भी मनमाने तौर पर अनेक ढंग से की गई है । आपके अनुसार इन सब का सार यही है कि मनुष्य जीवन में सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य का यथासम्भव पालन करें । इन सबका उद्देश्य मनुष्य में उसके विवेक को जागृत करना तथा उसमें मानवीय गुणों का संचार करना है । बियाणीजी में मानवीय गुण कूट-कूट कर भरे हैं तथा इन्हीं गुणों के कारण वे सबके स्नेही, प्यारे 'भाईजी' बन सके हैं । क्या बालक और क्या बड़े सब के लिए वे 'भाईजी' हैं; उन्हें सभी का एक जैसा स्नेह प्राप्त है । वे सभी के प्रिय हैं और उन्हें सभी हृदय से प्यार करते हैं । उनके नौकर-चाकर सभी का समान रूप से आदर करते हैं, भय से नहीं वरन् प्रेम के कारण । वे अपने नौकरों को नौकर नहीं समझते, प्रत्युत उन्हें छोटे भाई के रूप में देखते हैं, और सदैव उनकी सुख-सुविधा का ख्याल रखते हैं ।

कहना अनुचित न होगा कि श्री बियाणीजी एक उच्चकोटि के विचारक, राज-नैतिक नेता तथा कुशल प्रशासक से कहीं अधिक एक मानव हैं । आज के छलछद्म के युग में विचारक और नेता को पाना सरल है, पर एक ऐसे व्यक्ति को, जिसमें मानव की गरिमा हो, पाना कठिन ही नहीं, दुर्लभ है । हमारे 'भाईजी' सच्चे अर्थों में व्यक्ति हैं, एक ऐसे व्यक्ति जिसके हृदय में मानव-मात्र के लिए अथाह प्यार है ।★

बियाणीजी का ग्रन्थ-दर्शन

लेखक
चन्द्रप्रकाश जायसवाल, एम० ए०—इन्दौर
(हिन्दी साहित्य के लेखक, कवि एवं पत्रकार ।)

श्री बियाणीजी का महत्व केवल इस दृष्टि से ही नहीं है कि उन्होंने भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में एक अविचल सेनानी की भाँति भाग लिया अथवा वे अनेक वर्षों तक विदर्भ कांग्रेस के अध्यक्ष-पद को सुशोभित करते रहे अथवा उन्होंने पूर्व मध्य प्रदेश में वित्तमन्त्री के रूप में कार्य किया, प्रत्युत इस दृष्टि से भी कि वे एक उच्चकोटि के लेखक हैं। एक बार उनके राजनैतिक जीवन को भुलाया जा सकता है, अथवा वह कुछ समय पश्चात् केवल इतिहास की वस्तु बनकर रह जायगा, परन्तु उनका साहित्यिक जीवन तथा उनकी कृतियों में वर्णित उनके विचार सदैव मनुष्य को जीवन पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रोत्साहित करते रहेंगे तथा जीवन के रहस्य को समझने में उसका मार्गदर्शन करते रहेंगे ।

श्री बियाणीजी द्वारा लिखित पुस्तकों में से 'कल्पना-कानन' तथा 'धरती और आकाश' विचारों तथा साहित्य की दृष्टि से विशेष महत्व रखते हैं । दोनों पुस्तकों के अध्ययन के पश्चात् कोई भी व्यक्ति श्री बियाणीजी के विचार-जगत् तथा जीवन-दर्शन से भली भाँति अवगत हो सकता है। प्रस्तुत लेख इन्हीं दोनों पुस्तकों का विश्लेषण तथा उनके माध्यम से श्री बियाणीजी के विचारों का दिग्दर्शन कराते हुए लिखा गया है ।

'कल्पना-कानन'

श्री बियाणीजी पृथ्वी पर रहते हुए भी कल्पना-जगत् में विचरण करना खूब जानते हैं । वास्तव में उनका कानन कल्पना का कानन है । कल्पना जगत् में विचारों की तथा उनके माध्यम से सत्य की खोज करने में वे निपुण हैं । कल्पना के लिए शान्ति का होना आवश्यक है । १९४२ में अंग्रेजों के विरुद्ध 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में भाग लेने के परिणामस्वरूप आपको तीन वर्ष वेलौर जेल में बिताने पड़े । जेल-

जीवन बन्धन अवश्य है, परन्तु साथ ही वह शक्ति संग्रह का अवसर भी प्रदान करता है। यद्यपि बाह्य जगत् की अलिप्तता के कारण शरीर और बुद्धि की प्रतिदिन की क्रियाएँ और प्रवृत्तियाँ वहाँ सीमित और कुंठित हो जाती हैं, पर कल्पना का साम्राज्य खुल जाता है। कल्पना कवि की कामधेनु, तत्वज्ञानी की तरणी, मौलिकता की माता, नवीनता के नयन, प्रगति के प्राण, आविष्कारों की जननी, विश्व-दर्शन की खुर्दबीन और जीवन का स्वाद है। बुद्धि को पंख लगते हैं तब कल्पना का जन्म होता है, और तभी वह सार्थक भी होती है। जेल के शान्त वातावरण में बियाणीजी की कल्पना ने जो विचरण किया उसी के परिणाम-स्वरूप उनकी अनुपम कृति 'कल्पना-कानन' का जन्म हुआ।

'कल्पना-कानन' १३ कल्पना-चित्रों का संग्रह है। प्रत्येक कल्पना-चित्र में किसी न किसी सत्य का दर्शन मिलता है, पर उन सभी के गर्भ में लेखक का अपना दर्शन, अपनी मान्यता दृष्टिगोचर होती है। लेखक के मतानुसार, जीवन शाश्वत है; मृत्यु उसका अन्त नहीं, प्रत्युत उसका रूप-परिवर्तन भर है। जीवन की सार्थकता उसकी प्रगतिशील विविधता में है, उसकी हार अथवा उसके रुकने में नहीं। बियाणीजी 'जुगनू' कल्पना-चित्र में लिखते हैं—"मानव जीवन प्रगतिशील है। वह बदलता है। अपनी जीवन-व्यवस्था में परिवर्तन करता है। अपना निज का संसार निर्माण करता है।" अतः मानव की सनातनता नित्य नवीनता से है। मानव निर्माण के साथ निर्माता भी! विश्व की मूल-सृष्टि के साथ मानव-सृष्टि भी है, जैसे वन के साथ उपवन! क्योंकि मानव-विकास के लिए विविधता का विशाल क्षेत्र पड़ा है, अतः उसका विकास तब तक अपूर्ण है जब तक कि वह सम्पूर्ण विश्व का अपने ज्ञान चक्षुओं तथा बुद्धि से पूर्णतया अवलोकन न कर ले!

बियाणीजी की दृष्टि में कर्मरत जीवन ही श्रेष्ठ जीवन है। संकटों से जूझना जीवन का सौन्दर्य है। संकटहीन शान्ति में सौन्दर्य नहीं। सौन्दर्य के अभाव में सच्चा जीवन नहीं। अपने कल्पना-चित्र 'नाचती ज्योति' में बियाणीजी ने इसी तथ्य की ओर संकेत किया है। वे लिखते हैं, "नृत्य के अभाव में मृत्यु का आनन्द नहीं। नाचती ज्योति में प्रकाश है, क्रीड़ा है, मरण की अभयता है, पौरुष और पराक्रम का प्रदर्शन है। अतः नाचती ज्योति ही मेरे जीवन का आकर्षण है।" अतः उनके अनुसार जीवन का वास्तविक सौन्दर्य, उसकी यथार्थता संघर्षों से निरन्तर जूझने में, उन पर विजय पाने में है, न कि उससे विरक्ति में।

विश्व में सर्वत्र अविरल गति देखी जा सकती है। गति विश्व के सौन्दर्य को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। गति के अभाव में किसी भी सौन्दर्य अथवा

कला की सृष्टि संभव नहीं। इस दृष्टि से कला और गति सहगामिनी हैं। स्वयं विश्व ही कला का परिणाम है। कला के अभाव में प्रलय है, निश्चलता है। कला की सम्पूर्णता ही ईश्वरत्व है। अतः कला में ही जीवन है, प्रेम है और है सौन्दर्य। और कला की उत्पत्ति संघर्ष में है—विचारों के संघर्ष अथवा एक वस्तु का दूसरी वस्तु से संघर्ष में। आदिशक्ति का नृत्य, जिसके परिणामस्वरूप इस विश्व का जन्म हुआ है, इस कारण सुन्दर है कि उसमें गति है—नृत्य की गति। नृत्य को गति से और गति को नृत्य से पृथक् नहीं किया जा सकता। नृत्य की गति में कलाकार तथा उसकी कला दोनों के दर्शन होते हैं। विराम होने पर कलाकार के दर्शन तो किए जा सकते हैं, पर उसकी कला के नहीं। और कला के अभाव में कलाकार का कोई सौन्दर्य नहीं रह जाता, जिस प्रकार संघर्ष के अभाव में जीवन का। 'नर्तकी' कल्पना-चित्र में भी बियाणीजी का सम्पूर्ण मानव-दर्शन और साथ ही विश्व-दर्शन निखर आया है। वे लिखते हैं—"संभवतः नर्तकी में वह सौन्दर्य न हो जो नृत्य में है। नर्तकी की निश्चलता में गति मिलती है तब कला और आनन्द का आस्वाद मिलता है। विश्व नृत्य अवलोकन में ही विश्वानन्द है। यही मानवी जीवन का सार और कार्य है। नृत्य के पीछे जो नर्तकी है, उसे नृत्य की गति की हर रेखा में देखता रहूँ और नृत्य का आनन्द लूटता रहूँ। नृत्य में नर्तकी का अनुमान है, पर नर्तकी में नृत्य अदृश्य है। दृश्य नृत्य और अनुमानित नर्तकी—यही विश्व-दर्शन है।"

श्री बियाणीजी ने भिन्न-भिन्न कल्पना-चित्रों के माध्यम से विश्व-दर्शन का निरूपण किया है। यद्यपि चित्र भिन्न हैं, परन्तु सब के पीछे एक ही सत्य, एक ही दर्शन का आभास होता है, और वह है कर्म का, गति का, चंचलता का, संघर्ष तथा विविधता का। वे मानव जीवन को गतिमय, संघर्षमय देखना चाहते हैं, क्योंकि गति में ही उसका सौन्दर्य निहित है तथा गति से ही जीवन की कला में निखार आता है। शान्त, विराम-युक्त तथा कर्महीन जीवन को वे हेय समझते हैं।

श्री बियाणीजी के सभी चित्र कल्पना-प्रसूत हैं। उनकी मान्यता है कि कल्पना के माध्यम से ही मानव तथा विश्व-दर्शन को भली-भाँति समझा जा सकता है, क्योंकि कल्पना का क्षेत्र ही निर्विघ्न और विशाल है। कल्पना के क्षेत्र में ही बुद्धि स्वतन्त्रतापूर्वक विचरण कर सकती है तथा विश्व की विविधता, विशालता और सौन्दर्य का एक साथ अवलोकन कर सकती है। कल्पना जगत् में यद्यपि सौन्दर्य से मस्त पुष्पों का मकरन्द नहीं, सुस्वादु मीठे फल नहीं तथा मानव-निर्मित उद्यान की व्यवस्था और लावण्य नहीं, तथापि उसमें अस्तित्व, स्थायित्व और थके व्यक्ति

के लिए पर्याप्त छाया है । यही कारण है कि बियाणीजी ने विश्व में सत्य का अवलोकन करने के हेतु कल्पना का सहारा लिया है ।

विद्वान लेखक, श्री ब्रजलाल बियाणीजी, की कृति 'कल्पना-कानन' क्या भाव और क्या भाषा सभी दृष्टि से एक उच्चकोटि की रचना है । इसे किसी भी दृष्टि से राष्ट्रीय स्तर की पुस्तकों की श्रेणी में सरलता से रखा जा सकता है ।

'धरती और आकाश'

प्रस्तुत पुस्तक 'धरती और आकाश' श्री ब्रजलालजी बियाणी द्वारा लिखित २१ कल्पना-चित्रों का संग्रह है । यद्यपि प्रत्येक चित्र एक दूसरे से भिन्न है, तथापि उन सभी के मूल में एक ही शाश्वत विचार, एक ही अडिग विश्वास और एक ही स्थायी आदर्श विद्यमान है, जो इन चित्रों को, भिन्न होते हुए भी एक सूत्र में गुम्फित किए हुए हैं । और वह विचार अथवा आदर्श है 'विविधता में एकरूपता' का ।

विश्व विविध रूप है । विविधता में ही विश्व का सौन्दर्य है । मूल में केन्द्रित शक्ति एकरूपता है । विकसित होने पर वह विविधरूपा हो जाती है, और उसमें से फिर एकरूपा शक्ति निर्मित होती है । इस प्रकार एकता और विविधता का यह चक्र ही विश्व-नियन्त्रण का, शक्ति का साधन है । साहित्य भी यदि विश्व की इस शक्ति का वरण करे तो स्थायी और निर्माणशील बन सकता है । इन कल्पना-चित्रों में, विविधता में एकरूपता प्रकट करने का ऐसा ही प्रयास किया गया है ।

श्री बियाणीजी के विचार में कल्पना साहित्य-सृजन का शृंगार है और समस्त मानवी विकास का आदि स्रोत भी । कल्पना-शक्ति आकाश की शक्ति का प्रतीक है और आकाश-शक्ति विश्व-शक्ति का । धरती जीवन को कल्पना द्वारा विश्व-शक्ति का स्वरूप प्रदान करती है । धरती जड़ है, तो आकाश चैतन्य । जड़ और चेतन के मिलन से नई सृष्टि का सृजन होता है । इस दृष्टि से यह संग्रह जड़ और चेतन का मिलन है, स्थायी और अस्थायी का सह-दर्शन है एवं आदर्श और व्यवहार का समन्वय है । प्रकृति के दर्शन के साथ विचारों के रूप में आत्म-शक्ति का दर्शन है और है चिन्तन द्वारा परम आनन्द की उपलब्धि ।

श्री बियाणीजी ने काल्पनिक रूप में जिन जीवन-चित्रों का निर्माण किया है, वे अत्यन्त सबल एवं उच्चकोटि के हैं । उन सभी में मानव-जीवन के लिए सन्देश है चंचलता और परिवर्तनशीलता में सृजन तथा विकास का । परिवर्तन में गति और गति में जीवन । लेखक इसी गतिशीलता को जीवन का मुख्याधार मानता है । यही गतिशीलता विश्व-शक्ति की द्योतक है । यही कारण है कि लेखक बन्धन को

भी मुक्ति का साधन मानता है। दोनों में कोई विरोध नहीं, वरन् वे एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों के समन्वय में ही मानव जीवन है। श्री बियाणीजी अपने कल्पना-चित्र 'बन्धन और मुक्ति' में लिखते हैं—'शरीर आत्मा का बन्दीवास कारागृह नहीं, वह उसका आवरण है और स्वयं क्षण-क्षण बदलता हुआ विनाश की ओर जाता हुआ वह आत्मा को स्थायी रखता है, बलवान बनाता है और अन्त में अपना विनाश कर आत्मा को अमरत्व देता है। अतः जेलखाना बन्धन नहीं, विकास का क्रम है। अतः बन्धन निर्माण की एक कड़ी अथवा सोपान मात्र है। उसे सहर्ष स्वीकार करना ही निर्माण के पथ पर आगे बढ़ना है। पर इस बन्धन और मुक्ति, आत्मा और शरीर के सम्बन्ध को ज्ञान द्वारा ही जाना जा सकता है।' लेखक का विश्वास है, कि जो अज्ञानी है वह बन्धन और मुक्ति के रहस्य को नहीं समझ सकता और बिना इस रहस्य को समझे, वह निर्माण के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकता। अज्ञानी मनुष्य कायर होता है। उसमें जीवन की गति नहीं होती। वह जीवन, सत्य, सौन्दर्य, प्रेम आदि किसी भी आदर्श को समझने तथा उस तक पहुँचने में असमर्थ रहता है। ज्ञान ज्योति है; उसमें निर्माण-शक्ति है। इसी शक्ति का अवलोकन कर विश्व की मूल शक्ति को सम्पूर्ण ज्ञानी कहा जाता है। श्री बियाणीजी 'लघुकीट' में लिखते हैं—'यदि मुझे विश्व के मूल नियम का ज्ञान हो जाय, तो मैं सारे विश्व का पुनर्निर्माण कर सकता हूँ।'

ज्ञान में निर्माण की शक्ति है, और निर्माण में निर्माता के जीवन का अदृश्य दर्शन है। ईश्वर ने इस सृष्टि का निर्माण किया। अतः उसके अस्तित्व और शक्ति का सबको ध्यान है। यदि मनुष्य भी निर्माण कार्य में संलग्न हो जाए, तो उसका अस्तित्व भी चिरस्थायी हो जाए और साथ ही पृथ्वी पर स्वर्ग की सृष्टि भी की जा सके। श्री बियाणीजी के मत में यह तभी सम्भव हो सकता है, जबकि मनुष्य अपनी बुद्धि का विस्तार करे तथा अपने ज्ञान द्वारा मानव में ही सत्य के दर्शन करना सीखे। वे लिखते हैं—'जब तक मनुष्य पत्थर में परमेश्वर पाता है, उसकी पूजा करता है, तब तक मानव में उसे ईश्वर नहीं दिखेगा और न मानवता की वह सच्ची आराधना ही करेगा।' कहना उचित ही होगा कि श्री बियाणीजी मनुष्य के अपरिमित ज्ञान और उसकी अजस्र शक्ति में पूर्ण आस्था रखते हैं, पर वे उसके अविवेकपूर्ण व्यवहार तथा अज्ञान-प्रेरित कायरता से दुखी हैं। अतः वे अपने कल्पना-चित्रों द्वारा मनुष्य को अपने ज्ञान का विस्तार करने अपनी शक्ति को समझने के लिए आह्वान करते हैं तथा उसे निर्माण के पथ पर बढ़ने के लिए ललकारते हैं। इस दृष्टि से उनके कल्पना-चित्रों का संग्रह—'धरती

और आकाश' का महत्व केवल राष्ट्रीय दृष्टि से न होकर सम्पूर्ण मानवता की दृष्टि से आँका जा सकता है। दोनों ही पुस्तकें हिन्दी साहित्य को लेखक की अभूतपूर्व देन हैं तथा हिन्दी साहित्य जगत् आपका सदैव आभारी रहेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

★

प्रगतिशील समाज के प्रवर्तक

लेखक

मुरलीधर मन्त्री, एम०ए०, 'साहित्यरत्न'–इन्दौर

(एक सफल शिक्षक एवं साहित्यकार।)

महापुरुषों के कार्य ही जन-जीवन में परिवर्तन के द्योतक होते हैं। समय-समय पर समाज की रचना में कुछ ऐसे क्षण उपस्थित हो जाते हैं जिन्हें मानव जीवन के लिए अत्यन्त ही उपयोगी कहा जा सकता है। समाज में ऐसे विचारों का प्रादुर्भाव केवल वे ही महानुभाव करते रहे हैं जोकि देशभक्ति एवं कर्तव्य-निष्ठा की पृष्ठभूमि को भली-भाँति समझ सकें हैं। जन-साधारण के कार्यों का मूल्यांकन कर उन्हें प्रगति की ओर प्रेरणादायक उद्‌बोधन देकर परिवर्तनशील मार्ग-दर्शन प्रस्तुत करना ही महापुरुषों के कार्य कहे जा सकते हैं। बियाणीजी ने मानव-समाज की रचना के प्रत्येक पहलू पर अपने विचारों की गंगा बहाई है। वे वास्तव में समाज-कल्याण एवं समाज को नव-निर्माण की दिशा की ओर ले जाने में समर्थ रहे हैं।

अनेक अवसरों पर आपने, वर्तमान समस्याओं को ध्यान में रखकर, समाज की उचित एवं अनुचित गतिविधियों पर आपने विद्वत्तापूर्ण एवं दूरदर्शितापूर्ण आख्यानों के द्वारा समाज को नव-जीवन दिया है। आपके विचारों में सामजंस्यता एवं मार्मिकता के स्थानों का अवलोकन भली-भाँति मालूम पड़ता है। सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों, रूढ़िवादियों के प्रति आपने हमेशा समाज को प्रगतिशील विचारों एवं भावों के साथ ही साथ व्यावहारिक परिवर्तन से विभूषित किया है। समाज के नवनिर्माण में आपका योग एक सफल एवं आदर्शपूर्ण विवेक को ही प्रदर्शित करता रहा है।

बियाणीजी के विचारों ने समाज को उच्चकोटि के आदर्शों की शृंखला प्रस्तुत करने में दूरदर्शितापूर्ण कार्य किया है। आपके विचारों में महानता एवं गम्भीरता के साथ ही साथ मानव-कल्याण की भावना को भी स्थान मिला है। सम्पूर्ण मानव समाज को शान्ति और समानता के विचारों से आपने हमेशा प्रवाहित किया है। समाज की अनेक अविवेकपूर्ण तथा तर्करहित गतिविधियों पर नव-

जीवन की परिवर्तनशील व्यावहारिक प्रणालियों का सफल चित्रण कर बियाणीजी ने वास्तव में समाज को आदर्श के उस स्थान पर लाकर खड़ा कर दिया है जिसमें राष्ट्र-निर्माण के साथ ही साथ विश्व-शान्ति एवं लोककल्याण के दृश्यों का भी अवलोकन किया जा सकता है।

वर्तमान समय की अनेक समस्याओं के हल आपने मानव के सत्य, न्याय, निर्भयता, अपरिग्रह आदि सामाजिक गुणों के द्वारा ही प्रस्तुत किए हैं। व्यक्ति की निर्भय शक्ति समाज एवं राष्ट्र निर्माण में उच्चकोटि का आदर्श प्रस्तुत कर सकती है। आपके विचारों में मानव की शक्तियों के प्रमाण और उनके उचित उपयोग के सामर्थ्य से ही समाज की प्रगति की सीमा सम्बन्धित है। मानव-जीवन में भावना और विचार इन दोनों गतियों का संगम है और इन गतियों की विकसित शक्ति मानव-समाज की प्रगति और महानता का लक्षण है।

बियाणीजी के विचारों ने समाज के प्रगतिशील विकास के साथ ही साथ अनेक धार्मिक, आर्थिक एवं राजनैतिक पहलुओं पर भी अपनी विद्वता का परिचय दिया है। आर्थिक क्षेत्र में आपने व्यवसायियों को समय-समय पर सम्बोधित कर उन्हें अपने समाज और राष्ट्र के प्रति कर्तव्यनिष्ठा एवं समानता के गुणों से अवगत कराया है। धार्मिक क्षेत्र में आपने समाज की प्राचीन परम्पराओं के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए उन्हें समयानुकूल परिस्थितियों के अनुसार कार्यरत रहने की प्रेरणा दी है। आपके विचार धार्मिक क्षेत्र में बहुत ही प्रभावशील एवं भारतीय संस्कृति के प्रति हृदयग्राही बन पड़े हैं। आपने धर्म के प्रति जिस श्रद्धा एवं भक्ति का दिग्दर्शन कराया है वह वर्तमान समय में प्राचीन भारतीय संस्कृतियों के गौरव के लिए उत्कृष्ट ही नहीं वरन् समाज एवं राष्ट्र दोनों के लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं। राजनैतिक क्षेत्र में तो आपके विचारों ने वर्तमान समय में राष्ट्र के प्रति एक सच्ची देशभक्ति एवं त्याग के रूप में अपना आदर्श प्रस्तुत किया है। महात्मा गाँधी के सच्चे विचारों के प्रति तथा उनके अनुयायियों के प्रति अगाध स्नेह हमें आपके विचारों में देखने को मिलते हैं।

चरित्र-निर्माण एवं नैतिकता की ओर आपने समाज के सभी व्यक्तियों का ध्यान आकर्षित किया है। नैतिकता ही सच्चे अर्थ में राष्ट्र के निर्माण का मूल रूप है। नैतिकता को विवेक शक्ति पर आधारित कर आपने मानव समाज के लिए जो मार्ग प्रशस्त किया है वह चिरस्मरणीय रहेगा। धर्म एवं नैतिकता का जो समन्वय आपने प्रस्तुत किया है वह वास्तव में समाज के कल्याण तथा उसकी प्रगति के लिए महान कार्य है।

सामाजिक कार्यों के प्रति समानता एवं सरलता का व्यवहार मानव की मानव के प्रति सच्ची आस्था प्रस्तुत करता है। अतः सामाजिक सुखों के प्रति समाज के व्यक्तियों एवं उनके कार्यों का समन्वय अत्यन्त आवश्यक है। निर्बलों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण कार्य एवं सहृदयता समाज के व्यक्तियों के उच्चकोटि के आदर्श का लक्षण है। शान्तिमय समाज-रचना के लिए समानता एवं सहृदयतापूर्ण व्यवहार बहुत आवश्यक है। अतः समाज के व्यक्तियों का निर्भयतापूर्ण व्यवहार एवं नैतिकतापूर्ण कार्य समाज की वास्तविक रचना के द्योतक हैं।

वास्तव में बियाणीजी के विचारों ने समाज को प्रगति के पथ पर अग्रसर कर मानव-जाति के सम्मुख कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण उद्धरणों को प्रस्तुत किया है जिन्होंने वर्तमान समाज-रचना के प्रत्येक पहलू पर अपनी छाप लगा दी है। प्रगतिशील विचारों का समन्वय अत्यन्त ही गहन समस्याओं के प्रति सरलता एवं सरसता, सामाजिक नैतिकता एवं उनके प्रति समाज के व्यक्तियों की आस्था, धर्म-व्यवस्था एवं स्व-अधिकारों के रक्षण का सामर्थ्य, राजनैतिक दृष्टिकोणों के प्रति विलक्षण एवं गम्भीरतापूर्ण तर्कसंगत विचार, बियाणीजी के गहन अध्ययन एवं विवेकपूर्ण विचारों की महानता के प्रतीक हैं। ★

अजेय महारथी श्री बियाणीजी

लेखक
शिवचन्द्र नागर, एम० ए०, एल एल० बी०—अमरावती
(हिन्दी के कवि एवं लेखक; 'मातृभूमि' दैनिक, अकोला और अमरावती
के सम्पादक ।)

आपने सागर-तट पर कुछ ऐसी विशाल शिलाएँ देखी होंगी जो अनेकों उतार-चढ़ाव, आँधी-तूफान एवं लहरों के सतत संघर्ष की चुनौती के बीच भी मुसकराती रहती हैं। बस बियाणीजी का व्यक्तित्व भी कुछ ऐसा ही है। जीवन की जय-पराजय, सुख-दुःख, हर्ष-विषाद सभी को इन्होंने सहज भाव से स्वीकार किया है। इनके मुख-मण्डल पर सदैव खेलनेवाली इनकी विनम्र स्मिति ही इनके विशाल व्यक्तित्व का सूक्ष्म परिचय है। इनके नेत्रों का तेज, नासिका का नुकीलापन एवं अधरों की रेखाएँ तत्वग्राहकता, विश्लेषकता और अनुभूति की सहज सहृदयता का परिचय देते हैं। इनके दुबले-पतले साधारण उँचाईवाले गौरवर्णी शरीर पर खादी की कांग्रेसी वेशभूषा--धोती, कुरता और कम चौड़ाई वाली गांधी टोपी—विशेष आकर्षक लगती है।

बियाणीजी जीवन को विकास का केन्द्र बिन्दु मानते हैं, और उनका विश्वास है कि अन्य कलाओं के साथ-साथ जीवन भी एक महत्वपूर्ण कला है। उनके इस विश्वास को आप उनके जीवन-व्यवहार में पाएँगे। वे अस्त-व्यस्त वातावरण के बीच नहीं रह सकते। स्वच्छता, निर्मलता एवं सामंजस्य-जनित सौन्दर्य को उन्होंने अपने दैनिक जीवन में उतार लिया है। इस विषय में उनकी दृष्टि भी इतनी पैनी है कि आस-पास पड़े हुए तिनके, धूल, अथवा कागज के टुकड़े भी उनकी दृष्टि से नहीं बच पाते। बियाणीजी की यह प्रवृत्ति दूसरों के लिए केवल दिखाऊपन लिये हुए नहीं रही, बल्कि वह तो 'स्वान्तः सुखाय' एवं स्वयं के समाधान के लिए रही है। जब वे जेल में थे तब भी प्रातः शेविंग, स्नान, वस्त्र-परिवर्तन उनका नित्य का कार्यक्रम था। उनके कुछ साथियों ने पूछा—"सुबह ही सुबह आप रोज क्यों गाल खुरचा करते हैं? यहाँ किसे दिखाना है?" इस पर उन्होंने

सहज भाव से उत्तर दिया कि "अपना दाढ़ी बढ़ा अस्त-व्यस्त चेहरा मैं स्वयं ही नहीं देख सकता।"

बातचीत की कला तो वास्तव में जीवन की कला का एक अंग ही है। कहाँ कैसे बात करें। बच्चों से, स्त्रियों से, परिचितों से, अपरिचितों से कैसे व्यवहार करें आदि में आप अत्यन्त प्रवीण हैं। शिष्टता और मिष्टता ये दो गुण उनकी बातचीत के प्राण हैं। एक बार एक बहन ने तो आश्चर्य भी प्रकट किया था कि 'काकाजी (बियाणीजी) चाय तक में तो चीनी लेते नहीं फिर बातचीत में इतनी मिठास कहाँ से आ गई?' इस पर मैंने यही उत्तर दिया था कि 'बहनजी, यह चीनी का मिठास थोड़े ही है, यह तो अन्तर का मिठास है।'

आदरातिथ्य हमारे देश की एक सांस्कृतिक परम्परा है, पर इस महान् परम्परा के तत्व बियाणीजी को बहुत अधिक मात्रा में मिले हैं। कोई भी आगन्तुक चाहे वह परिचित हो या अपरिचित इनके आदरातिथ्य का पात्र सहज ही बन जाता है। इस विषय में पात्रता-अपात्रता का प्रश्न ही नहीं उठता। अतिथि की सेवा करने में तो स्वयं इन्हें बड़ी प्रसन्नता होती है; यही कारण है कि इन्हें आप बड़ी प्रसन्नता के साथ अतिथियों के हाथ धुलाते हुए, उनकी ओर तौलिया बढ़ाते हुए तथा उन्हें पान-सुपारी भेंट करते हुए देख सकते हैं।

दृष्टिकोण की उदारता यह इनके स्वभाव की एक अनन्य विशेषता है। इतने विशाल विश्व में सबलताओं का आदर करनेवाले तो सब कहीं मिल जाते हैं, पर अपने स्नेहियों की दुर्बलताओं को प्यार करनेवाला कहीं कोई एकाध ही मिलता है। बियाणीजी में जहाँ एक ओर अपने मित्रों और स्नेहियों के गुणों का आदर करने की भावना है वहीं दूसरी ओर उनकी दुर्बलताओं को सह सकने की उदारता भी है। रुपए-पैसे के विषय में भी इतने ही उदार हैं। दूसरों के संकट को सहानुभूति से समझकर उनकी सहायता के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। यह बात नहीं कि इनका यह त्याग सदैव किसी न किसी अपेक्षा को ही लेकर होता हो, बल्कि मैंने देखा है कि कभी-कभी वे बड़े से बड़ा त्याग बिल्कुल निरपेक्ष भावना से भी कर डालते हैं। पैसे को उन्होंने दाँत से पकड़ना नहीं सीखा बल्कि शान के साथ लेना और शान के साथ देना सीखा है।

अथाह परिश्रम और सेवाभाव से जब व्यक्ति अपने को समष्टि में लय करने लगता है तो उससे उसके व्यक्तित्व की परिधि विस्तृत होने लगती है। वह महान बनने लगता है। दुनिया के महापुरुषों के जीवन-इतिहास के पीछे इसी सर्वव्यापी सत्य के दर्शन होते हैं। यदि बियाणीजी के जीवन की प्रगति पर दृष्टि डालें तो

हम सहज ही समझ सकते हैं कि उनका जीवन भी उन सब कठोर कसौटियों एवं परीक्षाओं के बीच से गुज़रा है जिनमें विजयी होकर व्यक्ति महान बनता है। अत्यन्त साधारण आर्थिक स्थिति से अत्यन्त सम्पन्न स्थिति तक; एक साधारण कांग्रेसी स्वयंसेवक से कांग्रेस प्रान्ताध्यक्ष तक; नगरपालिका के साधारण सदस्य से प्रान्त के वित्तमन्त्री तक पहुँचने में इनके स्वभाव के ये ही गुण कारणीभूत रहे हैं। इनका परिश्रमी एवं स्फूर्तिमय स्वभाव आज भी अनुकरणीय है। द्रुत गति से पैदल घूमना उन्हें अच्छा लगता है। इन्होंने अपने जीवन-क्रम को कुछ इस प्रकार साध लिया है कि रात को बहुत देर तक काम करते रहेंगे पर फिर भी सुबह को सूर्योदय के पूर्व ही आप इन्हें नित्य की भाँति स्फूर्तिमय पाएँगे।

अनुशासन और व्यवस्था ये दो इनके स्वभाव के कठोर गुण हैं, पर ये गुण इन्हें बचपन से ही संस्कार रूप में मिले होने के कारण इनके जीवन की आधारशिला बन गए हैं। यही कारण है कि इनके सब काम बड़े सुचारु एवं व्यवस्थित रूप से होते हैं। इनमें अनुशासन और व्यवस्था-प्रेम कूट-कूटकर भरा होने के कारण ये अपने साथियों से भी इस बात की अपेक्षा करते हैं कि वे भी जीवन में अनुशासन और व्यवस्था को अपनाएँ।

मैंने इन्हें लड़ते-झगड़ते हुए या विकृत रूप से क्रोध करते हुए कभी नहीं देखा। किसी से बड़े से बड़ा अपराध हो जाने पर भी इनकी भृकुटी वक्र हो जाना तथा ओठों की रेखाओं का उग्र हो जाना ही इनके क्रोध की अभिव्यक्ति की चरम सीमा है।

सामंजस्य का ही दूसरा नाम सौन्दर्य है। इस दृष्टि से बियाणीजी सौन्दर्य-प्रेमी हैं। उन्हें फूलों का, लताओं का, पर्वतों का, प्रपातों का सौन्दर्य जितना मुग्ध करता है उतना ही मन का, तन का और विचारों का सौन्दर्य भी विशेष प्रिय है। जैसे कलाकार न तो विसंवादी स्वरों की सृष्टि करता है और न विसंवादी वातावरण के बीच रह ही सकता है, वैसी ही बात बियाणीजी के सम्बन्ध में भी सच है। उनका विचार है कि कला जीवनमय और जीवन कलामय होना चाहिए। प्रतिकूलताओं से वे जूझ सकते हैं पर प्रतिकूलताओं के बीच वे रह नहीं सकते।

अनेक कलाकारों और विचारकों का कथन है कि 'मानव-जीवन की आधार शिला नारी है।' नारी मनुष्य के जीवन में कभी प्रेरणा बनकर आती है तो कभी दुर्बलता बनकर भी। सांसारिक नातों-रिश्तों के रूप में वह कभी बहन बनकर हमें निर्मल स्नेह के अमृत में डुबा जाती है, तो वही जीवन-सहचरी के रूप में गृहस्थ के रथ की धुरी बनकर जीवन के संघर्षों की परुषता को अपने प्रेम के गंगाजल

से धो भी देती है। बियाणीजी के जीवन-साफल्य का बहुत कुछ श्रेय उनकी जीवन संगिनी श्रीमती सावित्रीदेवी को ही है। वे उनकी जीवन-प्रवृत्तियों में कभी आड़े नहीं आई बल्कि उनमें एकरस बनकर इसी प्रकार अपने को लय कर दिया, जैसे यमुना प्रयाग में गंगा से मिलकर अपने को एकरस कर देती है। अलग-अलग उनसे एवं बियाणीजी से मिलकर ऐसी ही अनुभूति होती है कि जैसे एक के बिना दूसरे का व्यक्तित्व अधूरा हो।

बियाणीजी जिस प्रकार अपने विचारों में प्रगतिशील हैं वैसे ही अपने जीवन में भी उन्होंने समाज की कुरीतियों, बाल विवाह, परदा-प्रथा आदि के विरुद्ध आवाज़ ही नहीं उठाई बल्कि उनके विरुद्ध जबर्दस्त संघर्ष भी किया है। जिस विवाह में दहेज लिया गया हो अथवा जहाँ विवाह परदे से हो वहाँ ये नहीं जाते। इनका विश्वास है—'जीवन का सार विचार है और जीवन की सफलता है विचारानुसार कृति।'

राजनीति और साहित्य की धाराएँ जीवन में कभी अलग-अलग बहती हैं और कभी मिली-जुली। कुछ लोग जीवन में राजनैतिक अधिक होते हैं और साहित्यिक कम और कुछ साहित्यिक अधिक होते हैं तथा राजनैतिक कम। पर कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनके सम्बन्ध में यह निर्णय करना यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाता है कि वे साहित्यिक अधिक हैं या राजनैतिक अधिक। बियाणीजी इसी कोटि में आते हैं। उनके जीवन में हमें साहित्य और राजनीति का अपूर्व सामंजस्य मिलता है पर फिर भी गम्भीर विश्लेषण से हमें पता लगता है कि वे हृदय से साहित्यिक हैं पर बुद्धि से राजनीतिज्ञ। कविता को वे विचारों एवं भावों की अनैसर्गिक अभिव्यक्ति मानते हैं। कविता उन्हें प्रिय नहीं पर उनका हृदय साहित्यिक होने के कारण कविता उनके जीवन में इतनी मिल गई है कि उनके भाषणों में ५० प्रतिशत और लेखों में ७५ प्रतिशत कविता रहती है। उनकी पुस्तकें 'कल्पना-कानन' एवं 'धरती और आकाश' पढ़िए, उनमें जो भावपूर्ण सरस चित्र उन्होंने उभारे हैं, वे कितने काव्यमय हैं, कितने कल्पनाशील हैं और कितने भावगम्य? कल्पना के आकाश में विचारों के रंगीन गुब्बारे उड़ते चले हैं पर लेखक ने बड़ी कुशलता के साथ उन्हें बुद्धि की डोर द्वारा वस्तुगत सत्यों के शिलाखण्डों से बाँध दिया है।

बियाणीजी गहन बुद्धिवादी एवं तर्कवादी हैं। यह उनकी पुस्तक 'जेल में' से पता चलता है।

यह तो रही बियाणीजी के व्यक्तित्व एवं साहित्य सम्बन्धी बात, पर साहित्य एवं कला के सम्बन्ध में उनके क्या विचार हैं?

आज प्रमुखतः साहित्य में दो धाराएँ प्रचलित हैं। एक इटली के साहित्य-शास्त्री क्रोशे की विचारधारा है। वह कला का कोई उद्देश्य नहीं मानता। उसके मतानुसार 'कला कला के लिए' है। दूसरी मार्क्सवादी धारा है। इस धारा के प्रमुख विचारक कॉडवेल का मत है कि—"काव्य समाज के विकास में योग देने-वाला एक अस्त्र है। वह शुभ के लिए मनुष्य को प्रेरित करता है और श्रम को हलका बना देता है। काव्य सामूहिक भावों की व्यंजना द्वारा समाज को गौरवमय बनाता है।"

कला और साहित्य के सम्बन्ध में बियाणीजी के जो विचार हैं वे क्रोशे की अपेक्षा कॉडवेल के अधिक निकट हैं। बियाणीजी का विश्वास है कि 'कला कला के लिए नहीं', बल्कि 'कला जीवन के लिए है।' उनका कथन है कि उच्चकोटि की कला वह है जो समाज, राष्ट्र और जीवन के रथ को वह जहाँ है उससे आगे खींचकर राजमार्ग पर ले जाए; और बियाणीजी अपनी साहित्य-साधना में उसी लक्ष्य को लेकर आगे बढ़े रहे हैं। ★

बियाणीजी विविध रूपों में

लेखक

महन्त लक्ष्मीनारायणदास—रायपुर

(लोकसभा के सदस्य; रायपुर जिले और मध्य प्रदेश के एक प्रधान कार्यकर्ता।)

श्री बियाणीजी से मेरा सम्बन्ध अत्यन्त निकट का रहा है। आज़ादी की लड़ाई में सन् १९३० में नागपुर जेल में साथ रहे तथा उस जेल में महाकोशल, मराठी सी.पी. तथा बरार ऐसे तीनों प्रान्तों के देशभक्त थे। श्री बियाणीजी का तीनों प्रान्तों के देशभक्तों के साथ सामान्य व्यवहार रहा। हर एक के सुख-दु:ख में उनकी पूरी सहानुभूति रहती थी। भूतपूर्व मध्य प्रदेश में श्री बियाणीजी 'विदर्भ-केसरी' के नाम से विख्यात थे तथा विदर्भ के राजनैतिक तथा सामाजिक जागरण में श्री बियाणीजी का महत्वपूर्ण अनुदान था। भारत सरकार द्वारा हैदराबाद में जब पुलिस कार्यवाही की गई थी तब विदर्भ की जनता के संगठन में तथा उसका मनोबल बनाए रखने में श्री बियाणीजी ने महत्वपूर्ण कार्य किया।

स्वतन्त्रता-संग्राम के अतिरिक्त श्री बियाणीजी से मध्य प्रदेश विधान सभा में भी मेरा निकटतम सम्बन्ध था। श्री बियाणीजी आदरणीय पं. रविशंकरजी शुक्ल के मन्त्रिमण्डल में सम्मिलित किए गए थे। आप एक मन्त्री के रूप में भी प्रभावशाली तथा सफल प्रशासक प्रमाणित हुए थे। साहित्यिक क्षेत्र में भी श्री बियाणीजी द्वारा उल्लेखनीय सेवाएँ की गईं। श्री बियाणीजी भू. पू. मध्य प्रदेश में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष थे। उनके कार्यकाल में म. प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन का सफल संगठन समूचे राज्य में हुआ और सम्मेलन की नींव बहुत ही मज़बूत बनी।

श्री बियाणीजी अपनी नि:स्वार्थ राष्ट्रीय तथा सामाजिक सेवाओं के कारण निश्चय ही अभिनन्दन के पात्र हैं। मध्य प्रदेश के इतिहास में श्री बियाणीजी का उल्लेख सदैव एक निस्वार्थ तथा विनम्र कार्यकर्ता के रूप में किया जाएगा। ★

श्री ब्रजलाल बियाणीजी का राजनैतिक नैपुण्य

लेखक
एम० एन० जुननकर, एम० ए०—अकोला
('मातृभूमि' दैनिक के सह-संपादक; पत्रकार एवं लेखक।)

श्री बियाणीजी ने, दुबले-पतले और कृष शरीर के रहते हुए भी, अपने कार्यों को शारीरिक एवं बौद्धिक दृष्टि से उसी प्रकार उच्च स्तर से सम्पादित किया, जिस प्रकार कि वे अपने अकोला के राजस्थान भवन में चौथी-पाँचवी मंजिल पर रहते थे। उनका राजस्थान भवन उनके सभी राजनैतिक कार्यों का केन्द्र था, जहाँ से वे लगभग ३० वर्षों तक विदर्भ की राजनीति का संचालन करते रहे। उनके कार्यकाल में उनके अनेक राजनैतिक विपक्षी थे, उनमें से कुछ तो उनके कटु राजनैतिक शत्रु बन गए, परन्तु उनके साथ व्यवहार करते हुए बियाणीजी ने कभी भी नैतिक एवं मानवीय सिद्धान्तों का परित्याग नहीं किया। बियाणीजी का व्यवहार सदैव अपने विपक्षियों के साथ भी अत्यन्त आत्मीयता का रहा, और यही कारण था कि वे अपने विरोधियों को भी अपनी ओर आकर्षित कर सके। अपने मृदुल स्वभाव के कारण उन्होंने अपने विपक्षियों पर विजय प्राप्त की, और उनमें से अनेकों को अपने पक्ष में मिला लिया। उनके विरोधी सदैव उनके मृदु-स्वभाव रूपी छुरी से भयभीत रहते थे, जिसके समक्ष उन्हें बरबस ही परास्त होना पड़ता था।

बियाणीजी के समस्त साधन तथा उनकी सभी राजनैतिक गतिविधियाँ उनके मित्र तथा विरोधियों—दोनों के लिए समान रूप से रहस्यमय बनी रहती थीं, और अपने प्रदेश की राजनीति को संचालित करने में वे प्रति दिन जिन साधनों का उपयोग करते थे उन्हें समझने में उनको अनेकों वर्ष लग जाते थे। मेरे एक मित्र ने बियाणीजी के राजनैतिक कौशल को इन शब्दों में अंकित किया है:—"जो लोग बियाणीजी का उपहास उड़ाने आते थे, वे आगे चलकर उन्हीं के होकर रह जाते थे तथा उनके साथ मिलकर उपासना करते थे; जो लोग उनके सहयोगी थे, वे

एक दशक तक उनकी प्रशंसा करते थे और तत्पश्चात् उनकी प्रशंसा की भावना उनके इस आश्चर्य में परिवर्तित हो जाती थी कि आख़िर बियाणीजी उनके सम्बन्ध में किस प्रकार की भावना रखते थे ।"

प्राय: राजनीतिज्ञों के तौर-तरीक़े अज्ञात होते हैं और यह कोई भी नहीं जान सकता कि उनके मन में किस समय किस प्रकार के विचार संचरित होते हैं । यही बात श्री बियाणीजी के सम्बन्ध में भी लागू होती है । परन्तु उनमें एक विशेषता अवश्य पाई जाती है, और वह यह है कि उनके राजनैतिक जीवन तथा व्यक्तिगत जीवन में पूर्ण भिन्नता दृष्टिगोचर होती है ।

व्यक्ति के रूप में श्री बियाणीजी ने अनेकों व्यक्तियों तथा संस्थाओं की अविस्मरणीय सेवा की है। उनकी दानीवृत्ति असीमित है। वे अपने शत्रु की भी यथायोग्य सेवा करने के लिए भी सदैव तत्पर रहते हैं ।

श्री बियाणीजी की दूसरी विशेषता उनकी उदारता और सहनशक्ति है, जो कि एक राजनीतिज्ञ में पाया जाना दुर्लभ है । उन्होंने भिन्न विचारों के व्यक्ति से कभी भी घृणा नहीं की; उसे कभी भी हानि पहुँचाने का प्रयत्न नहीं किया । प्राय: एक राजनीतिज्ञ के लिए, जिसे अधिकांश जनता का समर्थन प्राप्त हो तथा जिसे ख्याति रूपी श्री प्राप्त हो जाय, अपने जीवन में सन्तुलन बनाए रखना कठिन हो जाता है । इसके विपरीत, श्री बियाणीजी ने सदैव अपने मानसिक सन्तुलन और हृदय की विशालता को बनाए रखा, और उन्होंने कभी भी अपने से भिन्न विचार रखनेवाले विपक्षी का भी अहित नहीं किया । इतना ही नहीं, वरन् उन्होंने अपने विरोधी के विचारों की सदैव सराहना की । इस प्रकार उन्होंने सदैव जीवन में मानवीय व्यवहार को बनाए रखा । उन्होंने जीवन में जो कोई भी कार्य किया, उसे शान और पूरे मनोयोग से किया ।

विदर्भ की राजनीति में श्री बियाणीजी को जो कुछ सफलता प्राप्त हुई, उसका एक-मात्र कारण उनकी अपने सहयोगियों तथा अनुयायियों को एकत्रित करने तथा उन्हें अपने अनुकूल ढालने की कार्य क्षमता है । अनुयायियों में विचार-वैभिन्य का होना स्वाभाविक है, अत: उन्हें एकसूत्र में पिरोना तथा उनसे अपने अनुसार कार्य कराना बिरले ही नेता का काम है । बियाणीजी ने अपनी असीम सहनशक्ति तथा मृदुल स्वभाव के कारण, सभी के विचारों का स्वागत करते हुए, उन्हें एकत्रित करने का सराहनीय कार्य किया ।

श्री बियाणीजी बहुत ही परिश्रमी राजनीतिज्ञ हैं । उन्होंने अपने राजनैतिक जीवन में विदर्भ के कोने-कोने में भ्रमण किया, तथा वे वहाँ के सामाजिक जीवन से

भली भाँति परिचित हैं। अनेकों ग्रामों के प्रारम्भिक नाम से वे परिचित हैं, तथा वहाँ की जनता के वे कभी प्राण थे। वे जन-सम्पर्क के महत्व को समझते थे, तथा उन्होंने सदैव अपने को जनता के सानिध्य में ही रखा। अतः उन्हें जन-नेता (Mass leader) की उपाधि से विभूषित किया जा सकता है। उनका जन्म, उनकी आकृति, उनका स्वभाव तथा उनके कार्य करने का ढँग सभी कुछ उन्हें जनता के समीप लाने में सहयोग प्रदान करते हैं। जनता पर उनका प्रभाव इतना अधिक था, कि उनकी एक आवाज़ पर अनेकों की थैलियाँ खुल जाती थीं। अतः किसी भी सामाजिक कार्य को पूर्ण करने में उन्हे आर्थिक कठिनाई कभी नहीं हुई।

कहना अनुचित न होगा कि विदर्भ, विशेषतः अकोला, के लोग श्री बियाणीजी के कार्यों की सराहना करते हुए नहीं अघाते हैं तथा उन कार्यों की स्मृति कर विकल हो उठते हैं, जिनके द्वारा बियाणीजी ने विदर्भ के जीवन में—सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन में–प्राण फूँके। वास्तव में, विदर्भ के सार्वजनिक जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं जिसे श्री बियाणीजी ने अछूता छोड़ा हो। बियाणीजी ने जिनका कि प्रारम्भिक जीवन अत्यन्त साधारण था और जो अपने अथक परिश्रम के आधार पर ख्याति के उच्च शिखर पर पहुँचे, कभी भी साधारण जनता से अपना सम्बन्ध नहीं त्यागा, और वे सदैव तन-मन-धन से उसकी सेवा करते रहे। साधारण जनता तथा शोषितों की सेवा उन्होंने व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक दोनों ही क्षेत्रों तथा रूपों में की। उनके जीवन की यही सबसे बड़ी विशेषता एवं उपलब्धि है। ★

नवनीत और पारद के मिलन बिन्दु श्री बियाणीजी

लेखक
दीनदयाल गुप्त—नागपुर
(नागपुर कांग्रेस के पुराने कार्यकर्ता, शुक्ल मन्त्रिमण्डल के सदस्य, बम्बई विधान सभा के भूतपूर्व उपसभापति ।)

लगभग सन् १६४० तक श्री बियाणीजी का नाम एक कांग्रेस संगठक उत्कृष्ठ वक्ता और विदर्भ नेता के रूप में सुनता रहा। प्रत्यक्ष परिचय हो ही नहीं पाया। तो भी उनका व्यक्तित्व मेरे लिए एक आकर्षण की वस्तु रहा। यह व्यक्ति निकट से देखने और सुनने को मिले यह एक अभिलाषा मेरे जैसे सामान्य कार्यकर्ता के दिल में हमेशा बनी रही। सन् १६५० के व्यक्तिगत सत्याग्रह के आन्दोलन के कुछ पूर्व उनका पहला भाषण नागपुर के व्यापारियों की सभा में मैंने सुना। मेरे वक्तृत्व सीखने के दिन थे। उनकी मुलायम किन्तु चित्तवेधी वक्तृत्व शैली मेरे दिल पर अपना असर कर गई, और बाद के एक दो प्रसंगों के अनन्तर कारागृह में उनके साथ निकट रहने का मुझे अवसर मिला।

मेरा स्वयं का स्वभाव बड़ा संकोचशील होने से स्वयं उनसे बातचीत की पहल करने का साहस करने में हिचकता था। अनायास कारागृह में एक दिन मेरे हाथ से मेरे एक सहबन्दी का काँच का गिलास टूट गया। उसकी भरपाई करने की मेरे लिए समस्या हो गई। नुकसान पूरा करना मेरे लिए मुश्किल था और न करने में मानसिक व्यथा होती। ऐसी स्थिति में दिन भर बेचैन रहा। किसी से स्पष्ट कह भी नहीं पाया। मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया, जब मैंने देखा शाम के समय बियाणीजी जिन्हें हम लोग भाईजी कहने लगे थे एक काँच का गिलास हाथ में लेकर मेरे निकट आते दिखाई पड़े। संकोच से मैं बोल नहीं पाया परन्तु मेरे सन्तोष का पारावार नहीं रहा। भाईजी ने मुझे अपने पास बुलाया और बड़े स्नेह से मेरी पीठ सहलाते हुए इतना ही कहा "मुझ से कभी संकोच नहीं करना, आखिर कारा-

गार में तो हम ही एक दूसरे के हो सकते हैं ।" इस छोटी-सी घटना से उनके व्यक्तित्व के सम्बन्ध में कई नाजुक और दक्ष पहलुओं पर विचार करने को विवश हो गया । इसके बाद तो उनकी हर बात से बारीक वृत्ति और प्रवृत्ति की ओर मैं गहराई से देखने लगा । विदर्भ में प्रतिसहकारवादी राजनीति के बाद सब ओर नौजवान और नए कार्यकर्ताओं का एक मंच निर्माण करने में भाईजी का स्तुत्य कार्य रहा है । भाईजी का मातृ हृदयपूर्ण व्यवहार कार्यकर्ताओं के प्रति सहज आत्मीय का और अत्यन्त कोमल वृत्ति सदा मुझे दिखाई पड़ने लगी । कारागार में वे अपने सभी मित्रों के प्रति इसी प्रकार का ममतापूर्ण व्यवहार रखते थे । यह मुझे स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता था । सुबह घूमने के लिए अपने साथियों को प्रेम से जगाते समय जिस मृदुता का परिचय देते थे उसकी स्मृति बड़ी मनोरम है । हमारे एक साथी श्री बाबा देशमुख जिन्हें वे प्रातःकाल आवाज देकर जगाते थे उसे सुनकर मुझ जैसे माता-पिताहीन युवक को ऐसा प्रतीत होता था मानो मेरी माँ मुझे पुनः मिल गई । मैं अपने मित्रों से कई बार इसकी चर्चा करता—"भाईजी अगर मेरी माँ हो जाते तो मैं अपने को कितना भाग्यशाली समझता ।" उनके व्यक्तित्व की यह मृदुता बड़ी आकर्षक रही है और इससे ही शायद अनेक नवयुवकों को उन्हें अपना बनाकर धन्य हो जाते हैं ।

राजनैतिक अखाड़ेबाजी में हम सभी एक-दूसरे को भला-बुरा कहते रहे हैं । किन्तु भाईजी का बीतरागी स्वभाव हमारे सम्मुख अनूठा आदर्श प्रस्तुत करता है, इसका अर्थ यह नहीं है कि वे केवल मृदु ही हैं, अनेक अवसरों पर मेरा उनसे वैचारिक मतभेद भी रहा है । सत्य के आग्रह के प्रति मैंने उन्हें सदा दृढ़ पाया । भाईजी द्वारा चलाए गए विदर्भ आन्दोलन में उनकी अद्भुत एवं नेतृत्व शक्ति का मुझे पर्याप्त परिचय मिला है । उनकी प्रसिद्धि तथा सफलता का मुख्य कारण उनका अथक परिश्रम एवं संगठन कुशलता है इसमें तनिक सन्देह नहीं है । इस प्रकार भाईजी में मृदुता एवं दृढ़ता का सुन्दर समन्वय मुझे मिला है । उपरोक्त गुणों के कारण वे मेरे प्रेरणा केन्द्र हैं । जिन कार्यकर्ताओं को वे अपना मान लेते थे उनके प्रति वे इतने उत्तरदायी रहते थे इसका तो मुझे पर्याप्त अनुभव है ही । उनमें सभी को अपना बना लेने की अद्भुत क्षमता है । एक बार भी उनके सम्पर्क में आनेवालों को जैसे कोई अमूल्य निधि मिल गई हो, यह वह स्वीकार करता है ।

उनके साहित्यिक आदि गुणों में भी मैं परिचय रहा हूँ, किन्तु इन सबकी अपेक्षा उनके आन्तरिक जीवन की गहराई में मुझे सूक्ष्म दार्शनिक तत्वों की उपलब्धि हुई है । मेरी अनुभूति है कि उनसे अनेक मतभेदों के बावजूद भी मेरा मन सदा उनकी

ओर आत्कृष्ट होता रहा है। व्यावहारिक जीवन की मृदुता एवं दृढ़ता ने यदि उन्हें जननायक बनाया है तो भी उनके व्यक्तित्व का सही विकास उनकी सूक्ष्म दार्शनिक जिज्ञासाओं में मुझे दिखाई पड़ता है। कई ऐसे अवसर आए जब उनसे मेरी विविध विषयों पर चर्चा हुई है। चर्चा के ऊपरी तह से जैसे ही गहराई में हम उतरे वैसे ही गम्भीर परन्तु आच्छादित भाव से उन्होंने मुझसे हमेशा प्रश्न किया– "इस ऊपरी व्यवहार के अतिरिक्त क्या कभी जीवन के सूक्ष्म प्रश्नों पर भी तुम विचार करते हो ?" मैं उत्तर देने की अपेक्षा हमेशा जिज्ञासा भरी दृष्टि से उनकी ओर देखता रह जाता हूँ, और उन्होंने हमेशा मेरी दृष्टि एक व्यापक नम्र पर दृढ़ मानवता की ओर खींचा है।

यह उनका जीवन के प्रति एक सत्य निष्ठ दृष्टिकोण है। जिसके कारण वे कुशल राजनीतिज्ञ के अतिरिक्त व्यापक समाज सुधारक भी हैं। उनका यह समाज सुधार केवल अपनी जाति में मर्यादित नहीं रहा, वह एक सम्पूर्ण मानवता को लेकर विश्व-व्यापी बन गया है। जीवन में आदमी चाहे किसी भी स्तर पर रहे परन्तु उसकी एक उदात्त मानवीय संस्कृति प्रत्यक्ष आचार-विचार और विचारों में स्पष्टता होनी ही चाहिए। इस पर भाईजी का सदा आग्रह रहा है। कभी-कभी उनके इस अतिनम्र एवं मृदु व्यवहार को कुछ लोगों ने ग़लत समझकर भिन्न अर्थ लगाया है। परन्तु ज्यों-ज्यों मैं इस विषय पर गम्भीरता से चिन्तन करता गया त्यों-त्यों मुझे उनकी दृष्टि में व्यापक मानवता के दर्शन हुए हैं। उनकी प्रखरता में भी कटुता का दर्शन नहीं होता और उनके संघर्ष में सभ्यता की मर्यादा का उल्लंघन नहीं मिलता है। विशिष्ट गुणयुक्त व्यक्तित्व का दर्शन भाईजी के जीवन में स्पष्ट लक्षित होता है। जिन नवयुवक कार्यकर्ताओं का उन्होंने अपने हस्तलाघव से निर्माण किया है, जिन सार्वजनिक जीवन में उन्होंने सुगन्ध बिखेरी है और जिस निष्ठा से सहस्त्रों विदर्भवासियों के हृदय पर अधिकार जमाया है क्या वह सरलता से भुलाया जा सकता है ? ★

लगन के धनी : बियाणीजी

लेखक

हरिभाऊ उपाध्याय–जयपुर

(प्रसिद्ध साहित्यकार, राजस्थान के भूतपूर्व शिक्षा मन्त्री; वयोवृद्ध कांग्रेसी कार्यकर्ता ।)

सन् १९२१ और २३ के बीच भाई ब्रजलालजी से मेरा परिचय हुआ था—ऐसा याद पड़ता है—या तो स्व. काकाजी (जमनालालजी बजाज) या श्री सेठ घनश्यामदासजी बिड़ला के यहाँ । उस समय वे तेजतर्रार, कुशाग्र-बुद्धि, कार्य-कुशल और होनहार तरुण मालूम होते थे । आगे चलकर, स्वतन्त्रता-संग्राम तथा स्वराज्य-संचालन, दोनों में उनके इन गुणों और शक्तियों का अच्छा परिचय सबको मिला । उनकी सेवाओं, त्याग तथा अदम्य उत्साह ने उन्हें विदर्भ का नेता ही नहीं—'विदर्भ-केसरी'—बना दिया । वे लगन के धनी हैं । विदर्भ को पृथक प्रान्त बनाने की आवाज़ उठाने का साहस उन्होंने किया—यहाँ तक कि उसके पीछे सब तरह से बर्बाद हो गए, परन्तु अपनी निष्ठा नहीं छोड़ी । यह प्रश्न अलग है कि पृथकता की माँग उचित थी या नहीं ! इसमें प्रामाणिकता के साथ मतभेद की गुंजाइश है । परन्तु मनुष्य की असली परीक्षा इस बात से होती है कि वह अपने विश्वासों के अनुसार चलता है या नहीं—जी-जान से उनकी पूर्ति के लिए प्रयत्न करता है या नहीं ? बियाणीजी ने जो भी काम हाथ में लिया, उसे निष्ठापूर्वक किया । ★

श्रद्धेय बियाणीजी

लेखक

श्रीमन्नारायण

(भारतीय राजदूत, नेपाल; भूतपूर्व सदस्य, योजना-आयोग; भूतपूर्व प्रधान मन्त्री अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी; गांधी स्मारक निधि के सदस्य; सफल शिक्षक, लेखक एवं वक्ता।)

जब मैं सन् १९३६ में आदरणीय जमनालालजी बजाज के निमन्त्रण पर वर्धा पहुँचा तो कुछ समय बाद वहाँ की शिक्षण संस्थाओं के कार्य में लग गया। वर्धा के 'शिक्षा मण्डल' के मन्त्री की हैसियत से उस क्षेत्र के काफी मशहूर महानुभावों से मेरा सीधा सम्पर्क हुआ। आदरणीय बियाणीजी 'विदर्भ-केसरी' कहलाते थे। बरार क्षेत्र की राजनीति में उनका बहुत प्रभाव था। अकोला उनका मुख्य कार्य-केन्द्र था। चूँकि वे शिक्षा-मण्डल के उपाध्यक्ष भी थे इसलिए शिक्षण के कार्य के लिए वे बीच-बीच में वर्धा आते रहते थे।

सर्वप्रथम मैंने पूज्य बियाणीजी के दर्शन नागपुर में किए। वे १९३६ के हिन्दी साहित्य सम्मेलन, नागपुर अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष थे। उनकी कार्य संगठन की शक्ति देखकर मेरे मन पर बहुत असर हुआ। राजनीतिज्ञ के अलावा वे एक उच्चकोटि के साहित्यकार भी हैं, यह जानकर उनके प्रति मेरा आदर और भी बढ़ा। बाद में तो उनसे वर्धा में कई बार मिलना हुआ। शिक्षा की विभिन्न समस्याओं में वे गहरी दिलचस्पी लेते थे और उनके मार्ग दर्शन से शिक्षा-मण्डल द्वारा संचालित "नवभारत विद्यालय" के काम में हमें बहुत मदद मिलती रही।

श्रद्धेय बियाणीजी बहुत वर्षों तक विदर्भ कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहे खास बात यह थी कि महाराष्ट्र की जनता पर भी उनका बहुत अच्छा प्रभाव था वे वहाँ के हजारों कार्यकर्ताओं से घनिष्ट सम्पर्क रखते थे और उनकी शिक्षा-दीक्षा का ख्याल करते थे। इसीलिए वे सही अर्थ में 'विदर्भ-केसरी' कहलाते थे।

जब वे मध्य प्रदेश के वित्तमन्त्री बनाए गए तो उनसे हमारा और भी घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ। उनकी व्यावहारिक बुद्धि और सार्वजनिक जीवन के अनुभव के

कारण वे राज्य-मन्त्री की हैसियत से अपने कार्य में सफल रहे । उन्होंने कई ऐसे नए कदम उठाए जिनसे मध्य प्रदेश की जनता को काफी संतोष हुआ ।

१९५६ में जब भाषावार राज्य पुनर्संगठन हो रहा था तब श्री बियाणीजी ने बहुत प्रयत्न किया कि विदर्भ एक स्वतन्त्र राज्य बनाया जाय । किन्तु कई कारणों से यह सम्भव न हुआ । १९५७ के चुनाव में वे इसी विषय को लेकर खड़े हुए और अच्छे वोटों से जीते भी । किन्तु जब बाद में विदर्भ महाराष्ट्र के साथ ही शामिल किया गया तो उन्हें बहुत असन्तोष हुआ और उसके फलस्वरूप उन्होंने कांग्रेस से इस्तीफ़ा दे दिया । उस समय मैंने बहुत प्रयत्न किया कि वे कांग्रेस से अलग न हों । किन्तु उनके बहुत तीव्र असन्तोष के कारण यह सम्भव न हुआ । मुझे खुशी है कि अब फिर आदरणीय बियाणीजी कांग्रेस में शामिल हो गए हैं । ईश्वर उन्हें दीर्घायु करे ।

★

प्रबुद्ध और उदार पत्र-संचालक : श्री बियाणीजी

लेखक
देवीदयाल चतुर्वेदी "मस्त"—लश्कर (ग्वालियर)
(भूतपूर्व सम्पादक "सरस्वती"।)

दुग्ध धवल खादी का कुर्ता, खादी की ही धोती और सिर पर भी शुभ्र खादी की टोपी। पैरों में कभी सादी चप्पल तो कभी पम्प-शू। गौर वर्ण, मझोला कद, मर्मभेदी आँखें और ओठों पर किसी भी आगन्तुक का स्वागत करनेवाली मधुर मुस्कुराहट। संक्षेप में यही एक बाह्य रूपरेखा है 'विदर्भ-केसरी' श्री ब्रजलालजी बियाणी की।

सन् १९३५ में जब मैंने नागपुर में पहली बार बियाणीजी के दर्शन किए, उस समय उनकी यही रूपरेखा थी, जिसकी अमिट छाप मेरे मानस-पटल पर अब तक अंकित है। उस समय मैं छिन्दवाड़ा से प्रकाशित मासिक "स्काउट मित्र" का सम्पादक था; किन्तु इस मासिक का प्रचार कुछ शाखाओं तक ही सीमित था, अतः मेरा पत्रकार मन किसी ऐसे अन्य पत्र में अपनी क्रियात्मक सेवाएँ देने को छट-पटा रहा था, जिसका क्षेत्र अपेक्षाकृत विस्तृत हो। संयोगवश श्री बियाणीजी के नव-प्रकाशित, किन्तु आरम्भ से ही धूम मचा देनेवाले साप्ताहिक "नव-राजस्थान" (अकोला-बरार) में एक सह-सम्पादक की आवश्यकता के एक विज्ञापन ने मुझे प्रेरित किया और एक आवेदन-पत्र मैंने भेज दिया।

उस समय पत्रकारिता के क्षेत्र में मेरा अनुभव बहुत ही सीमित था। फिर, न तो श्री बियाणीजी से मेरा कोई पूर्व परिचय था, न "नव-राजस्थान" के सम्पादक अथवा प्रबन्धक से। इस स्थिति में जब सफलता की आशा बहुत ही कम थी, सहसा एक दिन "नव-राजस्थान" के संचालक श्री ब्रजलालजी बियाणी का पत्र मुझे मिला। इस पत्र में उन्होंने लिखा था कि किसी आवश्यक कार्य से वह नागपुर आ रहे हैं, अतः मैं उनसे मिलकर बात कर लूँ। इस इण्टरव्यू के पश्चात् ही मेरी नियुक्ति का निर्णय दिया जा सकेगा।

निश्चित तिथि और समय पर मैं नागपुर गया और बियाणीजी से भेंट की।

इण्टरव्यू में उन्होंने कुछ प्रश्न करके मेरी साहित्यिक रुचि, पत्रकारिता के अनुभव और मेरे व्यक्तिगत विचारों का भी पता लगा लिया। इण्टरव्यू समाप्त होते ही उन्होंने छिन्दवाड़ा से नागपुर तक आने-जाने का मार्गव्यय प्रदान किया और शीघ्र ही नियुक्ति-पत्र भेज देने का आश्वासन भी दिया।

एक अपूर्व प्रसन्नता से भरकर मैं छिन्दवाड़ा लौट आया और नियुक्ति-पत्र की प्रतीक्षा करने लगा। इस प्रथम भेंट में ही बियाणीजी की जिस विनम्रता, उदारता और सौजन्य से मैं प्रभावित हुआ, वह अविस्मरणीय है।

लगभग पन्द्रह दिन के भीतर ही मुझे नियुक्ति-पत्र मिल गया और सितम्बर १९३५ में साप्ताहिक "नव-राजस्थान" का सह-सम्पादक होकर मैं सपरिवार अकोला चला गया।

अकोला मुझे बहुत आकर्षक प्रतीत हुआ। श्री ब्रजलालजी बियाणी उस समय राज्य सभा, दिल्ली, के सदस्य थे और राजस्थान प्रेस, अकोला, के मैनेजिंग डायरेक्टर। बरार कांग्रेस कमेटी के भी वह प्रादेशिक अध्यक्ष थे। और भी कितनी ही संस्थाओं में उनका प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष हाथ था। वह बरार-केसरी कहलाते थे। बरार में राजनैतिक जागृति का शंखनाद उन्होंने ही किया था। देश के चोटी के नेताओं से उनका सम्पर्क था। उनकी प्रेरणा से बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ अकोला आते-जाते और राजनैतिक चहल-पहल बनी रहती।

सच बात तो यह है कि बियाणीजी व्यक्ति होकर भी सदा एक संस्था के रूप में कार्य करने के अभ्यस्त हैं। जिस किसी संस्था में उन्होंने कार्य किया, उससे उनके प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्तित्व को पृथक् नहीं किया जा सकता। सामाजिक क्षेत्र में भी उनकी सेवाएं क्रान्तिकारी कही जा सकती हैं। रूढ़ियों पर उन्होंने सदा कुठाराघात किया। तरुणों को उन्होंने सदा क्रान्ति का पोषक बनाया। उनका अपना विश्वास है कि जिस व्यक्ति के विचारों में क्रान्ति नहीं, वह सत्य कर्म और सत्य मार्ग की ओर उन्मुख नहीं हो सकता। जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण समन्वयवादी है। मानवोचित संवेदनशीलता से वह सदा ओतप्रोत रहते हैं।

बड़ी व्यस्तता रहती है उनके जीवन में। कभी किसी राजनैतिक अनुष्ठान में संलग्न, तो कभी किसी सामाजिक संगठन में व्यस्त। कभी मराठी साप्ताहिक "मातृभूमि" के संचालन में क्रियाशील, तो कभी हिन्दी साप्ताहिक "नव-राजस्थान" के संचालन में तल्लीन। और, इतनी व्यस्तता के बीच भी वह बहुधा अपनी कलम से प्रसूत सम्पादकीय अग्रलेख भी जब "नव-राजस्थान" को प्रदान किया करते, तब मैं आश्चर्यचकित रह जाता। फिर, इतनी सारी व्यस्तता के बीच भी सम्पादकीय

सदस्यों से मिलकर उनके सुख-दुःख का केवल पता लगाकर किसी औपचारिकता का निर्वाह करके ही उन्हें संतोष नहीं होता था, प्रत्युत उनकी परेशानियाँ दूर करने में अपना क्रियात्मक सहयोग देकर ही उन्हें परितोष होता था।

मैंने अपने पच्चीस वर्षव्यापी पत्रकार-जीवन में केवल बियाणीजी को ही एक ऐसा प्रबुद्ध और उदार पत्र-संचालक पाया, जिसकी सहृदयता और उदारता की छाप सदा के लिए मेरे मानस-पटल पर अंकित हो गई। उन्हें मैं कभी भूल नहीं सकता, उनकी उदारता का चित्र मेरी दृष्टि में कभी धूमिल नहीं हो सकता।

पहले-पहल जब मैं सपरिवार अकोला पहुँचा, तो उनकी उदारता का प्रथम प्रमाण रेलवे स्टेशन पर ही मुझे देखने को मिला। "नव-राजस्थान" के प्रबन्ध-विभाग के एक सदस्य को भेजकर उन्होंने मुझे उन सारी परेशानियों से बचा लिया, जो किसी नवागन्तुक को हो सकती थीं। यही नहीं, उन्होंने अपने ही निवास स्थान राजस्थान-भवन में मुझे न केवल किराए का मकान मिल जाने तक ठहराया, प्रत्युत हमारी सारी सुविधाओं का उन्होंने जिस आत्मीयता के साथ ध्यान रखा, वह अन्य किसी पत्र-संचालक से दुर्लभ ही कही जायगी।

लगभग ढाई वर्ष "नव-राजस्थान" का प्रकाशन स्थगित किए जाने तक मैं अकोला में रहा। इस बीच में कितने ही ऐसे प्रसंग आए, जिनमें बियाणीजी की उदारता तथा आत्मीयता में कभी कोई अन्तर नहीं आया। बल्कि उत्तरोत्तर निखार ही मैंने अनुभव किया।

"नव-राजस्थान" के सभी सदस्य बियाणीजी की उदारता से पूर्णतः सन्तुष्ट थे। प्रत्येक मास की अन्तिम तिथि को ही उस मास का वेतन प्रदान करने का उनका नियम ऐसा अद्वितीय था, जो मुझे कहीं अन्यत्र सुलभ नहीं रहा। यही नहीं, मास की अन्तिम तिथि को यदि कोई अवकाश रहता, तो उसके भी पहले वेतन दे दिया जाता था। होली-दीवाली जैसे त्यौहारों पर अग्रिम राशि देने की व्यवस्था थी, जो सुविधाजनक किश्तों में वापस की जा सकती थी।

एक बार दीवाली के अवसर पर मैंने भी कुछ अग्रिम राशि ली थी। किन्तु उसी समय मेरी पत्नी हीरादेवीजी इतनी अस्वस्थ हुईं कि किसी कुशल और अनुभवी डाक्टर से उनका परीक्षण कराना अनिवार्य हो उठा। यह बात जब बियाणीजी को ज्ञात हुई, तो उन्होंने न केवल एक कुशल तथा अनुभवी डाक्टर को मेरे निवास स्थान पर भेज दिया, प्रत्युत उसका परीक्षण-शुल्क भी उन्होंने स्वयं प्रदान किया। इतना ही नहीं, मेरा यह संकट देखकर उक्त अग्रिम राशि को वापस न करने का आदेश देकर भी उन्होंने अपनी सहज उदारता का ज्वलन्त प्रमाण देकर मेरी आर्थिक परेशानी दूर कर दी।

अपने सहयोगियों के दु:ख-दर्द और परेशानियों में इस प्रकार उदारता का हाथ बढ़ा देनेवाले कुछ और पत्र-संचालक भी हिन्दी के क्षेत्र में हो सकते हैं; किन्तु मुझे बियाणीजी के अतिरिक्त अन्य किसी पत्र-संचालक से यह सब प्राप्त नहीं हो सका। "नव-राजस्थान" के सम्पादकीय विभाग में रहकर मैं पूर्णत: सन्तुष्ट रहा। वहाँ का वातावरण जैसा सौम्य रहा, वैसा मुझे अन्य किसी पत्र में नहीं मिला। श्री रामनाथ "सुमन" सम्पादक थे। उनके ओजपूर्ण और अध्ययनपूर्ण अग्रलेखों के कारण "नव-राजस्थान" उस युग के हमारे देश के प्रमुख हिन्दी साप्ताहिकों में अपना विशेष स्थान बना चुका था। श्रीरामगोपाल माहेश्वरी संयुक्त सम्पादक थे और पत्र की व्यवस्था का समस्त भार बियाणीजी के निर्देश पर वही वहन करते थे।

"नव-राजस्थान" का प्रकाशन स्थगित कर दिए जाने पर ही श्री बियाणीजी से मेरा सम्पर्क टूट गया और सन् १९३८ से अब तक उनके दर्शन करने का मुझे अवसर नहीं मिल सका। किन्तु मेरे प्रति उनकी आत्मीयता में कोई अन्तर नहीं आया, इसका प्रमाण मुझे उस समय मिला, जब अकोला छोड़ देने के युगों पश्चात् मैंने इलाहाबाद से उन्हें मध्य प्रदेश के वित्त-मन्त्री हो जाने पर एक पत्र लिखा। इस पत्र के उत्तर में भी उनकी उसी आत्मीयता की झाँकी देखकर मैं गद्‌गद् हो उठा। उन्होंने मेरे "सरस्वती" सम्पादक हो जाने पर न केवल अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की थी, प्रत्युत यह लिखकर अपनी स्वाभाविक नम्रता का परिचय दिया था कि "मेरे साथ तो आप एक छोटे-से पत्र में काम करते थे, किन्तु अब आपका क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया, इसका मुझे गर्व है।"

और, आज मुझे हार्दिक हर्ष है कि ऐसे प्रबुद्ध और उदार पत्र-संचालक श्री ब्रजलालजी बियाणी को, ६ दिसम्बर, १९६५ को अपने जीवन के ७० वर्ष पूर्ण कर लेने पर ७१ वें वर्ष में प्रवेश करने पर, उन्हें एक अभिनन्दन-ग्रन्थ "बियाणीजी : मित्रों की नज़र में" इन्दौर के मित्रों की एक समिति द्वारा भेंट किया जा रहा है मैं श्री बियाणीजी के शतायु होने की कामना करता हूँ। ★

विचारक श्री ब्रजलाल बियाणी

लेखक
आ० केप्टन रामप्रसाद पोद्दार जे० पी०—बम्बई
(मारवाड़ी समाज के कार्यकर्ता।)

मारवाड़ी सम्मेलन, बम्बई के स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर की बात है। मार्च सन् १९६४ में यह जयन्ती मनाने का निश्चय हुआ। इसके पहले स्थानीय कार्यकर्ता श्री ब्रजलालजी बियाणी से मिले जो उन दिनों बम्बई आए हुए थे। मुख्य प्रश्न यह था कि इस अवसर पर ऐसा क्या कुछ कार्य किया जाय जिससे समाज में एक नई चेतना जाग्रत हो। बातचीत के दौरान में श्री बियाणीजी ने इस बात पर बल दिया कि समाज का उत्थान सिर्फ कागजी प्रस्ताव पास करने से नहीं हो सकता है। आज तो समाज के लिए एक सामयिक विचार-धारा देने की आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि यदि थोड़े लोग भी उस विचार-धारा को लेकर अपने-अपने स्थानों को जाएँगे और उसका प्रचार करेंगे तो समाज में क्रान्ति आएगी, और समाज आगे बढ़ेगा। और इसी में सम्मेलन की स्वर्ण जयन्ती की सफलता होगी।

श्री बियाणीजी से पहले भी मैं कई बार मिल चुका था परन्तु एक विचारक के रूप में उनसे यह मेरी पहली भेंट थी और मैं उनके विचारों से अत्यधिक प्रभावित हुआ।

उन्होंने कुछ समय के लिए 'विश्व-विलोक' नामक पत्रिका का भी सम्पादन किया था और वहाँ भी वे पाठकों का अपनी विचार-धारा से मार्गदर्शन करते रहे। मैं बराबर उनके लेख पढ़ता था तथा उनसे स्फूर्ति ग्रहण करता था। वास्तव में उनके विचारों में जीवन को एक नई राह एवं एक नया दृष्टिकोण देने की क्षमता रही है और कितने ही नवयुवक उनसे प्रभावित हुए हैं।

मेरे सामने तो उनका एक ही चित्र है और वह है एक विचारक का। ★

सतत उत्साही एवं कर्मनिष्ठ युगल श्रीमती एवं श्री बियाणीजी

लेखिका

सौ० पारसरानी मेहता—इन्दौर तथा भुसावल

(जैन समाज की कार्यकर्त्री; लेखिका एवं वक्ता।)

उत्तुंग गिरि शिखर को देखकर मानव श्रद्धा पूरित हो उठता है। गहन-गम्भीर सागर की गुरुता और भव्यता में एक विशेष आकर्षण होता है। सागर का असीम विस्तार एवं उसकी विशालता को देखकर हृदय एक सुखद अनुभूति में डूब जाता है। परन्तु उसमें डुबकी लगाने का साहस प्रत्येक को नहीं होता, ऐसे ही प्रशान्त महासागर की तरह श्री बियाणीजी का व्यक्तित्व है। अनेक विविधता से परिपूर्ण होकर भी मर्यादा में सर्वश्रेष्ठ, औदार्य में सर्वोपरि !

परन्तु इस महानद के समीप ही एक अत्यन्त शान्त सरोवर है, जिसकी प्रत्येक उर्मियाँ उस महासागर की ओर सतत प्रवाहमयी है। जिनके हृदय की प्रत्येक धड़कने श्री बियाणीजी के लिए ही हैं। और वह स्वच्छ मन्दाकिनी है—श्रीमती सावित्रीदेवी बियाणी—जिसमें पैठकर स्नान भी किया जा सकता है और बाल सुलभ क्रीड़ाएँ भी।

महासती सावित्री का कथानक मुझे अत्यन्त प्रिय है। अद्भुत आत्मबल और अटूट निष्ठा उनके जीवन में साकार हुई है। जो नारी नियति के क्रूर हाथों से अपने भाग्य देवता को लौटा लाती है, जिसकी दृढ़ इच्छाशक्ति से प्रभावित होकर महर्षि नारद ने उस समय कहा था—"शुभे, कभी क्रोध न करना, अतिथि पूजन करना व वर्ष भर शील से रहना। अवश्य ही तुम्हारा कल्याण होगा।"

और अद्भुत है ये समानता उन्हीं विशेष गुणों से अलंकृत, शील एवं सौजन्य की प्रतिमूर्ति सावित्रीदेवी बियाणी, जिनके जीवन में कर्मठता है और मुख पर सहज प्रसन्नता। श्री बियाणीजी का आतिथ्य प्रेम, उनकी सुरुचि, उनका व्यस्त और

व्यवस्थित जीवन——इन सबका मूल श्रोत कहाँ है ? उन्हीं में, जिन्हें हमारी मण्डली अन्नपूर्णा के नाम से सम्बोधित करती है ।

जनमेदिनी को अपने भाषा प्रवाह से, अपने विचारों से क्रान्ति मचा देनेवाली विदर्भ-केसरी बियाणी भी सावित्रीजी के त्याग के सम्मुख पराभूत हैं । सवित्रीजी के अपने मौलिक विचार हैं, अपना स्वतन्त्र चिन्तन है । नियम, संयम और व्रतों में उनकी अपनी निष्ठा है । क्रियाकलापों में जो अन्तर है, दम्पत्ति के मानस में वह उतना ही सामीप्य ले आया है । क्योंकि सावित्रीजी की भूमिका समर्पण की भूमिका है, जहाँ देना ही पाना है ।

इस मूक सेविका के जीवन का प्रत्येक क्षण अत्यन्त कर्मनिष्ठ नारी का जीवन है । वे कुशल गृहणी और आदर्श पत्नी हैं । मेहमानों को खिलाते समय अथवा स्वयं बियाणीजी को भोजन कराते समय उनके मातृरूप के दर्शन होते हैं, आतिथ्य और सेवा उनके जीवन का ऐसा अभिन्न अंग है, कि उससे पृथक उनका कोई अस्तित्व नहीं, मानो वही उनके जीवन का परम आनन्द है ।

दाम्पत्य जीवन के सुदीर्घ ५५ वर्षों में और इसी वर्ष की बियाणीजी की कठिन बीमारी में जिन्होंने सावित्रीदेवी की सेवा और निष्ठा का परिचय पाया है, वे इस सत्य से अपरिचित नहीं हैं ।

श्री ब्रजलालजी बियाणी में सम्पूर्ण सौन्दर्य-बोध है, और जिनके हृदय का सौन्दर्य अपनी पूर्णता के साथ जाग उठता है । ऐसे व्यक्तियों के जीवन से कोई असुन्दर अथवा अशुभ नहीं हो सकता । वे अपने आप में कभी हीन और लघु नहीं हो सकते । सुन्दर से सत्य की ओर, और सत्य से शिव की ओर ही उनका प्रयाण है ।

व्यक्ति अपनी कृति में अमर है । 'बियाणीजी : मित्रों की नज़र में' यह कृति आनेवाली पीढ़ी के लिए शाश्वत प्रेरणा साबित होगी । सतत उत्साही और कार्य-निष्ठ युगल को हम सबका प्रणाम !

★

एक बहुमुखी प्रतिभा

लेखक

श्री बाबूलाल पाटोदी–इन्दौर

(सदस्य, मध्य प्रदेश विधान सभा; लेखक एवं वक्ता; इन्दौर कांग्रेस के प्रधान कार्यकर्ता ।)

श्री ब्रजलालजी बियाणी अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा के परिणामस्वरूप अपने प्रदेश में ही नहीं अपितु अखिल भारतीय स्तर के हमारे योग्य नेता एवं कुशल प्रशासक हैं । जब तक श्री बियाणीजी बरार, खानदेश तथा पुराने मध्य प्रदेश में रहे—उनकी क्रान्तिकारी भावनाओं का प्रत्यक्ष रूप हमें देखने को मिलता रहा है । इनके इन्दौर आगमन के पूर्व मैंने श्री बियाणीजी का परिचय समाचार-पत्रों के माध्यम से ही प्राप्त किया था । हाँ यदा-कदा कांग्रेस अधिवेशनों में भी इन्हें कुछ क्षणों तक निकट से देखने का अवसर मिला था किन्तु इनके इन्दौर आगमन के बाद एवं इन्दौर में ही सक्रिय कार्य करने के निश्चय के परिणामस्वरूप श्री बियाणीजी को निकट से समझने का कुछ अवसर मिला । इन कुछ क्षणों में ही मैंने पाया कि श्री बियाणीजी का शरीर गठन चाहे एकहरा हो किन्तु उनके हृदय में अदम्य उत्साह एवं अटूट साहस विद्यमान है । वे सदैव कठिन परिस्थितियों में भी अपनी सूझ- बूझ से कार्य करते रहते हैं । मैंने उन्हें कभी भी विचलित होते नहीं पाया ।

राजनीति के क्षेत्र में जो व्यक्ति अपनी पूर्ण प्रतिभा से कार्यरत है वही व्यक्ति साहित्य जगत् में भी अपना एक स्थान बना ले यह एक कठिन कार्य है किन्तु बियाणी का साहित्य जगत् में अपना एक स्थान है । उनकी लेखनी से जो बात कही जाती है वह उनकी अटूट राष्ट्रभक्ति एवं समाजोत्थान के गांधीवादी पुट के साथ प्रस्तुत की जाती है । श्री बियाणीजी की लेखनी से प्रस्फुटित छोटे-छोटे लेख अपने महत् उद्देश्य में पूर्ण एवं सीधी चोट करनेवाले होते हैं—साथ ही सरल एवं सुगम्य भी । इन सबके लिए आवश्यकता होती है अध्ययन की—गहन अध्ययन की । इस कल्पना का भी मैंने उनमें साकार रूप पाया । जब एक बार मैं उनसे मिलने गया था तब

मुझे विदित हुआ कि श्री बियाणीजी की अपनी लायब्रेरी भी अपने आप में एक अत्यन्त ही सुन्दर एवं पठनीय पुस्तकों के संग्रह से भरपूर है एवं उसकी प्रत्येक पुस्तक उनके अध्ययन के चिह्नों से चिह्नित है।

लेखक एवं वक्ता यह दोनों गुण भी एक साथ एक ही व्यक्ति में कुछ कठिनता से मिलते हैं किन्तु श्री बियाणीजी एक सफल वक्ता के रूप में भी भली-भाँति जाने जाते हैं। उनके भाषण में भी वही शैली होती है जिससे कि श्रोता समूह के अधिक से अधिक व्यक्ति उनकी बात समझ सकें। उनके भाषण के समय उनमें कभी भी जोश जैसी बात परिलक्षित नहीं होती। वह अपनी बात बड़ी सरलता से तर्कसंगत श्रोताओं के बीच रखते हैं तथा अपने विषय को पूरी तरह से समझाने में सदैव खरे उतरते हैं।

उनके इन्दौर आगमन के बाद जब-जब भी अवसर मिला मुझे अपने इन बुजुर्ग नेता से सदैव कोई नई बात ही सीखने को मिली है। वे वयोवृद्धों में वयोवृद्ध हैं, युवकों में युवक, राजनीतिज्ञों में राजनीतिज्ञ, साहित्यकारों में साहित्यिक तथा सामाजिक क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी सामाजिक प्राणी हैं। ★

समाज सुधार के अग्रदूत

लेखक
नागरमल पेड़ीवाल–कलकत्ता
(समाजसेवी एवं उद्योगपति ।)

समाज मानवीय सम्बन्धों, रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं की एक सन्तुलित व्यवस्था है । इस व्यवस्था की मर्यादा का पालन करना हर मानव का कर्तव्य है । साथ ही इसे अति उत्तम एवं परम कल्याणकारी बनाने की सतत् चेष्टा करना भी अनिवार्य है । इस ओर कदम बढ़ाने का नाम ही प्रगति है ।

रीति-रिवाज एवं परम्पराओं का मूल्य समयानुसार बदलता रहता है । आदि-कालीन मान्यताएँ कुछ और थीं, कारण समाज प्रकृति पर पूर्ण आश्रित था । आज की वैज्ञानिक उपकरणों से युक्त व्यवस्था की मान्यताएँ आदि-कालीन से पूर्णतया भिन्न है । प्राचीन एवं नवीन सभ्यता के अन्तर से स्पष्ट हो जाता है कि मानव ने रीति-रिवाजों को समयानुसार लाभप्रद समझकर अपनाया और जब उन्हें जीवन की प्रगति में बाधक समझा तो फौरन त्याग दिया । जिन वर्गों की मेधावी शक्ति कुछ क्षीण रही, वे यद्यपि कुछ समय तक प्राचीन रूढ़ियों से चिपके रहे हैं, पर बहुमत से उन रिवाजों के प्रति धारणाएँ बदलती रही हैं ।

मेरे विचार से समाज की श्रेष्ठता में वृद्धि के उद्देश्य से रीति-रिवाजों एवं धारणाओं को सामयिक मोड़ देना ही समाज-सुधार है । जो विभूतियाँ समाज की प्रगति के लिए कुछ करती हैं वे ही समाज-सुधारक हैं । इन सेनानियों में रूस के महात्मा टॉलस्टाय, अमेरिका के अब्राहम लिंकन, भारत के राजा राममोहनराय एवं महात्मा गांधी आदि महापुरुष आज विश्व-वंद्य हैं जिन्होंने मानव जगत् को जीने के सुन्दर एवं उन्नतिशील मार्ग बतलाए हैं, और समाज की व्यवस्था में चार चाँद लगाए हैं । श्री ब्रजलालजी बियाणी को मैंने उन्हीं विभूतियों के रूप में पाया जिनके सर्वप्रथम दर्शन मुझे आसाम प्रान्तीय मारवाड़ी सम्मेलन के अवसर पर तिनसुकिया में हुए ।

तत्कालीन एक बड़ी रोचक घटना है । बियाणीजी की विलक्षण तार्किक

शक्ति एवं रूढ़िवादी तत्वों को बेज़बान करनेवाली अजेय प्रतिभा का ज्वलन्त उदाहरण है। आप मारवाड़ी समाज में प्रचलित पर्दा-प्रथा-निवारण पर एक जन-सभा में प्रकाश डाल रहे थे। मुझे भली-भाँति स्मरण है कि कुछ प्राचीन विचार-धारावाले, सज्जन सभा में बाधा डालने के मनसूबे लेकर आए थे। बियाणीजी ने मंच पर दो बड़ी सीधी और सर्वग्राह्य बातें कहीं कि स्त्री पर्दा किससे करती है और क्यों? आपने स्पष्ट किया कि स्त्री अपने पति से पर्दा करती नहीं कारण मिलन-सुख में यह बाधक होता है। पिता के घर भाई से पर्दा होता ही नहीं। पर जब पति और भाई दोनों एक साथ मिलते हैं और स्त्री पर्दा करती है तो बात समझ में नहीं आती कि आखिर पर्दा किससे है? पति से पर्दा रखा नहीं जाता और भाई से भी स्वभावतः नहीं होता। तो विश्लेषण से उत्तर यही है कि पर्दा-प्रथा एक ढर्रा है, अन्धी पकड़ है, अवैज्ञानिक है एवं पूर्ण अवास्तविक व्यवस्था है। प्रगति के लिए यह पूर्णतया त्याज्य है। उपस्थित रूढ़िवादी सज्जनों की ज़बान बन्द हो गई। किसी के मुँह से विरोधाभास नहीं मिला। यह था आपकी अकाट्य तर्क बुद्धि का एक अविस्मरणीय उदाहरण।

यद्यपि उस सभा में आपने अनेक विषयों पर प्रकाश डाला और विभिन्न प्रकार से समाज को सुदृढ़ एवं प्रगतिशील बनाने के लिए सामयिक युक्तियाँ सुझायीं। आपने अपने जीवन के मार्मिक अनुभवों के साथ-साथ अनेक महापुरुषों की जीवन-गाथाओं से उद्धृत अनेक कल्याणकारी उदाहरण दिए। व्यक्तिगत रूप से मैंने उनमें से आपकी सुधारवादी तीव्र विचार-धारा को अपनाया और आज भी आपकी उस अमरवाणी के कुछ शब्दों पर कार्य करने की आकांक्षा रखता हूँ।

आपके व्यक्तित्व में कर्मठता, स्वतन्त्रता-संग्राम के सेनानी के वीर-रूप, अदम्य उत्साह, विचारों की क्रान्ति तथा समन्वयवादिता और दलगत राजनीति से बिलगाव आदि बहुमुखी प्रतिभा झलकती है। आपने समय-समय पर प्रतिकूल परिस्थितियों को अनुकूल बनाकर समाज की सर्वांगीण उन्नति में जो योगदान दिया है उसके प्रति सारा समाज आभारी है। आपकी विशिष्ट कार्य एवं जीवन-प्रणाली समाज के लिए आदर्श है। आपकी विचार-क्रान्ति नवयुवकों के लिए सदैव प्रकाश-पुंज के रूप में अमर रहेगी।

आज नवोदित भारत को श्रद्धेय बियाणीजी के पथ-प्रदर्शन की चिरकाल तक आवश्यकता है। प्रगति की ओर बढ़ते हुए हमारे समाज के क़दमों में सुदृढ़ता एवं निष्ठा के लिए आपका आशीर्वाद अत्यन्त आवश्यक है। मित्र-समुदाय ने आपको विभिन्न आदर्शों के जनक के रूप में पाया है। आपके कार्यों से समस्त समाज

एवं देश प्रभावित है। 'विदर्भ-केसरी' की आपको दी हुई पदवी जनता द्वारा उचित सम्मान है।

मैं श्रद्धेय बियाणीजी के दीर्घायु की कामना करते हुए विश्वास रखता हूँ कि आपका मित्र-मण्डल आपके विचारों का सदैव आदर करता रहेगा और सुन्दर समाज की आपकी कल्पना को साकार बनाने में पूर्ण प्रयत्नशील रहेगा। ★

विदर्भ नेता—बियाणीजी

लेखक

डॉ. पु. गो. एकबोटे—खामगाँव

(भूतपूर्व विधान सभा सदस्य ।)

वैसे तो माननीय बियाणीजी से मेरा परिचय सन् १९३५ के बाद ही हुआ । उस समय मैं एक साधारण कांग्रेस कार्यकर्ता के रूप में माना जाता था और स्वर्गीय पूज्य भाऊ साहेब पारसनीय के साथ-साथ प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की बैठकों में जाया करता था ।

उस समय बियाणीजी का व्यक्तित्व इतना आकर्षक था कि विदर्भ प्रान्त का पूरा युवक वर्ग उनकी ओर खिचा चला आता था । उनकी मधुरवाणी आत्मीयता से की गई आवभगत, उनकी चुस्त खादी की शुभ्र पोशाक, काम करने का उत्साह, गांधीजी पर अनन्य विश्वास, नम्रता किन्तु दृढ़ता अपनी बात रखने की शैली व अमोघ वक्तृत्व शक्ति के कारण उन्होंने प्रत्येक युवक के दिल पर अधिकार कर लिया था और इतना ही नहीं उस समय का तरुण कार्यकर्ता उन्हें "गांधी" ही समझता था ।

सन् १९४० के व्यक्तिगत सत्याग्रह के दौरान बियाणीजी के वक्तृत्व, उत्साह और तूफानी दौरों से हज़ारों की संख्या में सत्याग्रही तैयार हुए और सत्याग्रह के लिए उनमें मानों प्रतियोगिता शुरू हो गई ।

सन् १९४० के व्यक्तिगत सत्याग्रह व सन् १९४२ के आन्दोलन के कारण नागपुर की जेल में मैं उन्हें अत्यन्त निकट से देख पाया । सेनापति हो तो बियाणीजी सरीखा । क्या जेल में और क्या बाहर अपने सैनिकों की अत्यन्त प्रेम से पूछताछ कर उनकी सभी दृष्टि से चिन्ता रखनेवाला बियाणीजी जैसा दूसरा युवक मिलना कठिन है ।

जेल में तरह-तरह की दुविधाएँ मन में रहती हैं । अपने को यहाँ खाने को तो मिल रहा है पर बाहर अपनी पत्नी और बालकों का क्या होता होगा ? इन विचारों से दिल फट जाता था । माननीय बियाणीजी का सानिध्य यदि हम

लोगों को जेल में न मिला होता तो हम शरीर और मन से कमजोर बनकर निकले होते। जेल में मनुष्य के मन को दुर्बल करनेवाले कई क्षण उत्पन्न होते हैं। परन्तु बियाणीजी ने अपने सहवास और अपने प्रेम से अपने कार्यकर्ताओं के दुर्बल होते जा रहे मन को मज़बूत बनाया। मैं ऐसा मानता हूँ कि उस समय यदि बियाणीजी का सहवास न होता तो कितने ही लोग जेल से माफी माँगकर बाहर आ गए होते।

जेल में भी बियाणीजी का जीवन अत्यन्त नियमबद्ध था। सबेरे चार बजे उठकर रात को सोने तक निर्धारित समय पर निर्धारित कार्य किया करते थे। विभिन्न ग्रन्थ कार्यकर्ताओं को पढ़ने के लिए मिलते हैं या नहीं इसकी व्यवस्था वे करते—प्रत्येक से कुशलमंगल पूछते—घर के सम्बन्ध में पूछताछ करते तो ऐसा प्रतीत होता घर का कोई बुज़ुर्ग अपने परिवार की देखभाल कर रहा हो। उनके ऐसे व्यवहार और जेल के इस तरह के जीवन को देखकर हम उन्हें 'राजर्षि' कहकर सम्बोधित किया करते थे।

कारावास समाप्त हुआ। चुनाव आए। बरार में एक दो जगहों का अपवाद छोड़कर करीब-करीब सभी स्थान पर जिताकर उन्होंने सिद्ध कर दिया कि बरार कांग्रेस का सुदृढ़ गढ़ है। विदर्भ के लोग हिन्दी भाषी लोगों की तुलना में उस समय के प्रदेश में अल्प मत में हैं, और इस कारण कुछ विषयों से बरार पर अन्याय भी हो जाता है ऐसी उनकी दृढ़ मान्यता होने के कारण उन्होंने बरार के निर्वाचित प्रतिनिधियों में सीमेंट-कांक्रीट जैसी अभेद्य एकता कायम रखने का सदैव प्रयत्न किया। इसी के परिणामस्वरूप विदर्भ तो एक मुख से बोलता है—हिन्दी भाषी लोगों की बरार पर अन्याय करने की हिम्मत नहीं होती थी।

लेकिन दुर्भाग्य से इस एकता पर नज़र लग गई यह कहने में हरकत नहीं। अभेद्य एकता जमाते-जमाते बियाणीजी द्वारा बहुमत समाज के समर्थन के हेतु कुछ जातिवादियों को अधिक महत्व दिया गया? हमारा मत है कि इस कारण से उस अखण्ड एकता में दरारें पड़ने लगीं और उसके बाद "संयुक्त महाराष्ट्र" का प्रश्न उद्भूत हुआ।

और इस समय से मैं जो बियाणीजी का कट्टर उपासक था कट्टर विरोधी बन गया। यद्यपि बियाणीजी ने विदर्भ प्रेम के ही कारण यह किया तो भी सैद्धान्तिक मतभेद हो जाने के कारण मुझे दुर्दैवात् उनका विरोध करना ही पड़ा। विदर्भ का कल्याण किसमें है यह तो आनेवाला इतिहास ही बतलाएगा। किन्तु इतना तो सही है कि तत्वनिष्ठ विदर्भवादी या तत्वनिष्ठ संयुक्त महाराष्ट्रवादी इन दोनों का अस्तित्व आज किसी को नज़र नहीं आता किन्तु अवसरवादी ही आज कुर्सियों पर कब्जा किए हुए दिखते हैं।

सिद्धान्त के लिए मैं बियाणीजी का विरोधी जरूर हुआ फिर भी बियाणीजी के कृतित्व, त्याग, आत्मीयता, बुद्धिमत्ता और नेतृत्व की छाप हृदय पर हरदम के लिए अंकित है और रहेगी। व्यासपीठ पर से बियाणीजी की कितनी भी छीटा-कशी क्यों न हो उनके लिए मेरे दिल में पूर्ण आदर एवं प्रेम है।

हम परस्पर विरोध में थे तो भी राजनीति को छोड़ कर अन्य अवसरोंपर बियाणीजी ने हम लोगों को अपना छोटा भाई ही समझा। एक बार बहुत दिनों के बाद किसी प्रसंगवश बियाणीजी मेरे यहाँ आए हुए थे। जाते-जाते मेरी पत्नी आदि से बिदा लेते वक्त वे बोले 'बहुत दिनों बाद मैं आपके घर आया—मुझे बहुत खुशी हो रही है (मेरे विरोधी बनने से पहिले वे खामगाँव आने पर सदा मेरे घर उतरते थे)। बीच में आना नहीं बन पड़ा। इसका कारण कौन? डॉक्टर साहब! अथवा मैं ही होऊँगा शायद?"

उनके शब्दों में कितना अपनापन व व्यथा छिपी थी यह मुझे स्पष्ट दिख रहा था। और यह "राजनीति" धिक्कार है ऐसा लगने लगा। राजनीति के कारण ही मैं बियाणीजी के निकट आया और राजनीति के कारण ही मुझे उनसे दूर होना पड़ा। पर मतभेद होने के बावजूद भी बियाणीजी ने कभी सदाशयता और स्नेह नहीं त्यागा।

"गांधीवाद के तो वे प्रमुख भाष्यकार हैं"—गांधीजी के निकटवर्ती माननीय दादा धर्माधिकारी ऐसा बोले हैं ऐसा मुझे पूरा पूरा स्मरण है। "विदर्भ स्वतन्त्र रहे" इस सिद्धान्त के लिए उन्होंने अपना सर्वस्व ही नहीं लगाया वरन् खो भी दिया। और आज हमारा यह 'विदर्भ-केसरी' पड़ा हुआ कुम्हला रहा है—जिससे सारा विदर्भ अनाथ हो गया है। बियाणीजी ने अकोला को राजधानी का स्वरूप ला दिया था। और इतना ही नहीं अकोला बरार का सेवाग्राम बन गया था।

बियाणी का नेतृत्व गतिमान है। वे क्या नहीं हैं? बियाणीजी एक व्यक्ति न रहकर एक संस्था बन गए हैं। सेनानी और नेता, वक्ता और प्रशासक, लेखक और आलोचक, सम्पादक और समाज सुधारक ऐसे कितने ही स्वरूपों में बियाणीजी का दर्शन मिलता है।

ऐसे लोकप्रिय नेता को आरोग्य प्राप्त हो, वे जनता का नेतृत्व करने के लिए शतायु हों यही परमपिता से प्रार्थना है। ★

श्री ब्रजलालजी बियाणी की झाँकी

लेखक

रामनाथ सोनी—अहमदनगर

(कांग्रेस तथा मारवाड़ी समाज के प्रमुख कार्यकर्ता।)

श्री बियाणीजी सन् १९२४ में अहमदनगर पधारे थे। उस समय "कोलवार" प्रकरण देश भर के माहेश्वरी समाज में उग्र रूप धारण कर चुका था। उसी को लेकर कलकत्ता के धनी मानी पंच, पंचायती के अग्रसर नेता भी प्रचारार्थ नगर में पधारे हुए थे और दल बन्दियाँ मजबूत बना रहे थे। उसी समय श्री बियाणीजी अ. भा. मा. सभा की ओर से प्रचारार्थ आए थे।

उस समय माहेश्वरी युवक मण्डल अहमदनगर की संस्था का मैं मन्त्री था। हमने आपके व्याख्यान का आयोजन श्री बालाजी मन्दिर में किया था। दोनों वर्ग के पंचायत के सब सज्जन बड़ी संख्या में वहाँ उपस्थित हुए थे।

श्री बियाणीजी ने दलबन्दियों के विषय में जो कलकत्ता के पंचायत के नेताओं द्वारा आपस में खानपान (बहन, दामाद आदि के घर खान-पान, कोलवार से सम्बन्ध रखने पर जाति बहिष्कृत करने) आदि प्रस्तावों पर पंचायत में काफी चर्चा चल रही थी उस पर श्री बियाणीजी अपनी मीठी तथा जोशभरी वाणी से, अपने व्यक्तित्व से, इतना प्रभावी ढंग से खण्डन किया कि पंचायती के मण्डन का ढाँचा ही टूट गया। युवकों के हृदय को आपने जीत लिए और साथ ही पुराने पंच भी चौंक गए।

उसका नतीजा यह हुआ कि बाबू गोविन्ददासजी मालपाणी जबलपुर निवासी के यहाँ कुछ दिनों बाद बिड़लाजी की कलकत्ता से बरात आई, तब उस विवाह में श्री प्रेमसुखजी काबरा, श्री शिवलालजी जाजू तथा मैं, राहुरी के श्रीमान सेठ शंकरलालजी बियाणी के मायरे में जबलपुर जाने का मौका मिला। उस विवाह में श्री बिड़लाजी की बरात में कोलवार माहेश्वर भी थे। इस पर वहाँ के स्थानीय पंचों ने जबलपुर शादी में शामिल होने के आरोप लगाकर हम तीनों को बहिष्कृत कर दिया। पर हम अपने विचारों पर दृढ़ रहे और करीबन १ वर्ष तक हम

पंचायत से बहिष्कृत रहे। न माफी माँगी न शुद्धिकरण किया। भावार्थ यह है कि श्री बियाणीजी के वक्तृत्व से हम पर इतना गहरा असर हुआ कि हम कृत निश्चयी बने। उसी वक्त से श्री बियाणीजी हमारे परिचित बनकर मार्गदर्शक नेता बने हैं।

इसके बाद अहमदनगर माहेश्वरी प्रान्तीय सभा के सभापति पूज्य तपोधन श्री दे. भ. श्री कृष्णदासजी जाजू के साथ आपका फिर दौरा हुआ तब आप हमारे मा. यु. मण्डल की व्यायामशाला में पधारे और "व्यायाम" विषय पर युवकों को सम्बोधन कर सम्भाषण किया था।

बेलापुर (अहमदनगर) सभा आपकी अध्यक्षता में हुई उस समय आपने व्याख्यान की अमृतधारा ही बरसा दी थी और श्रोताओं पर इतना प्रभाव डाला कि बिदाई के समय सभी की आँखें गीली हो गई थीं।

सतारा, सोलापुर, पूना, बम्बई, ग्वालियर आदि की सभाओं में जब आपके भाषण होते थे तब हम युवक, विद्यार्थी, बड़े-बूढ़े आपका भाषण बड़े प्रेम, आदर के साथ श्रवण करने के लिए आतुर हो जाते थे। आपके प्रत्येक विषय पर ओजस्वी भाषण को सुनकर अनेकों युवक एवं वृद्ध मनन चिन्तन द्वारा अपने को कृतार्थ करते। मुझे भी आज जो कार्यकर्ता कहलाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है उसका श्रेय आपकी अमोघवाणी की प्रेरणा को ही है। इतना प्रभाव महाराष्ट्र के युवकों और अन्य लोगों पर आपके भाषण सुनकर पड़ा है।

श्री बियाणीजी इतने प्रसिद्ध व्यक्ति होकर भी समाज के अग्रणी से लेकर छोटे-से-छोटे बालक, युवक बराबर स्नेह रखते हैं। मेरे जैसे साधारण आदमी की भेंट कभी मेरे मित्र श्री राधाकिशन जी लाहोठी (बम्बई) के यहाँ या अन्य कहीं हो जाती है तो वे घर के सब लोगों—अबाल वृद्ध तक की कुशल-क्षेम पूछ लेते हैं। बच्चों की पढ़ाई, आरोग्य आदि पर ध्यान देने की बात कहना, प्रेमपूर्वक वार्तालाप करना, मानो आपका गुण धर्म है। कभी मैं कुछ जानकारी के लिए पत्र द्वारा कुछ पूछ लेता तो पत्र का जवाब सलाहपूर्वक तुरन्त आ जाता है।

मैंने जब अपनी लड़कियों की शादी-ब्याह की चिन्ता आपके सामने व्यक्त की तो आपने मार्ग निर्देशन करते हुए कहा—"लड़का हो या लड़की उसकी खूब पढ़ाई कराते रहें, जिससे वह आप खुद ही अपना कार्य भार सम्भाल ले, साथ ही आर्थिक भार भी उठाकर स्वावलम्बी बनेंगे, इस प्रकार आपको चिन्तित होने का कोई कारण नहीं है। इससे मेरे जैसे पाँच पुत्री के पिता को धर्य मिलना स्वाभाविक है।

आपके साथ भोजन करने का अवसर मिलने पर आप सप्रेम भोजन कराते हैं। भोजन करते-करते पदार्थ के गुण-धर्म बतलाते हुए आरोग्य का ज्ञान करा

देते हैं। भोजन का तरीका भी स्वच्छतापूर्वक रहता है। चम्मच से भोजन करना, एकाग्रह चित्त से चवर्ण करना, आनन्द के साथ रुचिपूर्वक, मन स्थिर रखकर भोजन करना उन्हें प्रिय है। एक-एक ग्रास के साथ आप अपनी मीठी वाणी से वार्तालाप भी करते जाते हैं। इस प्रकार से परोसने का आनन्द आता और महिलाएँ हों या लड़के सबकी प्रसन्नता से वातावरण आह्लादमय हो जाता है।

लगभग ३०-४० वर्ष के पूर्व की बात है, एक बार मुझे अपनी लड़की के सम्बन्ध के लिए बरार जाना था। तब श्री बियाणीजी के यहाँ जाने का (अकोला) मौका मिला। मैंने अपने आगमन की सूचना श्री बियाणीजी को भेज दी थी, आपने स्टेशन पर मुझे लेने आदमी भेज दिया। मुझे आप नव-राजस्थान प्रेस में मिले, वहाँ पर आपने हमारा हार्दिक स्वागत किया। मकान पर सौ० सावित्रीदेवी ने भी फिर आदरातिथ्य किया। श्री बियाणीजी ने सब कुटुम्बियों के साथ भोजन करवाया। यह सब स्वागत-सत्कार देखकर मुझे तथा मेरे मित्र पर इतना प्रभाव पड़ा कि मानो कोई बड़ा नेता ही आया हो और उन्हीं के आगत-स्वागत में सब लगे हुए हैं।

मैं बरार के माहेश्वरी समाज से अपरिचित था। श्री बियाणीजी ने वहाँ के सज्जनों श्री केलाजी, श्री तापड़िया जी बेलगाँव के श्रीमान सेठ स्व० लक्ष्मी-नारायणजी, अमरावती के श्री राधावल्लभजी लड्ढा से मेरा परिचय कराया। विशेष आनन्द की बात है कि उस परिचय के परिणामस्वरूप श्रीमान स्व० सेठ लक्ष्मीनारायणजी राठी बेलगाँव निवासी के सुपुत्र श्रीमान रतनलालजी का सम्बन्ध राहुरी निवासी मेरे मित्र मोहनलालजी हरक की सुपुत्री से हुआ। यह सम्बन्ध मेरे खयाल से उस समय का बरार और महाराष्ट्र प्रान्त का प्रथम सम्बन्ध था। और उसका श्रेय श्री बियाणीजी को है, यह हम कैसे भूल सकते हैं? अब तो दूर-दूर के सम्बन्ध एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में बड़ी संख्या में होते हैं।

कांग्रेस के चुनाव में विदर्भ प्रदेश से आप चुनकर आए तथा वित्त-मन्त्री का पद स्वीकार किया। मित्रों द्वारा अभिनन्दन की वर्षा हो रही थी और ऐसा खयाल हो रहा था कि आपका केन्द्रीय सरकार में आसन स्थिर हो रहा है। ऐसे ऊँचे दर्जे पर आप कार्य कर रहे थे तब भी हमारे जैसे लोगों के यहाँ से कोई सभारम्भ आदि का निमन्त्रण जाता तो आप अवश्य हाजिर होते या सन्देश तो नियमित समय पर जरूर पहुँच जाता। बियाणीजी का आया हुआ वह शुभ सन्देश, जनसमूह में पढ़कर बताने में गौरव प्रतीत होता।

गतवर्ष से श्री बियाणीजी ने 'विश्व-विलोक' नामक पाक्षिक निकालना प्रारम्भ किया है, उसके सभी अंक नियमित रूप से आते गए। उसे पढ़कर अनेक

विषयों का ज्ञान होता है। विषय चयन तथा सामग्री की दृष्टि से मैं सदा आगामी अंक की प्रतीक्षा बड़ी आतुरता से करता हूँ। आप जिस विषय को उठाते हैं उसके तह में प्रवेश करके कोना-कोना झाँकने में अथक परिश्रम करने से नहीं चूकते। उस समय पाठक को उनके तत्सम्बन्धी विषय के एकाधिकार का परिज्ञान होता है। आपके लेख में सामाजिक, राजकीय, आध्यात्मिक, व्यवहार में लानेवाले विषयों की सांगोपांग विवेचना मिलती है।

आप स्व० श्री कृष्णदासजी जाजू को अपना गुरु मानते थे। उनके प्रति बड़ी श्रद्धा रखते थे। श्री जाजू के परामर्श को आप बड़ा महत्व देते थे और उस पर आचरण भी करते थे। श्री बियाणीजी विनोदी प्रकृति के हैं। मित्रों के बीच उनकी उपस्थिति से वातावरण बड़ा सजीव तथा सरस बना रहता है। वार्तालाप के बीच आप अपने अनुभव की सूक्ष्म बातों का भी उल्लेख करते चलते हैं। जिससे सम्पूर्ण वातावरण बड़ा प्रिय हो जाता है।

शुद्ध सात्विक भाव, प्रेम की प्रतिमूर्ति, रहन-सहन में सादगी, वक्तृत्व में ओज एवं मिठास, बाल सुलभ सरलता किन्तु राजनीति की गहन से गहन गुत्थियों को भी सुलझाना वे जानते हैं। भाईजी का जीवन आदर्शमय है, इससे युवक तथा विद्यार्थी भी अपने जीवन को सँवारते-सजाते हैं। उन्हें पर्याप्त प्रोत्साहन तथा सही मार्गदर्शन मिलता है। मैंने भी कुछ अंशों में भाईजी से तत्व ग्रहण किया है। मुझे बियाणीजी में माँ की ममता, पिता का सही मार्गदर्शन, बड़े भाई का स्नेह और सच्चे मित्र का सहयोग मिला है।

ईश्वर आपको पूर्ण आयु तथा सुखमय जीवन दे। ★

बियाणीजी एक विचारक के रूप में

लेखक
एम० एस० परिहार, बी० ए०—इन्दौर
(कानून के विद्यार्थी तथा लेखक ।)

मनुष्य के गुणों एवं उसकी बुद्धि की पहुँच की सीमा होती है । विज्ञ महात्मन् बियाणीजी के विषय में प्रकाश डालना सूर्य को दीपक दिखाना है । किसी भी मनुष्य के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने के लिए संवेदनशील, दृढ़-प्रतिज्ञ, सद्भावनामय अन्त:करण की आवश्यकता होती है । संवेदनशील वह है जो मानव की पीड़ा, वेदना, सिसक, टीस, क्रन्दन, हर्ष, विषाद, उल्लास आदि की मनोवृत्ति को अपने उर्वर मस्तिष्क, उदात्त विचार एवं उदार हृदय में अनुभूत कर सके । एक गम्भीर विचारक के नाते उक्त गुणों का समाविष्ट हम पूज्य बियाणीजी के व्यक्तित्व में भली भाँति पाते हैं ।

आइए आपके धार्मिक, सांस्कृतिक, सासाजिक, वैज्ञानिक एवं दार्शनिक विचारों के पहलुओं पर कतिपय प्रकाश डालने का प्रयत्न करें ।

जहाँ तक धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विचारों का प्रश्न है, श्री बियाणीजी ने मानव जीवन को धर्म की पृष्ठभूमि का उच्चतम सम्बल प्रदान किया है । तदनुसार मिथ्या भौतिक ज्ञान की तीव्रतम चकाचौंध ने मानव को अन्त:चेतना से काफी दूर कर दिया है, तथा व्यक्ति हर पग, हर क्षण अपने में एक अभाव, असन्तोष सा अनुभव करने लगा है । नि:संकोच हर प्रकार के अत्याचार, पाप, भ्रष्टाचार की अनेक कुचेष्टाएँ अपने संहारिक अहंबल से करता जा रहा है ।

मनुष्य का आज का संघर्ष यथार्थ में एक सांस्कृतिक है । आज की भोग-प्रधान संस्कृति में, जीवन संघर्ष एवं शक्ति संचय के कारण, मानव जीवन का धैर्य पेट और पैसा बन गया है । बाह्य समृद्धि का समाकर्षण तथा भोगलिप्सा ने हमारी अन्तदृष्टि खो दी है एवं मनुष्य विक्षिप्त प्राय-सा आन्तरिक शान्ति की खोज में भटक रहा है ।

ऐसे समय में मानव-मात्र के अभ्युदय का चरम लक्ष्य केवल धर्म ही रह जाता है, जो मानवता को अपने अवसान से मुक्ति दिला सकता है। यदि विश्व पुनः धर्म के पथ पर आसन्न हो जाय तो सम्भवतः हमारी सूखी धमनियों में पुनः एक बार सशक्तता का संचार हो सकता है। कारण अभी भारतवर्ष पूर्ण रूप से धर्म-परक नहीं हुआ है, केवल म्लान आवरण कतिपय भौतिक जगत् की तीव्रतम चकाचौंध के कारण उस पर अंकित हो गया है। वास्तविक रूप में यदि आज भी हम धर्म की रक्षा करना चाहें तो हम धर्म के द्वारा ऐसी मैत्रीपूर्ण स्थिति प्राप्त कर सकते हैं, जो समष्टि विश्व को प्रेमालिंगन में बद्ध कर सकती है।

धर्म की साधनाशक्ति की साधना है, जहाँ शक्ति प्रकृति को वश में करके उसका पूर्णतया दिव्य और रमणीय विकास करती है मानव का अन्तःकरण दिव्य स्पन्द से स्पन्दित हो सूक्ष्म शक्ति से प्लावित हो जाता है। स्वच्छ निर्मल प्रेम, ज्ञान, स्नेह, सहानुभूति, सौहार्दता एवं उच्च आदर्श का मार्ग निखर उठता है। ऐसे धर्म प्राण देश में आज हमारी धार्मिक भावनाएँ क्यों कुण्ठित होती जा रही हैं जबकि ऐसे समय में भारत की क्या विश्व को ऐसे दिग्दर्शन की आवश्यकता है, क्योंकि धर्म ईश्वर एवं समष्टि के प्रति ममत्व के भाव उत्पन्न करने का सर्वोत्कृष्ट साधन है। यदि हम धर्म विषयक दुर्भ्रान्ति धारणाओं को परित्यक्त करके पक्षपात-रहित अन्तःकरण से धार्मिक जीवन को अपना लेवें तो अवश्य हमारा राष्ट्र सुख-शान्ति से सम्पन्न हो सकता है।

श्री बियाणीजी के वैज्ञानिक विचारों में भी हम धर्म एवं दर्शन को सजीव पाते हैं। अपने दुःख की निवृत्ति के लिए मानव ने जो प्रयत्न किए हैं उनमें विज्ञान, दर्शन एवं धर्मरूपी साधनों की प्राप्ति प्रमुख है विज्ञान प्रकृति की खोज है। वास्तविकता की खोज के फलस्वरूप उपलब्ध कर्तव्यों के समुचय का ही दूसरा नाम धर्म है तथा अन्तःकरण के विषय में चिन्तन का ही दूसरा नाम दर्शन है। व्यावहारिक जीवन में धर्म एवं विज्ञान का विशेष महत्व है। धर्म का सम्बन्ध हृदय से है और विश्वास उसका मूलाधार है। विज्ञान का सम्बन्ध मस्तिष्क से है एवं विचार व तर्क उसके मूलाधार हैं। धर्म सामान्य की परिभाषा है, कि जो अभ्युदय तथा निःश्रेय की सिद्धि करावे वह धर्म है अर्थात् कर्तव्याकर्तव्य का दूसरा नाम धर्म है। पाप और पुण्य का विचार कर्तव्याकर्तव्य एवं शुभाशुभ का निर्णय दूसरा प्रमुख लक्षण है। पुण्य और पाप के बीच में विभाजन की रेखा खींचना एक दुष्कर कार्य है, क्योंकि इसके अन्तर्गत देश और काल का विचार अनिवार्य है।

उक्त विचारों में बियाणीजी ने कितने समीचीन ढंग से विज्ञान, धर्म एवं

प्रकृति से सम्बन्ध स्थापित करते हुए तीनों को एक दूसरे पर आधारित दर्शाया है। इस दृष्टि से हम पूज्य विद्याविद् श्री बियाणीजी को प्रबुद्ध जीव के रूप में परिपक्व पाते हैं। ★

अनेकान्तवादी श्री बियाणीजी

लेखक
तारा चन्द सुराणा—यवतमाल
(रईस; भूतपूर्व विधान सभा सदस्य, नागपुर; भूतपूर्व जिला कांग्रेस अध्यक्ष, यवतमाल ।)

किसी भी वस्तु को ठीक तरह समझने के लिए उसे विभिन्न दृष्टियों से देखना, उसके अलग-अलग पहलुओं पर विचार करने को ही अनेकान्तवाद या अपेक्षावाद कहते हैं ।

हम जिस किसी भी वस्तु को देखते हैं उसमें अनन्त धर्म हैं । अनन्त गुणों का अखण्डपिण्ड ही द्रव्य कहलाता है । उन सब अनन्त धर्मों में विरोध नहीं है, यह बात अनेकान्तवाद या अपेक्षावाद से जानी जाती है । अर्थात् एक ही वस्तु में विवक्षावश विधि-निषेध आदि द्वारा परस्पर अविरुद्ध धर्मों का जिससे ज्ञान हो उसे ही अनेकान्त या अपेक्षावाद कहते हैं । यहाँ अविरुद्ध यह खास ध्यान में रखने योग्य है ।

रामरतन रमेश से बड़ा है और छोटा भी है, इस वाक्य में बड़ेपन और छोटेपन इन दोनों धर्मों का समावेश एक रामरतन में किया गया है, परन्तु यह समावेश प्रमाणिक नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इस प्रकार का बड़ापन और छोटापन परस्पर विरुद्ध है, जो जिससे बड़ा है वह उसी से छोटा नहीं हो सकता । अतः अनेक धर्मों का एक ही वस्तु में समावेश होने पर भी इसे सम्यक अनेकान्त नहीं कह सकते । यह मिथ्या अनेकान्त है । अच्छा अब उपर्युक्त वाक्य को यों बदल दीजिए—रामरतन रमेश से बड़ा है और हीरालाल से छोटा है, तो कुछ भी विरोध या असंगति इस वाक्य में नहीं रह जाती । इसका अर्थ यह हुआ कि रामरतन में रमेश की अपेक्षा बड़ापन और हीरालाल की अपेक्षा छोटापन पाया जाता है । यह बात लोक में प्रसिद्ध है । यही सत्य है, अनेकान्तवाद या अपेक्षावाद के स्वरूप में अविरुद्ध पद रखने का रहस्य है । पाठक सोच सकते हैं कि बड़ापन और छोटापन परस्पर विरुद्ध से मालूम होते हुए भी कितनी स्पष्टता से एक जगह रहते हैं । यही

हाल अन्य गुणों, धर्मों का भी है। पहले-पहल वे विरुद्ध जँचते हैं, पर गहरा विचार करने से एवं अपेक्षा को ध्यान में रखने से अविरुद्ध हो जाते हैं।

धर्म सभी आपेक्षित होते हैं। एक उदाहरण लीजिए—एक पाठशाला में दो विद्यार्थी पढ़ते हैं। उनमें से एक ने दूसरे की किताब उठा ली। पढ़ते-पढ़ते पन्ना पलटा; पन्ना फट गया। वह लड़का जिसकी किताब थी अब उसे नहीं लेता; क्यों? एक पन्ना फटने से क्या वह किताब नहीं रही। अर्थात् किताब की पहली हालत नष्ट हो गई और एक नई हालत उत्पन्न हो गई, किन्तु किताब का अस्तित्व बना रहा। इस बात को अनेकान्तवाद कहता है कि किताब कथंचित नित्य है और कथंचित अनित्य है। नित्यत्व और अनित्यत्व की तरह एकत्व-अनेकत्व, सत्व-असत्व आदि अनन्त धर्म एक ही वस्तु में मित्र भाव से रहते हैं। मान लीजिए किसी जगह तीन आदमी हैं; एक सोने का घड़ा चाहता है, दूसरा सोने का मुकुट चाहता है, तीसरा सोना चाहता है। तीनों व्यक्ति अपने इष्ट की खोज में निकले। भाग्य से कहीं घड़ा मालूम हुआ, मगर वहाँ तक पहुँचने से पहले ही घड़ा तोड़-फोड़ कर मुकुट बना दिया गया। अब जो घड़ा चाहता था उसको दुःख होता है, जो मुकुट चाहता था उसको प्रसन्नता होती है, और जो सोना चाहता था उसे न हर्ष होता है न विषाद ही, वह मध्यस्त रहता है। इस उदाहरण से हम समझ सकते हैं कि पहले दो पुरुषों की दृष्टि में घट और मुकुट प्रथक-प्रथक पदार्थ हैं, और तीसरे की दृष्टि में दोनों एक अर्थात् स्वर्ण में कथंचित एकत्व है, कथंचित अनेकत्व है, इसी को पर्याय दृष्टि और द्रव्य दृष्टि कहते हैं।

बस अपेक्षावाद इस प्रकार परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाले, किन्तु वास्तव में अविरोधी धर्मों का एकत्र समन्वय करता है और इसीलिए कहा गया है कि जो विरोध का मंथन करे वही अपेक्षावाद है।

जो अनेकान्तवादी होते हैं वे परस्पर विरोधी प्रतीत होनेवाले किन्तु वास्तव में अविरोधी धर्मों का एकत्र समन्वय करते हैं। इसीलिए कहा गया है कि जो विरोध का मन्थन करे वही अनेकान्तवादी है। विरोध मन्थन ही स्यादवाद है। जो प्रत्यक्ष अनुमान आदि प्रमाणों से अविरुद्ध अनन्त धर्मों का एक वस्तु में प्रतिपादन करे वह सम्यक अनेकान्त है, तथा जो प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से विरुद्ध अनेक धर्मों का प्रतिपादन करे वह मिथ्या अनेकान्त है। देखो रमेश और रामरतन का उदाहरण। प्रमाण से जानी हुई अनन्त धर्मात्मक वस्तु में से किसी भी एक धर्म को दूसरे धर्मों का निषेध न करके उपेक्षा करके जो बताता है, वही सम्यक एकान्त है। दूसरे धर्मों का निषेध करके सिर्फ एक धर्म का विधान करनेवाला मिथ्या एकान्त

है। जब नय के द्वारा किसी बात को जानते हैं, तब वह सम्यक एकान्त रूप होती है, क्योंकि नय का कार्य वस्तु के समस्त धर्मों को जानना नहीं अपितु किसी विवक्षित एक ही धर्म को जानना है। अतः सन्नय की अपेक्षावस्तु सम्यक एकान्त रूप है। जब प्रमाण से किसी वस्तु को जानते हैं, तब वह अनेकान्त रूप होती है, क्योंकि प्रमाण सब धर्मों के समुदाय रूप पदार्थ को जानता है। अतः प्रमाण की अपेक्षा वस्तु अनेकान्त रूप है। बियाणीजी सत्य को विभिन्न दृष्टियों द्वारा अवलोकन करनेवाले होने से सहिष्णुता की शिक्षा देते हैं। वे हमें सिखाते हैं कि तुम सच्चे हो तुम्हारा धर्म सच्चा है, पर दूसरों को मिथ्या मत कहो।

ज्योंही तुमने दूसरों को मिथ्या माना तो तुम भी मिथ्या हो गए। वास्तव में संसार के इतिहास में इसके मुकाबले का सिद्धान्त दूसरा नहीं मिल सकता। अनेकान्त के प्रति यदि जनता में श्रद्धा की भावना उदित हो जाए, तो धर्मान्धता, अनुदारता, अशान्ति और विद्वेष की भावना सब छूमन्तर हो जाए। संसार में फिर एक बार शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो जाए। इन्हीं गुणों के कारण बियाणीजी व्यापक हो गए हैं। भाईजी के प्रति मैं अपनी भाव-भीनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ, और परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि बियाणीजी को आयु आरोग्य प्रदान करे। ★

आत्मशक्ति, निर्भीकता, सौजन्य और कर्मण्यता के धनी आदर्श राजपुरुष

लेखक

रामेश्वरदयाल तोतला—इन्दौर

(भूतपूर्व मन्त्री, मध्यभारत राज्य; भूतपूर्व विधानसभा सदस्य, मध्य प्रदेश; मध्य प्रदेश कांग्रेस की एड-हॉक कमेटी के अध्यक्ष; वक्ता एवं लेखक ।)

जब महात्मा गांधी ने द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए सन्त विनोबा और श्री जवाहरलाल नेहरू के बाद तृतीय व्यक्ति के रूप में विदर्भ-केसरी श्री ब्रजलालजी बियाणी का चयन किया तो मेरे मन पर और देश में सब पर यह छाप पड़ी कि श्री बियाणीजी देश में प्रथम पंक्ति के नेताओं में एक हैं । इस विश्व-विख्यात घटना के पच्चीस साल बाद उस छाप की निजी अनुभव ने पुष्टि ही की है । मैंने पाया कि किसी भी समस्या या विषय पर उनके दिमाग में कोई उलझन नहीं रहती है, वे तुरन्त ही एक धारणा बना लेते हैं और उनका निष्कर्ष, उपाय, योजना तर्क सम्मत आधार पर होने से निर्भ्रान्ति होती है । वे भावना में नहीं बहते और कल्पना के मोदकों में नहीं मोहते, बल्कि जो घटित होता है उस पर शोक-हर्ष न मनाते हुए अनासक्त भाव से उन्हें लेने की अविचलित मनःस्थिति बियाणीजी की बन गई है । प्रथम श्रेणी के नेताओं से भी उनमें यह विशेषता मुझे प्रतीत हुई है कि वे किसी भी बड़ी हस्ती के समक्ष अपने विश्वास को समर्पित नहीं करते, अपनी मान्यता पर दृढ़ रहते हैं ।

और इस समर्पण या दृढ़ता ने देश के हाईकमाण्ड से बियाणीजी की बात तो मनवाई ही पर खुद बियाणीजी का 'इमेज' (बिम्ब) नेताओं की नज़र में जिद्दी के रूप में बन गया । दो उदाहरण देना उचित होगा—भारत में इस सदी के चतुर्थ दशक में ब्रिटिश शासन द्वारा प्रान्तीय स्वायत्त शासन लागू करने के लिए प्रान्तीय विधान सभा की रचना मान्य की गई । मेकडानेल्ड अवार्ड की तहत हिन्दू-मुसलमान सदस्यों की संख्या निर्धारित की गई और उनके मतदाता अलग-अलग उन्हीं के धर्मवाले

रखे गए थे। इस व्यवस्था को बदलवाने के तरीके पर कांग्रेस में महामना मालवीयजी और अणे साहब का कांग्रेस हाईकमाण्ड से गहरा मतभेद था। अतः इन नेता द्वय ने नेशनलिस्ट पार्टी के नाम से उम्मीदवार खड़े करने का तय किया। अंग्रेजों के समर्थकों को पूर्ण पराजय देने के लिए विदर्भ प्रदेशाध्यक्ष बियाणीजी और अणेजी में समझौता हुआ कि अणेजी के दलवालों को पाँच जगहें दी जाए और वे कांग्रेस टिकट पर चुनाव लड़ें। अणेजी से किया गया समझौता पार्लियामेन्टरी बोर्ड को पसन्द नहीं थी पर बियाणीजी के आग्रह के आगे बोर्ड को झुकना पड़ा। इससे बियाणीजी से हाईकमाण्ड नाराज़ हुआ पर विदर्भ में आशानुरूप सफलता अवश्य मिली। दूसरी घटना है स्वराज्य के समय झण्डा फहराने की। ब्रिटिश पैरेमाउन्ट्सी लेप्स होकर देशी रजवाड़े पूर्ण सत्ता सम्पन्न होनेवाले थे और विदर्भ को पुनःप्राप्त करने के लिए निज़ाम प्रयत्नशील थे। सेन्ट्रल प्राविन्सेस (मध्यप्रदेश) में पचहत्तर साल रहने के बाद बरार (विदर्भ) निज़ामशाही में जाए यह तो कांग्रेस ने स्वीकार नहीं किया। सिर्फ प्रतीक स्वरूप निज़ाम का झण्डा भी राष्ट्रीय ध्वज के साथ विदर्भ पर फहरा देने की व्यवस्था तय हुई। बियाणीजी ने इसे अस्वीकार कर दिया। इस संक्रान्ति में बियाणीजी की विजय हुई। वे विदर्भ के हृदय पर तो छा गए पर हाईकमाण्ड की नज़र में "प्रोत्साहन" योग्य नहीं रहे। वे मूलतः एक विचारक ही हैं। भारत के कांग्रेसियों में बियाणीजी ही अकेले व्यक्ति हैं जिन्होंने नेहरूजी की निजी सम्पत्ति या जेवर सम्बन्धी व्यवस्था पुत्री के हक में करने की आलोचना की। उन्होंने वसीयतनामा के पूर्वार्द्ध एवं मुख्य भाग की और उसकी भावना को सराहा और उसकी खूब प्रशंसा भी की। यह आलोचना भी उनके स्वतन्त्र, मौलिक विचार और उनके अभिव्यक्ति करने में असहिष्णुता से विरोध मोल लेने के साहस का ही एक नमूना है।

तीस पैंतीस वर्ष पूर्व की अपनी भावना का मुझे स्मरण है तब गांधीजी, नेहरू, सरदार, सुभाष आदि की पंक्तियों के बाद सर्वश्री वीर नरीमान, गोविन्ददासजी, जमनालालजी बजाज, तसद्दुक अहमद खाँ शेरवानी और ब्रजलालजी बियाणी आदि को मैं मानता तथा मन से आदर देता था। हम उस अतीत पर नज़र डालें। वर्ग या जाति द्वेष की भावना मद्रास जैसी ही मराठी क्षेत्रों में आ गई थी। ब्राह्मण और व्यापारी के विरुद्ध भावना जनता में पैदा की जा चुकी थी तब श्री बियाणीजी ने गांधीजी के आह्वान पर कालेज की पढ़ाई छोड़कर स्वतन्त्रता सेना में प्रवेश किया। मराठी भाषी जनता के हृदयों को माहेश्वरी-वैश्य होते हुए भी बियाणीजी ने न सिर्फ अपने अनुकूल रखा बल्कि जीत लिया। आपके पूर्वजों ने भी सुकीर्ति अर्जित

की थी, पर बियाणीजी का स्थान उनकी अनवरत जनसेवा, हृदय के सद्भाव, अमली सौहार्द और अद्भुत संगठन कुशलता से विदर्भ में अद्वितीय हो गया था। विदर्भ की जनता अपने भाईजी पर पूर्ण रूप से फ़िदा थी। और भाईजी समस्त लोकहितैषियों, छोटे कार्यकर्ताओं के आदरणीय तो रहे ही, नाग विदर्भ के दिग्गजों के भी वे स्नेह पात्र हो गए थे। मतभेदों के बीच भी श्री बियाणीजी का सदा विशिष्ट स्थान बना रहा। गांधीजी, नेहरूजी और सरदार पटेल भी बियाणीजी की लोकप्रियता तथा संगठन क्षमता के कायल रहे हैं। छोटे-बड़े कार्यकर्ता उनके परिजन सरीखे ही बन गए थे। वे साथियों को उनकी मुसीबत में सहारा देते रहे हैं। बियाणीजी की कांग्रेस के प्रान्ताध्यक्ष, राज्य के मन्त्री और सत्ता विद्रोही नाग विदर्भ आन्दोलन के नेता के रूप में जनता से जो सम्मान मिला उसकी तुलना में बहुत कम उदाहरण नज़र आएंगे। पचास वर्ष की वय में जब आपकी स्वर्ण जयन्ती उत्सव मनाया गया तो जो थैली भेंट करने का निश्चय हुआ उससे ढाई गुनी रकम जमा हो गई। ऐसे उदाहरण अन्यत्र कहीं नहीं मिलेंगे। संगठन क्षमता, भाषण प्रतिभा और लोकप्रियता ने आपको मध्य प्रदेश का चुनाव विजेता बना दिया था। चुनावों में आप ही भेजे और बुलाए जाते थे।

बियाणीजी की एक विशेषता मुझे नज़र आई है कि वे हृदय से समाज सुधारक हैं। अन्य सुधार-विचार रखनेवालों में और उनमें इतना ही फ़र्क़ है कि उन्होंने अपनी मान्यताओं पर अमल भी किया है। वैश्य माहेश्वरियों में भी डीडू-कोलवार आदि वर्ग हैं जो परस्पर विवाह नहीं करते और कोलवार कुछ हल्के समझे जाते रहे। बियाणीजी ने इस फ़र्क़ को तोड़नेवालों का साथ दिया। वर्षों तक इस संघर्ष में बियाणीजी अग्रगण्य रहे। अछूतवर्ग के साथ भोजन करके आज के तीस वर्ष पहले ही वे उनके दिलों को जीत चुके हैं। श्री बियाणीजी जाति-पाँति के विरुद्ध हैं अतः अपने पुत्र का विवाह जाति के बाहर करके एक बेजोड़ साहस का परिचय दिया। बियाणीजी रूढ़िवादिता के जन्मजात विरोधी हैं और यह विरोध उन्होंने प्रत्यक्ष रूप में कर दिखाया। उन्होंने दलितों को उठाने के साथ समान संस्कारवाले लोगों के हृदय-परिवर्तन के लिए भी सार्थक प्रयत्न किए। वे माहेश्वरी महासभा और अखिल भारतीय मारवाड़ी (राजस्थानी) सम्मेलन के अध्यक्ष हुए और सर्वत्र उन्होंने अपनी विशिष्ट छाप छोड़ी।

बियाणीजी अपने जीवन में महान् तरक्की कर सके इस श्रेय की भागीदारी उनकी पत्नी आदरणीय सावित्रीदेवी हैं। सावित्रीदेवीजी के सहयोग और निष्ठा-पूर्वक अनवरत सेवा से ही बियाणीजी इतने आगे बढ़ जाने के योग्य रह सके।

ज़ाहिर है बियाणीजी का दाम्पत्य जीवन सुखी एवं सफल है। सावित्री बहन ने भी "अंग्रेज छोड़ो" १६४२ के और नाग विदर्भ निर्माण के संघर्ष में जेल यात्रा की। और इस वृद्धावस्था में भी "जीवन की साँस" की तरह वे पति सेवा में रत हैं।

बियाणीजी राजनैतिक कार्यक्रम के लिए सन् १६३२ में इन्दौर आए पर मैं उनसे पहली बार दिल्ली में १६४६ या ४७ में मिला। दूसरी बार इन्दौर में सम्भवतः १६५६ में। निकट से देखने, समझने का अवसर तो १६६२ में आया जब वे इन्दौर में रहने लगे। मैंने उन्हें मृत्यु से संघर्ष करते भी देखा जिसमें वे आत्मबल से मृत्यु पर भी जयी हुए। लकवे के इस द्वितीय प्रहार में, मौत और ज़िन्दगी की जद्दोजेहद में भी उनके चेहरे पर और नेत्रों में धैर्य और शान्ति स्पष्ट झलकती थी। कोई बेचैनी उनके मन में नहीं थी। शारीरिक ताप भी बगैर तड़पन या घबराहट के उन्होंने सहा। यह वीरता, यह आत्मशक्ति, लाखों में किसी बिरले मानव में ही होती है। आज भी वे सत्तर साल की उम्र में बुद्धि के पैनेपन, स्पष्ट चिन्तन, वैज्ञानिक विश्लेषण और निर्भ्रान्ति निर्णय के धनी बने हुए हैं। महत्वपूर्ण कार्य कर सकने का आत्मविश्वास उनका अडिग है पर वे मोह से मुक्त हैं।

वे राजपुरुष हैं, पर सत्ता से बाहर रहने का कोई विषाद उनमें मैंने नहीं पाया। सार्वजनिक जीवन में जो कटुता या राग द्वेष आया था उससे भी अपने मन को उन्होंने मुक्त कर लिया है। बियाणीजी हर कार्य को शान से करने के हामी हैं। जब भी वे किसी कार्य में पड़ते हैं, प्रभावित तरीके से करने की कोशिश करते हैं। उनका यह विश्वास है कि व्यवस्थित अख़बारी प्रचार से कार्य प्रभावी बनता है और शक्ति निर्मित होती है। कई लोग ऐसे भी हैं जो प्रचार से रचनात्मक कार्य करने को ज्यादा महत्व नहीं देते हैं।

बियाणीजी का उद्भव राजनेता के रूप में ही हुआ है। वे चाहे पद पर न रहें पर प्रथम पंक्ति से भी आगे की उनकी स्थिति सदा रही है। वे जन्मजात नेता, राजपुरुष हैं। ऐसे राजपुरुष जो रचनात्मक कार्यों की सहायता से देते हैं, पसन्द करते हैं पर राजनीति से उन्हें अलग रखते हैं और उनकी ज़िम्मेदारी से अपने को मुक्त रखते हैं क्योंकि उनका लक्ष्य राजनीति है और वे मानते हैं कि राजनैतिक कार्यकर्ता को रचनात्मक कार्य की जिम्मेदारी नहीं लेना चाहिए। उनकी प्रेरणा तथा सहयोग से हजारों व्यक्ति कार्यकर्ता बन गए। कार्यकर्ता के पास बौद्धिक पूँजी होती, बढ़नी चाहिए इसमें उनका विश्वास है। इसलिए मध्य प्रदेश कांग्रेस में कार्यकर्ताओं के मानस-निर्माण का कार्य उन्होंने सन् १६६३ में अंगीकार

की थी, पर बियाणीजी का स्थान उनकी अनवरत जनसेवा, हृदय के सद्भाव, अमली सौहार्द और अद्भुत संगठन कुशलता से विदर्भ में अद्वितीय हो गया था। विदर्भ की जनता अपने भाईजी पर पूर्ण रूप से फ़िदा थी। और भाईजी समस्त लोकहितैषियों, छोटे कार्यकर्ताओं के आदरणीय तो रहे ही, नाग विदर्भ के दिग्गजों के भी वे स्नेह पात्र हो गए थे। मतभेदों के बीच भी श्री बियाणीजी का सदा विशिष्ट स्थान बना रहा। गांधीजी, नेहरूजी और सरदार पटेल भी बियाणीजी की लोकप्रियता तथा संगठन क्षमता के कायल रहे हैं। छोटे-बड़े कार्यकर्ता उनके परिजन सरीखे ही बन गए थे। वे साथियों को उनकी मुसीवत में सहारा देते रहे हैं। बियाणीजी की कांग्रेस के प्रान्ताध्यक्ष, राज्य के मन्त्री और सत्ता विद्रोही नाग विदर्भ आन्दोलन के नेता के रूप में जनता से जो सम्मान मिला उसकी तुलना में बहुत कम उदाहरण नजर आएंगे। पचास वर्ष की वय में जब आपकी स्वर्ण जयन्ती उत्सव मनाया गया तो जो थैली भेंट करने का निश्चय हुआ उससे ढाई गुनी रकम जमा हो गई। ऐसे उदाहरण अन्यत्र कहीं नहीं मिलेंगे। संगठन क्षमता, भाषण प्रतिभा और लोकप्रियता ने आपको मध्य प्रदेश का चुनाव विजेता बना दिया था। चुनावों में आप ही भेजे और बुलाए जाते थे।

बियाणीजी की एक विशेषता मुझे नजर आई है कि वे हृदय से समाज सुधारक हैं। अन्य सुधार-विचार रखनेवालों में और उनमें इतना ही फ़र्क़ है कि उन्होंने अपनी मान्यताओं पर अमल भी किया है। वैश्य माहेश्वरियों में भी डीडू-कोलवार आदि वर्ग हैं जो परस्पर विवाह नहीं करते और कोलवार कुछ हल्के समझे जाते रहे। बियाणीजी ने इस फ़र्क़ को तोड़नेवालों का साथ दिया। वर्षों तक इस संघर्ष में बियाणीजी अग्रगण्य रहे। अछूतवर्ग के साथ भोजन करके आज के तीस वर्ष पहले ही वे उनके दिलों को जीत चुके हैं। श्री बियाणीजी जाति-पाँति के विरुद्ध हैं अतः अपने पुत्र का विवाह जाति के बाहर करके एक बेजोड़ साहस का परिचय दिया। बियाणीजी रूढ़िवादिता के जन्मजात विरोधी हैं और यह विरोध उन्होंने प्रत्यक्ष रूप में कर दिखाया। उन्होंने दलितों को उठाने के साथ समान संस्कारवाले लोगों के हृदय-परिवर्तन के लिए भी सार्थक प्रयत्न किए। वे माहेश्वरी महासभा और अखिल भारतीय मारवाड़ी (राजस्थानी) सम्मेलन के अध्यक्ष हुए और सर्वत्र उन्होंने अपनी विशिष्ट छाप छोड़ी।

बियाणीजी अपने जीवन में महान् तरक्की कर सके इस श्रेय की भागीदारी उनकी पत्नी आदरणीय सावित्रीदेवी हैं। सावित्रीदेवीजी के सहयोग और निष्ठा-पूर्वक अनवरत सेवा से ही बियाणीजी इतने आगे बढ़ जाने के योग्य रह सके।

ज़ाहिर है बियाणीजी का दाम्पत्य जीवन सुखी एवं सफल है। सावित्री बहन ने भी "अंग्रेज छोड़ो" १९४२ के और नाग विदर्भ निर्माण के संघर्ष में जेल यात्रा की। और इस वृद्धावस्था में भी "जीवन की साँस" की तरह वे पति सेवा में रत हैं।

बियाणीजी राजनैतिक कार्यक्रम के लिए सन् १९३२ में इन्दौर आए पर मैं उनसे पहली बार दिल्ली में १९४६ या ४७ में मिला। दूसरी बार इन्दौर में सम्भवतः १९५९ में। निकट से देखने, समझने का अवसर तो १९६२ में आया जब वे इन्दौर में रहने लगे। मैंने उन्हें मृत्यु से संघर्ष करते भी देखा जिसमें वे आत्मबल से मृत्यु पर भी जयी हुए। लकवे के इस द्वितीय प्रहार में, मौत और ज़िन्दगी की जद्दोजेहद में भी उनके चेहरे पर और नेत्रों में धैर्य और शान्ति स्पष्ट झलकती थी। कोई बेचैनी उनके मन में नहीं थी। शारीरिक ताप भी बगैर तड़पन या घबराहट के उन्होंने सहा। यह वीरता, यह आत्मशक्ति, लाखों में किसी बिरले मानव में ही होती है। आज भी वे सत्तर साल की उम्र में बुद्धि के पैनेपन, स्पष्ट चिन्तन, वैज्ञानिक विश्लेषण और निर्भ्रान्ति निर्णय के धनी बने हुए हैं। महत्वपूर्ण कार्य कर सकने का आत्मविश्वास उनका अडिग है पर वे मोह से मुक्त हैं।

वे राजपुरुष हैं, पर सत्ता से बाहर रहने का कोई विषाद उनमें मैंने नहीं पाया। सार्वजनिक जीवन में जो कटुता या राग द्वेष आया था उससे भी अपने मन को उन्होंने मुक्त कर लिया है। बियाणीजी हर कार्य को शान से करने के हामी हैं। जब भी वे किसी कार्य में पड़ते हैं, प्रभावित तरीके से करने की कोशिश करते हैं। उनका यह विश्वास है कि व्यवस्थित अख़बारी प्रचार से कार्य प्रभावी बनता है और शक्ति निर्मित होती है। कई लोग ऐसे भी हैं जो प्रचार से रचनात्मक कार्य करने को ज्यादा महत्व नहीं देते हैं।

बियाणीजी का उद्भव राजनेता के रूप में ही हुआ है। वे चाहे पद पर न रहें पर प्रथम पंक्ति से भी आगे की उनकी स्थिति सदा रही है। वे जन्मजात नेता, राजपुरुष हैं। ऐसे राजपुरुष जो रचनात्मक कार्यों की सहायता से देते हैं, पसन्द करते हैं पर राजनीति से उन्हें अलग रखते हैं और उनकी ज़िम्मेदारी से अपने को मुक्त रखते हैं क्योंकि उनका लक्ष्य राजनीति है और वे मानते हैं कि राजनैतिक कार्यकर्ता को रचनात्मक कार्य की जिम्मेदारी नहीं लेना चाहिए। उनकी प्रेरणा तथा सहयोग से हजारों व्यक्ति कार्यकर्ता बन गए। कार्यकर्ता के पास बौद्धिक पूँजी होती, बढ़नी चाहिए इसमें उनका विश्वास है। इसलिए मध्य प्रदेश कांग्रेस में कार्यकर्ताओं के मानस-निर्माण का कार्य उन्होंने सन् १९६३ में अंगीकार

किया था और उसमें अपना सारा कौशल लगाकर एक फिज़ा भी बना दी। वे सौजन्य, शिष्टाचार, शालीनता और उदारता के सरदार हैं।

गुणों के आगार बियाणीजी में दोष भी बने हैं। अपनी बात के अत्यधिक आग्रही होने के कारण वे राष्ट्र नेताओं से कृपा नहीं साध सके, उनका प्रेम अवश्य पाया। अपनी प्रतिभा, शक्ति और निर्णय के सही होने को मानवाने में सम्भव है उनमें अहं भी बढ़ा दिया हो। उनका दोष हो या न हो, उनका राजनैतिक जीवन कांग्रेस में भी संघर्षमय रहा है। यह तो भविष्य में इतिहासकार सही बतावेंगे कि नाग विदर्भ आन्दोलन में पड़कर उन्होंने गलती की या ऐसा जूझना उचित था। पर जन-मानस का नाग विदर्भ पक्षीय ज्वार चुनाव में कांग्रेस के प्रभाव के सामने ठण्डा पड़ गया और वहीं बियाणीजी ने हार को शिरोधार्य कर नाग विदर्भ आन्दोलन से अपने को अलग कर लिया। पर गया समय या बीती घटना वापस नहीं आती। हालाँकि नाग विदर्भ की स्थापना मान्य होने पर भी जो केन्द्रीय शासन ने उसे महाराष्ट्र में शामिल कर दिया तो बियाणीजी ने उस स्थिति को मान लिया था पर बाद में उन्हें और बहुतों को लगा कि विदर्भ की जैसी उन्नति चाहिए नहीं हो रही है। इस भावना ने उन्हें संघर्ष में झोंक दिया। मैं तो यह मानता हूँ कि यहाँ बियाणीजी ने उनके प्रति हो रही उपेक्षा को सहन करना था और संघर्ष के बजाय विदर्भ को समझौते के रास्ते से राहत दिलानी थी।

बिड़लाजी बियाणीजी के समधी हैं। उन्होंने कभी बिड़लाजी से लाभ नहीं उठाया। कई लोग सोचते हैं कि वे बड़े धनवान हैं। असलियत यह है कि पाँच-छः साल पहले ही उन्हें अकोला स्थित अपना विशाल राजस्थान भवन बेच देना पड़ा। बियाणीजी ने अपनी गृहस्थी का निर्वाह पैतृक सम्पत्ति या निजी परिश्रम की कमाई से ही किया।

बियाणीजी की हार्दिक रुचि तो साहित्य में है। उनकी कृतियाँ वास्तव में जीवन को प्रेरणा देती हैं। पाठक के मन को अभिभूत कर लेती हैं। साहित्य सृजन शक्ति का पूरा उपयोग राजनीति ने नहीं होने दिया और उम्र के हीरक चरण के भी एक युग के बाद अब वे कितना क्या कर सकेंगे यह कोई नहीं जानता। हम यह कामना करते हैं कि भाईजी शतायु हों और शरीर से स्वस्थ भी रहें ताकि जनता को उनकी असली सृजन शक्ति का साहित्य के रूप में लाभ मिल सके, जिसके प्रति और साहित्य के स्थायी मूल्यों के प्रति उनकी आस्था है। हम तो यह भी चाहते हैं कि विचारों और कर्मण्यता के धनी इस अनुभव वृद्ध लोकसेवी का लाभ जन-जीवन को, वर्तमान सार्वजनिक क्षेत्र को मिलता रहे। अब जो भी

हो यह निश्चित है कि बियाणीजी का जीवन सार्थक जीवन रहा है और उनकी देन के प्रति अपना आदर मैं प्रकट करता हूँ।

★

श्री बियाणीजी का दूरदर्शन

लेखक

सीतारामजी अजमेरा—इन्दौर

(ग्रन्थ प्रकाशन समिति के सदस्य; इन्दौर के प्रसिद्ध वैद्य; माहेश्वरी समाज के कार्यकर्ता।)

परम श्रद्धेय श्री ब्रजलालजी बियाणी की गतिविधियों का परिचय लगभग तीन दशकों से मुझे व सारे माहेश्वरी समाज का जातीय नाते से मिला है। यह भी उतना ही महान सत्य है कि वे सिर्फ जातीयता एवं सामाजिकता तक ही सीमित न रहकर समूचे राष्ट्र के अभ्युत्थान में अग्रिम पंक्ति के सेनानी रहे हैं, किन्तु भारतीय माहेश्वरी समाज यह गर्व करे वगैर कैसे रह सकता है कि वे माहेश्वरी हैं और जिन्हें राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास निर्माताओं में प्रमुख स्थान प्राप्त है।

जरा उन दिनों की कल्पना कीजिए जब ब्रिटिश तानाशाही निर्दयता से अमानुषिक व्यवहार करते थे। ये सेनानी वीरतापूर्वक अपनी मातृभूमि की सेवा में अपने को खपा देने की बेताबी दिल में संजोएँ आगे बढ़ते गए जिसका प्रसाद आज प्रत्येक भारतीय को प्राप्त है।

निःसन्देह ही पूज्यनीय बापू का स्नेह और आशीर्वाद निकट से श्री बियाणीजी को प्राप्त था। यूँ बापू के आस-पास माहेश्वरी समाज के अन्य महापुरुषों का जमघट लगा ही रहता था, जैसे स्वर्गीय श्री जमनालालजी बजाज, श्री जुगलकिशोरजी बिड़ला, श्री घनश्यामदासजी बिड़ला, श्री गोविन्ददासजी मालपाणी आदि आदि; पर श्री बियाणीजी व बजाजजी का अपना एक स्थान बापू की सभा मण्डली में था। मुझे एक घटना याद है। जब प्रातः बापू अपना चर्खा चलाते हुए मुलाक़ात देते थे। श्री बजाजजी व बियाणीजी किसी सम्बन्धित व्यक्ति की बात को लेकर पहुँचे और श्री बजाजजी ने बापू के समक्ष सारी बातें रखते हुए कहा कि वह व्यक्ति कर्मठ होते हुए मूर्ख है। तब बापू ने सूत निकालते हुए मुस्कराती मुद्रा से कहा कि और जो मूर्ख की मूर्खता का फायदा न उठा सके वह कौन है? श्री बजाजजी

चुप हो गए, श्री बियाणीजी मुस्करा कर चल दिए। उस समय बापू और बियाणीजी की मुस्कराती मुद्रा को लखकर कौन अपने को धन्य नहीं मानेगा। हजारों प्रश्नों का मूक उत्तर इस तरह के जीवन में अनेकों बार श्री बियाणीजी को बापू के गहन गम्भीर तत्वों को समझने के सुअवसर मिले हैं। जिससे उनके जीवन में विशाल शान्ति ने सदैव उत्साह साहस एवं कर्मरत रहने की प्रेरणा प्रदान की है। यह मध्य प्रदेश के लिए सौभाग्य की बात है कि श्री बियाणीजी ने जीवन के काल में इसे ही अपना कार्यक्षेत्र चुना है। इसी दौरान में श्री बियाणीजी के अन्तर-दर्शन एवं दूर दर्शन का अवसर मुझे मिला। मैंने पाया है कि किसी भी प्रकार की समस्या को लेकर जब भी कोई उनके पास गया है उन्होंने न सिर्फ उसे सही मार्ग-दर्शन ही दिया है, बल्कि पूरी ताकत से उसे उत्साहित भी किया है। जीवन के प्रत्येक पहलू पर उनकी अपनी अडिग धारणाओं से न जाने कितने सारे लोगों ने अपने जीवन को बनाया है। उनकी इस अवस्था में और इतने दुर्बल शरीर में विद्युतमयी तेजस्विता और जोशीली रवानी से कितने ही हृदयों में स्फूर्ति का इन्जेक्शन लगा और गतिमय बन गए। आरोग्यशास्त्र के सम्बन्ध में उनके अपने प्राकृतिक एवं मौलिक विचार निःसन्देह दीर्घायु प्राप्ति के हेतु पर्याप्त हैं। श्री कृष्ण-कान्तजी व्यास को एक बार हृदय का दौरा पड़ा और बहुत दिनों तक विश्राम करने के बाद जब वे बियाणीजी से मिले तो इत्तफाक से मैं भी साथ था। उनकी बीमारी के सम्बन्ध में छान-बीन और जानकारी प्राप्त करने का ढंग ऐसा था जैसे रोग और उसके उपद्रव एवं प्रभाव के वे अच्छे खासे अनुभवी हैं और उनकी सलाह प्राकृतिक रीति से तजुर्बे के आधार पर सही जान पड़ी। इससे भी अधिक करने योग्य बात तो यह है कि उनके भोजन आदि के सिद्धान्त मौलिक और अनुभूत थे जो मेरे ज्ञान में वृद्धि करने के हेतु विशेष ज्ञातव्य विषय था।

श्री बियाणीजी की प्रकृति क्रोध करने की नहीं है तथा वे नंगे सिर दिखाई देने पर चाणक्य की छवि के अनुरूप दिखाई देने लगते हैं, पर एक बार गणोशोत्सव में स्व. श्री नेहरूजी के बारे में विभिन्न पार्टियों के वक्ताओं को एकत्रित किया गया, अन्य पार्टी के व्यक्तियों के अलावा कांग्रेस की ओर से श्री बियाणीजी स्वर्गीय श्री नेहरूजी की विशेषताओं का प्रतिपादन करनेवाले प्रथम वक्ता थे और नियमानुसार प्रथम वक्ता को सभी वक्ताओं के बाद अपने तथ्यों को बयान करने का अवसर रहता ही है। अतः अन्त में श्री बियाणीजी अन्य वक्ताओं के कटाक्ष का उचित उत्तर देते हुए पूर्ण आवेश में अपने मत का तेज़ी से प्रतिपादन करते रहे। उस समय अध्यक्ष पद पर आसीन उनकी भाव भंगिमा और रोषपूर्ण भाषण से समझ में आया कि इस दुर्बल शरीर में विद्युत है। मैं अपराधी की

भाँति स्वीकार करता हूँ कि श्री बियाणीजी के आग्रह एवं आज्ञा के बावजूद भी मैं उनके समक्ष नहीं जा पाया हूँ। कारण एक तो यह है कि मुझे कार्य से वक्त नहीं मिलता है दूसरा यह भी था कि बड़ी मुश्किल से तो मैंने अपने आपको राजनीति से दूर किया है। कहीं श्री बियाणीजी मुझे अपने प्रभाव से पुनः ऐसी प्रेरणा न दे दें कि मैं फिर इस ओर अग्रसर होने लगूँ। अतः मैं उनसे क्षमा माँगते हुए उनकी ही एक जयन्ती के पुनीत अवसर पर अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ समर्पित करते हुए ईश्वर से उनके आरोग्य एवं दीर्घ जीवन के लिए प्रार्थना करता हूँ। ★

श्रद्धा के सुमन

लेखक

ब्रजबल्लभदास मूँदड़ा–कलकत्ता

(भूतपूर्व अध्यक्ष एवं मन्त्री, माहेश्वरी महासभा।)

मेरी नजर में श्री बियाणीजी एक प्रतिभाशाली नेता, मेधावी कार्यकर्ता न्यायशील विचारक, प्रभावशाली वक्ता, मार्मिक लेखक, मिष्ट भाषी, मिलनसार मित्र, उग्र सुधारक और सुयोग्य शासक आदि अनेक गुणों से युक्त एक महान् व्यक्ति हैं।

उपरोक्त विशेषताओं के अतिरिक्त इनमें और भी खूबियाँ हैं, जहाँ उलझनें आ घेरती हैं, वहाँ उनमें उलझनों को सुलझाने की भी अच्छी क्षमता है और यदि उन्हें सैद्धान्तिक दृष्टि से कहीं अड़ना पड़ता है और उसमें यदि थोड़ी सी भी भूल उन्हें महसूस हो जाती है तो उसे 'ढंग' से सुधारने का चातुर्य भी उनमें है।

राजनैतिक क्षेत्र में महात्मा गांधीजी और सामाजिक क्षेत्र में तपोधन श्रद्धेय जाजूजी द्वारा वे प्रेरणा प्राप्त किया करते थे। उन्होंने असहयोग आन्दोलन के शुरुआत में ही महात्मा गांधीजी की प्रेरणा से वकालत की पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी, और राजनैतिक क्षेत्र में आ डटे। साथ ही सन् १९२१ से वे माहेश्वरी महासभा के क्षेत्र में सामाजिक सेवा में आ गए। इस क्षेत्र में उनके प्रेरणादायक श्रद्धेय जाजूजी थे। इन दोनों क्षेत्रों में वे बराबर आगे बढ़े। बरार प्रान्तीय कांग्रेस के वे वर्षों तक अध्यक्ष रहे, और बरार-केसरी कहलाए। जरूरत पड़ने पर कई बार जेल गए; देश आजाद होने पर मध्य प्रदेश के वित्त-मन्त्री बने।

माहेश्वरी महासभा के क्षेत्र में प्रवेश करते ही सन् १९२१ में वे महासभा के उपमन्त्री बने, फिर कई बार प्रधानमन्त्री और अध्यक्ष भी बने।

अ. भा. मारवाड़ी सम्मेलन के भी वे सफल अध्यक्ष रहे। उनके भाषण सुनने के लिए दूर-दूर से लोग बड़े चाव के साथ आते। भाषण की वक्तृत्व कला उनमें एक विचित्र सी है जो श्रोताओं को मुग्ध कर देती है। 'विश्व-विलोक' के सम्पादक के रूप में उन्होंने लेखन-शक्ति का भी अच्छा परिचय दिया है। मुख पृष्ठ पर के

प्रत्येक लेख आप ही की कलम से लिखे गए हैं। साथ ही अनेक गम्भीर विषयों पर भी आपने मार्मिक लेख लिखे हैं।

मेरा आपके साथ पुराना घनिष्ट सम्बन्ध है। आपसे मेरा सन् १९२२ से माहेश्वरी महासभा कलकत्ता अधिवेशन द्वारा सम्पर्क क़ायम हुआ, जो दिनों दिन बढ़ता गया तथा आत्मीय होता गया और अन्त में सहोदर भाई जैसा हो गया जो आज भी क़ायम है। कभी-कभी मेरा आपके साथ माहेश्वरी महासभा के क्षेत्र में वैधानिक मतभेद हुआ और संघर्ष भी, किन्तु उसका किंचित भी असर अपनी पारस्परिक मैत्री में, व्यक्तिगत जीवन के व्यवहार में कभी नहीं आया। मेरा सारा परिवार और आपका भी सारा परिवार हम दोनों को सहोदर भाई के रूप में देखता है और वैसा ही हम दोनों के व्यवहार से दिखाई पड़ता है।

मैं अपने अभिन्न मित्र की आरोग्यता और दीर्घजीवन की मंगल कामना करता हूँ। ★

पहचान की झाँकी

लेखक

गोकुलभाई भट्ट—जयपुर

(राजस्थान कांग्रेस के कार्यकर्ता; संविधान सभा के सदस्य; भूदान आन्दोलन के कार्यकर्ता।)

प्रवासी राजस्थानियों में कई व्यक्तियों ने भारत में अपनी बुद्धिमत्ता, व्यावहारिकता, औदार्य, समाज सुधार तथा जनसेवा के कारण नाम पाया है, उनमें से एक श्री ब्रजलाल बियाणीजी हैं।

मेरे सामने एक दृढ़ निश्चयी पुरुष के रूप में वे हैं। उनकी वाणी में ओज है, वैसे ही उनकी लेखनी में चमक है। आज़ादी की लड़ाई में वे भी एक सेनानी रहे और आज़ादी के रक्षकों में अपने आपको क़ुरबान करने में वे आज भी तैयार हैं। राजस्थानी होने के नाते वे रियासती जनता की विदर्भ में रहते हुए सेवा करते रहे। उस जमाने में कार्यकर्ताओं को ऐसा लगता था कि हमारे बलदाताओं में बियाणीजी भी खड़े हैं।

भाई बियाणीजी से मेरा गहरा सम्बन्ध तो नहीं है, लेकिन सार्वजनिक कार्यक्रमों में उन्हें देखने का सुअवसर मुझे मिला है। श्री जयनारायणजी व्यास द्वारा उनका परिचय हुआ था। जब विदर्भ कांग्रेस के आन्तरिक चुनावों के सिलसिले में मैं वरिष्ठ कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में सन् १९५०-५१ में विदर्भ में जाता-आता रहता था, तब अकोला में श्री बियाणीजी को नज़दीक से देखने का एक अच्छा मौक़ा मिला था। उनके प्रतिस्पर्धी भी उनकी तारीफ करते थे। वे स्वयं खास पद न सम्हालते हुए भी वहाँ के सूत्रधार थे और चुनाव की गुत्थियाँ सुलझाने में उनकी मुझे मदद मिली थी। मेरी कुछ हिदायतें उनके गले न उतरी होंगी, पर उन्होंने उन्हें प्रसन्नचित्त से मान ली थी और उनको क्रियान्वित करवाई थी। उनके अन्य साथियों को नाराज़गी हुई होगी पर बियाणीजी अनुशासनबद्ध दिखाई दिए क्योंकि वे अन्य लोगों से कड़ाई से अनुशासन का पालन करते और करवाते थे।

वैश्य होने के नाते वे एक कुशल व्यापारी तो साबित हुए हैं, पर जननायकों में भी वे अग्रसर रहे हैं। वे गांधीजी के एक बड़े भक्त हैं। स्व० जमनालालजी बजाज के अत्यन्तप्रिय एवं स्नेहपात्र थे। इसीलिए तो यह एक विशेष कार्य-क्रम आयोजित किया गया है जिससे मारवाड़ी समाज की नई पीढ़ी अपने एक प्रिय मार्गदर्शक को समग्र रूप में देख सके, समझ सके तथा उन्होंने जो कुछ किया है उसका समाज तथा देश द्वारा सही मूल्यांकन हो सके। ★

एक सुखद स्मृति

लेखक

डॉ० हरेकृष्ण मेहताब—कटक

(भूतपूर्व सभापति, उड़ीसा कांग्रेस कमेटी; भूतपूर्व केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल के सदस्य; भूतपूर्व राज्यपाल, बम्बई राज्य; भूतपूर्व मुख्य मन्त्री, उड़ीसा राज्य एवं प्रभावशाली वक्ता।)

जब मैं १९५१ में केन्द्रीय वाणिज्य एवं उद्योग मन्त्री था, तब मुझे श्री बियाणीजी के साथ बरार और नागपुर के कुछ भागों में भ्रमण करने का मौक़ा मिला। वे दिन ऐसे थे जब सूत की बहुत कमी थी, जिसके कारण जुलाहों को बहुत कठिनाई उठानी पड़ रही थी। जब मैं, नागपुर प्रदेश में, केन्द्रीय मन्त्री की हैसियत से लोगों को सरकार की नीति के सम्बन्ध में बताने के लिए पहुँचा तो, सरकार के कटु आलोचकों ने इसका विरोध करने के हेतु एक सभा का आयोजन किया। मैंने इस चुनौती को स्वीकार किया तथा नागपुर में एक सभा में भाषण देने के लिए गया। उस समय बियाणीजी द्वारा मुझे सहयोग प्राप्त हुआ। मैं यह देखकर प्रसन्न था कि हज़ारों की तादाद में एकत्रित होनेवाले जुलाहे इतने तर्कहीन नहीं थे जितने कि सरकार के विरोधी। जब मैंने जनता को स्थिति के सम्बन्ध में अवगत कराया तो लोगों ने आन्तरिक कठिनाइयों को भली भाँति समझा। सरकार के विरोधियों ने भी मेरे दृष्टिकोण को समझने का प्रयास किया। सभा की समाप्ति के बाद, मैं श्री बियाणीजी के साथ, बहुत से ग्रामों में, जुलाहों से व्यक्तिगत रूप से मिलने गया। उन दिनों मैंने देखा कि बियाणीजी कितना अधिक परिश्रम करते थे तथा वे सही अर्थों में जनता के अपने आदमी थे। उन्होंने जनता की भावना को ठीक प्रकार से समझा तथा उचित रूप में उसका प्रतिनिधित्व किया। मैंने विदर्भ की जनता के ऊपर उनका व्यक्तिगत प्रभाव देखा है। उस समय वे कांग्रेसी थी। उस समय से लेकर आज तक मैं उनके निरन्तर सम्पर्क में रहा हूँ तथा उनके कार्यों का प्रशंसक भी। वे पूर्व मध्य प्रदेश में श्री शुक्लजी के मन्त्रिमण्डल के शक्ति स्तम्भ थे। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपने वित्त-

मन्त्री के रूप में सफलतापूर्वक कार्य किया । जब बियाणीजी स्वतन्त्र प्रान्त के प्रश्न को लेकर 'नाग विदर्भ ग्रान्दोलन' में सम्मिलित हुए, तो मुझे ग्रधिक ग्राश्चर्य नहीं हुग्रा, क्योंकि विदर्भ की जनता की भावनाग्रों से मैं पूर्ण परिचित था । सार्व-जनिक जीवन में ऐसी ग्रनेकों बातें घटती हैं जो मनुष्य की ग्रपनी ग्रन्तरात्मा के विरुद्ध होती हैं तथा ऐसे ग्रनेक कार्य होते हैं जिन्हें ग्रच्छी भावना से किए जाने पर भी उनका प्रभाव , जनता पर, भ्रामक होता है । श्री बियाणीजी के सम्बन्ध में यह बात पूर्ण सत्य है ।

श्री बियाणीजी के ऊपर ग्रन्थ लिखते समय हमें पुरानी घटनाग्रों का स्मरण करके निराश नहीं होना चाहिए । उन्होंने ग्रपनी पूर्ण योग्यता एवं भक्ति के ग्रनुसार जनता का प्रतिनिधित्व किया । यह सत्य है कि वे ग्रपने कार्य में विजयी नहीं हुए, लेकिन उन्होंने ग्रपने कर्त्तव्य को पूरी तरह से निभाया । मैं उनसे ग्रन्तिम बार इन्दौर में मिला, जब वे सामाजिक कार्यों में व्यस्त थे । मुझे विवश होकर यह कहना पड़ता है कि राज्य की भलाई के हेतु श्री बियाणीजी की सेवाग्रों का उनके ग्रन्तिम दिनों में, यदि ग्रधिक समझदारी ग्रौर सहिष्णुता से उपयोग किया जाय तो उत्तम होगा । मैं उनकी स्मृति में ग्रपना ग्रभिवादन ग्रर्पित करता हूँ । ★

कुछ संस्मरण

लेखक
रा० कृ० पाटिल—नागपुर
(आई. सी. एस. से त्यागपत्र; शुक्ल मन्त्रिमण्डल के एक मन्त्री; वर्तमान समय में विनोबा के भूदान क्षेत्र के एक प्रधान कार्यकर्ता।)

श्री बियाणीजी की और मेरी पहली भेंट अकोला में मेरे एक वकील मित्र के ज़रिए से उस वकील मित्र के ही घर हुई। यह सन् १९३७ की बात है। तब मैं बुलडाना जिले का कलेक्टर था। मामूली सी और कुछ औपचारिक बातचीत ही हुई। लेकिन उसका मेरे ऊपर बहुत अच्छा असर पड़ा था। जिसकी याद अभी भी ताजी है। एक प्रतिभावान और चिन्तनशील व्यक्ति से यह थी एक भेंट जिसका प्रभाव मेरे ऊपर स्थायी रहा।

इंडियन सिविल सर्विस से जब मैं इस्तीफा देकर सामाजिक और राजकीय कार्य करने में लगा तब तो उनसे बहुत ज्यादा और घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया। मध्य प्रदेश के पहले मन्त्रिमण्डल में जब मैं था तब अकोला बार-बार जाना होता था। और बियाणीजी से हर समय भेंट होती थी। दूसरे मध्य प्रदेश के मन्त्रिमण्डल में तो बियाणीजी अर्थमन्त्री के रूप में सम्मिलित थे। मैं भी उस मन्त्रिमण्डल में था। तब तो मेरा सम्बन्ध और नजदीक का हो गया। इस प्रकार बियाणीजी की कार्यपद्धति और व्यवहार से गाढ़ा परिचय प्राप्त करने का अवसर मिला।

मेहमानों का सत्कार करने में शायद ही कोई व्यक्ति बियाणीजी की बराबरी कर सकेगा। अपने बर्ताव से और व्यवहार से वे दूसरे के ऊपर ऐसी मोहिनी डालते हैं कि मिलनेवाला बिल्कुल उनका अन्तरंग हो जाता है। इसके साथ उनके नेतृत्व में एक ऐसी खूबी है कि उसका प्रतिपादन मनुष्य के मन पर एक गहरा असर करता था। देश की स्वतन्त्रता की लड़ाई के इतिहास में उनका स्थान बहुत ऊँचा रहेगा। ऐसा मेरा विश्वास है। लोकमान्य तिलक की मृत्यु के बाद विदर्भ में पहले उदारवादियों (Moderates) और उसके बाद श्री केलकर और श्री जयकर के अनुयायियों का नेतृत्व था। उस समय कांग्रेस बहुत कमज़ोर थी। ऐसी

अवस्था में श्री बियाणीजी और श्री वामनराव दादा इन दो व्यक्तियों ने विदर्भ में कांग्रेस को शक्तिशाली बनाने में अथक परिश्रम किया। उनके ही प्रयास के कारण कांग्रेस का सन्देश विदर्भ के असंख्य देहातों में फैलना सम्भव हुआ। बियाणीजी के कारण विदर्भ में एक नया नेतृत्व तैयार हुआ। परिणामस्वरूप स्वतन्त्रता की लड़ाई में विदर्भ पूरा हिस्सा बँटा सका।

स्वतन्त्रता की प्राप्ति के उपरान्त मध्य प्रदेश के शासन की बागडोर जिन नेताओं के हाथ में थी दुर्भाग्य से बियाणीजी से उनकी निभ नहीं सकी। फलस्वरूप विदर्भ में बियाणीजी को धक्का पहुँचाने की मध्य प्रदेश शासन द्वारा बहुत चेष्टा की गई। बियाणीजी भी कोई कच्ची गोलियाँ नहीं खेले थे। उन्होंने अपनी तरफ से शासन द्वारा मिलनेवाली उलझनों का डटकर मुकाबला किया, और अन्त में विजय उनकी ही हुई। इसी विजय के कारण मध्य प्रदेश के दूसरे मन्त्रिमण्डल से उनको पृथक रहना पड़ा।

भाषावार प्रान्त रचना का बवण्डर जब खड़ा हुआ तब बियाणीजी महा-विदर्भ के समर्थक बन गए। लेकिन महाविदर्भ की बुनियाद ही एक संकीर्ण विचार पर निर्भर थी। सब भाषा का एक राज्य हो किन्तु मराठी भाषा-भाषी ही दो राज्यों में हो, यह तर्क कुछ न्यायसंगत नहीं प्रतीत हुआ। अन्त में वैसा ही हुआ। प्रायः इसी कारण से बियाणीजी का संयुक्त महाराष्ट्र में राजकीय स्थान न रहा।

बियाणीजी अब सत्तर वर्ष के हो गए फिर भी जन-सेवा करने का उनका अदम्य उत्साह अब तक क्षीण नहीं पड़ा। इन्दौर से ही उन्होंने 'विश्व-विलोक' नामक एक वैचारिक पाक्षिक पत्रिका निकालना प्रारम्भ किया है जोकि उनके जागृत ज्ञान और स्वतन्त्र विचार पद्धति का परिचायक है।

बियाणीजी उस भाग्यवान पीढ़ी के हैं जिसने स्वतन्त्रता युद्ध छेड़ने और उसे प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त किया। स्वयं सक्रिय होकर हर अवसर पर जनता के आवाहन पर सर्वत्र उन्हें त्याग करने को तैयार पाया। बियाणीजी ऐसे व्यक्तियों में से हैं। युद्ध काल में वीरवृत्ति से पराक्रम करने के बाद अब बुढ़ापे का अपना शेष जीवन भी बड़ी व्यस्तता से बिता रहे हैं। व्याधि ग्रस्त होते हुए भी अपनी धुन में आज भी कार्यलीन हैं। मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि उनको दीर्घआयु और आरोग्य प्रदान करें। ★

बियाणीजी एक मुलायम चट्टान

लेखक
कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर–सहारनपुर
(पत्रकार; सम्पादक एवं लेखक ।)

एक लम्बा रेगिस्तान;
एक जंगल बियाबान ।
एक सूना आसमान;
इन्हें चीरकर अपने पैरों मंजिल तक पहुँचा इंसान
बियाणीजी के जीवन का इतिहास संक्षेप में यही है

o o o o o

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ने बहुत कुछ लिखा है, और जो भी लिखा है, वह विश्व में समाहत हुआ है, पर उनका एक गीत विश्व भर के साहसियों की पदयात्रा के लिए वेद की ऋचा, कुरान की आयत, बाइबिल का पैरेबिल और धम्मपद की गाथा बन गया है–'एकला चलो, एकला चलो, एकला चलो रे !' बियाणीजी इस गीत की भावना के साकार छन्द हैं, यही उनके जीवन-इतिहास की संक्षिप्त गाथा है ।

वे उनमें नहीं हैं, जिनके व्यक्तित्व की ऊँचाई को हम मंजिल से नाप सकें, वे तो उनमें हैं जिनकी मंजिल की ऊँचाई ही उनके पैरों नापी पथ की लम्बाई से नापी जाती है । वे कहाँ तक चले यह प्रश्न गौण है उनके जीवन में; क्योंकि जलता-जागता यह प्रश्न हम आँखों से ओझल नहीं कर सकते कि वे कहाँ से कहाँ कहाँ होकर चले ?

जीवन एक खेल है और खेल में हार जीत एक चान्स होता है । इसीलिए अच्छा खिलाड़ी वह है, जो हार में समाप्त नहीं होता, और जीत में व्याप्त नहीं होता— जिसका आपा हार में भी और जीत में भी उसे सदा प्राप्त रहता है । कहूँ, वह हार से खण्डित नहीं होता, जीत से मंडित नहीं होता । उसकी जीवन दृष्टि है खेल कि मैं अपनी शक्ति और योग्यता भर जमकर खेला, मैंने अपना काम पूरी तरह किया और यही मेरी सीमा है । खिलाड़ी की इसी दृष्टि ने संसार को, निराशा का अंधकार दूरकर शास्वत प्रकाश देनेवाला यह सूत्र दिया–'जीवन को खिलाड़ी की

भावना से जी।' बियाणीजी का जीवन इस सूत्र की एक जीती-जागती, हँसती-खेलती व्याख्या है।

० ० ० ०

जीवन में उन पर सिद्धियाँ बरसी हैं, पर वे सिद्धि के भिखारी कभी नहीं हुए और वे जीवन भर योद्धा रहे हैं, पर दूसरों की लड़ाई लड़नेवाले पिण्डारी कभी नहीं बने। उनके निर्णयों की विशिष्टता उन संघर्षों से हम नहीं आँक सकते, जिनमें विजय पहले से निश्चित थी या पराजय हो तो उनकी प्रतिष्ठा पर आँच आने का भय न था। उनके निर्णयों की विशिष्टता न संघर्षों से हम आँक सकते हैं, जिनमें विजय की सम्भावना एक प्रतिशत और पराजय की निन्नानवे के प्रतिशत थी और फिर भी वे बिना चौंके, बिना झिझके उनमें कूदे, उनमें जूझे। सच कहूँ, मैंने ऐसे ही अवसरों पर बियाणीजी के व्यक्तित्व को पूरे प्रदीप्त रूप में देखा है और सिर झुकाकर प्रणाम किया है।

० ० ० ०

गुलामी के दिनों वे तरुणाई की आग के प्रतिनिधि थे और उन्हें विदर्भ-केसरी कहा जाता था। वे थे ही केसरी, अपनी गर्जना में भी, अपने झपाटे में भी, पर उनके केसरी व्यक्तित्व में यह कोमलता भी सदा रही कि हरिणी के बालक उनकी छाया में निर्द्वन्द सो सकें--पनप सकें।

० ० ० ०

उन्होंने अपने ही व्यक्तित्व को पुष्ट नहीं किया और भी बहुतों को पोसा है। उनके व्यक्तित्व की विशिष्टता नम्बर एक है ही यह कि उन्होंने वीरानों में नए वृक्ष लगाए और उन्हें अपने रक्त-रस से सींचकर इस तेजी से पनपाया कि उन्हें अपने चारों ओर हरियाली, शीतल छाया और फल-फूल मिले। लघु का शोषण नहीं, लघु का पोषण ही उनकी निर्माण नीति रही।

० ० ० ०

इस पृष्ठभूमि में बियाणीजी के व्यक्तित्व का जो चित्र मेरे मन में स्थापित है, उसमें वे एक ऐसी चट्टान हैं, जिस पर शक्ति की गदा लगते ही चिपक जाती है, पर जिसमें फलों और फूलों के अनेक अंकुर उगे हुए हैं, और पनप रहे हैं। ★

"कल्पना-कानन" के विचारक—गायक भाईजी

लेखक
अर्जुन जोशी—इन्दौर
(ग्रन्थ समिति के सदस्य; लेखक एवं उपन्यासकार।)

स्मृतियों के सागर की अतल गहराइयों का गोताख़ोर बन रहा हूँ। भूत और वर्तमान की अथाह दूरी क्षणों में लुप्त हो गई। राजस्थान का ब्यावर नगर। सन् १९४८ या १९४९। प्रातः काल ९ या १० बजे का समय। जैन गुरुकुल का प्रांगण। वार्षिक उत्सव का सारा आयोजन। मित्र ने सूचना दी—बड़े बड़े लोग आ रहे हैं। सहज ही उत्सुकता जागी—कौन हैं बड़े लोग? बड़े हैं, किस अर्थ में? मित्र ने समाधान के स्वर में कहा—नेतागण हैं भाई! बड़े-बड़े नेता, मन्त्रीगण! राजनीति के क्षेत्र में योद्धा! मेरे सहज प्रश्न का भारी भरकम उत्तर। मुझे बड़ा अटपटा लग रहा है। सरस्वती के मन्दिर में राजनीति के कैसे ताने बाने बुनने हैं, कैसी उठा-पटक का गुरू मन्त्र देना है इन योद्धाओं को। मैं अन्तर्मुखी हो जाता हूँ। मित्र मन की उधेड़बुन को ताड़ लेता है। झिंझोड़कर जाग्रत करता है—अरे भाई, कहाँ खो गया। सुन, साहित्यकार भी आ रहे हैं। मैं सजग और स्वस्थ होता हूँ। मित्र कहता जाता है—राजनीतिज्ञ और साहित्यकार हैं। "कल्पना-कानन" पढ़ा है?—मन ही मन उत्तर देता हूँ—हाँ पढ़ा है। हाँ-हाँ पढ़ा है। और कल्पना कानन के पृष्ठ मानों खुलते जाते हैं।

"कलाहीन जीवन व्यर्थ है, निस्सार है।....मुझे कला से प्रेम है। जीवन में उसका महान आकर्षण है। पर अभागे भारत में आज कला की अवनति है; कला को हीन निगाह से देखा जाता है। सौन्दर्य मानसिक आस्वाद की वस्तु की अपेक्षा, भोग का साधन बन गया है और भोग लालसा ने कला को हीन बना दिया है। कला की हीनता के साथ कलाकार की हीनता स्वाभाविक। कला के अभाव में कलाकार के सच्चे दर्शन और उसका आदर असम्भव।"—नर्तकी शब्दचित्र के इस गद्यांश ने मुझे अपने गाँव के उस वृद्ध सारंगीवादक नवलूजी, तबलावादक फत्तू और कत्थक नृत्य में दक्ष उनकी शिष्या रामकुंवरी को नए

सिरे से नए रूप में समझने और प्यार करने, आदर करने के लिए प्रेरित किया था। उन्हें दूर बिठाकर स्वयं मसनद के सहारे गद्दी पर पैर पसारकर बैठनेवाले महन्तजी, पीकदान को हाथ में ले बड़ी श्रद्धा से पिच्च से पीक थूकनेवाले खानदानी रईस मल्लूजी और उनके साथ मुफ्त की दावतें उड़ानेवाले चापलूस कन्हैया से मैं उन उपेक्षित कलाकारों को समुचित सम्मान प्रदान करने के लिए उलझा था। और मेरा वह गहरा मित्र, लंगोटिया, जिसने मुझे महफ़िलों में ले जाकर कला से प्रेम करने और कला को समझने के लिए प्रेरित किया—उससे मैं कलाकारों के सम्मान के लिए घण्टों बहस करता। जब वह बहस करता-करता चिढ़ जाता तो जानते हैं क्या कहता था! वह कहता—"अरे भोंदू, कलाकार का काम है समाज की मनोरंजन के द्वारा सेवा करना। वह मनोरंजन करे—बदले में उसे पैसा दो। उसको अपनी प्रतिष्ठित गद्दी पर लाकर मत बिठाओ। कलाकार गन्धर्व हैं। गन्धर्वों का समाज हमारे सामान्य समाज से भिन्न है। गन्धर्वों के समाज के नैतिक मूल्य हमारे सामाजिक मूल्यों से भिन्न हैं, एकदम अलग। एक-बार तुम गन्धर्वों को अपने स्तर पर लाए कि तुम्हारे नैतिक मूल्यों का ह्रास प्रारम्भ हुआ।" मैं मित्र की इस व्याख्या से निरुत्तर होकर भी उससे हार नहीं मानता और चीखकर कहता, "तुम कैसे हो नैतिक मूल्यों के पहरेदार। मनुष्य को मनुष्य नहीं समझते। उसे घिनौना बनाए रखते हो।" और मित्र हँस पड़ता।

मन ही मन अपने आप से संवाद प्रारम्भ होता है—राजस्थान के लिए "विदर्भ-केसरी", विदर्भ के लिए "भाईजी"—तो बियाणीजी आ रहे हैं—ब्रजलालजी बियाणी! अमरावती में सभा थी, बैठक भी थी। देखने की, सुनने की लालसा थी, लेकिन नौकरी थी कि निकल न सका। अवसर खो दिया। और तब इस अवसर को पुनः प्राप्त करने का प्रयास किया तत्काल पुस्तकों की दूकान पर जाकर "कल्पना-कानन" की एक प्रति खरीद कर। राजस्थानी मित्र मण्डल के पुस्तकालय से तो एक प्रति लेकर कभी का पढ़ चुका था पर उससे मन नहीं भरा था। पुस्तक पर अपना अधिकार उसे खरीदने पर ही मिलता है और जब अलमारी में अन्य पुस्तकों के साथ वह प्रिय पुस्तक सदैव दिखाई देती है तो मन भरा-भरा सा लगता है। "कल्पना कानन" की प्रति ली, पैर पसार कर आराम कुर्सी पर पड़ गया और प्रथम पृष्ठ से अन्तिम पृष्ठ समाप्त करके ही उठा। बीच में पत्नी ने एक दो बार टोका—कैसे हो, भोजन तैयार है और बैठ गए पुस्तक लेकर। ऐसा भी कौन सा उपन्यास है। शरत् बाबू की कहानी या उपन्यास है क्या? मैं झुंझलाहट को जैसे-तैसे दबाकर बोला, "तुम नहीं समझोगी, यह शब्द

चित्र है, गद्यगीत है, कवित्वमय कथा है। तुम अपना उपन्यास पढ़ लो, तब तक मैं इसे समाप्त कर लूँ।" पत्नी ने पुस्तक छीनकर नाम देखना चाहा था। मेरी झुंझलाहट बढ़ गई थी। मैं नाराज सा होकर बोला––क्यों परेशान करती हो। लो यह देखो। 'कल्पना-कानन' है। तुम्हारी समझ से परे है।" यह सीधी सी उसके अहम् पर चोट थी। वह कुछ न बोलीं और पुस्तक पढ़ लेने के बाद मुझे खयाल आया-अरे मैंने अनायास ही उसका अपमान कर दिया। सामन्ती संस्कारों ने पत्नी से क्षमा याचना करने से रोक दिया पर मन पर एक भार सा बना रहा, सो बना ही रहा।

भोजन के उपरान्त चौराहे पर पान खाने चला गया। गपशप में एक-आध घण्टा बीत गया। घर लौटा। देखता हूँ श्रीमतीजी पढ़ने में लीन हैं। धीमे से कहा– अब पढ़ना बन्द भी करोगी। पर मेरा स्वर तो वातावरण में खो गया। मैं यूँ ही खड़ा-खड़ा अलमारी में पुस्तकों को टटोलने लगा। 'कल्पना-कानन' कहाँ रख दी ? इधर-उधर देखा, कहीं तो दिखाई नहीं देती। पान खाने निकला तो साथ लेकर ही नहीं चला गया कहीं। खरीद के समय वल्लभ साथ था। पुस्तक हाथ से छीन रहा था। बड़ी कठिनाई से घर ला पाया था। पान की दूकान पर भी वह था ही। अवश्य उसने ले ली। मैं अपने आप में खोया-खोया घर लौट आया। मैं मुड़ा श्रीमतीजी को वल्लभ की दुष्टता की कथा सुनाने। पर श्रीमतीजी पुस्तक समाप्त कर उठ खड़ी हुईं और कहने लगीं, "लो अपनी पुस्तक। सब पढ़ ली। कह रहे थे न तुम्हारी समझ से परे है। आए मेरी समझ को ऊँचा-नीचा बतलानेवाले।" मैं मौन ! भूल की थी। मौन के द्वारा ही प्रायश्चित करना उचित था। वह कहती गईं, "पुरुष का अहंकार विराट होता है, उसे कहीं छू दो बस विस्फोट होने की स्थिति पैदा हो जाती है।" मैं समझ नहीं पा रहा था। टिप्पणी मुझ पर थी या पुस्तक पर। मैं मौन रहा। मेरा सतत मौन रहना श्रीमतीजी को अब अखरा। इधर-उधर झाँकने लगीं। कुछ क्षण सोचती रहीं शायद और फिर बोलीं, "तुमने जो कहा था सत्य भी है, असत्य भी। पुस्तक मेरी समझ में आई भी, नहीं भी आई। पर जगह-जगह हृदय को छू देनेवाली पंक्तियाँ तो मेरी समझ में आही गईं। भाईजी इतना सुन्दर लिखते हैं, इतने बड़े लेखक भी हैं, यह मुझे मालूम नहीं था।" मैं चौंक सा उठा। "क्यों भाईजी का भाषण तुमने कहाँ सुना, तुमने उन्हें कहाँ देखा।" वह मुस्कराईं और बोलीं, "अकोला में अपनी नर्बदा की लड़की लीला रहती है न। वह कहती रहती है––भाईजी बड़े नेता हैं, बहुत लोकप्रिय हैं, ज़बरदस्त वक्ता हैं। सुननेवालों को सम्मोहित कर देते हैं।––बहन के जन्म-दिन पर कैसी गम्भीर

बातें लिखी हैं । भाईजी नेता ही नहीं, लेखक चिन्तक और ज्ञानी भी हैं । इस बार लीला से मिलने पर कहूँगी—भाईजी की पुस्तक पढ़ी है ? नहीं, पढ़ी न । तो अवश्य पढ़ना । समझने और सीखने के लिए बहुत कुछ है । समझी ।" और श्रीमतीजी पुस्तक मेरे हाथ में थमाकर रसोईघर में बर्तन जमाने चल पड़ीं ।

मैं खड़ा-खड़ा सोचता रहा—श्रीमती इतनी प्रभावित हुई हैं "जन्मदिन" लेख से । मैं सपाट से पढ़ गया उसे । अवश्य स्त्रीमन की गहराई को छू देनेवाली बातों का समावेश है । पर मन को इससे समाधान नहीं मिला । कमरे में चहल कदमी करने लगा । रसोई घर से बर्तनों की खड़खड़ाहट सुनाई पड़ रही थी । मैं उसी ओर मुड़ा । सोचा-श्रीमती से पूछूँ--तुम्हें कहाँ-कहाँ, कौन-कौन से, विचार पसन्द आए—पसन्द ही नहीं—तुम्हारे मन को छू गए। पर फिर खयाल आया—ऐसा पूछूँगा तो मुझ पर तरस खाकर कहेंगी—बुद्धि की प्रखरता से हर वस्तु पर नस्तर चला सकते हो । हृदय की सरसता, कमनीयता चाहिए हृदय की भाषा को समझने के लिए । मैं रुक गया । पुरुष का अहंकार, आत्मप्रतिष्ठा की भावना । मैं पृष्ठ पलटने लगा । लेखक लिखता है—

"आज बहन का जन्मदिन है ।. . .बहन के हर्षित हृदय का वर्णन करना या उसकी थाह लेना कठिन है ! कारण अनेक हैं । स्वयं के ज्ञात-अज्ञात अतीत का स्मरण ! वर्तमान के स्नेहियों का चारों ओर से भाव-प्रदर्शन ! भविष्य की आशा का मानसिक अवलोकन ! बहन का जीवन सदा उमंग से भरा रहा है । क्रियात्मक रहा है । निर्भीक रहा है और भावी जीवन की सफलता की आशा का भी वहाँ निर्बन्ध प्रवाह रहा है ।

"प्रतिदिन के उष:काल की अपेक्षा आज का उष:काल उसके लिए भिन्न है ! अच्छा स्नान, नए कपड़े, पुष्प और मालाओं का सहयोग, नगरस्थ स्नेहियों की भेंटें और भाव प्रदर्शन ! आशीर्वाद की झड़ी । पत्रों का आना और तारों का टपकना ! अच्छा-पंक्ति भोजन ! . . .सारा दिन आनन्द की लहरों से हिलोरे ले रहा था । इस हर्ष प्रदर्शन में वायु भी साथी थी ! पुरानी आनन्द लहर को बहा ले जाता था, ताकि नई लहर वहाँ आ सके । गृह के सारे वातावरण में जन्मोत्सव का जीवन था । बहन अपना प्रतिदिन का गम्भीर जीवन-कार्य कुछ भूल गई थी । दिन चला गया । उसका पता तक न लगा । आज का दिन कुछ छोटा जान पड़ा । हमारे दु:ख में दिन भी बड़े हो जाते हैं ! सुख में वे भी छोटे नज़र आते हैं ।

"अपना दिन भर का बोझ हल्का करने के हेतु मैंने शयन के लिए प्रस्थान करती बहन से नम्रता और आहिस्ते के साथ स्मितयुक्त स्वर में कहा, "बहन ! तुम्हारा

जन्मदिन आनन्द से समाप्त हो रहा है। सारा दिन हर्ष से गया; पर मैं उस आनन्द की बहार को अमिश्र भाव से न लूट सका ! कुछ व्यथा मेरी साथी रही।"....

"और मैं विचार करने लगा था—दुनिया अजीब है। यह सारा आनन्द क्यों? बहन...बत्तीस वर्ष काल के समीप आई है! उसके निकट जाने में आनन्द का प्रदर्शन क्यों? फिर जितने अधिक निकट उतना अधिक आनन्द !

"सारे दिन के अपने विचार संक्षेप में उसके सम्मुख रख दिए। बहन प्रसन्न हुई। मेरी ओर देखा। मधुर स्वर में बोली, "भैया दृष्टिकोण की भिन्नता ही दुनिया में प्रायः सुख-दुःख का कारण है। आज के सारे आनन्द को मैंने एक निगाह से देखा और तुमने दूसरी। तुम मेरी निगाह से देखते, तो व्यथित न होते। एक ही महान पर्वत को दो स्थानों से देखा जा सकता है। उसके चरण के पास खड़े होकर यदि पर्वतराज का अवलोकन करें तो गगनचुम्बी शिखरों को देख आश्चर्य और आनन्द हुए बिना न रहेगा। पर यदि शिखर पर चढ़कर नीचे देखा जायगा तो कन्दराओं और अस्तव्यस्त पत्थरों के अलावा क्या दिखाई देगा? जीवन के चरणों में खड़े होकर जीवन को देखो भैया ! वह उन्नत है, विशाल है! गगन-चुम्बी है! मृत्यु जीवन का शिखर है। वहाँ पहुँचकर जीवन का अवलोकन न करो।

"मैं मृत्यु के समीप जा रही हूँ, यह सत्य है। जीवन में तुम मानते हो कि मृत्यु सबसे भयंकर वस्तु है। इस भयंकर वस्तु का भय निकल जाना; निर्भीक, हँसते और नाचते मरना। यह जीवन की सच्ची सफलता है। इसीलिए मृत्यु के जितना नजदीक उतना उत्सव अधिक। मृत्यु के हम जितने समीप जावें उतने ही अधिक निर्भय बनें—यही मृत्यु पर विजय पाना है।"

"भैया ! मेरे जन्म-दिन-उत्सव में प्राप्ति-भावना की प्रबलता है। मृत्यु से निर्भयता की प्रतिमा है। प्राप्ति और निर्भयता में ही जीवन का आनन्द-स्रोत है। मेरा आज का उत्सव मृत्युञ्जय-यज्ञ है! क्यों भैया ! अब सोओगे शान्ति से?"

"मैंने सिर झुकाया। मूक सम्मति दी। बहन का आदर किया। किंचित हँसा केवल निद्रादेवी का भक्त बनने चला गया!"

कल्पना कानन का अन्तिम पृष्ठ। मैंने पुस्तक बन्द कर दी। श्रीमतीजी के बर्तनों की खड़खड़ाहट-झनझनाहट बन्द हो गई थी। वह फर्श धोकर आ रही थीं। मैंने पुस्तक को पास रखा और सोने का बहाना करने लगा। मन ही मन

सोचा–एक बार अकोला जाऊँगा और भाईजी से मिलूँगा ।

अकोला गया भी पर भाईजी गाँवों की यात्रा पर थे । क्रियाशील साहित्यकार-क्रियाशील राजनेता भी थे । देखने, सुनने और मिलने की इच्छा पूर्ण होगी विदर्भ में नहीं——राजस्थान में ।

मण्डप में काफी भीड़ । राजस्थान के कोने-कोने से, भारत के प्रमुख शहरों, ग्रामांचलों से विद्यार्जन के हेतु इकट्ठे हुए बालक आगत लोगों की सुविधाओं के संरक्षण के लिए कटिबद्ध हैं । मैं अभी भी खड़ा ही हूँ अपने मित्र के साथ । राजस्थान राज्य के कोई मन्त्री आए, उपस्थित लोगों ने अभिवादन किया । साहित्यकार जैनेन्द्र आए, विद्यार्थियों व भावी लेखकों के दल ने उन्हें घेर रखा था । धनपति, उद्योगपति चमचमाती कारों में आए--बैठे । गौरवर्ण, दुबला-पतला लम्बा सा शरीर, दूध से शुभ्र खादी के वस्त्र-कुछ लोगों से बातें करते, मुस्कराते, सधे कदम उठाते-बढ़ते चले, आ रहे व्यक्ति की ओर इंगित कर मित्र ने धीरे से कहा "कल्पना-कानन" के लेखक, विदर्भ -केसरी ब्रजलालजी बियाणी ।" अपने आप दोनों हाथ नमस्कार के लिए उठ गए । बड़ी सरलता और मधुरता से मुस्कान बिखेरकर नमस्कार किया । चेहरे में दीप्त पैनी आँखों में एक विशिष्ट तेज एक विशिष्ट गरिमा । चाल में पूर्ण युवा और जब बोलना प्रारम्भ किया तो श्रोता मुग्ध मन्त्र हो गए । मैं दत्तचित्त सुनता जा रहा था और महसूस करता जा रहा था कल्पना-कानन के विचारक-गायक की बुद्धि की प्रखरता को, भाषा की लयात्मकता को ।

युग बीत गए । "कल्पना-कानन" के विचारक-गायक ने कई उतार-चढ़ाव देखे । धरती पर खड़े रहकर उसने आकाश के विराट में विचरण किया और आकाश की ऊँचाइयों में पहुँचकर भी धरती की सौंधी सुगन्ध को नहीं भुलाया । मध्य-प्रदेश-बरार का मन्त्रीपद और उसका त्याग । विदर्भ के जन-जन के साथ उनके कष्टों का उपभोग और सत्ता से अलिप्त । सत्य और शक्ति पर उसने गहन विचार किया । सत्य पर विचार करते -करते उसने सत्य और शक्ति की इस प्रकार विवेचना की——"पूर प्रवाह" में——

"सत्य ईश्वर है, ईश्वर शक्ति है । शक्ति की विजय में सत्य की जय है । संसार में सदा शक्ति की जय होती आई है और शक्ति के नानाविध रूप हैं । घड़े में शक्ति थी तब तक जल उसमें बन्द रहता था । घड़े की धारणा शक्ति से जल की प्रसरण-शक्ति अधिक होते ही घड़ा हार गया । उसका अन्त हो गया । जल के साधारण प्रवाह में खड़ी होकर जल भरनेवाली बहन की स्थिति-शक्ति से पूर की बहाव शक्ति अधिक होते ही बहन खड़ी न रह सकी, जल के साथ बह

गई और नष्ट हो गई। सारी आवश्यक अवस्थाओं में शक्ति स्वरूप ईश्वर की और ईश्वर स्वरूप सत्य की विजय हुई।

"शक्ति नानाविध है। सत्य की विजय के अनेक प्रकार हैं। इसे देखने की शक्ति हम प्राप्त करें। नाश, विकास, गति, उर्ध्व गमन, पतन, जन्म मृत्यु, सबमें मुझे सत्य की विजय का स्वरूप स्पष्ट दिखाई देने लगा।" .

सत्य और शक्ति के इस विवेचक को देखा है और देख रहा हूँ इन्दौर में "विश्व-विलोक" के माध्यम से भी और "विश्व-विलोक" परिवार के एक सदस्य के रूप में भी। दो दशक पहले जिन भाईजी को राजस्थान में देखा था—उम्र में चाहे अन्तर आया—उन्हीं भाईजी को आज देख रहा हूँ। वही पैनी दृष्टि, वही बुद्धि की प्रखरता, वही गतिशीलता और वही सरलता मिश्रित माधुर्य्य। "विश्व-विलोक" के लेखकों से विषय चर्चा करते अत्यन्त सरल भाषा में, संक्षेप में, विषय को स्पष्ट करने की विशेषता, पेचीदगी को सरल बना देने की क्षमता, रूखेपन को मधुरता प्रदान करने की योग्यता——भाईजी की विशिष्ठ प्रकृति के विशिष्ठ गुण हैं।

जीवन के प्रति कैसा सरल, सुस्पष्ट और ठोस दृष्टिकोण है कि सम्पर्क में आनेवाला व्यक्ति उस प्रभाव को सदैव के लिए अंगीकार कर लेता है। विश्व-विलोक के सम्पादकीय, प्रश्नोत्तर और विविधविचार पाठक पर अपना स्थायी प्रभाव छोड़ते हैं। विषय को प्रस्तुत करने, उसे सरलता से समझाने का जो एक विशिष्ट ढंग है वह पाठक को नए ढंग से सोचने के लिए बाध्य कर देता है। अपनी जीवन दर्शन की विशिष्ठ पद्धति ही किसी भी विषय को इस प्रकार सुस्पष्ट तौर से प्रकाशित करने की क्षमता प्रदान करती है। एक मित्र को "विश्व-विलोक" का ध्येय समझाते हुए भाईजी ने संक्षेप में लिखा है, "भारतीय जीवन को यदि प्रभावी बनाना है तो उसमें विचार शक्ति को व्यापक रूप में प्रवाहित करना होगा और साथ ही निर्णय वृत्ति का निर्माण करना होगा। विश्व-विलोक का विनम्र ध्येय है——सामाजिक विचारधारा निर्माण करना, मानव जीवन को प्रधान बनाना, उसे निर्भय वृत्ति देना और विचार प्रवर्तक साहित्य से मानव में नवशक्ति का संचार करना। जीवन के आदर्श को मानव निर्भयता के साथ देखे, बल के साथ उस आदर्श का व्यावहारिक अवस्था में अवलम्ब करे और नया मानव-समाज-निर्माण हो जिसमें भावना, बुद्धि और कल्पना का समुचित समन्वय हो। समाज की ओर हमें जाना है। मानव-एकता का निर्माण करना है।"

जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में विचारों की स्पष्टता जिस प्रमाण में हममें होंगी, जीवन-निर्माण के लिए हम उतनी ही दृढ़ता से सक्रिय होंगे। इसी को अत्यन्त

सुस्पष्ट करते "विश्व-विलोक" के एक सम्पादकीय में भाईजी लिखते हैं, "विश्व निर्माण का हमारा अर्थ है जीवन निर्माण। जीवन प्रधान है और विनाश गौण। विश्व का सारा प्रयत्न जीवित रहने के लिए है, मृत्यु के लिए नहीं। जीवित रहने की सर्वश्रेष्ठ प्रक्रिया में मृत्यु आ जाए तो उसका स्वागत। यह विश्व-व्यवस्था के अनुसार सर्वश्रेष्ठ निर्भयता है।"

जीवन के लिए मृत्यु से संघर्ष करते मैंने भाईजी को अति निकट से देखा है। दुर्धर्ष मृत्यु अपनी पूर्ण शक्ति के साथ। लेकिन जीवन की अजेयता में पूर्ण आस्था। उसी जीवन की विजय हुई। आज भाईजी हमारे बीच वैसे ही सक्रिय हैं। "कल्पना-कानन" का विचारक-गायक, "धरती और आकाश" की सोंधी सुगन्ध और विराट विस्तार का आनन्द लेनेवाला, "विश्व-विलोक" का पवित्र संकल्प लेनेवाला, अपनी विकासशील बौद्धिक प्रखरता के साथ हमारे बीच क्रियाशील है।

मैं जब भी भाईजी से मिलता हूँ मुझमें एक विशिष्ठ गति का संचार होने लगता है। ७१ वर्ष की आयु में युवक सी गतिशीलता है, बाल सुलभ माधुर्य्य है, बुजुर्ग का प्यार है, मित्र सा स्नेह है, और गम्भीर विचारक की गहन दृष्टि है। इस उदार व्यक्तित्व से स्नेहमय, सहज रिश्ता निरन्तर बना ही रहे यही भावना दृढ़तर से दृढ़तम बनती जाती है। ★

बियाणीजी को मैंने कैसा जाना

लेखक
सदासुख काबरा—कुचामन
(व्यवसायी एवं उद्योगपति ।)

वैसे श्री बियाणीजी मारवाड़ में कुचामन के निवासी हैं, किन्तु वे बरार (अकोला) में बहुत अरसे से यानी बचपन से रहे हैं। मैं उनको सम्वत् १९७४ में विशेष रूप से जानने लगा और सम्वत् १९७७ में तो मैंने उन्हें माहेश्वरी समाज के नेता और देश के एक कर्मठ स्वतन्त्रता सेनानी के रूप में पाया। माहेश्वरी समाज में सुधारों की लहर कोलवार माहेश्वरियों के नाम को लेकर सम्वत् १९७४ के आसपास आई। वह वितण्डावाद कुचामन नगर से ही शुरू हुआ। यहाँ के श्री जयदेवजी कोठारी के भाई श्री मुरलीधरजी कोठारी के लड़के रामानन्द का विवाह श्री बालमुकुन्दजी झंवर कासगंजवालों के यहाँ (कोलवार माहेश्वरी) के हुआ। यहाँ एक बहुत विख्यात माहेश्वरी घराने से जयदेवजी से प्राचीन टक्कर थी, और श्री जयदेवजी को लेकर उस टक्कर ने उग्ररूप धारण किया। यहाँ के माहेश्वरियों के १८ घरों को छोड़कर बाकी के माहेश्वरियों का जयदेवजी और १८ घरों से सामाजिक सम्बन्ध कई साल तक विच्छेद रहा। आखिर यह झगड़ा कलकत्ते माहेश्वरी महासभा के अवसर पर पहुँचा और वहाँ एक कमेटी श्री श्रद्धेय कृष्णदासजी जाजू के सभापतित्व में गठित हुई जिसमें एक सदस्य के रूप में श्री बियाणीजी भी थे। इस कमेटी के एक मेम्बर श्री राठीजी थोड़े समय कमेटी के मेम्बर रहकर अलग हो गए। बाकी चार सज्जन रह गए उनमें श्री जाजूजी और बियाणीजी को छोड़कर श्री सेठ गोविन्ददासजी मालपाणी और श्री रामकृष्णजी मोहता थे। यह कमेटी इसलिए गठित हुई थी कि कोलवार शुद्ध माहेश्वरी हैं या नहीं। इन सज्जनों ने पूरे परिश्रम के पश्चात् यह निर्णय दिया कि कोलवार शुद्ध माहेश्वरी हैं और इनसे माहेश्वरियों का सम्बन्ध होना बिल्कुल युक्ति संगत है।

इस रिपोर्ट के प्रकाशित होने के बाद श्री रामेश्वदासजी बिरला ने उन्हीं श्री

बालमुकुन्दजी झंवर के घर में उनकी लड़की या बहन से सम्बन्ध कर लिया। उस समय श्री रामेश्वरदासजी की पूर्व पत्नि का देहान्त हो चुका था। श्री बिरलाजी को कई करोड़पति व्यक्ति अपनी कन्या देने को तरस रहे थे किन्तु उन्होंने समाज सुधार के नाते कोलवार माहेश्वरियों से सम्बन्ध किया। समाज के कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों की यह इच्छा थी कि कोलवार माहेश्वरियों के ४,०००-४,५०० घर जिनका सम्बन्ध राजस्थान के माहेश्वरियों से दूरी के तथा पहराव-ओढ़ान के कारण प्रायः नहीं के बराबर रह गया है सो चालू हो जाए। बिरलाजी के सम्बन्ध करते ही एक तूफान सा खड़ा हो गया और प्रत्यक्ष दो दल हो गए। आखिर सुधारवादियों की विजय हुई। श्री बियाणीजी और अन्य तीनों सज्जन (श्री जाजूजी, मालपाणीजी, मोहताजी) सुधारवादी महासभा को संचालन करने लगे और यह लड़ाई सम्वत् १९८५ के अन्त में समाप्त हुई और सुधारवादियों की भारी विजय हुई। श्री जाजूजी, श्री मालपाणीजी एवं श्री बियाणीजी के लिए यह जाति संघर्ष एक दिल बहलाव मात्र था क्योंकि वे देश को स्वतन्त्र कराने की महात्मा गांधी की लड़ाई में प्रबल वीरों में थे।

श्री बियाणीजी स्वतन्त्रता संग्राम में कई बार जेल गए। और पिछली बार की जेल में उन्हें बड़ी-बड़ी यातनाएँ सहनी पड़ी। श्री बियाणीजी जिस सभा में बोलने को खड़े हो जाते थे तो उस सभा में कोई बिरला ही व्यक्ति शायद उनकी दलीलों के सामने टिक पाता था। लेखक भी वे गजब के हैं और आज भी उनकी लेख पटुता सराहनीय है। विदर्भ में जो महाराष्ट्रियों का एक किला है उसमें वहाँ के आदिवासियों में भी 'विदर्भ-केसरी' श्री बियाणीजी की प्रतिष्ठा चरम सीमा पर पहुँची हुई है।

उनकी लिखने की शैली उनके द्वारा चलाए हुए 'विश्व-विलोक' से प्रतिध्वनित होती है। उनके विचारों की दृढ़ता उस पत्र के प्रत्येक अंक में झलक रही है। अपने विचारों के प्रति वे इतने दृढ़ रहे हैं कि वे बड़ी से बड़ी आफ़त को कुछ भी नहीं समझते। श्री बियाणीजी सरीखे व्यक्ति हमारे देश में उँगलियों पर गिने जानेवालों में से हैं और हमारे माहेश्वरी समाज को तो उनकी बहुत बड़ी देन है। जिन सज्जनों ने श्री बियाणीजी को एक ग्रन्थ 'बियाणीजी मित्रों की नज़र में भेंट करने का निश्चय किया है उनका प्रयास अत्यन्त सराहनीय है। मैं उम्र में श्री बियाणीजी से दो साल बड़ा हूँ तो भी मैंने हमेशा उनको नेता के रूप में माना है। मेरे दिल में श्री बियाणीजी के प्रति अति सम्मान है और मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि उन्हें चिरायु करें। कुछ समय पूर्व उनका स्वास्थ्य अधिक खराब हो

गया था किन्तु बाद में काफी सुधार के समाचार प्राप्त हुए हैं। आशा है कि अब अधिक प्रसन्न होंगे। बियाणीजी सरीखे सज्जनों को दीर्घ जीवन देश व समाज के लिए प्रेरणा-दायक एवं अत्यन्त हितकारी है। हमारे देश में ऐसे कर्मवीर सज्जनों का जन्म जितनी अधिक मात्रा में हो उतना ही देश एवं समाज का कल्याण है।

★

तपस्वी बियाणीजी

लेखक

राजबहादुर—दिल्ली

(केन्द्रीय परिवहन मंत्री ।)

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि हमारे स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानी, विदर्भ के नेता आदरणीय बृजलालजी बियाणी, के सम्मानार्थ अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया जा रहा है। बियाणीजी केवल पुराने मध्य प्रान्त अथवा विदर्भ के ही नहीं बल्कि सारे देश के ख्याति प्राप्त जननायकों में से हैं।

विधान निर्मात्री परिषद् के कार्यकाल से आदरणीय बियाणीजी के निकटतम सम्पर्क में आने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। मेरा अनुभव और विश्वास है कि जो भी कोई बियाणीजी के सम्पर्क में आया है उसने उनके व्यक्तित्व और व्यवहार में एक अकथनीय मधुरता और अपनापन पाया है। बियाणीजी का स्वभाव जितना मृदुल और मनमोहक है उतनी ही उनकी वाणी ओजस्वी, प्रभावशाली और रसभरी है।

बियाणीजी ने जिस क्षेत्र में भी काम किया उसमें अपनी अमिट छाप छोड़ी। अपने प्रदेश के शासन में जब-जब भी उन्होंने मन्त्री पद का भार सम्हाला तब-तब ही अपने व्यक्तित्व का शासन पर गहरा प्रभाव छोड़ा।

देश के लिए बियाणीजी का त्याग, तपस्या और सेवा चिरस्मणीय रहेंगे। अपनी सेवाओं और बलिदान से विदर्भ में बियाणीजी ने प्रथम स्थान पाया है और हमारे स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में उनकी गणना प्रथम पंक्ति के सेनानियों में होगी।

इस अवसर पर मैं बियाणीजी का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ।

ब्रजलाल बियाणी: एक शब्द चित्र

लेखक
श्रीरामनाथ 'सुमन'–इलाहाबाद
(भूतपूर्व सम्पादक 'नवराजस्थान'; साहित्यिक तथा लेखक: अनेकों पुस्तकों के रचयिता ; वर्तमान में गांधी स्वाध्याय संस्थान से सम्बन्धित।)

एक छाया चित्र

एक दुबला-पतला प्रसन्न आकार-चालीस वर्ष से कुछ ऊपर, शीघ्र गति से होड़ लगाता हुआ हृदय तथा अपने लक्ष्य की पूर्ति के प्रति आश्वस्त मस्तिष्क, अपने पथ पर निरन्तर आगे बढ़ता हुआ दिखाई देता है। निश्चय-सूचक ठोढ़ी, फैली हुई प्रभावयुक्त नासिका तथा प्रश्न करती हुई आँखें एक ऐसे व्यक्तित्व की ओर इंगित करती हैं जो सदैव आगे बढ़ना जानता है, पीछे मुड़कर देखना नहीं! ऐसा व्यक्तित्व, राज्य सभा में बरार का प्रतिनिधित्व करते हुए, कांग्रेसी सदस्य माननीय श्री ब्रजलाल बियाणी का है।

जब भी मैं श्री बियाणीजी को देखता हूँ, तो उन्हें उसी स्थिति में पाता हूँ जो स्थिति एक ऐसे असन्तुष्ट राही की होती है जो बाधाओं पर विजय प्राप्त करता हुआ सदैव तीव्र गति से आगे बढ़ता रहता है। उनका चमकता हुआ मुखमण्डल तथा सम्पूर्ण आकृति आत्म-विश्वास से दीप्त है।

कांग्रेस में प्रवेश

एक ऐसे सम्पन्न एवं सम्मानित मारवाड़ी परिवार में, जिसने कभी बुरे दिनों का अनुभव भी किया हो, जन्म लेने के कारण श्री बियाणीजी के जीवन में एक सफल मारवाड़ी का कठोर परिश्रम तथा आर्थिक विपुलता दोनों ही देखने को मिलते हैं। वे अकोला, जहाँ से उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा पास की तथा नागपुर, जहाँ के मोरिस कॉलेज से उन्होंने बी. ए. की परीक्षा पास की, में पढ़ते समय एक तीक्ष्ण बुद्धि के विद्यार्थी थे। उन्होंने कानून की प्रथम वर्ष की शिक्षा समाप्त की तथा जिस समय वे उसके द्वितीय वर्ष का अध्ययन लगभग समाप्त करने को थे, उसी

समय नवीन भारत के मसीहा, महात्मा गांधी, राजनीति के क्षितिज पर अवतरित हुए, जिनकी स्वतन्त्रता संग्राम की एक पुकार ने भारत के कोटि-कोटि मनुष्यों में, जो कि विदेशी शासन के आगमन के कारण चिर तन्द्रा में सुप्त थे, नवीन स्फूर्ति भर दी। बियाणीजी का उत्सुक एवं अधीर नवयुवक भारत की जागृत एवं विकासशील आत्मा की उथल-पुथल में अपने को शान्त नहीं रख सका तथा उसने आगे बढ़ते हुए अपने भाग्य को उस संघर्ष में झोंक दिया, जिसका श्रीगणेश ऐतिहासिक नागपुर कांग्रेस से हुआ।

समाज सुधारक

उस समय के बाद उनका जीवन जनसेवा में बीता। अपने निरन्तर सामाजिक कार्यों के माध्यम से वे मारवाड़ियों, विशेषत: माहेश्वरियों, के दृष्टिकोण में एक बहुत बड़ा परिवर्तन ला सके। वे अपने कॉलेज के दिनों से ही एक क्रान्तिकारी सुधारक रहे हैं तथा आगे चलकर वे अखिल भारतीय माहेश्वरी महासभा के प्रधान मन्त्री चुने गए। इन्हीं की स्वस्थ एवं बुद्धिपरक मान्यताओं के कारण ही माहेश्वरी महासभा को नवीन जीवन प्राप्त हो सका तथा वास्तविक समाज-सेवा के क्षेत्र में एक जीवनदायक प्रभाव उत्पन्न हो सका। उन्होंने अपने समाज के सामाजिक ढाँचे में व्याप्त सभी बुराइयों एवं जर्जर रूढ़ियों का निड़रतापूर्वक विरोध किया। उनके कार्यों के औचित्य को स्वीकार करते हुए, उन्हें माहेश्वरी महासभा के देवलगाँव में होनेवाले १० वें अधिवेशन का सभापति चुन लिया गया। मारवाड़ी समाज में पर्दा प्रथा तथा मृतकों के भोज के विरूद्ध होनेवाले आन्दोलनों में आपका बहुत बड़ा योगदान रहा है। उन्होंने अपने परिवार से न केवल पर्दा प्रथा को नाश करने का ही प्रयत्न किया, प्रत्युत उसमें स्वतन्त्रता की भावना को भी ठूँस-ठूँस कर भरने का प्रयास किया। आज उनकी स्त्री तथा पुत्रियाँ मद्रासी तथा महाराष्ट्रीय स्त्रियों की भाँति ही पर्दा प्रथा से पूर्णत: अनभिज्ञ हैं तथा स्वतन्त्रता एवं सम्मानपूर्वक समाज में विचरण करती हैं। वे अपने स्वयं के प्रयत्नों से अनेकों स्त्रियों को पर्दे के अन्धकार से निकालकर उन्हें सामाजिक स्वतन्त्रता के प्रकाश में लाए हैं। वे स्त्रियों के आन्दोलनों, उनके कल्याण तथा अभिवृद्धि, में विशेष तथा सक्रिय रुचि लेते हैं।

देश-भक्त

भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में उन्होंने अपना पूरा-पूरा योग दिया है तथा उसमें सक्रिय एवं मुख्य भाग लिया है। १९३० व १९३२ के सत्याग्रह आन्दोलन में

वे बरार के मन्त्री तथा एकमात्र संचालक थे, और वे एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने उस आन्दोलन को, जब तक कि उसे स्थगित नहीं कर दिया गया, निरन्तर आगे बढ़ाया। वे 'बरार-केसरी' कहलाते थे और कहलाते हैं। वे १९३० व १९३२ में पकड़े गए और क्रमशः १२ व १८ मास तक कारावास में रहे। वे बरार-कांग्रेस की राजनीति में एक प्रमुख स्थान रखते हैं। आप १९३५-३६ में बरार प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष थे और विदर्भ कांग्रेस के संसदीय बोर्ड के अध्यक्ष हैं।

साहित्यिक अभिरुचि

जन-जीवन के प्रारम्भ से ही, श्री बियाणीजी ने साहित्यिक अभिरुचि प्रदर्शित की तथा पत्रकारिता की ओर झुकाव दिखाया। लेकिन देश की राजनैतिक समस्याओं के कारण, जिनमें आपको अधिक संलग्न रहना पड़ा, वे अपनी साहित्यिक रुचि को पूर्ण प्रकाश में न ला सके। तथापि उन्होंने, कुछ मित्रों के सहयोग से, १९२२ में अकोला में एक मुद्रण संस्थान की नींव डाली, और अपने विभिन्न कार्यों के मध्य व्यस्त रहकर भी उसे 'राजस्थान प्रेस' के रूप में व्यवस्थित किया, जो कि आज प्रान्त भरसे सबसे बड़ी मुद्रण संस्था है तथा जो इमारत और व्यवस्था की दृष्टि से सब से सुन्दर है। उन्होंने 'राजस्थान प्रेस' से एक हिन्दी साप्ताहिक भी प्रारम्भ किया जो कुछ अज्ञात घटनाओं के कारण आगे नहीं चल सका। १९३५ के वसन्त काल में उन्होंने एक नवीन हिन्दी पत्र, 'नव-राजस्थान', प्रारम्भ किया, जो हिन्दी पत्रकारिता की दुनिया में सर्व-श्रेष्ठ साप्ताहिक पत्रों में से एक माना जाता है। प्रारम्भिक काल में वे नियमित रूप से अपने विचार-गर्भित लेख लिखा करते थे। सन् १९३५ में आप हिन्दी साहित्य सम्मेलन के २५ वें अधिवेशन (नागपुर) की स्वागत समिति के अध्यक्ष निर्वाचित हुए, और आपके संक्षिप्त भाषण ने सभी को, जो वहाँ उपस्थित थे, आकर्षित किया। आप हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थायी समिति के सदस्य हैं तथा साथ ही भारतीय साहित्य परिषद् की कार्यकारिणी में भी सम्मिलित हैं।

व्यवसाय में योगदान

एक कर्मवीर के नाते, श्री बियाणीजी ने प्रान्त के जन-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपना योगदान दिया है। उन्हीं के प्रोत्साहन और पहल के परिणाम-स्वरूप १९३४ में 'बरार चेम्बर आफ कॉमर्स' की स्थापना की गई, और थोड़े ही समय में वह भारत के प्रमुख चेम्बरों में से एक माना जाने लगा तथा बरार प्रान्त में व्यवसाय एवं वाणिज्य की व्यवस्था करने का शक्तिशाली माध्यम बन गया। यह

सब कुछ उन्हीं के मार्गदर्शन में हुआ। नागरिक जीवन में भी उनकी रुचि कुछ कम नहीं थी और आप अकोला म्युनिसीपल कमेटी के उपाध्यक्ष चुने गए। आज भी आप नागरिक जीवन में विशेष रुचि रखते हैं।

विश्लेषण

इस प्रकार कोई भी यह देख अथवा जान सकता है कि श्री बियाणीजी प्रान्त के जन-जागरण के अभिनेता रह चुके हैं और हैं। हालाँकि, आपकी कुछ कमज़ोरियाँ भी हैं। आप एक ऐसे दृढ़ व्यक्ति नहीं है, जो लौहपुरुष की इच्छा की भाँति कार्य करता हो। आपका स्वभाव ऐसा है, जिसमें रुक्षता के लिए स्थान नहीं है। आपकी कोमलता आपको कठोरता और कभी न झुकनेवाले स्वभाव से दूर ले जाती है, जिसकी कि जन-जीवन में कभी कभी आवश्यकता होती है। यह आपकी शक्ति तथा दुर्बलता एक साथ दोनों ही है। विनोदपूर्ण तथा अभिव्यक्तिपूर्ण ओष्ठ आपके मुख पर बचकानी हठ, हास्य और सरलता के भाव प्रदर्शित करते रहते हैं। मैं स्वयं यह अनुभव करता हूँ कि आपका यह मृदुल हास आपका सबसे बड़ा हथियार है, जिसका सफलतापूर्वक प्रयोग करना आप भलीभाँति जानते हैं। आपके जीवन में सफलता तथा कठिनाइयाँ दोनों ही आपके मृदुल स्वभाव के द्योतक हैं—एक ऐसे स्वभाव के जिससे आपकी शिष्टता, सज्जनता तथा बातचीत की सभ्यता का आभास मिलता है। आपके अन्तर में एक कलाकार है, जो जीवन की शालीनता और उसके विभिन्न रंगों अथवा सौन्दर्य को प्यार करता है—एक ऐसे जीवन को जिसमें युवक के हृदय की धड़कनें हैं, अल्लहड़पन है, उद्दण्डता है और साथ ही संकल्प भी।

ऐसे हैं श्री ब्रजलालजी बियाणी, जो अभी-अभी विदर्भ प्रान्त से राज्य-सभा के लिए निर्वाचित हुए हैं। मुझे आशा है कि वे अपनी सहनशक्ति का लार्ड सभा (House of Lords in England) की भद्दी नकल के रूप में कार्य करती हुई एक लंगड़ी और कागजी राज्य-सभा में सफलतापूर्वक उपयोग करेंगे। वे एक कुशल तर्क-वितर्क करनेवाले नहीं हैं, लेकिन एक मीठे और विश्वास जाग्रत करनेवाले वक्ता अवश्य हैं। वे संसदीय सदस्य के रूप में नए नहीं हैं। सी. पी. कौन्सिल में आप शिक्षा ग्रहण कर चुके हैं, जिसके आप बहुत वर्षों तक एक प्रमुख स्वराजिस्ट सदस्य (Swarajist member) के रूप में रहे और जिससे आपने लाहौर कांग्रेस की अधिकारपूर्ण आज्ञा (Lahore Congress Mandate) के बाद त्याग पत्र दे दिया।

यह कहना अनुचित न होगा कि आप राज्य-सभा में––एक ऐसी राज्य-सभा में

जो कि प्रतिक्रियावादी व्यक्तियों तथा आरामतलब राजनीतिज्ञों (arm-chair politicians) के मनोरंजन करने का स्थान है—एक महत्वपूर्ण कार्य करने जा रहे हैं। मैं आपकी सफलता चाहता हूँ।

अनुलेख

उक्त लेख लगभग २९ वर्ष पूर्व, निश्चित् रूप से २८ दिसम्बर, १९३६ को, बम्बई से प्रकाशित होनेवाले 'सण्डे क्रानिकल' के लिए लिखा गया था। लेख का सार तथा उद्देश्य यथावत् है, हाँ कुछ मात्रा में उसमें उलटफेर अवश्य हो गया है। आशानुसार, श्री बियाणीजी राज्यसभा में कार्य करते हुए काँग्रेस दल में अत्यन्त प्रतिष्ठित हो गए। सन्धि के पश्चात् जब सी. पी. मन्त्रिमण्डल का गठन हुआ तो आप उसमें वित्तमन्त्री बने और इस पद पर रहकर बड़ी योग्यता से कार्य-भार सम्भाला। नवीन भारत के इतिहास के स्वतन्त्रता से पूर्व तथा बाद के काल में आप सदैव जनता के लिए लड़े तथा उसकी भावनाओं का उचित आदर किया। स्वतन्त्र विदर्भराज्य सम्बन्धी आन्दोलन के आप अप्रतिम नेता रहे और आपको अपने सहयोगियों तथा कट्टर कांग्रेसी नेताओं से स्वतन्त्रता तथा विदर्भ की जनता की न्यायोचित भावना के लिए डटकर युद्ध करना पड़ा। यद्यपि आप उस युद्ध में परास्त हुए, परन्तु आपने अपनी आत्मा को नहीं गिरने दिया साथ ही उन लोगों की कृतज्ञता को भी आँच नहीं आने दी जिनको आप अत्यधिक प्यार करते थे।

अब आप कुछ कारणों से सक्रिय राजनीति से पृथक हो चुके हैं। राजनीति की अपेक्षा अब आप साहित्यिक क्षेत्र में अधिक रुचि लेने लगे हैं तथा एक स्वतन्त्र विचारक के रूप में आपने गद्य, दृष्टान्त तथा भावचित्र प्रसूत किए हैं। विचारक के रूप में आपने सामाजिक कुरीतियों के मूल में झाँकने तथा उन्हें अनावेष्टित करने का सफल प्रयास किया है।

मुझे आशा है कि यदि आपका स्वास्थ्य एवं समय आपको साथ दें तो आप निश्चय ही अपने मानवीय एवं सर्व हितैषी दृष्टिकोण एवं मौलिकता द्वारा एक सन्तुलित एवं बुद्धिपरक मानवीय व्यवहार को प्रोत्साहित एवं विकसित कर सकेंगे। मैं सदैव आपके स्वास्थ्य की कामना करता हूँ। ★

मेरे पूज्य काकाजी

लेखिका

सौ० सरलादेवी बिरला—कलकत्ता

(बियाणीजी की पुत्री; श्री बसन्तकुमार बिरला की पत्नी; सामाजिक एवं शिक्षा के क्षेत्र में कार्यकर्ता।)

शान्त, सौम्य, मृदुल—मुझे जबसे याद है पूज्य काकाजी का यही स्वरूप देखा। राजकारण की इतनी अशान्ति में भी उनकी शान्ति सर्वदा वही रूप रखती थी। किसी से भी ऊँचे आवाज में बात करते हुए मैंने नहीं सुना।

वे राजकारण में व्यस्त रहते थे—हम लोग अपनी पढ़ाई में पर जो थोड़ा-सा समय उन्हें मिलता था उसमें वे बराबर ध्यान रखते थे कि हमें अच्छी आदतें सिखावें। हमारा कमरा साफ रखना हमारा काम था। उसमें कभी गलती हो जाती तो पूज्य काकाजी कभी भी धमकाते नहीं थे, पर उनके भाव देखकर ही हम लोगों की हिम्मत नहीं होती थी कि फिर गलती हो।

मिलने जुलनेवाले लोगों का ताँता ही बँधा रहता था। सबसे पूज्य काकाजी अत्यन्त प्रेमपूर्वक बातें करते थे। सारा अकोला उन्हें "भाईजी" कहता था तथा उन्हें उसी प्रकार से मान देता था।

जीवन का बहुत बड़ा समय अकोला में व्यतीत करने के बाद थोड़े ही समय में उन्होंने इन्दौर में जो अपना प्रेम सम्बन्ध बढ़ाया है वह देखकर जी गद्‌गद् हो जाता है।

ईश्वर पूज्य काकाजी को स्वास्थ्य प्रदान करे, यही मेरी हार्दिक प्रार्थना है। ★

बियाणीजी के प्रति

लेखक
डा० के. ए. तावरे–इन्दौर
(भूतपूर्व उप-संचालक, स्वास्थ्य विभाग, मध्यप्रदेश; विद्वान एवं लेखक।)

२७ अप्रेल १९६१, दोपहर के दो बजे, जब हम सब मोटर द्वारा पूना जाने के लिए तैयार हो रहे थे कि एक सज्जन मेरे पास आए और मेरे मकान के ऊपर का हिस्सा, जो उन्होंने पूर्व में देखा था, किराए से लेने का अनुरोध करने लगे। मैंने उन्हें किराया बताया और उन्होंने तत्काल किराए की रकम मुझे पेशगी में दे दी। रसीद लिखने के लिए जब मैंने उन्हें पूछा कि यह मकान उन्हें किसके लिए चाहिए ताकि मैं रसीद उनके नाम से लिख दूँ, तो उन्होंने श्री ब्रजलाल बियाणी का नाम बताया। यह नाम मैंने पूर्व में विदर्भ आन्दोलन के सम्बन्ध में सुन चुका था, और उनके विषय में कुछ पढ़ा भी था। नाम सुनने पर मैंने उन सज्जन को अपनी प्रतिक्रिया कहकर सुनाई कि यह मकान श्री बियाणीजी के अनुकूल नहीं है। परन्तु सज्जन ने कहा कि यह मकान केवल उन्हें एक-दो मास के लिए ही चाहिए, तो मैंने ज्यादा कुछ न कहकर किराए की रसीद लिख दी। परन्तु मन में यह बात अवश्य खटकी कि बियाणीजी जैसे बड़े नेता इस छोटे से मकान में कैसे रहेंगे तथा पड़ोसी के नाते हमारे जैसे व्यक्ति की उनसे कैसे निभेगी।

कुछ दिनों के बाद जब मैं पूना से लौटा और बियाणीजी भी अकोला से इन्दौर रहने के लिए आए तो एक दिन बियाणीजी स्वतः मुझसे मिलने आए। वैसे तो मेरा कर्तव्य था कि मैं उन्हें प्रथम मिलने जाता, परन्तु वह अवसर उन्होंने मुझे नहीं दिया। औपचारिक बातचीत होने के बाद वे चले गए। धीरे-धीरे उनसे मेरा परिचय बढ़ता गया। श्री बियाणीजी (भाईजी) में बहुत सी विशेषताएँ मेरी नजर में आईं जो साधारण मनुष्यों में अक्सर नहीं पाई जाती। उन विशेषताओं को मैं उदाहरण देकर ही विशेष प्रकार से स्पष्ट करना अधिक अच्छा समझता हूँ।

एक दिन की बात है, भाईजी, उनके प्राइवेट सेक्रेटरी श्री बेरुलकर, अन्य मित्र

और मैं खाना खा रहे थे। भाईजी सभी को खाने का आग्रह कर रहे थे। उनके प्राइवेट सेक्रेटरी को भी वे उतने ही आदर से आग्रह कर रहे थे जैसे कि अन्य मित्रों को, और उनके बर्ताव से ऐसा प्रतीत होता था मानो श्री बेरुलकर उनके प्राइवेट सेक्रेटरी नहीं हैं, बल्कि एक साथी हैं।

श्री बेरुलकर एक विभिन्न राजनीतिक विचारधारा के थे और जब कभी किसी बात पर दोनों का वाद-विवाद होता तो देखनेवाले को ऐसा प्रतीत होता कि दो विभिन्न दलों के नेताओं में वैचारिक संघर्ष चल रहा है। कभी-कभी तो उनके वाद-विवाद कटुता लिए हुए होते थे। इस पर से भाईजी की उच्चकोटि की सहिष्णुता का परिचय मिलता है।

भाईजी के पास यदि छोटे से छोटा आदमी भी मिलने जाए तो वे उसे बिदा करने दरवाजे तक अवश्य पहुँचाने जाते हैं। एक समय जब वे एक सज्जन को जो उमर में छोटे तथा मेरे हाथ के नीचे काम करते थे दरवाज़े तक पहुँचाने आए तो मैंने टोका कि इस औपचारिकता की आवश्यकता नहीं थी, उस पर उन्होंने कहा कि मानवता तथा सदाचार के नाते यह उन्हें करना चाहिए था, इसमें छोटे-बड़े का प्रश्न नहीं है। वास्तव में, निम्न से निम्न कर्मचारी एवं भृत्य के साथ भी उनका बर्ताव सदैव विवेकपूर्ण तथा मानवतापूर्ण रहता है।

भाईजी यदि कोई काम करने का निश्चय कर लें तो फिर उन्हें अपने निश्चय से कोई नहीं हटा सकता। भाईजी की बीमारी के पश्चात् 'विश्व-विलोक' बन्द हो गया था। उन्होंने उसे पुनः चालू करने का निश्चय किया है। भाईजी को जो पूर्व में लकवे का दौरा आया था, मेरी ऐसी धारणा है कि वह उनके ऊपर अधिक मानसिक बोझ पड़ने के कारण ही आया था। जब उन्होंने फिर से 'विश्व-विलोक' चालू करने का विचार व्यक्त किया तो उनके मित्रों ने उन्हें वैसा न करने के लिए क़ाफी दलीलें देकर समझाया। परन्तु उनका एक ही जवाब था कि वह उसे पुनः प्रारम्भ करने का निश्चय कर चुके हैं और अब उसे शुरू न करने की सब बातें व्यर्थ हैं। इसी प्रकार वही बात उनके उपवास तथा दूध-कल्प के बारे में भी है। उनके निश्चय करने के बाद उन्हें कोई उस निश्चय से परावर्त नहीं कर सकता।

लकवे के ज़बरदस्त दौरे के बाद करीब दो-तीन मास में ही फिर से लगभग पूर्व स्थिति में आना यह उनके एक सतत प्रयत्न तथा आत्मबल का द्योतक है। आज वे काफी अच्छा बोल लेते हैं तथा चलते-फिरते हैं। विषम परिस्थिति में भी उनका मानसिक सन्तुलन मैंने कभी बिगड़ते नहीं देखा।

चिकित्सा-सम्बन्धी उनके कुछ अपने विचार हैं। जहाँ तक मैं समझ सका हूँ, उनका प्राकृतिक उपायों (Naturopathic methods) पर अधिक विश्वास है। परन्तु जब वे Alopathic अथवा आयुर्वेदिक इलाज कराते हैं तो उस पद्धति के नियमों का वे पूर्णरूपेण पालन करते हैं।

शान के सजीव स्वरूप

लेखक
रघुनाथ गणेश (दादा) पण्डित–माधान (अमरावती)
**(विदर्भ की कांग्रेस के और अन्य क्षेत्रों के एक त्यागी कार्यकर्ता;
माधान कस्तूरबा आश्रम के एक संचालक।)**

माननीय श्री ब्रजलालजी बियाणी हमारे भाईजी अपने व्यस्त जीवन के ७० वर्ष पूरे करके ७१ वें वर्ष में पदार्पण कर रहे हैं। यह अत्यन्त हर्ष की बात है।

भाईजी के जीवन की विशेषता है उनका आकर्षक व्यक्तित्व, जिसके फल-स्वरूप उनका मित्र परिवार निरन्तर बढ़ता ही रहता है।

प्रस्तुत अभिनन्दन ग्रन्थ उस मित्र परिवार का एक विनम्र प्रेमोपहार है। इसके अतिरिक्त हम उन्हें दे भी क्या सकते हैं जिसने जीवन की सारी मधुरिमा मित्रों पर उड़ेल दी है।

भाईजी के जीवन, उनके कार्य आदि पर दृष्टि डालते ही तुरन्त ध्यान जाता है उनके शानदार जीवन पर। जो कुछ होना, जो कुछ करना, उसमें शान तो होनी ही चाहिए। जिसमें शान नहीं, उसमें जान नहीं। प्रान्तीय महासभा (कांग्रेस) के सभापति स्वातन्त्र्य आन्दोलन के एक नेता, सामाजिक कार्यकर्ता, साहित्यिक, वक्ता मन्त्री आदि रूपों में जो कुछ उन्होंने किया और करते हैं, उसमें हमेशा शान रहे यह कभी उनसे भूला नहीं जाता और यह सब स्वाभाविक ढंग से होता है। शान के मानों वे सजीव स्वरूप हैं।

भाईजी का भाईचारा, उनका आतिथ्य सदैव उदार होता है। उनके पास जो कोई छोटे-मोटे कार्यकर्ता आते हैं, उनकी सुविधाओं पर वे हमेशा ध्यान रखते हैं। उनको तक़लीफ न हो इतना ही नहीं उनको अपना काम करने में उत्साह रहे, इसलिए उनको आवश्यक जो कुछ लगेगा वह पूरा करने में सतर्क रहते हैं। भाईजी सब के अपने ही भाई हैं।

आचार में विनयशीलता, विचार में संयम, कार्य में अथक, हृदय से कोमल, भाषण में भीष्म सी दृढ़ता—ये भाईजी के व्यक्तित्व के अविभाज्य अंग हैं। इसी कारण अनायास ही वे मित्रों के बीच परम मित्र बन जाते हैं। ★

कहानीकार श्री बियाणी

लेखक

श्यामू संन्यासी—इन्दौर

(**सम्पादक, 'चित्रायन'; साहित्यकार; वक्ता एवं लेखक।**)

कहानी की कला और विधा बहुत पुरानी है; सम्भवत: उतनी ही पुरानी जितना कि उसका सर्जक-स्रष्टा यह मनुष्य। सुदूर अतीत में, जब आज का यह सभ्य-संस्कृत मानव घुटनों के बल चलने भी नहीं लगा था और वाणी के वरदान से वंचित था, तभी जाने किन अज्ञातनामा पुराण-पुरुषों ने संकेतों एवं ध्वनियों के द्वारा मनोरंजन, ज्ञानवर्द्धन तथा आत्माभिव्यक्ति के इस अतीव शक्तिशाली माध्यम का आविष्करण कर डाला था।

पाँच हजार बर्ष से भी पुरातन

फिर तो मानवी सभ्यता के हर चरण के साथ अपना क़दम मिलाती और मानवी विकास के हर पहलू को प्रतिबिम्बित और प्रभावित करती हुई कहानी स्वयं भी संवर्द्धित, विकसित और परिपुष्ट होती रही। प्रस्तर-युगीन कन्दराओं में अंकित और चित्रित कहानियों की बात पुरातत्त्ववेत्ताओं के अनुसन्धान-अनुशीलन के लिए छोड़ भी दें तो भी भारतीय वाङ्मय में इस विधा का इतिहास कम-से-कम पाँच हजार वर्ष पुराना तो है ही; क्योंकि ऋग्वेद में हमें कहानियों के कई सुन्दर टुकड़े और नमूने बहुत ही निखरे हुए रूप में मिलते हैं। पाँच हजार वर्ष पुरानी उन कहानियों को देखने से पता चलता है कि ललित वाङ्मय की इस महीयसी विधा को इतना निखार पाने में और भी कई हजार वर्ष अवश्य लगे होंगे।

सतत विकासमान

बहुत-कुछ तो कहानी की इस प्राचीनता के कारण और बहुत-कुछ अपने ऐतिहासिक विकास-क्रम और सतत परिवर्तनशीलता के कारण कहानी को किसी परिभाषा में बाँधना और उसकी आलोचना के निर्धारित मान-दण्डों को स्थिर करने का कार्य प्राय: दुष्कर ही रहा है। बहुत प्रयत्न करके भी गति को बाँधा नहीं जा

सकता, अधिक-से-अधिक उसके वेग को नापा जा सकता है। शायद यही कारण है कि आलोचना के निर्धारित-शास्त्रीय मान-दण्डों से कहानी को तोलने-परखने के प्रयत्न निष्फल होते रहे हैं; और शायद यही कारण है कि कहानियों का रस-लोभी वृहत् मानव-समुदाय किसी भी कहानी का आकलन परिभाषा और आलोचना के बटखरों से तोलकर नहीं कर पाता। उसके आकलन की कसौटी तो है उससे उपलब्ध होनेवाला रसबोध और उसकी एकान्वित प्रभविष्णुता।

परिभाषा की अर्गलाएँ

मैं घाकड़ सभालोचकों, घुस्समार विवेचकों और धुरन्धर विद्वानों की बात नहीं कर रहा। ये ठहरे 'समरथ' लोग। इन्होंने सदा से कहानी की अनेक परिभाषाएँ करके और उसके अनेकानेक नाम-रूप स्थिर करके पाठ्य-पुस्तकीय शास्त्रों की अनेकानेक अर्गलाओं से कहानी के विकास, विस्तार और उसकी गत्यात्मकता को बाँधने के प्रयत्न किए हैं और करते रहेंगे।

रसान्वीति और प्रभविष्णुता

मैं न तो कहानी का समालोचक हूँ, और न विवेचक और विद्वान ही। मैं तो हूँ कहानी-रस का लोभी; हर कथा-कृति में व्याप्त कथ्य का आविष्करण, उससे उद्घाटित समग्र प्रभाव में विभोर हो जाना और मानव जीवन के चरम सत्य के रूप में उसकी स्वीकृति ही है मेरा परम लक्ष्य। किसी भी कहानीकार की कृतियों में यही होता है मेरा प्राप्तव्य। इसलिए विद्वज्जन जो भी कहें, मैंने श्री बियाणीजी की जो चालीसेक के लगभग हिन्दी-मराठी कहानियाँ पढ़ी हैं, उनके बारे में निःसंशय होकर कह सकता हूँ कि मुझे उनमें कथ्य (कथा-तत्त्व) मिला है, उनके कथारस में मैं निमग्न हो सका हूँ और उन कहानियों की प्रभविष्णुता ने मुझे विभोर किया है।

कथ्य : मुखर भी, अस्पष्ट भी

लेकिन साथ ही मुझे यह भी स्वीकार करना होगा कि बियाणीजी की कहानियों का अभीष्ट कथ्य सदैव आसानी से हाथ लग जाता रहा हो, सो बात नहीं है। कहीं तो उनका कथ्य एकदम मुखर और उजागर हो उठा है कि सरलता से सुलभ हो जाता है; कहीं वह गोपन में जा बैठा है कि उसे पाने के लिए कई अन्तरालों में भटकना पड़ता है। कहीं वह कथ्य सन्ध्या तारा की तरह उद्भासित और स्पष्ट है तो कहीं वह नीहारिका के कुहाजाल में व्याप्त और अस्पष्ट।

रस की धारा

यही बात उनके कथारस के बारे में भी है। कहीं तो वह बरसात की पहाड़ी

नदी के उफान की तरह प्रवाहित होता हुआ सब-कुछ को आप्लावित कर लेता है; कहीं वह मैदान की मन्थर गति नदी के रूप में धार-गम्भीर भाव से बहता है, तो अनेक बार गुप्त-तोया फल्गु की गुपित धारा बन जाता है। ऊपर से शुष्क सिकता की तरह लगनेवाली इस गुप्त धारा के उद्घाटन का अपना अलग ही आनन्द है।

एकान्वित प्रभाव की समग्रता

परन्तु अपनी कहानियों की प्रभविष्णुता—एकान्वित प्रभाव के बारे में बियाणीजी सदैव बहुत ही सचेष्ट और जागरूक हैं। यहाँ किसी तरह की अस्पष्टता या ढील-ढाल उनमें नहीं है। एक सधे हुए पहलवान की तरह, दावपेंच कुछ भी क्यों न हों और चाहे कमजोर भी क्यों न पड़ रहे हों, कहानीकार बियाणीजी का उद्देश्य हमेशा कहानी की प्रभुविष्णुता का दंगल मारना होता है और वे अपने पाठक पर अपने कथ्य का प्रभाव डालकर ही रहते हैं।

तीन विशेषताएँ

बियाणीजी की कहानियों के सम्बन्ध में तीन बातें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं : एक तो उनका गठन, जिसे आप चाहें तो कलेवर भी कह सकते हैं; दूसरी उनकी उद्देश्यपरकता और तीसरे उनका भाषातत्त्व।

कलेवर

कहानियाँ तो बियाणीजी ने कई लिखी होंगी और अब भी लिखते रहते हैं, इसलिए और भी कई लिखेंगे, लेकिन मुझे केवल चालीस कहानियाँ देखने को मिली हैं, जिन्हें मैं कलेवर की दृष्टि से संक्षिप्त अथवा छोटी और लघुतम ऐसी दो श्रेणियों में विभाजित करता हूँ। थोड़े में सब-कुछ कह देने का आग्रह, जो साहित्य का सबसे बड़ा गुण होने के बावजूद कभी-कभी अति आग्रह के कारण दोष बनकर कृति को कुंठित भी कर देता है, बियाणीजी में प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। आवश्यक विस्तार और भर्ती से वे बहुत कतराते और बचते रहते हैं। उनकी अधिकांश कहानियाँ लघुतम कोटि की और शेष सही अर्थों में संक्षिप्त अथवा छोटी कहानियाँ हैं। पाँच-सात मिनट से अधिक समय किसी भी कहानी को पढ़ने में नहीं लगता। छोटी होने के कारण ही ऐसी कहानियों के प्रभाव की धार प्रायः प्रबल और तीक्ष्ण होती है, लेकिन कई बार खिलावट न आने के कारण वे प्रभाव की दृष्टि से हलकी और बोथरी भी हो जाती हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि बियाणीजी की कुछ कहानियों में पूरी खिलावट न होने के बावजूद उनके प्रभाव की धार कुंठित नहीं हो पाई है।

एक लम्बी कहानी

चालीस कहानियों में सिर्फ एक ही लम्बी कहानी है, 'जीवन के मोड़ पर'; और गठन की दृष्टि से यह बियाणीजी की शेष सभी कहानियों से भिन्न और विशिष्ठ प्रकार की कृति है। इसमें बियाणीजी ने काफी विस्तृत फलक लिया है और लेखक-प्रकाशक के परम्परागत सम्बन्धों की पृष्ठभूमि पर नर-नारी के साहचर्य एवं वैवाहिक सम्बन्ध को एक विशिष्ट दृष्टिकोण से उभारने का प्रयत्न किया गया है। नारी के सहज दर्प की प्रतिष्ठा के साथ ही उसके नारीत्व को इस कहानी में बियाणीजी बड़े कौशल से निभा ले गए हैं। नारी के कठोर और कोमल-करुण रूपों का अति सुन्दर सन्तुलन और सामंजस्य यहाँ हुआ है। यह कहानी इस बात की साक्षी है कि बियाणीजी लम्बी कहानियाँ भी खूब लिख सकते हैं।

सोद्देश्यता

बियाणीजी का कहानीकार अपने सामाजिक दायित्व के प्रति पूर्णतः सजग और सचेष्ट है इसलिए उनकी सभी कहानियाँ उद्देश्यपरक होती हैं। राजनैतिक कार्यकर्ता और मूलतः समाज-सुधारक होने के कारण बियाणीजी अपनी प्रत्येक कहानी में किसी-न-किसी सामाजिक समस्या को उठाते हैं और अपने ढंग से उसका समाधान प्रस्तुत करने का प्रयत्न करते हैं। अनेक बार यह समाधान बहुत ही मुखर हो जाता है और एक विशिष्ट प्रकार के पाठक-सम्प्रदाय को अरुचिकर भी हो सकता है। सोद्देश्यता का अति आग्रह कई बार कहानीकार को उपदेशक की निम्न पीठिका पर प्रतिष्ठित कर देता है और यह बात बियाणीजी की कुछ कहानियों में बहुत साफ तौर पर उभर गई है, जैसे 'निर्जला एकादशी', 'काश मेरी जगह आप होते,' 'ज्वार की रोटी,' 'कौन सम्पत्ति श्रेष्ठ,' 'वर्णन या निर्माण,' 'भिखारी राजा' आदि। लेकिन जहाँ बियाणीजी ने अपनी सोद्देश्यता को पूरा करने के लिए व्यंग्य का सहारा लिया है, जैसे 'गरीब के मुँह में,' 'पतिव्रता,' 'अखबारी न्याय,' 'वार्डर का हनीमून', 'अँधेरा और ठोकर,' 'काँटों का ताज,' 'जनमन्दिर', 'प्रसाद से परलोक,' 'पूजा का अधिकारी' उनमें कलापक्ष, सुरुचि और सौष्ठव सभी को एक नया ओप और ओज मिल जाता है। लेकिन और भी सुन्दर और सफल तो वे कहानियाँ हैं अपनी सोद्देश्यता में, जहाँ बियाणीजी ने अपनी बात को बड़े ही सूक्ष्म और सांकेतिक ढंग से कहा है। ऐसी कहानियों में 'कला और यथार्थ,' 'भरी जेब और खाली हृदय,' 'रूप और कल्पना,' 'पत्नी और नर्स,' 'रास्ते की धूल,' 'जंगल-गीत' आदि को रखा जा सकता है।

सहृदयता

बियाणीजी की कहानियों की उद्देश्यपरकता के साथ-साथ उनकी कहानियों में पाये जाने वाले दो तत्त्वों की चर्चा कर लेना समीचीन ही होगा। ये दो तत्त्व उनकी कहानियों की विशिष्ट प्रवृत्तियाँ हैं। एक है बियाणीजी की सहृदयता, जो उनकी सभी कहानियों को काव्यात्मकता से मंडित करती है। बियाणीजी अपने किसी भी पात्र को सहृदयता देने में कृपणता नहीं करते। वत्सल पिता की तरह वे भले और बुरे सभी पात्रों को अशेष रूप से स्नेह लुटाते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानी का कोई पात्र (दो-एक अपवादों को छोड़कर) हृदयहीन नहीं होता। और शायद यही कारण है कि उनका कोई पात्र 'टाइप' भी नहीं होता; वह होता है सम-सामयिक जीवन की जीती-जागती प्रतिमूर्ति।

नावीन्योन्मेष

बियाणीजी की कहानियों की दूसरी प्रवृत्ति है, जो अभी पूर्णतः विकसित नहीं हुई है, पर जिसके बीजाणु उगने और पनपने को छटपटाते हुए दिखाई दे जाते हैं, वह है उनका नावीन्योन्मेष। कुछ नया करने और कुछ नया देने की, परम्पराओं को तोड़ने और रूढ़ियों को ध्वस्त करने की उत्कट अभिलाषा बियाणीजी की कहानियों में यहाँ-वहाँ जगमगाती हुई दिखाई दे जाती हैं।

भाषातत्त्व

बियाणीजी की कहानियों के भाषातत्त्व को समझने के लिए इस बात को विशेष रूप से ध्यान में रखना होगा कि यद्यपि उन्होंने अपनी अधिकांश कहानियाँ हिन्दी में लिखी हैं, परन्तु हिन्दी न तो उनकी मातृभाषा है और न मूल भाषा। उनके जन्म और परिवार की भाषा मारवाड़ी है। और उनके बोलचाल और शिक्षा-दीक्षा की भाषा मराठी है। बियाणीजी ने हिन्दी का कभी विधिवत अध्ययन और अभ्यास नहीं किया। बोलते-बतियाते उन्हें हिन्दी आ गई और अपने उत्कट हिन्दी प्रेम के कारण वे हिन्दी में बोलने और तत्पश्चात् लिखने भी लगे।

बियाणीजी बरार (विदर्भ) में जन्मे, वहीं छोटे से बड़े हुए और विदर्भ ही उनका कार्यक्षेत्र रहा। बरार और विदर्भ दोनों ही मूलतः मराठी-भाषी प्रदेश हैं। वहाँ के जन-जन की भाषा मराठी है। घर और बाजार में सब कहीं मराठी ही बोली जाती है। जो-कुछ मारवाड़ी परिवार बरार में जा बसे वे घर में और आपस में मारवाड़ी अवश्य बोलते हैं, लेकिन उस मारवाड़ी पर भी मराठी की छाप रहती है और घर से बाहर तो उन्हें मराठी ही बोलना पड़ती है।

बियाणीजी की आरम्भिक शिक्षा मराठी में हुई । बचपन से मराठी भाषी क्षेत्र में रहने के कारण उनके भाषागत संस्कार भी मराठी के ही हैं। यह सब कहने का मेरा तात्पर्य केवल इतना ही है कि बियाणीजी के मनोजगत् पर जो प्रभाव मराठी का है वह हिन्दी का नहीं बन सका और बनना सम्भव भी नहीं था। जिस सहजता से बियाणीजी ने मराठी के मुहावरों और प्रकृति को साध्य किया वह उनकी हिन्दी के बारे में हो न पाया ।

इसलिए उनकी हिन्दी पर मराठी की छाप हो, उनकी वाक्य-रचना हिन्दी ढंग के बदले मराठी ढंग की हो, उनकी हिन्दी में मराठी शब्दों और प्रयोगों की छटा हो यह बिलकुल स्वाभाविक है । मराठी की ही तरह बियाणीजी हिन्दी में प्राय: क्रियापदों का प्रयोग नहीं करते । 'दोनों पढ़े-लिखे, दोनों अच्छे घराने के, दोनों सुन्दर और अच्छा व्यक्तित्व ।' मानव-समाज में, पशु-पक्षियों में वर्षा की आशा के भाव आदि । कई बार परभाषा का यह अटपटापन बियाणीजी के गद्य को ताज़गी और शैलीगत अनूठापन प्रदान करता है तो कई बार उन्हें अस्पष्टता और दुरूहता के चक्रव्यूह में भी फँसा देता है ।

भाषण में विस्तार, प्रत्यावर्तन और पिष्टपेषण की पूरी गुंजाइश रहती है और वहाँ इन बातों से भाषण में प्रवाह और ओज की वृद्धि होती है। लेकिन लेखन में यह प्रवृत्ति प्रवाह की बाधा बन जाती है और उसकी कसावट को क्षति पहुँचाती है । लेकिन बियाणीजी का मूल व्यक्तित्व एक वक्ता का होने के कारण वे अपनी रचना-प्रक्रिया में प्राय: इस दोष का मार्जन नहीं कर पाते । कथा के विस्तार पर तो वे सफलता से नियन्त्रण कर पाते हैं, लेकिन भाषा के अनावश्यक विस्तार से बचने का ध्यान उन्हें प्राय: नहीं रहता ।

बियाणीजी की कहानियों की परिष्कृत और प्रांजल मराठी पढ़ता हूँ तो लगता है कि यदि वे मराठी में ही लिखें और किसी अच्छे हिन्दी जानकार से मुहा-वरेदार हिन्दी में अनुवाद करवा लिया करें तो अच्छा हो; या किसी कुशल सम्पा-दक की कलम के स्पर्श से उनकी हिन्दी अधिक सुष्ठु हो जाए । लेकिन फिर लगता है कि मेरा यह आग्रह व्यर्थ का मोह ही है। भाषा का रूप और विशेषकर हिन्दी का वर्तमान रूप तो अभी अस्थिर है । अनेक प्रभावों और शैलियों से उसे सम्पन्न होना है । अनेक प्रयोगों और शब्दों को उसे आत्मसात् करना है । कौन कह सकता है कि आगे चलकर राष्ट्रभाषा हिन्दी के कितने रूप और कितनी शैलियाँ होंगी ? हो सकता है कि कभी हिन्दी की कोई मराठी प्रभावित शैली भी प्रतिष्ठित हो जाए और तब भाषाशास्त्री कह सकेंगे कि एक बियाणी भी हुए थे जिन्होंने इस विशिष्ठ शैली के निर्माण और विकास में प्रचुर मात्रा में योगदान दिया था। ★

प्राण जाय पर वचन न जाई

लेखक

शिवरतन मोहता—इन्दौर

(ग्रन्थ समिति के सभापति; उद्योगपति; सामाजिक कार्यकर्ता; वक्ता; एवं लेखक।)

विदर्भ-केसरी श्री ब्रजलालजी बियाणी को नज़दीक से देखने का अवसर मुझ को सन् १९६१ के जून मास में प्राप्त हुआ, जब मैं 'महेश जयन्ती' के उपलक्ष में अकोला माहेश्वरी बन्धुओं की सभा में गया था। श्री बियाणीजी का जन्म भी माहेश्वरी कुल में हुआ है, परन्तु चूंकि आप जाति-पाँति के बन्धनों से मुक्त हैं तथा राजनैतिक कार्यों में सदैव उलझे रहते थे, अतः जातीय संस्थाओं व समारोहों में सम्मिलित होना आपने त्यागा हुआ था। माहेश्वरी महासभा के उत्थान में आपका शुरू से बहुत बड़ा हाथ रहा था। इसलिए आपको इस जातीय संस्था में फिर से अग्रसर होने के लिए अकोला में मैंने प्रार्थना की और मेरी प्रार्थना स्वीकार करके उस रात को आप समारोह में पधारे। आपने अपने उदार विचारों की विद्वतापूर्ण व्याख्या इतने सुन्दर ढंग से की जिसकी छाप जनता के हृदय-पटल पर खास करके मेरे दिल पर बहुत असर कर गई। उस दिन से मेरी श्रद्धा आपकी तरफ दिनों-दिन बढ़ती गई। आप हरेक विषय पर गहन विचार करते हैं और एक दफ़ा निर्णय पर पहुँच जाने के बाद फिर अपने निर्णय पर अटल रहते हैं। 'प्राण जाय पर वचन न जाई' इस उक्ति को आप भलीभाँति चरितार्थ कर रहे हैं। राज-नैतिक क्षेत्र में आपने बड़े-बड़े पदों को सुशोभित किया है। ओजस्वी मृदुभाषा होने के कारण आपकी वक्तृता बहुत प्रभावशाली होती है। शरीर से दुबले-पतले होते हुए भी आपके भाषण कविता के अलंकारिक शब्दों में घन्टों तक होते हैं और नवयुवकों तथा वृद्धों पर एक समान जादू का काम करते हैं। आप जैसे विद्वानों का आदर करना प्रत्येक नर-नारी का कर्तव्य है। ★

एक विभूति

लेखक

आचार्य विनोबा भावे—पवनार (वर्धा)

बियाणीजी से मेरा व्यक्तिगत सम्बन्ध जेल में आया। और उससे उनकी हृदय गुण सम्पदा का मुझे थोड़ा अनुभव हुआ। उनका स्वच्छता का भान, नियमितता का आग्रह, ये दो गुण तो अल्प सम्पर्क से ही हर किसी के ध्यान में आनेवाले थे। लेकिन उनके हृदय में छिपी हुई करुणा का दर्शन कुछ घनिष्ठ सम्पर्क से ही हो सकता था, जो मुझे हुआ। सब गुणों के आगर भगवान परमात्मा अपने गुणों में से थोड़ा अंश उनके भक्तों को प्रदान करते हैं, ऐसों को लोग विभूति समझते हैं। बियाणीजी निःसंशय ऐसी एक विभूति हैं। प्रभु उन्हें दीर्घायु करें। और उनकी विभूति की सुगन्ध उत्तरोत्तर प्रसृत हो। ★

सेवा एवं संघर्षमय व्यक्तित्व

लेखक
उदय द्विवेदी, एम० ए०, एलएल० बी०—इन्दौर
(एडवोकेट; पत्रकार एवं लेखक।)

बियाणीजी की जीवन गाथा अन्याय के विरुद्ध तथा सत्य की प्राप्ति के लिए दीर्घ संघर्ष का इतिहास है। यह जन्मजात विद्रोही कभी भी यथा-स्थिति को न स्वीकार कर सका। नियति ने भी इसे बालकाल से अस्तित्व एवं विकास के संघर्ष में डालकर नेतृत्व के लिए ही तैयार किया था। निन्दा, स्तुति, लाभ-हानि यहाँ तक कि जीवन को भी दाँव पर लगाकर आत्मा की पुकार के अनुसार ही बियाणीजी का कर्तव्य रहा है—

निन्दन्ति नीति निपुणः यदिवा सुतुवन्तु,
लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगांतरेखा,
न्यायात्पथः प्रविचलंति पदं न धीराः॥

आपके ज्वलन्त उदाहरण हैं। इस सम्बन्ध में व्यक्तिगत हितों को तौल में कभी नहीं आने दिया।

बाल्यकाल के विचार तथा उन्नति के संघर्ष से निकलते ही नए संघर्ष उनके लिए तैयार थे। कट्टर वैष्णव परिवार में उत्पन्न तथा विधि-निषेध के संस्कारों में बियाणीजी को सब से पहला संघर्ष अपने जातीय समाज से ही हरिजनोद्धार तथा पर्दा प्रथा उन्मूलन में लेना पड़ा। परीक्षा भी हल्की न हुई थी। वे हरिजनों को सवर्णों के समकक्ष लाने में तन-मन से जुट गए थे तथा अस्पृश्यता के उस अन्धकार युग में ही सहभोजों में सम्मिलित होकर आपने जड़ीभूत परम्पराओं को तोड़ फेंका। अनेक अवसर आए जब प्रगति विरोधी तत्व बाट देखते रहे कि संस्कार इस प्रगति के सैनिक पर छा जाएँगे, परन्तु यह अग्नि परीक्षाओं में खरे ही निकल गए। बीसवीं शताब्दि के प्रारम्भिक दिन थे। अकोला नगरपालिका निर्वाचन में यह शर्त रखी गई कि बियाणीजी के सार्वजनिक रूप से हरिजन उम्मीद

वार के साथ बैठकर भोजन करने पर सभी कांग्रेस को ही मत देंगे। शर्त रखने-वाले संभवतः परम्परागत संस्कारों तथा सामाजिक दबावों पर भरोसा कर रहे थे, किन्तु कांग्रेस तथा बापू के इस निष्ठावान सैनिक का तो यह कार्यक्रम था ही और बियाणीजी ने निर्विकार रूप से वह शर्त पूरी कर दी। इतना ही नहीं हरिजनों के संगठन तथा उनमें जागृति उत्पन्न करने की दिशा में लिए गए उनके प्रयासों से बापू भी अपने बरार दौरे के समय चकित रह गए थे।

विरोध, संघर्ष और उनमें से मार्ग निकालना ही बियाणीजी की नीति प्रतीत होती है। उलझे राजनैतिक जीवन के प्रारम्भ से ही बरार का ब्राह्मण तथा ब्राह्मणोत्तर वर्ग का संघर्ष पर्याप्त जटिल तथा विस्फोटक था। प्रारम्भ में कांग्रेस संगठन में ब्राह्मणों का महत्वपूर्ण स्थान था और इस कारण ब्राह्मणेत्तर वर्ग में कांग्रेस का सन्देश पहुँचाना समस्या थी। बियाणीजी ने इस विरोध को समझा बुझाकर नियन्त्रित किया तथा अथक परिश्रम द्वारा ब्राह्मण वर्ग को बहुमत के हित की ओर प्रेरित करके दोनों वर्गों की खाई बहुत हद तक पाट दी। रूढ़ियों तथा परम्पराओं के उन्मूलन के संघर्ष में पर्याप्त सफल होकर आपने कांग्रेस को बरार में भी सभी की संस्था बना दिया और दोनों वर्ग अपने मतभेद भुलाकर राष्ट्र सेवा में जुट गए। इस हृदय परिवर्तन अभियान के फलस्वरूप अनेक अब्राह्मण नेता कांग्रेस में आए जिनका आज देशव्यापी महत्व है।

कांग्रेस, राष्ट्र तथा राष्ट्रीयता को सबल बनाने में उनके रचनात्मक प्रयासों की सूची पर्याप्त विस्तृत है, किन्तु उनका वास्तविक व्यक्तित्व स्वाधीनता के पश्चात् के वर्षों की घटनाओं से ही प्रभावित हुआ है। स्वाधीनता प्राप्ति क समय बरार में अंग्रेजों तथा निज़ाम के झण्डे एक साथ फहराए जाते थे तथा निज़ाम का घोषित उत्तराधिकारी बरार का राजकुमार कहलाता था। स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् भी इसी परम्परा पर चलते हुए राष्ट्रीय तिरंगा तथा निज़ाम का झण्डा साथ-साथ फहराए जाने का निश्चय होनेवाला है यह आशंका भी की जा रही थी। सभी नेतागण इस विषय पर मौन थे। इस प्रश्न पर कुछ भी कहने का अर्थ वरिष्ठ नेताओं के मत को चुनौती देना तथा उनका रोष आमन्त्रित करना था। ऐसे गम्भीर समय में स्वाभाविक विकल्प राजनैतिक भविष्य तथा सत्य के संघर्ष में आपत्ति के वरण में था। बियाणीजी दूसरा मार्ग चुनकर आगे बढ़े और केवल तिरंगा फहराए जाने के आन्दोलन का नेतृत्व सम्भाल लिया। उनके नेतृत्व में स्वतन्त्र बरार समिति ने यहाँ तक घोषणा कर दी कि यदि स्वतन्त्रता दिवस पर निजाम का झण्डा फहराया गया तो उस समारोह

का बहिष्कार होगा। प्रदेशव्यापी आन्दोलन फूट डालने के बाद भी तीव्रतर होता गया। अनेक धमकियों, दबावों तथा आलोचनाओं के बीच भी बियाणीजी दृढ़ रहे, यद्यपि अपने राजनैतिक भविष्य पर इसके प्रतिकूल प्रभाव से वे अनभिज्ञ नहीं थे। वरिष्ठ सत्ता का विरोध करनेवालों के परिणामों के उदाहरण उनके सामने थे, फिर भी दिल्ली के संकेतों के बाद भी उनका एक ही नारा था—बरार पर निज़ाम का झण्डा नहीं फहरेगा। अन्त में सत्याश्रित जनमत विजयी हुआ तथा केवल तिरंगे के साथ सम्पूर्ण विदर्भ में उल्लासमय वातावरण में स्वतन्त्रता का अभिनन्दन हुआ। राजनीतिज्ञ इस सफलता के दूरगामी प्रभावों से परिचित हैं। यदि दुर्भाग्य से यह आन्दोलन असफल होता तो कूटनीतिक क्षेत्रों में पाकिस्तान कितना अधिक शक्तिशाली हो जाता यह कल्पनातीत है। सम्भवत: काश्मीर से भी जटिल समस्या भारत के लिए खड़ी हो जाती। इस राष्ट्र सेवा के लिए बियाणीजी को क्या मूल्य चुकाना पड़ा यह स्वातन्त्रोत्तर राजनीति की अन्तरंग तरंगों से परिचत प्रत्येक निर्लिप्त अध्येता को ज्ञात है।

उससे भी बड़ी आहुति उन्हें देनी पड़ी विदर्भ को न्याय प्राप्त करने के संघर्ष में। स्वाधीनता के पूर्व भावी प्रान्तों की परिकल्पना पर कांग्रेस ने अन्य भाषावार प्रान्तों के साथ विदर्भ प्रान्तीय कांग्रेस की रचना की थी। मद्रास, आन्ध्र, केरल आदि का निर्माण भी कांग्रेस की उसी भाषावार तथा संस्कृति के आधार पर राज्यों के गठन की मूलभूत नीति के आधार पर हुआ भी। एक ही भाषा-भाषी एक से अधिक प्रान्त निर्मित हुए ही। किन्तु इस सामान्य नियम में कुछ अपवाद भी रह गए थे जो प्रकटत: राजनैतिक दबावों के कारण ही थे। लोमहर्षक हत्या काण्डों तथा उत्पातों के पश्चात् केन्द्र को नए प्रान्तों के निर्माण के हेतु बाध्य होना पड़ा। दूसरी ओर न्याय, तर्क तथा सत्य पर आधारित महाविदर्भ के निर्माण का आन्दोलन अपनी पूर्ण व्यापकता तथा प्रदेश व्यापी समर्थन के पश्चात् भी एक न्यायोचित माँग न मनवा सका। आज विदर्भ-चण्डिका बरारी मनुष्य की भाँति ही कुछ व्यक्तियों के विद्रूप तथा मनोरन्जन का विषय बन गई है और वह असफलता प्रदेश के जागरुक नागरिकों के हृदय में एक करुणा छोड़ गई है। परन्तु अपना सम्पूर्ण राजनैतिक भविष्य दाँव पर लगाकर महाविदर्भ की आवाज़ उठानेवाले बियाणीजी को बहुत बड़े सन्तोष का कारण यह तथ्य है कि सत्य का पक्ष उनके नेतृत्व में दृढ़ता तथा स्पष्टता से प्रस्तुत कर दिया गया है। महाविदर्भ का निर्माण क्यों न हो सका, क्या उन

परिस्थितियों में नए राज्यों के निर्माण की माँग पूरी होने के लिए हिंसा तथा उत्तेजना का आश्रय अनावश्यक था और क्या उनसे विरत रहने के कारण वह आन्दोलन सफल न हो सका, इस सम्बन्ध में तो भावी इतिहासज्ञ ही सही निष्कर्ष निकाल सकेंगे, किन्तु बियाणीजी जैसे बापू के शिष्य के मन:तोष को सम्भवतः यह विचार ही पर्याप्त होगा कि वह अपने ही साध्य की प्राप्ति में सफल न हुए हों, किन्तु आपने उसे प्राप्त करने के हेतु अनुचित साधनों का आश्रय न लेकर सत्याग्रह के सिद्धान्त की रक्षा की है और इस प्रकार राष्ट्रीयता द्वारा प्रदर्शित मार्ग से सफलता के प्रलोभनों के पश्चात् भी नहीं डिगे। ★

हरिजन सेवा-कार्य

लेखक
अनन्त हर्षे बी० ए०—इन्दौर
(नेत्रहीन संस्था, इन्दौर, के कार्यकर्ता तथा लेखक।)

महात्मा गांधी के साथ जिन लोगों ने कार्य किया और जिन्होंने अपने आप का सर्वस्व उसमें अर्पण कर दिया, उनको हम कभी भी भूल नहीं सकते। हरिजनों का महात्मा गांधी के द्वारा जितना उद्धार किया गया, वह अकेले महात्माजी नहीं कर पाते। इस महान कार्य में उनके साथियों का भी बहुत बड़ा हाथ है। उनके द्वारा चलाए गए इस महान कार्य को आगे बढ़ाने में हमारे मा. बियाणीजी का भी बहुत बड़ा हाथ है।

मा. बियाणीजी ने अपने प्रान्त में इस काम को हाथ में लिया और उसको सफल बनाया। इसको हम एक उदाहरण द्वारा बता सकते हैं। एक बार अकोला म्युनिसिपलिटी के निर्वाचन के समय कांग्रेस उम्मीदवार के विरुद्ध एक हरिजन उम्मीदवार खड़ा हुआ। उस समय प्रश्न था कि हरिजनों के वोटों को किस प्रकार से कांग्रेस को दिलवाया जाए। मा. बियाणीजी ने इस काम को करने के लिए एक चाल चली, जो कि आगे चलकर सफल हुई। इस चाल में मा. बियाणीजी की असली परीक्षा थी और उसमें वे उत्तीर्ण भी हुए। हरिजनों ने कहा कि यदि मा. बियाणीजी हरिजनों के साथ खुले रूप में भोजन करेंगे तो हम हरिजन लोग कांग्रेस को ही वोट देंगे। मा. बियाणीजी ने भोजन किया और समाज को यह बता दिया कि वे स्वयं कितने तत्वनिष्ठ है। उनके लिए तो यह काम बड़ा नहीं था, क्योंकि यह तो कांग्रेस का कार्यक्रम ही था, और इसको प्रत्येक कांग्रेस के सदस्य को अमल में लाना चाहिए था। इसमें डर किस बात का? इसके बाद तो उन्होंने हरिजनों के लिए बोर्डिंग हाउस बनाने का भी प्रयत्न किया।

महात्मा गांधी के दौरे के पूर्व से ही वे इन लोगों का नेतृत्व कर रहे थे। महात्मा गांधी ने जब इनके प्रान्त का दौरा पूर्ण किया तो कहा कि इस दौरे की सफलता का श्रेय मा. बियाणीजी को ही है।

उस समय जब कि भारत में रूढ़िवादिता इतनी अधिक थी कि हरिजनों की छाया भी नहीं पड़ना चाहिए थी उस समय उन्होंने इस काम को कर दिखाया। उन्होंने समाज की सब प्रताड़नाओं को सहकर हरिजनों के उद्धार के कार्य को हाथ में लिया। आज भी हम देखते हैं कि वहाँ के हरिजनों द्वारा आपको मार्ग दर्शक माना जाता है। इनकी चलाई हुई संस्थाएँ आज भी चल रही हैं। ★

युध्द-मन्त्री श्री ब्रजलालजी बियाणी

लेखक

धनजीभाई नारायणदास ठक्कर—वाडेगांव

(कांग्रेस एवं विदर्भ आन्दोलन के कार्यकर्ता; वक्ता एवं लेखक ।)

ई. स. १९३० में स्वातन्त्र्य युद्ध लड़ने के लिए विदर्भ में युद्ध मण्डल स्थापित हुआ था । इस मण्डल के सर्वाधिकारी स्व. श्री. वामनरावजी जोशी थे और युद्ध मन्त्री श्री ब्रजलालजी थे । नमक सत्याग्रह में भाग लेने को मैं उनके पास गया था, तबसे अभी तक हमारी मित्रता चालू है ।

विदर्भ की कांग्रेस को मज़बूत बनाने में श्री बियाणीजी का प्रयत्न विशेष महत्व रखता है । विदर्भ की जनता ने उन्हें 'विदर्भ-केसरी' की पदवी दी थी वह यथार्थ ही है । इनकी भाषण शैली ही ऐसी है कि सुननेवाले प्रभावित हो जाएँ । मैंने बड़े-बड़े नेताओं के भाषण सुने हैं, मगर मेरी समझ में तो बियाणीजी की भाषण शैली कुछ और ही है । श्रोताओं का चित्त आकर्षित करने की उसमें शक्ति है । दंगल भी शान्त हो जाती है । पाशीम तालुके के रिसोह गाँव में, स्व. श्री. वामनरावजी जैधे की अध्यक्षता में, अकोला ज़िला कांग्रेस परिषद चालू थी । उस वक्त हिन्दू महासभावालों ने गड़बड़ मचाई थी । ऐसी धमाल में श्री बियाणीजी ने भाषण शुरू किया कि तुरन्त सभा में शान्ति स्थापित हो गई थी । आकोट ज़िला के तेल्हारा गाँव में भी एक बार ऐसा ही अनुभव हुआ था ।

सरस्वती और लक्ष्मी यह दोनों देवियों का वरदान किसी-किसी भाग्यशाली मनुष्य को ही मिलता है । ऐसे भाग्यशालियों में एक श्री बियाणीजी हैं । 'कल्पना-कानन' शीर्षक नामक इनका ग्रन्थ पढ़ने से उनकी विद्वता का भान होता है और अनेक ग़रीब कांग्रेस कार्यकर्ताओं को उनके द्वारा दी हुई आर्थिक मदद से उनकी उदारता का परिचय मिलता है । लेकिन बड़े दुःख की बात है कि ऐसी आर्थिक मदद लेनेवाले में से जो कार्यकर्ता एम. एल. ए. या एम. एल. सी. बन गए वे कृतघ्न बन गए, और जातियता में पकड़कर, संयुक्त महाराष्ट्रवादियों से मिलकर, श्री ब्रजलालजी को मन्त्री पद नहीं मिलने दिया । ऐसा करके उन्होंने एक बुद्धिमान

ग्रौर शक्तिमान ग्रादमी की बुद्धि ग्रौर शक्ति का उपयोग महाराष्ट्र राज्य को नहीं करने दिया ।

नाग-विदर्भ ग्रान्दोलन के समय श्री ब्रजलालजी बियाणी कहते थे कि "सुव्यवस्था की दृष्टि से बहुत बड़े-बड़े राज्य बनाना ग्रच्छा नहीं क्योंकि उसमें नौकरों का ही राज्य चलता है ग्रौर इससे लालच व रिश्वत का ज़ोर बढ़ता है । मन्त्रियों के काबू में रहें ऐसे छोटे-छोटे राज्य ही ग्रच्छे होते हैं ।" श्री बियाणीजी का यह कहना सच था क्योंकि ऐसा ग्रनुभव ग्रभी महाराष्ट्र की जनता को ग्रा रहा है ।

ऐसे दूरदृष्टि नेता की शक्ति का फ़ायदा ग्राज जनता को नहीं मिल रहा, क्योंकि पाँच-छः महीने से ये बीमार हैं । ईश्वर से प्रार्थना है कि उनको तन्दुरुस्ती ग्रौर दीर्घायु प्रदान करे ।

★

भाईजी : एक स्मृतिरेखा

लेखिका

सौ. शान्ता पागे एम० एल० ए०—अकोला

(कांग्रेस एवं महिला मण्डल की कार्यकर्ती ।)

भाईजी के बारे में लिखना काफ़ी कठिन है । मेरी उनकी पहली भेंट १९२८-२९ से है । उनकी सुपुत्री श्रीमती सरलादेवी बिरला और मैं एक ही विद्यालय और एक ही खो-खो टीम में बहुत बरसों तक साथ-साथ खेले हैं । इस प्रकार से राजस्थान भवन में मेरा हमेशा आना-जाना रहता रहा । भाईजी को मैं बचपन से जानती हूँ और वे भी मुझे अपनी लड़की की सखी के रूप में जानते हैं ।

इस परिचय को ३५ वर्ष से भी अधिक हो गया । यदि ऐसा कहें तो मन को एकदम विश्वास भी नहीं होता पर मन की दौड़ इसी तरह विषमगति से चलती रहती है; कभी विमान की गति से तो कभी वीरबहूटी की गति से । पर ऐसा हुआ तो भी अंकगणित तो स्पष्ट है ना ! आस-पास की परिस्थितियाँ तो झूठ नहीं बोलती ! उस समय का और आज का जग कितना बदल गया है । "पुलायत्रस्त्रोत: पुलिन मधुमातम सरिताम्" ऐसा भवभूति के शब्दों में कहना पड़ेगा और भाईजी के अकोला के सन्दर्भ में कहना होगा कि "मोठी के पुल के नीचे से बहुत सारा पानी तब से बह चुका है ।" उस समय का जीवन, उस समय की सामाजिक अवस्था और राजकारण तथा उस समय के व्यवित व संस्था इनकी याद आई याने "कालाय तस्मैनम:" ऐसा कहना होगा ।

और भाईजी स्वयं ? उस समय के युवक, उत्साह से भरेपूरे, सदैव कार्यरत्, देश कार्य में लीन, हरदम व्याख्यान देते हुए, दौरे करते हुए, स्वास्थ्य या आराम की परवाह न करते हुए वैयक्तिक जीवन या कौटुम्बिक जीवन की ओर से निश्चिन्त भाईजी आज विकलाँग बन गए हैं । आज के भाईजी यानी मात्र ध्येय निष्ठा, केवल सद्विवेक बुद्धि को प्रामाणिक बने रहने के कारण राजकीय आयुष्य की

मटियामेट एक विरागी स्थितप्रज्ञ की दृष्टि और समत्व से देखनेवाला जीव केवल एक आत्मा (Spirit) है।

भाईजी जिस तरह मुझसे आयु में बड़े हैं वैसे ही तपस्या से और अधिकार से भी बहुत बड़े। उनके राजकारण के बारे में लिखने बोलने का मुझे अधिकार नहीं और छोटे मुँह बड़ी बात करने की यह धृष्ठता भी मैं नहीं करूँगी।

लेकिन इतना मैं कहूँगी कि भाईजी ने देश के इतिहास के अत्यन्त कष्टमय किन्तु दैदीप्यमान युग में अपनी आयुष्य-जीवन जीते हुए केवल प्रवाह पतित होकर नहीं जिया। देश के स्वतन्त्रता संग्राम में उन्होंने बड़े साहस एवं निर्भीकता से भाग लिया। हिन्दुस्तान के स्वतन्त्रता युद्ध का एक सैनिक कहकर ही नहीं तो एक छोटे-बड़े मोर्चे का सेनापति कहकर कल के इतिहासकार उनका उल्लेख करेंगे। भाईजी की कार्यतत्परता, कार्य-निष्ठा, लोक संग्राहक वृत्ति के गुणागुण के कारण वे प्रकृति से ही नेता बन गए थे।

बरार के वर्तमान राजकारण में चमकनेवाले सभी व्यक्ति एक समय उनके अन्तर्गत शिष्यत्व की विरुदावली गाने में अपनी धन्यता मानते थे; यही उनके महानता की साक्षी है ऐसा कहने में अतिशयोक्ति नहीं होगी।

किन्तु उनके जीवन के अनेक पहलू हैं। राजकारण की धमाचौकड़ी में धूम से काम करते हुए भी समाज की ओर उन्होंने दुर्लक्ष्य नहीं किया। उनका वाचन एवं अध्ययन इतना अधिक विस्तृत है कि ऐसा लगता था कि यह सैकड़ों मनुष्यों से घिरा हुआ गृहस्थ पढ़ता है तो भी कब ? उनके पास कभी भी जाएँ, उनकी मेज पर नई आई हुई पुस्तकें पड़ी हुई रहतीं हैं।

और इससे भी अधिक आश्चर्यजनक बात यानी भाईजी का किया हुआ लेखन। उनके जीवन में भी भाग-दौड़ की छाया उनके साहित्य में कहीं भी नहीं दीख पड़ती। उसमें उनके प्रतिदिन के जीवन की दिव्यता की चमक-दमक, व्याख्यानों की धमक तथा संघर्ष की धूप तिलमात्र भी नहीं दिखते। वहाँ सब कैसा शान्त सा दिखता है ? उनका साहित्य पढ़ते हुए नन्दा द्वीप के प्रशान्त प्रकाश में बैठकर चिन्तन कर रहे हृदय का निनाद हम आत्म सात कर रहे हैं ऐसा अनुभव होता है।

उसमें विचारों की तरलता और नवीनता एक विशेष तरह का साहसीपन—जीवन का गहन अवलोकन एवं चिन्तन दिखाई देते हैं। तार्किकता तो है पर भावना की आर्द्रता भी है ही। भाईजी की भाषा सरल, सहजगम्य व सुन्दर है। उपयुक्त अलंकारों का चयन बड़ी कुशलता एवं मार्मिकता से किया गया मिलता है। इस कारण से उनकी भाषा में जानबूझकर गहनों से लदी हुई या उसके बोझ से नीचे दबकर झुकी हुई गजगामिनी अलसाई हुई नारी नहीं, अपितु सिर्फ

चार किन्तु बढ़िया अलंकार पहने हुए चपल पदन्यास करते हुए जानेवाली सजवनिता प्रतीत होती है ।

और भाईजी का वक्तृत्व ! वह तो कुछ और ही होता था । वह समय अद्‌भुत था ! मुर्दों को जीवित करना था, बर्फीले ढेलों में चेतना की गर्माहट भरनी थी—शुष्क विचारकों को भावना-प्रधान बनाना था— निष्क्रिय को सक्रिय और तूफानी बनाना भी । उस समय की आवश्यकता को पूर्ण करनेवाले महान वक्ता भी उस समय निर्मित हुए । लोकमान्य तिलक जैसे ओजस्वी, महात्मा गांधी सरीखे सरल सतर्क, बापूजी अणे सरीखे तार्किक, खापर्डे बाप-बेटे जैसे विनोदी ऐसे अनेक वक्ता थे । किन्तु भाईजी उसमें भी चमक जाते थे । उनका विषय रखने का तरीका तर्क की अपेक्षा व्यवहार पर अधिक आधारित होता था । इस कारण सुननेवाले के दिल में सहज स्थान बन जाता था । भाषा सरल व प्रभावमयी, उपहासगर्भ विनोद से भरपूर और इसी में प्रसन्न व्यक्तित्व एवं मृदु उच्चारण तथा मधुर आवज़ का पुट । वे 'दोस्तों' अथवा 'मेरे प्यारे भाइयों' के सम्बोधन से जैसे ही शुरुआत करते श्रोता मंत्रमुग्ध हो उठते । युक्तिवाद, दृष्टान्त, उदाहरण, अलंकार एक के बाद एक रत्नों की तरह झड़ते । बुद्धिवादी के लिए शुद्ध तर्कवाद, सामान्य श्रोता के लिए छोटे-छोटे दृष्टान्त व उदाहरण तथा रसिकों को अलंकार एवं सभी के लिए भावना का आवाहन ऐसी खरी-खरी पंचपक्वानों की मानों मेज़बानी हो जाती थी ।

ऐसे एक या दो ही नहीं, उनके व्यक्तित्व के अनेक पहलू आँखों के सामने आज आ जाते हैं । उनका जीवन यानी एक विशाल, बहुरंगी चल-चित्रपट है । उनके दर्शन से मेरे मानस पर विविध विचारों की तरंगें व भंगुर भाव बुद्‌बुद् उद्‌भूत होते हैं और उनसे एक सौम्य-सी उथल-पुथल मच जाती है ।

एक छोटे-से देहात के ग़रीब परिवार में जन्म लेनेवाले मनुष्य का यह खरा इतिहास है । बुद्धिमत्ता व ध्येयवाद, कष्ट व दृढ़ता के बल पर मनुष्य क्या कर सकता है इसकी एक सच्ची कहानी उस 'महान एकमेव अद्वितीय' दिग्दर्शक ने चित्रित की है जिसे देखकर मानव-मन भर उठता है ।

इस मनःस्थिति में उस जगत्सूत्रधार के समक्ष नतमस्तक होकर 'भाईजी को दीर्घ आयुरारोग्य प्राप्त हों' ऐसी विनम्र प्रार्थना करती हूँ । ★

भाईजी का स्वभाव

लेखक
कमलनयन बजाज—बम्बई
(सदस्य, लोकसभा; उद्योगपति एवं सामाजिक कार्यकर्ता।)

श्री ब्रजलाल बियाणी सामान्य तौर से देश और जनता में बियाणीजी के नाम से तथा साथियों और कार्यकर्ताओं में "भाईजी" के नाम से पहिचाने जाते हैं। भाईजी को मैं बचपन से करीब ४० साल से देखता आया हूँ। मिलना-जुलना काफ़ी रहा। सभा-समितियों में और व्यक्तिगत चर्चाएँ भी उनसे समय-समय पर होती रही हैं और वर्धा में भी वे हमारे यहाँ काफ़ी आते-जाते रहे। पूज्य काकाजी और माताजी की वजह से और भाईजी और भाभीजी के कारण करीब पारिवारिक जैसा ही सम्बन्ध उनसे हो गया था। लेकिन फिर भी कभी यह सद्भाग्य मुझको नहीं मिला कि उनके साथ नज़दीक से सम्पर्क में आया होऊँ।

करीब ३०-३५ साल पहिले "विचित्र संयोग या मधुर-मिलन" शीर्षक से मैंने कुछ घटनाएँ लिखी थीं जिनमें जिस साल बापूजी का जन्म हुआ था उसी वर्ष यरवदा जेल की नींव डाली गई थी और जिस समय श्री महादेवभाई का जन्म हुआ था उसी वर्ष साबरमती जेल की नींव डाली गई थी—इस तरह की कुछ घटनाएँ उसमें लिखी थीं। वह जिस पत्र में छपा था उसमें से लेकर भाईजी अकोला से एक पत्र निकालते थे उसमें उन्होंने उसे उद्धृत किया था। भाईजी ने उसको पसन्द करते हुए एक मिठास से भरा हुआ सराहना-सा पत्र उस समय मुझे लिखा था। इतना ही नहीं उसके बाद जब मुझे मिले तो मुझे प्रोत्साहित किया और आग्रह करके कहा कि तुम अच्छा लिख सकते हो, तुम्हें लिखते रहना चाहिए। उस समय की इस छोटी-सी बात ने मेरे ऊपर जो कुछ संस्कार डाला वह स्वाभाविक था। पर कुछ ही वर्ष पूर्व किसी सन्दर्भ में मुझे जब लिखने के लिए कहा गया तो मेरे स्वभाव के अनुसार मैं उससे बचना चाहता था, क्योंकि लिखना मुझे एक झंझट-सा मालूम देता रहा है और उसके लिए मुझे आलस्य भी रहता है। भाईजी ने तुरन्त कहा कि तुम लिख सकते हो और तुम्हें लिखना चाहिए और मैंने जब टालमटोल

करने के वास्ते कुछ कहा तो उन्होंने झट उस पुरानी बात को याद दिलाते हुए पूरे भरोसे के साथ कहा कि तुम अच्छा लिख सकते हो।

भाईजी के स्वभाव की यह बारीक खूबियाँ हैं। अपने साथी, सहयोगी, मित्र वर्ग और जो भी कोई उनके सम्पर्क में आते हैं उनके जीवन में उतरते हैं, उसमें पूरा रस लेते हैं। अपनी ममता, प्रेम और सलूकात से उसको अपना बनाते हैं और स्वयं उसके बन जाते हैं। हरेक को यही लगता है कि भाईजी मेरे हैं और उन्होंने मुझसे यह कहा है कि जहाँ तक सम्भव हो सके उनके आग्रह को कोई टाल नहीं सकता। वे बुद्धिमान हैं, चतुर हैं और हैं मधुर भाषी। वे अच्छे वक्ता हैं। सभा-समितियों में बात करने में वे पटु हैं। जो कुछ वे कहते हैं और हैं बड़े ढंग से कहते हैं। बोलने का उनका तरीक़ा बड़ा असरदार होता है। पुराने मध्य प्रदेश में और ख़ासतौर पर विदर्भ में स्वतन्त्रता के पूर्व कांग्रेस और राजनैतिक क्षेत्र में वर्षों ही उन्होंने नेतृत्व किया। समाज सुधार पत्रकारिता और साहित्य सेवा भी उन्होंने काफ़ी की। इन सभी क्षेत्रों में उन्होंने अपना प्रभाव और असर डाला।

भाईजी को खाने-पहिनने का हमेशा शौक रहा है। देश में इने-गिने खादी पहनने वालों में एक रहे हैं। सभा-सम्मेलन, समितियाँ, संस्थाएँ करने-कराने का उन्हें शौक-सा ही है। उसकी योजना और व्यवस्था करने में वे सिद्धहस्त हैं।

स्वभाव उनका मिलनसार है। सैकड़ों हज़ारों कार्यकर्ता, साथी-सम्बन्धी और मित्र वर्ग के साथ उनका व्यक्तिगत सम्बन्ध रहा है। उनके नाम और विशेषताएँ तो वे जानते ही हैं, लेकिन परिवारों की भी जानकारी वे रखते रहे हैं। अपने कार्यकर्ताओं और साथियों की तकलीफ में जो कुछ उनसे करते बना किया और दोस्तों से करवाया। उनकी याददाश्त काफ़ी अच्छी है। पुरानी बातों को वे सहसा भूलते नहीं। इन्हीं सब कारणों से वे लोगों को अपनी तरफ आकर्षित करते थे। तबियत के शौकीन होने की वजह से हर चीज़ को अच्छी तरह करना चाहते। अपने साथी संगियों का जहाँ भी जाते बराबर खयाल रखते। किसी बात की कमी रह जाय तो वह उन्हें खटकती थी। इन्हीं सब सेवाओं के उपलक्ष और उनकी लोकप्रियता के बदले "विदर्भ-केसरी" वे कहलाने लगे। आज़ादी के बाद वे मध्य प्रदेश सरकार और बाद में बम्बई सरकार के मन्त्रिमण्डलों में रहे।

भाषावार प्रान्त रचनाओं के बाद जो क्षेत्रीय और जातीय भावनाएँ उमड़ पड़ीं उससे उनका व्यक्तित्व टकराया। कांग्रेस से वे अलग हुए, विदर्भ आन्दोलन का नेतृत्व उन्होंने किया और जेल गए। स्वास्थ्य उनका बिगड़ा। विदर्भ आन्दोलन में भी अपेक्षित सहयोग और यश उन्हें नहीं मिल पाया। इसका भी परिणाम

उनके मन और शरीर दोनों पर ही पड़ा। लेकिन अब भी उनकी लगन, उमंग और उत्साह टूटा नहीं है। जहाँ कहीं भी रहें, उनसे जो होता है वे करते ही रहते हैं।

भाईजी के राजकीय जीवन में उनका चातुर्य कभी-कभी अति की सीमा तक पहुँच जाता था। यहाँ तक कि अपने साथी और सम्बन्धियों पर उन्हें शक हो गया। जो स्वयं चतुर होते हैं उन्हें दूसरों की सरलता, सचाई और वफ़ादारी में कई बार शक होने लगता है। राजनीति और राजकाज में बिना कूटनीति और चतुराई के हमेशा सफलता नहीं मिलती ऐसा माननेवालों में शायद भाईजी भी रहे हैं। इस-लिए ही इन्हीं शंकाओं की वजह से आपस के निजी सम्बन्धों में भी अविश्वास पैदा हुआ। ऐसे साथी-संगी और मित्र जिनका हमेशा साथ रहा, जो उनके प्रशंसक और अनुयायी रहे, उनको भी भाईजी के इस तरह के व्यवहार से कई बार चोट पहुँची और उसका दुःख उन्हें बना रहा। कई साथियों से तो इतना व्यक्तिगत और आत्मीय सम्बन्ध भाईजी का था कि उसमें कभी पराया भाव पैदा हो सकता है इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। ऐसे साथी, संगियों, प्रशंसकों और अनुयायियों से जिनमें उनके बचपन के लंगोटीयार भी शामिल हैं, ऐसी ही कुछ कमी की वजह से उनका संग छूटा और विमुखता बढ़ी। जीवन के उत्तरार्द्ध में यह सबसे बड़ी चोट है और असफलता का प्रबल कारण। अनेक गुणों के होते हुए भी कभी-कभी कोई दोष इस तरह से असर करते हैं कि जैसे घड़े भर दूध में ज़हर की एक बूँद। इस तरह की कमी एक तरफ से ही रहती हो यह ज़रूरी नहीं, दूसरी तरफ भी कुछ और तरह की कमियाँ होने की वजह से भी इस तरह के नाते में कुछ खटका पैदा होता है। यद्यपि ये कारण दोनों तरफ से ही क्यों न हों लेकिन उसका अधिकतर ज़िम्मा उसी पर आकर पड़ता है जिसका नेतृत्व दूसरों का जीवन ढाल सकता है, उसे बना सकता है, अपना असर उन पर छोड़ता है और उनकी कमियों को या तो पनपने नहीं देता, या उनको मर्यादा के भीतर ही रखकर ज़रूरत पड़ने पर उन्हें सहन भी करता है और उससे बुरा प्रभाव पड़ने नहीं देता। इतनी अपेक्षा अपने अनुयायी के प्रति सामान्य तौर से मान ली जाती है। कुछ हद तक तो दोनों तरफ से ही गुण-दोषों को सहन करना पड़ता है। जब किसी के ऐसे दोष मर्यादा के बाहर जाने लगते हैं और मित्रों और साथियों के दबाव और प्रभाव से रुकते नहीं तभी उनके परिणाम और लक्षण बुरे होने लगते हैं। भाईजी यदि दूसरे क्षेत्रों में भी जैसा चाहिए वैसे सफल नहीं रह सके और उन्हें कुछ निराशा हुई है तो उसका भी मुख्य कारण मेरी समझ से ऐसी ही कुछ कमियों की वजह से हुआ है, बनिस्बत कि अन्य कई बड़े-बड़े कारण जो कि दिए जाते हैं।

कुछ वर्षों से भाईजी से मिलना नहीं हो सका। वे दीर्घायु हों और स्वस्थ रहें यह मेरी कामना है। समाज और देश को अब भी उनसे बहुत कुछ मिल सकता है। ★

बियाणीजी एवं उनका साहित्य

लेखक
श्रीलालजी दम्माणी—बीकानेर
(पत्रकार एवं साहित्यिक।)

श्री ब्रजलालजी बियाणी के साहित्य को पढ़ने का अवसर भगवान् की दया से मुझे मिल जाता है। श्री बियाणीजी का साहित्य मुझे इतना अच्छा लगता है कि मैं उसे पढ़ने के बाद उसका राजस्थानी में अनुवाद कर स्थानीय पत्रों में छपाने का लोभ संवरण नहीं कर पाता।

श्री बियाणीजी के साहित्य में मुझे सबसे बड़ी विशेषता यह दिखाई देती है कि वे जो भी बात लिखते हैं उसमें वातावरण, देशकाल और भाषाशैली की अनुकूलता सर्वत्र मिलती है। स्वतन्त्रता संग्राम के समय में आपके लेख देश के नवयुवकों को देशप्रेम और स्वाधीनता हेतु बलिदान के लिए अग्रसर करते थे। स्वतन्त्रता के उपरान्त निम्नलिखित विषयों—बेकारी, ग़रीबी और भ्रष्टाचार पर लिखी गई कहानियाँ और लेखों के माध्यम से आप इतना श्रेष्ठ चित्रण प्रस्तुत करते हैं जिससे यह स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि लेखक का दिल और दिमाग कितना सजग है, वह लिखने और समझाने के तरीके को कितनी बारीकी से जानता है।

आपकी भाषा और शैली पात्रानुकूल होती है। जैसा पात्र वैसी भाषा और वातावरण का निर्माण करने में आप पूर्ण ध्यान रखते हैं। भाषा शैली का सुन्दर ज्ञान और नियन्त्रण आपको शब्दों के जाल में नहीं उलझा पाता। सुशिक्षित और अल्पशिक्षित भी सरलता से समझ जाता है कि लेखक के मन में क्या बात है? आप नियन्त्रित शब्दों में बड़ी मार्मिकता से अपनी बात को लिख जाते हैं जिसका पूर्ण असर पाठक पर होता है और आलोचकों को आलोचना का अवसर भी नहीं मिल पाता।

इस प्रकार की साहित्य रचना इस बात का प्रमाण है कि आप परिपक्व विचार के साथ-साथ सामयिक बात लिखते हैं। आपकी रचनाओं में जीवन की अनुभूतियाँ हैं जिसकी आज के समाज और देश को अत्यधिक आवश्यकता है। इसका परिणाम

है कि बियाणीजी ने थोड़ा या ज्यादा जो भी लिखा है वह समाज और देश में आदर की दृष्टि से देखा जाता है।

एक सफल लेखक होने का इससे बड़ा क्या प्रमाण हो सकता है कि आपके साहित्य की देश और समाज के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। ★

बियाणीजी : एक अभिजात नेता

लेखक
विश्वनाथ सारस्वत—यवतमाल
(सम्पादक, 'लोकसेवक'-यवतमाल; कांग्रेस तथा विदर्भ आन्दोलन के कार्यकर्ता; साहित्यिक एवं लेखक ।)

माननीय लोक नेता विदर्भ-केसरी ब्रजलालजी बियाणी और मेरी आयु में बहुत ज़्यादा अन्तर नहीं है, समवयस्क कहें तो भी चलेगा। परन्तु उनका इकहत्तरवीं वर्षगाँठका समारम्भ देखने को मिलता है. और उस निमित्त उनके जीवन- विषयक ग्रन्थ देख पाने की, उसमें छोटा-सा पुष्प समाविष्ट करने की और इच्छा है । इकहत्तरवीं वर्षगाँठ में सहभागी होने का अवसर मुझे मिल रहा है इसे मैं अपना अहोभाग्य मानता हूँ ।

बियाणीजी एक अभिजात नेता हैं । पूर्व कर्मों से जो नेतृत्व का सौभाग्य साथ लेकर जन्मता है उसके पदचिह्न बाल्यावस्था से ही दिखने लगते हैं । एकदम बचपन से न भी सही तो उनके विद्यार्थी जीवन से लेकर अब तक की कथा मुझे मालूम है । मैं भाईजी से सन् १९१४ से परिचित हूँ । उस समय वे हाई स्कूल में पढ़ा करते थे। उस समय के उनके सहपाठी उन्हें श्रद्धा से देखते थे और वैसे सभी के बियाणीजी मार्गदर्शक भी थे । यही उनके नेतृत्व के पहले कदम थे, कहने में हरकत नहीं । बियाणीजी नागपुर महाविद्यालय में जब अध्ययन करने गए तब मारवाड़ी विद्यार्थी गृह के छात्रों के वे नेता माने जाते थे । बियाणीजी से जो विद्यार्थी ज्येष्ठ थे वे भी उनसे आदरपूर्वक व्यवहार करते थे । जब आयु की वरिष्ठता पीछे सरकने लगती है और कर्तव्यशक्ति को जब ज्येष्ठ लोग मान देने लगते हैं तब नए नेतृत्व दृक् प्रत्यय होने लगता है । इस प्रकार का सुखद अनुभव बियाणीजी को कॉलेज में शिक्षा ग्रहण करते हुए मिला ।

उस समय सर्वप्रथम बियाणीजी नें मारवाड़ी भाषा में लेख लिखना आरम्भ किया तथा समाज में उनके लेखों को प्रतिष्ठा प्राप्त होने लगी । मारवाड़ी समाज में नवोदित लेखक के रूप में उनके लिए प्रेमादर तबसे ही बढ़ता गया । ब्रजलालजी से

जो विद्यार्थी छोटे थे उन्हें भी योग्य दीक्षा देने में भी वे सतत प्रयत्नशील रहा करते। इसी कारण नए आए हुए विद्यार्थी अपने आप 'भाईजी' को अपना ज्येष्ठ भ्राता मानने लगे इसमें क्या आश्चर्य ?

मैं १६१६ से १६२० की कालावधि में स्व. श्री जमनालालजी बजाज का निजी सचिव था और उस निमित्त से वर्धा रहा करता था। सप्ताह में दो दिन यवतमाल आ जाया करता तबसे ही बियाणीजी के विशाल जनसम्पर्क की मधुर अनुभूति मुझे बार-बार हुआ करती। और उनसे मेरा जुड़ा हुआ ऋणानुबन्ध निरन्तर बढ़ता ही गया जो आज भी बढ़ते हुए—वृद्धिगत होकर मेरे हृदय के चिरन्तन स्वरूप में संचित है।

प्रथम सन् १६२३ में भाईजी वाणिज्य मतदाता संघ की ओर से मध्य प्रदेश विधान परिषद् में निर्वाचित हुए। इसे उनकी राजनीति प्रवेश का श्रीगणेश कहना होगा और तत्पश्चात् वे लगे हाथ कांग्रेस कार्यकर्ता बने और कांग्रेस नेतृत्व की धुरी धीरे-धीरे उनकी ओर चलकर आने लगी। महात्माजी न जिस समय सत्या-ग्रह संग्राम का संकल्प घोषित किया और इतिहास प्रसिद्ध दाण्डीयात्रा की उस समय विदर्भ में गांधीजी के क़दमों पर क़दम रखकर सत्याग्रह का संग्राम प्रारम्भ करने में बियाणीजी ने जीजान एक कर दी। सभी छोटे-बड़े कार्यकर्ताओं को कांग्रेस के छत्र के नीचे एकत्रित किया तथा लोकनायक बापूजी अणे द्वारा आरम्भ किए हुए जंगल सत्याग्रह में तो बियाणीजी ने अपने नेतृत्व की खरी कसौटी दिखा दी। इस सत्याग्रह को सफल करने में बियाणीजी विदर्भ के अग्रदूत बने। उन्होंने सैकड़ों सत्याग्रही निर्माण किए और खुद ने भी सत्याग्रह के वीर सेनानी के रूप में जेल का रास्ता पकड़ा।

सन् १६३० के सत्याग्रह पर जो कथा लिखी सो तो ठीक किन्तु थोड़े से पीछे जाकर मैं पाठकों को यह स्मरण दिलाना चाहता हूँ कि लोकमान्य तिलक सन् १६२० में जब दिवंगत हुए उनकी अंतिम यात्रा में बम्बई में गांधीजी उपस्थित थे। एक समय लोकमान्य तिलक ने गांधीजी के भावी नेतृत्व का भविष्य अपनी वाणी से घोषित किया था। फिर भी जब तिलक अस्त हुए गांधी का उदय हुआ। दोनों के कार्यप्रणाली में की भिन्नता भारत को एकाएक ग्रहण कर पाना आसान नहीं थी। जो लोकमान्य के तत्कालीन सहकारी व अनुयायी थे उन्हें महात्माजी का असहकारिता का नया कार्यक्रम अरुचिकर प्रतीत हुआ; उनमें से कई ने तो ज़ाहिर कार्यक्रमों में कठोर आलोचना करना शुरू कर दी। स्वातन्त्र्यनिष्ठ देशभक्तों में मतभेद फैलने लगा तथा महात्मा गांधी के कार्यक्रम पर निष्ठापूर्वक काम करने

वाले नेतृत्व की बहुत बड़ी दुविधा निर्माण हो गई। और ठीक उसी समय ब्रज-लालजी का तब नेतृत्व विदर्भ में नए तेज से दीप्त होने लगा। पुराने नेताओं में मतभेद हो गया। गांधीजी जैसे शान्त-प्रशान्त युगपुरुष का राजनीति के क्षितिज पर चन्द्रोदय हुआ। पुराने तेजस्वी नक्षत्र धीरे-धीरे लुप्त होने लगे और गांधीजी के राजकारण को जनसाधारण का बनाने के लिए नए लोग अपने आप बढ़ने लगे। सन् १९२० से १९३० के उस काल में बियाणीजी ने सारा विदर्भ अनुप्राणित कर दिया वह काल एक अर्थ में नाज़ुक ही था। पुरानी परिपाटी से देशभक्त और वक्ता, ज्येष्ठ-श्रेष्ठ नेता गांधीजी के राजकारण का विरोध करने के लिए कमर कसकर आगे आए थे। सारे मध्यम वर्गीय ब्राह्मण समाज में से होने के कारण कलहखोर अंग्रेजों की कूटनीति के अनुसार महाराष्ट्र में ब्राह्मण ब्राह्मणोत्तर विवाद चोटी पर पहुँच गया। यह राष्ट्रीय वृत्ति के देशभक्तों के विरुद्ध अंग्रेजों का मचाया हुआ संघर्ष था। स्वतन्त्रता के तेजस्वी राजकारण में बाधा पहुँचाने के लिए ब्रिटिश राज्यकर्ताओं ने यह कुटिल दाव खेला था। ब्रिटिश सत्ता के विरोध में उस समय तक जो जन जागृति हुई उसकी परिणिति निद्रा में करनी थी। स्वतन्त्रता के लिए जलते हुए हृदय अधिक कैसे भड़कें यह चिन्ता थी और ऐसे समय में भारत के राष्ट्रीय जीवन का मतभेद अंग्रेजी सत्ता की लोलुपता का भक्ष्य हो जावेगा ऐसा भय लग रहा था। 'असहकारिता की नीति और उसके प्रणेताओं का खुले आम विरोध किया जाए' के लिए बड़े-बड़े देशभक्त ताल ठोंक कर खड़े थे। और इसीलिए मेरे द्वारा ऊपर कहे अनुसार बियाणीजी के समक्ष एक बड़ा प्रश्नचिह्न था। अन्तःकरण में प्रखर द्वन्द्व चल रहा था, पुराना नेतृत्व जो विरोध के लिए सन्नद्ध था उसका शनैः शनैः विरोध भी करता था। गांधीजी के राजकारण का रथ आगे खींचना था, विदर्भ में भड़की हुई जातीयता की आग शान्त करनी थी। सारी जनता को स्वतन्त्रता की ओर उन्मुख बनाकर उसे गांधीजी के पीछे निष्ठापूर्वक लाकर खड़ी करना था। पर यह गुरुतर कार्य बियाणीजी ने साहस के साथ किया और न केवल उसे भव्य प्रमाण में अन्तिम सिद्धी तक पहुँचा दिया, वरन् सारा विदर्भ कांग्रेस मय हो उठा, गाँव-गाँव में कांग्रेस पहुँची। 'झण्डा ऊँचा रहे हमारा' का गीत हर गाँव देहात में गाया जाने लगा। इस प्रभावपूर्ण प्रचार का परिणाम ही कुछ ऐसा हुआ कि १९३० के सत्याग्रह संग्राम में सारा विदर्भ सहभागी हो गया। गांधीजी की शान्तिमय क्रान्ति यशस्वी करने में सारा विदर्भ अग्रसर साबित हुआ। लोकनायक (बापूजी अणे) सरीखे नेता जो तिलक के पट्टशिष्य के रूप में विख्यात थे वे और गांधीजी के एकनिष्ठ अनुयायी कन्धे से कन्धा भिड़ाकर सत्याग्रह का

युद्धनाद फूँकने लगे । और जब उस संघर्ष में बापूजी और भाईजी स्पर्धा से काम करने लगे तब ब्रिटिश राजसत्ता के विदर्भ से खेमे उखड़ने लगे ।

सत्ताप्रणीत जातिद्वेष का भस्मासुर भस्म हो गया । और उसके बाद के विधान परिषदीय चुनावों में राष्ट्रीय दल की विजय होती गई तथा अलग-अलग बहानों से खड़े हुए विदेशी सत्ता के 'छुपे रुस्तम' विदर्भ में कभी भी विजयी नहीं हो सके ।

इस चुनाव में बियाणीजी स्वयं तो बारबार विजयी हुए ही पर विदर्भ के ग़रीब-से-ग़रीब कार्यकर्ताओं को चुनाव के लिए खड़ाकर खुद के खर्चे से भाईजी उन्हें जिता कर लाए । सत्ता की राजनीति में भी भाईजी मध्य प्रदेश के अर्थमन्त्री पद तक पहुँचे । बाहर के क्षेत्रों में भाईजी ने 'उत्तम संगठक' के रूप में जैसी प्रसिद्धि पाई वैसे ही वे आन्तरिक राज्य कार्य में 'उत्तम प्रशासक' के रूप में नामांकित हुए । उनकी कार्य कुशलता से स्व. पंडित रविशंकर शुक्ल भी बहुत प्रसन्न हुए । विदर्भ और मध्य प्रदेश में जो मतभेदों की घटाएँ यदाकदा उमड़ पड़तीं, परस्पर आशंका निर्माण हो जाया करती इस संशयमूलक वातावरण से दोनों ही नेता परे रह सके तथा एक दूसरे के विश्वासपात्र तथा स्नेही बन सके । इसका प्रमुख कारण बियाणीजी के नेतृत्व की कुशलता है । यही वह इन्दौर नगर है, जहाँ मुख्यमंत्री पंडित रविशंकर शुक्ल भाईजी के आमन्त्रण पर आए और जिस तरह का भव्य स्वागत शुक्लजी का हुआ उसका श्रेय बियाणीजी को ही था ।

भाईजी का सुतीक्ष्ण वैसा ही मधुर वक्तृत्व विदर्भ में ही नहीं गूँजा, उसकी ख्याति सारे हिन्दी भाषी प्रदेशों में फैली । भाईजी मात्र विदर्भ के ही नेता नहीं रहे, अपितु भारतवर्ष के अनेक प्रान्तों के नेता भाईजी के नेतृत्व का आदरपूर्वक सम्मान करने लगे । इसका एक प्रभावपूर्ण उदाहरण यह है कि राजस्थान कांग्रेस के नेता श्री जयनारायण व्यास जो दो बार आम चुनावों में हार चुके थे पर तीसरी बार जब उनके चुनाव के लिए भाईजी राजस्थान गए और अपने प्रभावी वक्तृत्व से राजस्थानी जनता को मन्त्रमुग्ध करने लगे तब वे प्रचण्ड बहुमत से चुनकर आए ।

भाईजी के राजकीय जीवन के एक मौलिक प्रसंग का उल्लेख किए बिना नहीं रहा जाता । सन् १९४२ में महात्मा गांधी ने युद्ध विरोधी संग्राम सत्याग्रह—'करो या मरो'—का समरनाद दिया था । जीवनमरण का स्वतन्त्रता संग्राम शुरू हो गया था । गांधीजी ने पहले सत्याग्रही के रूप में पू. विनोबाजी, दूसरे भारत के हृदय सम्राट स्व. पं. नेहरूजी को चुना और महात्माजी ने तीसरे सत्याग्रही होने

का सम्मान श्री बियाणीजी को दिया अर्थात् भाईजी का यह सम्मान उनके द्वारा की गई सेवाओं का सम्मान था, साथ ही विदर्भ को गौरवमण्डित करनेवाली यह भाग्यशाली घटना थी।

राजकारण में यशस्वी नेतृत्व का यह आविष्कार गांधीजी की छत्रछाया के नीचे ही शुरू हुआ था, इसलिए बियाणीजी गांधीजी के चहेते कार्यकर्ता के रूप में माने गए, यह स्वाभाविक ही था। बियाणीजी के निजी जीवन में भी ये सौभाग्ययोग प्राप्त हुआ कि गांधीजी के प्रेमिल मध्यानुबन्ध के कारण बिरलाजी के सुपुत्र के साथ भाईजी की सुपुत्री सरलादेवी का विवाह निश्चित हुआ, और इस मंगल विवाह का कुंकुमतिलक गांधीजी के करकमलों से सेवाग्राम में ही सम्पन्न हुआ। भारत के एक जगप्रसिद्ध कुनबे से भाईजी का नाता जुड़ा और वह विवाह प्रसंग अकोला में जिस राजवैभव के ठाठ-बाठ से सम्पन्न हुआ उसका स्मरण उस समय के लोग कभी भुला नहीं सकेंगे। भाईजी के जीवन के ऐसे अनेक निजी प्रसंग है पर उनके वर्णन करने का मोह संवरण कर उनके सामाजिक क्षेत्र के दो सेवा कार्यों का उल्लेख कर यह लेख पूरा करूँगा।

भाईजी ने मारवाड़ी समाज में से पर्दा पद्धति नष्ट करने के लिए क्रान्तिकारी क़दम उठाया। राजकीय नेतृत्व करने वाले के द्वारा समाज की रूढ़ परम्परा पर आघात किए जाने से राजकीय नेतृत्व को ग्रहण लगने का भय होता है—उसका भय न रखते हुए भाईजी ने पर्दाप्रथा के विरुद्ध शस्त्र चढ़ाए। कई मारवाड़ी सम्मेलन आयोजित किए। मराठवाडा, मध्य भारत, राजस्थान, बम्बई, कलकत्ता आदि स्थानों पर पुरानी पद्धति के विरुद्ध प्रभावी प्रचार किया। इसलिए परम्परागत समाज ने उनका बहिष्कार किया। लेकिन उन्होंने ज़रा भी मुलाहिज़ा नहीं रखा और आखिरकार पर्दाप्रथा बन्द हुई। मारवाड़ी महिलाएँ नए काल के अनुरूप व्यवहार करने लगीं, और सामाजिक क्रान्ति के प्रेणता के रूप में भी भाईजी के नेतृत्व का सम्पूर्ण मारवाड़ी समाज में अखिल भारतीय स्तर पर उत्कर्ष हुआ। इस तरह के सामाजिक आन्दोलन के साथ ही उन्होंने हिन्दी भाषा की बहुत बड़ी सेवा की। आज हिन्दी भाषा का हो रहा प्रचार और जो हर ओर और हर जगह दिखाई देता है इसका श्रेय विदर्भ - मध्य प्रान्त में भाईजी को ही है। विदर्भ में तथा मध्य प्रदेश में अनेक हिन्दी शिक्षण संस्था और समाचारपत्र निकले, वे सब भाईजी की सन्तान माने जावेंगे। हिन्दी की इस बढ़ती हुई प्रगति के जनक बियाणीजी ही हैं। नागपुर में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का मोर भवन भाईजी के प्रयत्नों का सुफल है। उन्होंने अनेक संस्थाएँ स्थापित कीं और योग्य पुरुषों को

सौंपी और हिन्दी राष्ट्रभाषा की कीर्ति पहले से ही बढ़ाने का महान कार्य भाईजी ने पिछले पच्चीस - तीस वर्ष पूर्व से ही यशस्वी करने के कारण अ. भा. हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अध्यक्ष पद विभूषित करने का सुअवसर उन्हें प्राप्त हुआ, जो कि उनके हिन्दी निष्ठा का साक्षात् फल था ।

इस तरह ब्रजलालजी के जीवन के अनेक पहलुओं का वर्णन किया जा सकता है । पर अपनी स्थल-मर्यादा को ध्यान में रखकर मुझे यह मोह संवरण करना होता है और इसीलिए अधिक न लिखते हुए मेरे इस पूर्वऋणानुबन्धी नेता को, स्नेही और विद्वान साहित्यिक को दीर्घायुरोग्य कामना से यह लेख पूरा करता हूँ ।

"जेल में"—नवीन शैली के काव्यमय सम्भाषण

लेखक
प्रोफेसर रामचरण महेन्द्र एम० ए०
(साहित्यिक एवं लेखक ।)

हिन्दी साहित्य में सम्भाषण (Dialogue) कला अभी प्रारम्भिक अवस्था में ही है । योरप में सुकरात के संवाद और हमारे यहाँ यम-यमी आदि के कथोपकथन इसकी प्राचीनता के साक्षी है । हमारे अनेक उपन्यासों के अंश ऐसे सजीव हैं कि उनके नाटकोचित उतार-चढ़ाव बहुत सुन्दर हो गए हैं । हास्यरस के आचार्य पण्डित हरिशंकर शर्मा ने "चिड़ियाघर" में बड़े सुन्दर और सजीव संवाद लिखे हैं । बाल्य शिक्षा में प्रहसन तथा सम्भाषणों का महत्त्व वृद्धि पर है ।

श्री ब्रजलाल बियाणी के दो संवाद "जेल में" शीर्षक से पुस्तकाकार प्रकाशित हुए हैं । ये उनकी विचारात्मक मनन गम्भीर शैली के प्रतीक हैं । विवाद गम्भीर हैं और मनोवैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक गहराइयों में उतर आते हैं ।

इन संवादों में वर्णित घटनाएँ कल्पना-जनित व्योम विहारिणी वस्तुएँ नहीं, प्रत्युत तीन वर्ष के सुदीर्घ कारावास के द्वारा अनुभव जन्य हैं । लेखक स्वयं जेल जीवन की कठिनाइयों को देखकर अनुभव कर चुके हैं । भूमिका में आपने लिखा है:—

"मेरे अपने जीवन में स्मृतियों की स्मृति है । तीन वर्ष के लम्बे कारावास की आज भी याद है । उनकी कठिनाइयों का आज भी स्मरण है । जेल जीवन कृति का बन्धन है तो विचारों के श्रोत का सहायक भी । विपत्तियाँ, संघर्ष, समर, त्याग युद्ध आदि मार्गों से ही जीवन विकसित होता है अर्थात् यदि कठिनाइयों को जीवन प्रगति का साधन बना लिया जाय; पर जीवन विनष्ट हो जाता है, दब जाता है यदि संकटों को जीवन भार समझ लिया जाय । कर्ता की मनोवृत्ति से कृति का असर सम्बन्ध रखता है ।"

बन्दीगृह में से लाए हुए दो संवाद बड़े कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किए गए हैं । अर्पण करनेवाले की भावना पवित्र है । उसकी कला की सफलता का एक कारण

भावना की यह पवित्रता भी है। "इस पवित्रता में ही मेरे लिए सौन्दर्य है, जीवन की कला है और है जीवन का सत्य।"

प्रथम संवाद "विवेक या निर्बलता" का विलय जेल में बन्दियों के ऊपर होने वाले अन्यायों का विवेचन है। निरन्जन एक विचारशील नवयुवक है। जेल में जो अमानुषिक अत्याचार, भीषण यातनाएँ दी जाती हैं, उनसे वह व्यथित है। वह उत्तेजित होता है, दुःख से उसका हृदय भरा पूरा है। विचार विभिन्नता के संघर्ष से व्यथित निरन्जन और भावना की दाह से दग्ध चन्द्रकान्त दोनों व्यक्ति बैठ जाते हैं, और यह सोचते हैं कि जेल में क़ैदियों को पीटा जाता है, या उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है, उस विषय में उनका क्या विचार है। चन्द्रकान्त इसे अनुचित बताता है और इसका अन्त करना चाहता है। निरन्जन सिद्धान्तों में विश्वास रखनेवाला है। उसे मानव समाज में अनेक अन्याय मिलते हैं। आँख उठाकर वह जहाँ देखता है, वहीं किसी न किसी रूप में अन्याय उसकी ओर झाँकता दीखता है। किन्तु मानव की शक्ति परिमित है, इसलिए उसे यह अन्याय भुगतना ही पड़ता है। वह जेलखानों में सुधार चाहता है। इतना ही नहीं, वह हृदय से उनका विनाश चाहता है। भारत के बन्दीगृह नर्कालय हैं। उनमें सुधार का कार्य होना चाहिए; अंग्रेज हिन्दुस्तानी का भेद न किया जाए, जेल में क़ैदियों से मनुष्यता का व्यवहार हो।

निरंजन न्याय के ऊपर बहस करता-करता बहुत गहरा उतर जाता है। अन्याय का प्रतिकार और निवारण अपने विविध रूपों की लघुता और गुरुता के साथ विवाद सागर में मथा जाता है। निरन्जन अन्यायों को तीन विभागों में विभक्त करता है—क्रोधमय शाब्दिक प्रतिकार, नैतिक प्रतिकार और तीसरा अपनी शक्ति का प्रयोग। इन तीनों का परिणाम और कर्ता की मानसिक अवस्था का भी दिग्दर्शन करा दिया जाता है। अन्त में निरन्जन नैतिक प्रतिकार के मार्ग का अवलम्बन करने की सोचता है। वह जेलर साहब की मनुष्यता, न्यायप्रियता और दया की भावना को जागृत करने का प्रयत्न करने की प्रतिज्ञा करता है। चन्द्रकान्त की अनेक जेल-सम्बन्धी शंकाओं का समाधान हो जाता है। उसमें व्यथा की अपेक्षा विचार मग्नता का अधिक प्रभाव पड़ता है। उसे एक नवीन दृष्टि मिलती है।

इस संवाद में जेल जीवन, परिस्थितियों, क़ैदियों की मजबूरियों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। वातावरण की सृष्टि में श्री बियाणीजी ने पर्याप्त कुशलता और बारीकी प्रदर्शित की है। उनका अनुतीक्षण अत्यन्त गहन है। साधारण से साधारण कार्य और उनका चित्रण यहाँ विद्यमान है। प्रकृति के सौन्दर्य के अनेक

भाव कुसुम यहाँ संग्रहित हैं। इस संवाद का अन्त इसी प्रकार के एक सुन्दर शान्त और गहन वातावरण में होता है—

"रात्रि की बाल्यावस्था का अन्त होकर उसकी प्रौढ़ अवस्था की स्थिति आ गई है। उसकी भयानकता की वृद्धि का भान है। समीर का संचार चल रहा है पर कुछ शीतलता की मात्रा बढ़ गई है। पृथ्वी का गमन जारी है। पर उसका स्थानान्तर हो गया है। तारों का वही हाल है पर वहाँ पर भी स्थान परिवर्तन है। आकाश नीलिमा से दीप्तिमय है ही। सामूहिक विश्व नाटक में हर पात्र अपने अपने अभिनय में रत हैं।"

द्वितीय संवाद "क़ैदी की सेवा" का अभिप्राय चन्द्रकान्त के इस वाक्य से लगता है—

"चन्द्रकान्त—नौकर मेरा काम नहीं करता। कितनी ही बार उससे कहा। दूसरों का ही काम करता है। कारण मैं न्याय से और सभ्यता से व्यवहार करना चाहता हूँ। दूसरे न सभ्यता मानते हैं, न न्याय जानते हैं।"

इसी विषय पर चर्चा चलती है; गम्भीर और गूढ़ आध्यात्मिकता ले लेती है। निरन्जन का विवेचन अत्यन्त तर्क संयत और गहन अनुभव से युक्त है। वह अपनी बातचीत के मध्य में मनुष्यों से कार्य कराने के कारणों को स्थूल रूप से तीन श्रेणियों में विभक्त करता है। वे हैं—भय, स्वहित तथा प्रेम। इन तीनों कारणों के अतिरिक्त सेवा कार्य में भी सतत स्थान दिखाया गया है। निरन्जन प्रत्येक कारण को मनोवैज्ञानिक ढंग से सविस्तार दिखाता है। उदाहरण प्रस्तुत करता है। ये उदाहरण मूल तत्त्व को बड़े कलात्मक ढंग से स्पष्ट करते हैं। विलक्षण उपमाएँ दी जाती हैं।

जहाँ तक सिद्धान्तों और गूढ़ विवेचना का सम्बन्ध है, द्वितीय संवाद अधिक सफल है। इसमें श्री बियाणीजी गूढ़ विचारक के रूप में प्रकट होते हैं। गम्भीर चिन्तन के साथ-साथ इसमें काव्य-सौन्दर्य भी अधिक है। आपके दोनों संवाद अनुभव के बल पर खड़े किए गए हैं। संवादों के दोनों पात्र चन्द्रकान्त और निरंजन जीते-जागते हाड़-मांस के पुतले हैं। उनके भाव, विचार, सहानुभूति, भावनाएँ, आदर्श मनुष्यों जैसी हैं। वे न्याय और कर्तव्य के प्रतीक हैं।

निरन्जन के पीछे से लेखक की भावना बोलती है। उसके विचार लेखक के विचारों और दृष्टिकोण का प्रतिपादन करते हैं। बियाणीजी की लेखनी ने निरन्जन को अमर बना दिया है। संवादों में कहीं-कहीं क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग किया गया

है। भावभंगी और अन्तर्भावना के चित्रण में लेखक ने कम दिलचस्पी ली है। विरोधी घात-प्रतिघात का उत्तम चित्रण, मस्तिष्क की अपेक्षा हृदय की भावनाओं का युद्ध, संस्कारों की अपेक्षा तर्क की प्रधानता इन संवादों को अमर बनाएगी।★

जैसा मैंने पाया

लेखक
लक्ष्मण व्ही० रंगशाही—इन्दौर
(ग्रन्थ-समिति के सदस्य; नाटककार एवं लेखक ।)

सारल्य की सुषमा, गम्भीरता की प्रतिकृति, सहृदयी श्री बियाणीजी को नाम एवं उनके महात्म्य से अपने विद्यार्थी जीवन से ही जानता था, जब आप भूतपूर्व महाकोशल के मन्त्री थे तथा 'विदर्भ-केसरी' की उपाधि से अभिहित होते थे । उस आयु में मैंने कभी यह कल्पना नहीं की थी कि इस महान् विभूति के सम्पर्क में कभी आ सकूँगा और यहाँ तक उनसे मेरा घनिष्ट सम्बन्ध, सम्पर्क और उनका वात्सल्य प्रेम प्राप्त कर सकूँगा । वैसे उनके सम्पर्क में आने का प्रथम अवसर मुझे अपने कालोनी के एक कार्यक्रम के सभापतित्व हेतु उन्हें आमन्त्रित करने के समय हुआ । संस्था ने जब इस कार्य का दायित्व मुझ पर सौंपा, मैं विचारों में उलझ गया कि एक परिपक्व राजनीतिज्ञ, सुलझे हुए चिन्तक प्रचार से दूर माँ सरस्वती के मौन आराधक से किस प्रकार अपना अनुरोध प्रकट कर पाऊँगा । दृढ़ निश्चय कर उनके निवास स्थान पर पहुँचा । दो मन्जिला मकान, पुष्पों की महक से आह्लादित वाटिका । कमरे में पहुँचने पर गृह-कर्मचारी अभिवादन कर, सम्भवतः अपरिचित अतिथि के आगमन की सूचना देने, श्री बियाणीजी के पास पहुँचा । उसी समय शारीरिक दृष्टि से दुर्बल, श्वेत धोती और कुर्ता, वह भी अपने ढंग का अनोखा (क्योंकि बहुत कम व्यक्ति ऐसे 'डिजाइन' का पहनते हैं) दृष्टिगोचर हुए । न जाने क्यों अचानक व्यक्तित्व के प्रथम दर्शन में ही अन्तरंग से श्रद्धा प्रस्फुटित हुई । औपचारिक चर्चाओं के उपरान्त मैंने अपना अनुरोध प्रस्तुत कर दिया । स्वीकृति जितनी शीघ्र एवं सरलता से सुलभ हुई उसकी मैं कभी कल्पना भी नहीं कर सकता था । स्वीकृति सम्बन्धी कटु अनुभव मुझे कई अवसरों पर प्राप्त हो चुके थे । तिथि-समय निश्चित कर तथा जलपान ग्रहणकर मैंने प्रफुल्लित हृदय से प्रस्थान करने की अनुमति ली । निश्चित तिथि पर इन्द्रदेव की कृपा से कार्यक्रम नियोजकों को अनेक अनापेक्षित समस्याओं से उलझना पड़ा और निश्चित समय से कोई

डेढ़ घण्टा विलम्ब से हम मुख्य अतिथि श्री बियाणीजी को लेने गए। वहाँ क्षमा-प्रार्थना कर, वस्तुस्थिति से अवगत करा प्रकृति को एवं नैसर्गिक शक्ति के समक्ष अपनी दुर्बलता को विलम्ब का कारण बताया। श्री बियाणीजी पूरे डेढ़ घण्टे से तैयार बैठे हमारी राह देखते रहे, इसका अत्यन्त दुःख हुआ। आज भी कई अवसरों पर वह स्थिति स्मरण हो आती है जब मुख्य अतिथि का विलम्ब से आना या विलम्ब करना एक 'आधुनिक फैशन' ही माना जाने लगा है। आपका एक बहुमूल्य सुझाव हमें स्वीकार होते हुए भी आज दिन तक व्यावहारिक कठिनाइयों एवं उपेक्षाओं के कारण कार्यरूप में परिणत नहीं किया जा सकता, उसका हमें दुःख सदैव रहेगा। वह सुझाव था एक वाचनालय की स्थापना का।

मधुर कण्ठ से जब मन्द-मन्द ध्वनि मुखरित होती तब, उपस्थित जनमानस स्थिर मनःस्थिति से धैर्य के साथ उसे ग्रहण करते देख आश्चर्य होता था, क्योंकि आज 'भाषण' से जनसाधारण, यहाँ तक बुद्धिजीवी भी कतराता है। मैंने पूर्व में भी श्री बियाणीजी के 'समय की पाबन्दी' के विषय में लिखा है। उसकी दूसरी घटना भी हमारे यहाँ के ही एक कार्यक्रम की है, लेकिन परिस्थिति भिन्न थी और कारण भी। आप परिसंवाद के अध्यक्ष थे। एक वक्ता महोदय समय से अधिक, वह भी विषयान्तर होकर अपने विचार प्रदर्शित कर रहे थे। आपके एक-दो अनुरोध भी उन्हें स्वीकार नहीं हुए तब श्री बियाणीजी की हुई प्रतिक्रिया यह स्पष्ट कर गई कि वे समय का दुरुपयोग एवं अपव्यय सहन नहीं कर सकते। आपका विशाल दृष्टिकोण एवं कला के प्रति गहरे लगाव, आकर्षण का आभास एक फिल्म समारोह के परिसंवाद में हुआ। आपने चलचित्रों के योगदान पर चर्चा करते हुए, उसे मनोरंजन का सर्वश्रेष्ठ साधन बतलाते हुए उसमें समन्वय, प्रेरणा एवं नवीन शक्तियों के सृजन तत्व उद्‌घोषित किया। आपने बतलाया कला राजदरबारों की बपौती थी, उसका आनन्द दरबार में ही उपलब्ध हो सकता था किन्तु सिनेमा ने कलाकार को स्वतन्त्र कर उसे शासन से मुक्त कराया, कलाकार का स्थान सर्वोच्च किया। सिनेमा के विषय में आपने बतलाया कि उसमें सस्ते से सस्ते में अधिक से अधिक कला का रूप एवं अन्य विधाओं का समन्वय प्राप्त होता है, तथा इससे नवीन शक्तियों को जन्म मिलता है। सिनेमा को आपने शिक्षा नहीं अपितु कला के रूप में ग्रहण करने का अनुरोध किया। आपने यह पुष्ट किया कि सिनेमा के माध्यम से राष्ट्रभाषा हिन्दी का, श्रेष्ठ प्रचार हुआ जिसे शासकवर्ग नहीं कर सका। हिन्दी-संस्कृत समन्वय का आग्रह करनेवाले वर्ग की संकुचित वृत्ति को दूर करने के राष्ट्रपिता बापू के अथक प्रयास असफल हो गए थे, पर उन्हें सिनेमा ने हिन्दी

उर्दू समन्वय द्वारा सफलता प्राप्त की हैं। आपके उक्त विचारों को लेखनी और जिह्वा दोनों ही व्यक्त करने में असमर्थ है, हाँ हृदय को उसकी आज की तीव्र अनुभूति है। साहित्यकारों एवं राजनीतिज्ञों दोनों द्वारा ही सिनेमा उपेक्षित है, दोनों सम्भव है, प्रतिदिन सिनेमा देखते हों, अपने परिवार को दिखलाते हों किन्तु अपना महत्व बनाए रखने हेतु उसमें त्रुटि, उसमें अनैतिकता, अव्यावहारिकता बतलाएँगे। ठीक इसके विपरीत श्री बियाणीजी के विचार उच्च शिखर पर प्रकट हुए, वह सहानुभूति ग्रहण हेतु नहीं, स्वाभाविक रूप से।

जब श्री बियाणीजी की प्रेरणा से 'विचार शक्ति केन्द्र' की स्थापना हुई, तो मैं उनके निकट सम्पर्क में आया। हमारा दुर्भाग्य ही था कि आप रुग्ण हो गए और उस क्रियाशील संस्था की, जहाँ मानस बौद्धिक आस्वादन ग्रहण कर मुखर हो रहा था, एकाएक गतिविधि थम गई। उस समय से मेरा श्री बियाणीजी के यहाँ अधिक आना-जाना होता रहा। मुझे सदैव उनका स्नेह एक पारिवारिक सदस्य के रूप में मिलता आ रहा है। आज भी कभी व्यक्तिगत व्यस्तता या आलस्य के कारण मिलने नहीं जा पाता हूँ तो मेरे निकटतम मित्र श्री अर्जुन जोशी से (जो सदैव आते-जाते रहते हैं) मेरे न मिलने का उपालम्भ भरा सन्देश मिलता है और उस समय पुनः मुझे विद्यार्थी जीवन का स्मरण हो आता है। उन दिनों जिसकी मैं कल्पना भी नहीं करता था, वही आज यथार्थ होता आ रहा है। गत दिसम्बर में आपकी ७० वीं वर्षग्रन्थि हुई। उस समय मैं शहर से अन्यत्र होने के कारण समारोह में उपस्थित नहीं हो सका। समारोह के उपरान्त आपके अस्वस्थ होने की दुखद घटना हुई, जिससे परिचितों को दुःख एवं चिन्ता का होना स्वाभाविक था। उस समय भी मैं अपने को घिरी कठिनाइयों तथा उस समय हुए निगम चुनाव में अनुज के प्रत्याशी होने से उसमें व्यस्त रहने के कारण तथा कुछ अंशों में (अपनी कमजोरी को भी स्वीकार करते हुए) आलस्य के कारण आपसे मिलने नहीं जा सका, किन्तु आपका मेरे प्रति प्रेमभाव उस समय भी ज्ञात हुआ जब मेरे मित्र श्री जोशीजी को उन्होंने मेरे न मिलने की बात कही। मुझे आजीवन अपनी भूल के लिए अपने आप पर क्षोभ रहेगा, यद्यपि उनका महान हृदय एवं व्यक्तित्व उसे विस्मृत कर मुझे मौन क्षमा कर चुका है। आप स्वास्थ्य लाभहेतु अकोला गए थे, वहाँ से वापस आने पर मैं बड़े संकोच के साथ मिलने गया, क्योंकि मुझे कोस रहा था—मेरा अन्तरतम। वह मुझे झझकोर रहा था—अपनी भूल एवं लापरवाही के लिए। उस समय के आपके कहे वाक्य मुझे जब स्मरण हो आते हैं तो एक मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया मेरे अन्तर में जाग्रत हो जाती है—उन्होंने कहा—"मैंने बहुत याद किया, जोशीजी को भी कहा कि आवें, किन्तु आप दिखे

नहीं ।" एक महान् विभूति और मैं एक अकिंचन–रवि के समक्ष दीपक !

मुझे अपने विद्यार्थी जीवन से ही कुछ लिखने का (नाटक एवं कहानियाँ) शौक है । मैंने अपने दो नवीन नाटक श्री बियाणीजी को दिए थे । उन्होंने बड़ी सूक्ष्मता से आद्योपान्त मनन किया तथा उनकी त्रुटियों को स्पष्ट वाणी में प्रकट किया, उनके कुछ अंशों की प्रशंसा भी की। मैं गौरवान्वित हूँ कि श्री बियाणीजी जैसे मर्मज्ञ, साहित्य मनीषी द्वारा मेरे शौक़ियातौर पर लिखे गए नाटकों के प्रशंसित होने पर ।

आज भी मैं अनेक अवसरों पर बहुत कम मिलने जा पाता हूँ और तब कई स्वर्णिम अवसर मुझे कुछ सीखने-ग्रहण करने को मिल सकते हैं मेरे हाथ से छूट जाते हैं । इस तरह पग-पग पर उनके प्रेम और मेरे आलस्य के संघर्ष में, मैं नैतिक दृष्टिकोण से सदैव परास्त हूँ । उनका प्रेमभाव, पारिवारिक स्नेह मुझे सदैव कृतकृत्य करता है । उनके विषय में अपने अनुभव जितने भी लिखूं न्यून ही हैं । उनका यह प्रेमपूरित स्नेह सदैव बना रहे और मुझे उनका नैकट्य मिलता रहे यही मुझे अभीष्ट है ।

साहित्यवाटिका पल्लवित, पुष्पित एवं विकसित होती रहे तथा मानव समाज एवं राष्ट्र इस तपोनिष्ठ, त्यागी, कर्मठ, सिद्धान्तप्रिय से मार्ग-दर्शन पाता रहे, अस्तु ! ईश्वर उन्हें स्वास्थ्य लाभ देते हुए दीर्घायु करे, यही कामना करते हुए मैं अपने श्रद्धा-सुमन समर्पित करता हूँ । ★

प्रेरणा स्रोत एवं विनोदी बियाणीजी

लेखिका
श्रीमती राधादेवी गोयनका, साहित्य रत्न—अकोला
(भूतपूर्व विधानसभा सदस्या, म.प्र.; सामाजिक एवं राजनैतिक कार्यकर्ता; लेखिका।)

सन् १९२६, २७ की बात है जबकि मैं पर्दे में थी। तभी बियाणीजी का नाम श्री गोयनकाजी से सुना करती थी। १९२८ में श्री गोयनकाजी के यूरोप यात्रा से वापस आने के बाद हम लोगों का सामाजिक बहिष्कार किया गया था। वसंतकुमारजी मुरारका की अध्यक्षता में पर्दा विरोधी डेलीगेशन कार्यकर्ताओं का एक दल जिसमें रमादेवी मुरारका, कानपुर के श्री नवलकिशोरजी भरतिया, श्री सुशीलादेवी भरतिया आदि ८-१० व्यक्ति आकोला आए थे।

श्री गोयनकाजी के आग्रह पर समाज को अंधकार में रखनेवाली इस पर्दे की प्रथा को तोड़कर डेलीगेशन के स्वागत में मैंने जीवन में प्रथम बार भाषण भी दिया। उसी दिन प्रथम बार श्री बियाणीजी से मुझे बोलने का अवसर आया था।

सुधारकों का एक दल ही बन गया था। श्री बियाणीजी भी हमारे साथ समाज से बहिष्कृत किए गए थे। विदर्भ में श्री बियाणीजी का कांग्रेस में एक छत्र राज्य था। उसी प्रकार विदर्भ के मारवाड़ी समाज के वे सर्वप्रथम पुरुष के रूप में आदरणीय होते थे। अनेकों बड़ी-बड़ी सभाओं में श्री बियाणीजी मुझे अपने साथ आदरपूर्वक ले जाते थे और आग्रहपूर्वक भाषण देने के लिए कहते थे। मुझे कुछ न कुछ बोलना पड़ता था। लोग उसी को बहुत पसन्द कर लेते थे। इससे हिम्मत बढ़ती थी। श्री बियाणीजी का प्रोत्साहन मिलता रहता था। कई बार तो श्री बियाणीजी मुझे अपने सामने दूर खड़ी रखकर भाषण देने का अभ्यास करवाया करते थे।

श्री गोयनकाजी के आग्रह और श्री बियाणीजी की प्रेरणा से ही मैं राजनैतिक और सामाजिक कार्यों में आगे बढ़ सकी। लोक संगठन के साथ ही साथ नेता अपने जीवन को आनन्दमय और आकर्षणमय बनाए रखे यह कला श्री बियाणीजी

में साकार रूप से प्रकट होती थी। वक्तृत्व विशारद तो थे ही, साथ ही उनकी रहन-सहन की सादगी में, व्यावहारिक पटुता में, मेहमानों के सत्कार में एक सुन्दर सा आकर्षण था। और फिर उस समय देश की पराधीनता के काल में त्याग और सेवा की ज़िन्दगी थी। बियाणीजी के पास अच्छे मित्रों का जमघट सदैव बना रहता था। मेहमानों की ख़ातरी में बलिदान श्रीमती सावित्रीदेवीजी का होता था। जिस प्रकार गांधीजी के जीवन में कस्तूरबा थीं, उसी प्रकार बियाणीजी के जीवन में सावित्रीदेवी हैं। मेरा तो विश्वास है, बियाणीजी की जो सफलताएँ मिली हैं उनका एक बड़ा श्रेय श्रीमती सावित्रीदेवी को है। उन भोजों और पार्टियों की याद आती है तो अभी भी चेहरे पर मन्द मुस्कान की आभा झलक जाती है।

सावित्रीदेवीजी ने दाल बाटी बनाई थी। दाल बहुत बढ़िया बनी थी, बार-बार माँग हुई। दाल ख़तम होने को आई तो गरम पानी का सहयोग पाकर और पतली बनाई गई। मित्रों ने कहा कोई हरकत नहीं पतली हो गई तो, परन्तु इसमें मिर्ची मत बढ़ा दीजिएगा। अब तो हंसी के फौवारे छूटने लगे। दाल क्या ख़तम हो गई मित्रों को मज़ाक और आनन्द का एक साधन मिल गया। सप्ताह दो सप्ताह में जहाँ भी जिस मित्र के घर पार्टी हो तो पहले रसोई में जाकर अन्दाज़ लगा लिया जाता था कि साग, दाल, रायता आदि में कौन ऐसी वस्तु है जो कम बनी है। भोजन के समय धीरे से कोई कह देता आज तो रायता बहुत अच्छा बना है। सब मित्र समझ जाते और मेज़मान भी समझ जाता कि अब रायते की माँग बढ़नेवाली है।

अकोला में मोरण नदी पर बोटिंग क्लब था। छोटी बड़ी ८-१० नावें थी। सुन्दर, सुव्यवस्थित! प्रातः ६ बजे ताज़ी और शुद्ध हवा में प्रकृति के विशाल पटाँगण में लहराती हुई हरी-हरी वृक्ष राशियों पर हवाखोरी के लिए जाने का शौक़ आकोला में बहुत लोगों को है। हम लोग भी प्रकृति की उस विशाल देन का आनन्द उठाते थे। मित्रों में तय हुआ कि यदि प्रातः वायु सेवन नदी में नाव द्वारा किया जाए तो ज्यादा स्वास्थवर्धक होगा। लगभग १५-२० मित्र ठीक समय पर प्रातः ६ बजे बोटिंग क्लब के नाव घर पर पहुँच जाते थे। श्री बियाणीजी, श्री गोयनकाजी और मैं, काका ओक, प्रमिलाताई ओक, सावित्रीदेवीजी तथा बियाणीजी, सुगनचन्दजी तापड़िया और बहुत से मित्र तथा बच्चे ठीक समय पर पहुँच जाते थे। मैं और श्री गोयनकाजी एक नाव चलाते थे। सावित्रीदेवीजी तथा बियाणीजी एक नाव चलाते थे। वैसे ही २-२ मित्र प्रभात की मधुर बेला में

एक-एक नाव चलाते हुए हरी-हरी वृक्ष राशियों के बीच प्रकृति की गोद में नदी के प्रवाह में दो-तीन मील नाव दौड़ाने की और रेस में एक दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करते हुए प्रातःकाल के वायु सेवन का एक घण्टे का समय इस प्रकार स्वर्गीय सुख में बिताते थे।

श्री बियाणीजी की प्रेरणा से ही सावित्रीदेवीजी को शौक़ हुआ। वे बोलीं, "महाराष्ट्रीय महिलाएँ साइकिल पर दौड़ती रहती हैं, और हम मारवाड़ी बहनें पर्दे में दबी रहती हैं। हम भी साइकिल चलाना सीखें।" हम लोगों ने महिला साइकिलें खरीदीं। चलाना सीखा। कभी-कभी रेस भी हो जाया करती थी।

इस प्रकार श्री बियाणीजी मित्रों में आनन्द बढ़ाए रखने के साथ ही साथ सामाजिक और राजनैतिक कार्यों में लगे रहते थे। बियाणीजी अच्छे विचारक, वक्ता और लेखक हैं। संगठन शक्ति अच्छी है। नेतृत्व के गुण हैं। साथ ही साथ अवगुण भी हैं। नेतागिरी की रक्षा के लिए जो भी बुराइयाँ करनी पड़ती हैं वे कुछ नेताओं में रहती हैं। यहाँ मैं उनका उल्लेख नहीं करूँगी, क्योंकि विरोध बुराइयों से होता है, मनुष्य से नहीं। अब बियाणीजी में बुराइयाँ नहीं है। अतएव हमारी पुरानी मित्रता क़ायम है। ★

कुछ झाँकियाँ-व्यक्ति और कृति

लेखक
विश्वनाथ शुक्ल—रतलाम
(सिविल जज एवं लेखक ।)

पूज्य बियाणीजी से मिलने मैं पिछली सर्दियों में उस रोज पहुँचा, जिस रोज़ 'विचार शक्ति केन्द्र' की स्थापना होने जा रही थी । अपने आप में एक अनूठी संस्था ! इस विचार शक्ति केन्द्र के प्राण प्रतिष्ठा के रूप में मैंने पहली बार बियाणीजी को देखा ।

और फिर कुछ दिनों में मैंने देखे 'विश्व-विलोक' के कुछ अंक । मुझे लगा कि आज का 'दिनमान' भी उस चेतना स्तर पर नहीं है । हर लेख में एक नवीन दृष्टि और एक नवीन ताज़गी है । विनोबाजी के बारे में एक लेख का स्मरण आता है । कितने क्रान्तिकारी विचार आज भी ! और कैसी पैनी दृष्टि बहुत दूर तक देखती हुई !

फिर एक रोज़ बातचीत के दौरान उन्होंने कहा—'वह वैद्य ही कैसा जो कहे कि उसका मरीज़ कुपथ्य करता है या अमुक बात नहीं मानता । वैद्य तो वही है जो मरीज़ को हर एक क्षण देखकर और समझकर इलाज करता है ।' और उनका यह दृष्टिकोण था इस मरीज़ समाज के सम्बन्ध में जो कुशल सुधारक रूपी वैद्य चाहता है । मुझे लगा था—ऐसा ही कोई वैद्य चाहिए जो राष्ट्र चेतना को इस मनोवैज्ञानिक ढंग से दिशाज्ञान दे कि यह राष्ट्र एक बार तो आश्वस्त हो पाए ।

बुद्धिमान होना निश्चित ही महानतम उपलब्धि है । पर बुद्धि कौन सी ? वह बुद्धि जहाँ हृदय उससे एकात्म हो चुका है । आचरण के सिद्धान्तों के मूल में हृदय की वह एकात्मता ही तो है जिन पर चलकर बुद्धि विवेक को प्राप्त करती है । 'जेल में' पुस्तक में विद्वान लेखक ने इन्हीं तत्वों का विवेचन किया है । क्या यह विवेक निर्बलता है ? और फिर इसकी उपलब्धि क्या है ? किन्तु क्या इस उपलब्धि का आकलन करने का समय आ पहुँचा है ? ऐसा लगता है

जैसे लेखक कह रहा है एक बालक से जो यह जानने को आतुर है कि यह 'क' 'ख' 'ग' पढ़ने से उसे क्या मिलेगा ? निश्चित ही अभी तो पढ़ने के लिए पढ़ना है। आगे खुद जान जाओगे कि क्या उपलब्धि है ? और तभी तो विद्वान लेखक ने सेवा-मार्ग दिखा दिया। यही तो विवेक की उपलब्धि है कि स्वयं भगवान गीता में 'लोक संग्रह' हेतु कर्म करने के भाव से अपने को अलग नहीं कर सके।

और इस सत्य को पाने के लिए लेखक ने सागर तक विस्तार पाया। धरती सा धैर्य पाया। वह उत्तुंग उर्मियों के ज्वार में खो गया। फिर आकाश के अनन्त छोर को नाप आया। तितली बनकर उड़ा। सरिता में से नहरें बनाकर जन-जीवन का सिंचन करने की अदम्य इच्छा से प्रकृति का उपयोगी रूप प्रस्तुत किया। सौन्दर्य और उपयोगिता का इस प्रकार एकीकरण किया कि जैसे वेदान्त सत्य में एक और सत्य जुड़ गया। इतनी संवेदना है लेखक के 'धरती और आकाश' ग्रन्थ में कि इतना ही कहा जा सकता है कि लेखक ने अपनी आत्मा को किन स्वरूपों में प्रस्तुत नहीं किया ? कौन सा कोना अछूता रह गया जिसे उसने न छुआ हो।

अनेक प्रश्न उठ रहे हैं। जीवन और उपयोगिता ? उपयोगिता और जीवन ! केवल जीवन ! मुझे एक बात याद हो आई बचपन की। चैत्र के प्रत्येक सोमवार को जगन्नाथजी की पूजा हुआ करती थी। मां एक कहानी कहती थीं उस भाट की जो जीवन से तृप्त होकर जगन्नाथजी के दर्शन के लिए जाता है। रास्ते में अनेक लोग उसे मिलते हैं। उनमें से एक था—दो आम के वृक्षों का जोड़ा। जब भाट वहाँ पहुँचा तो आम के वृक्षों के जोड़े ने उत्सुकतापूर्वक पूछा—"भाट ! भाट तुम कहाँ जा रहे हो ?" भाट बोला—"जगन्नाथजी।" "तो मेरा भी एक सन्देशा कह देना" कि हम खूब फलते हैं, फूलते हैं, खूब मीठे आम लगते हैं, पर हमें कोई खाता नहीं, कीड़े पड़ जाते हैं," बोले वे आम के पेड़।

तब क्या आम इसीलिए होते हैं कि लोग स्वाद से खाएँ ? या हो जाते हैं इसलिए लोग स्वाद से खाते हैं। नहीं—लेखक को जिसने गहराई से देखा है—वह महसूस करेगा कि उसके जीवन का प्रत्येक क्षण इसी विचार में गुज़रता है कि वह कोई काम आ सके। और शायद यही उसका सुख है। तभी तो 'कल्पना-कानन' का लेखक उस अमरत्व तरु की कामना न करके वल्ली की कामना करना चाहता है कि बेकार जीवन व्यर्थ है।

इस पर एक छोटी सी बात और। गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं कि उन्होंने रामचरित मानस की रचना स्वान्तः सुखाय के लिए की है। लेकिन सवाल यह है

कि उनका स्वान्त: सुखाय क्या है—"सिया राम मय सब जग जानी" दृष्टिवाले का स्वान्त: सुखाय भी विश्वसुख होगा। कुछ ऐसा ही है बियाणीजी का रूप कि वे कुछ काम आ सकें–यही उनका सुख है। पास से जिसने देखा है कि वृद्धावस्था में भी ममत्व का वह आकर्षण, वह स्नेहसिक्त परायणता कि छोटे से छोटा आगन्तुक-अभ्यागत यही समझेगा कि वह वहाँ जाकर आश्वस्त है। जैसे सबको अपना बना लेना चाहते हैं। कितना एकत्व है उस लेखक के जीवन और व्यवहारिक रूप में।

तभी तो तांगेवाले को दूसरी बार अधिक देने का बहाना करके मित्र द्वारा दो रुपए के बदले एक रुपया दिए जाने पर वे तांगेवाले से कह उठते हैं—"क्यों तू पागल है? दो रुपए का काम करके एक रुपया लेकर चला जा रहा है। जिस अमीर ने दो रुपए का काम करवाकर एक रुपया दिया है वह कभी एक का काम करवाकर दो दे देगा? यह आशा रखना पागलपन है। अधिक श्रम करवाकर कम देना इसमें अमीरी की जड़ है, और परिश्रम के प्रमाण से कम लेना यह ग़रीबी का कारण है। जीवन में नगद रोज़गार कर। उधारी में किसी को फ़ायदा नहीं है। आशामय उधारी ने क्या व्यक्ति और क्या मुल्क सबका नाश किया है।" कल्पना-कानन के लेखक ने मूलभूत समस्या को सूत्ररूपमें प्रस्तुत कर दिया है।

पर इतना ही नहीं। उस मर्मज्ञ कलाकार को तो देखा ही नहीं जो 'कल्पना-कानन' पुस्तक में प्रकट हुआ है। कितनी तल्लीनता है कला के मर्म में पैठ जाने की जो इस प्रकार प्रकट हुई है—

"यदि नर्त्तकी को देखना चाहूँ तो नृत्य का अन्त है। गतिमान नर्त्तकी नृत्य है और गतिहीन नृत्य नर्त्तकी।" किन्तु इतना ही नहीं, लेखक उसमें विश्वदर्शन भी खोज लेता है —

"नृत्य में नर्त्तकी का अनुमान है पर नर्त्तकी में नृत्य अदृश्य है। दृश्य नृत्य और अनुमानित नर्त्तकी—यही विश्वदर्शन है।"

किन्तु लेखक का सौन्दर्य और उपयोगिता भाव सिर्फ इतना ही नहीं। वह साहसिक भी है। उसे Excitement भी चाहिए। वह प्रकट होता है 'कल्पना कानन' की 'नाचती ज्योति' की इन पंक्तियों से—

"संकटहीन शान्ति में सौन्दर्य नहीं। सौन्दर्य के अभाव में सच्चा जीवन नहीं।" यह है सौन्दर्य को परखने की कसौटी। वह संकट से जूझना चाहता है। उसका आनन्द लेना चाहता है। तभी तो नाचती ज्योति ही उसके जीवन का आकर्षण है।

किन्तु इस सबके पीछे वह कौन सा मूलमन्त्र है। वह है जीवन के प्रति ग्राकर्षण। वह कहता है—"ज्ञानी कहते हैं, ग्राकर्षण बन्धन है। पर मैं देखता हूँ कि ग्राकर्षण ही जीवन का सार है, चेतना, गति ग्रौर स्फूर्ति है। ग्राकर्षण-हीन जीवन बन्धनहीन भले ही हो जाए, पर वह निरर्थक ग्रौर निस्सार भी ग्रवश्य हो जाएगा।" उसे ऐसा जीवन चाहिए जो साहसिक ग्रौर ग्राकर्षक हो, सुन्दर हो ग्रौर इससे भी ग्रधिक हो उपयोगी ग्रौर सार्थक। तभी तो वह ग्रदम्य साहस से जूझना चाहता है—"उस भयंकर वस्तु का भय निकल जाना, निर्भीक हँसते ग्रौर नाचते मरना। यह जीवन की सच्ची सफलता है। इसलिए मृत्यु से जितना नज़दीक उतना उत्सव ग्रधिक। मृत्यु के हम जितने समीप जाएँ उतने ही ग्रधिक निर्भय बनें—यही मृत्यु पर विजय पाना है।"

उसे ग्रपने ऊपर विश्वास है। ग्रपने सहारे वह जूझ रहा है। 'ग्राह-प्रसण' ईश्वर की ग्रन्ध ग्रास्था पर कितना गहरा व्यंग है, किन्तु साथ ही कितना तर्क सम्मत। उसका हृदय ही उसका दयालुदाता है। (देखिए कल्पना-कानन, पर्वस्नान ग्रौर जन्माष्टमी) तभी तो 'हम धरती ग्रौर ग्रकाश' के लेखक की कल्पना कर सकते हैं, जिसका हृदय धरती से ग्राकाश तक फैल जाना चाहता है।

ग्रौर फिर उनका जन्मदिन ग्रा पहुँचा। उन्हीं के शब्दों में—"एक प्रदक्षिणा पूरी हुई। मेरा जन्म दिन ग्रा गया। ग्रारम्भ के साथ समारम्भ। ग्रानन्द उत्सव हमारी संस्कृति का सार है। ग्रौर मानव के सच्चे स्वभाव का चिन्ह है।" ग्रौर मेरी कामना है कि ऐसे ग्रनेकों-ग्रनेकों ग्रानन्दोत्सव हों ग्रौर हमारी संस्कृति मुखरित हो। ★

चिरस्थायी प्रभाव

लेखक

वल्लभदास मोहता, बी.ए., एलएल.बी. –अकोला

(एडवोकेट, सुप्रीम कोर्ट; सामाजिक कार्यकर्ता एवं लेखक।)

इतिहास में ऐसा कोई भी व्यक्ति देखने को नहीं मिलता जो सर्वथा अपने सम्बन्ध में, अपने जीवन काल में अथवा उसके बाद, मतमतान्तरों अथवा आलोचनाओं व प्रत्यालोचनाओं से मुक्त हो। भविष्य में भी ऐसा व्यक्ति होना दुर्लभ है जो सब प्रकार के विवादों से रहित हो। यह बात उन लोगों के सम्बन्ध में और भी अधिक सही है जिन्होंने सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन में सक्रिय भाग लिया है तथा जिन्होंने सामाजिक क्षेत्र में अपने गतिशील व्यक्तित्व का प्रदर्शन किया है। श्री ब्रजलालजी बियाणी, जिन्हें कभी 'विदर्भ-केसरी' के नाम से सम्बोधित किया जाता था, ने निश्चित रूप से पहले विदर्भ के नाम से प्रसिद्ध क्षेत्र के जीवन में तथा सम्पूर्ण राष्ट्र के जीवन में प्रभावशाली ढंग से कार्य किया। अतः यह स्वाभाविक ही है कि अन्य प्रमुख व्यक्तियों की भाँति श्री बियाणीजी के सम्बन्ध में भी कुछ मतमतान्तर हों।

यह मेरा सौभाग्य है कि मैं बाल्यकाल से ही श्री बियाणीजी के सम्पर्क में आया। वे नियमपूर्वक मेरे पिता श्री आईदानजी मोहता से मिलने आते थे, और उसके बदले में मैं और मेरे पिताजी दोनों ही उनसे मिलने 'राजस्थान भवन' जाया करते थे। उस समय 'राजस्थान भवन' विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों का स्थल था। वास्तव में, उस समय वह उस क्षेत्र के लोगों के आकर्षण का एकमात्र केन्द्र बिन्दु बना हुआ था। मेरे पिताजी के मन में बियाणीजी के प्रति अत्याधिक स्नेह और आदर था। बियाणीजी भी हमें स्नेह करने में कभी भी पीछे नहीं रहे। उनका यह स्नेह मेरे पिताजी की मृत्यु के उपरान्त भी बना रहा, जिसका अनुभव मुझे प्रत्यक्ष रूप से उस समय हुआ, जबकि उन्होंने, यह जानकर कि मैंने अकोला में कानूनी व्यवसाय अर्थात् वकालत प्रारम्भ कर दी है, मुझे स्वेच्छा से 'राजस्थान भवन' बुलाया और मुझे अनेकों उपयोगी बातें—

मेरे व्यवसाय से सम्बन्धित—बताई तथा ऐसे अनेकों विचार मेरे सामने प्रकट किए जिन्हें मैं आज भी पूर्णतः अपने में मौलिक मानता हूँ। तबसे लेकर आज तक, जब भी भाईजी इन्दौर से अकोला आते हैं, मैं उनसे मिलने तथा लम्बे समय तक बातें करने का मोह संवरण नहीं कर पाता हूँ। उनसे बातचीत करने के पश्चात् मैं सदैव एक ही निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ, और वह यह है कि भाईजी अपने युग के मौलिक चिंतकों एवं विद्वानों में से एक हैं। उनके सम्बन्ध में मेरा दूसरा निष्कर्ष यह है कि वे एक बहुत ही भावुक व्यक्ति हैं। पहले निष्कर्ष के सम्बन्ध में अनेकों व्यक्ति मुझसे सहमत होंगे, हालाँकि दूसरे के सम्बन्ध में लोगों की भिन्न राय हो सकती है। उनका जीवन के विषय में यथार्थ-वादी दृष्टिकोण निश्चय ही यह प्रभाव डालता है कि वे भावनाशून्य व्यक्ति हैं, लेकिन मैं यह साहसपूर्वक कह सकता हूँ कि उनके सम्बन्ध में यह धारणा सर्वथा अनुचित है।

भाईजी के साथ मेरे घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित होने के तुरन्त बाद ही, उन्हें पक्षाघात हो गया और जब मैं उन्हें देखने गया तो मुझे अपने बचपन की वह स्मृति ताज़ा हो आई जबकि मेरे पिताजी को भी १९४१ में पक्षाघात हो गया था और श्री बियाणीजी (भाईजी) उन्हें देखने को आए थे। उस समय मेरे पिताजी को, जो पक्षाघात के कारण न बोल सकते थे और न चल फिर सकते थे, जब यह ज्ञात हुआ कि भाईजी जेल से छूटकर आ रहे हैं तो उन्हें उनसे मिलने की प्रबल प्रतीक्षा होने लगी। अकोला नगर ने भाईजी का अभिनेता के रूप में स्वागत किया और यद्यपि उस बात को २५ वर्ष के लगभग हो चुके, फिर भी मुझे स्मरण है कि उस समय अकोला के लोगों का उत्साह एवं उनकी भाईजी के लिए प्रेम और श्रद्धा मिश्रित भावना देखते ही बनती थी। जब मैं भाईजी के स्वागत समा-रोह को देखकर घर लौटा, तो मैंने बियाणीजी को अपने पिताजी के सोने के कमरे में बैठा पाया। दोनों मित्र एक दूसरे को आलिंगन पाश में बाँधे हुए थे और एक बच्चे की भाँति रो रहे थे। उसी सायंकाल को बियाणीजी को कपड़ा मार्केट की एक सभा में बोलना था, और मुझे याद है उस समय मेरे पिताजी गेलरी में बैठे हुए बड़े ध्यानपूर्वक एवं आत्मविभोर होकर उनके भाषण को अन्त तक सुनते रहे। कुछ दिनों पश्चात् मेरे पिताजी की मृत्यु हो गई, और अकोला के प्लाज़ा टॉकीज़ में एक शोक सभा का आयोजन किया गया। मुझे याद है, उस समय बियाणीजी बोलने को खड़े हुए, परन्तु उनका गला भावनाओं के आवेश में रुंध गया और वे कुछ भी बोलने में पूर्णतः असमर्थ रहे। अब जब

मैं २५ वर्षों के पश्चात् बियाणीजी से उनको पक्षाघात होने पर मिला तो उन्हें पूर्व का स्मरण हो आया और वे बुरी तरह से रो पड़े। क्या ये घटनाएँ यह सिद्ध करने को पर्याप्त नहीं कि बियाणीजी एक अत्यन्त ही भावुक व्यक्ति हैं? वास्तव में यह बात ठीक है कि भावनाएँ ही मनुष्य के भाग्य को एकमात्र नियन्त्रित नहीं करतीं और श्री बियाणीजी भी अपनी दूरदर्शिता से यह बात भली-भाँति समझते हैं।

दूरदर्शिता की गहराई, विचारों की मौलिकता तथा बुद्धि की तीव्रता में बियाणीजी बेजोड़ हैं। एक भविष्य वक्ता की भाँति, भविष्य के सम्बन्ध में उनके द्वारा कहे गए शब्द बहुत ही सत्य निकले हैं। देश का विभाजन होने के लगभग दो वर्ष पूर्व ही उन्होंने पाकिस्तान की यथार्थता को स्वीकार कर लिया था तथा उसके सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से अपने विचार भी व्यक्त किए थे। उस समय लोगों को उसकी कल्पना भी नहीं थी, परन्तु इतिहास इस बात का साक्षी है कि भाईजी का परिस्थितियों का विवेचन कितना सही था। इसी प्रकार जब श्री जवाहरलालजी अपनी प्रतिष्ठा एवं लोकप्रियता के शिखर पर थे, उस समय भाईजी ने बड़े ही साहसपूर्वक यह कहा था कि अब समय आ गया है जबकि जवाहरलालजी को अपने पद से पृथक हो जाना चाहिए तथा नए नेतृत्व को आगे आना चाहिए। भाईजी का विश्वास था कि नेहरूजी के स्थान को भरनेवाले व्यक्तियों में से सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति शास्त्रीजी होंगे, हालाँकि इस विश्वास की पूर्ति में ३ वर्ष लगे जब श्री नेहरूजी के देहावसान के बाद श्री लालबहादुर शास्त्री को सर्वसम्मति से भारत का प्रधान मन्त्री चुना गया। ये बातें बियाणीजी की दूरदर्शिता को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं।

भाईजी ने अपने काल और अपने क्षेत्र में अनेकों नेताओं एवं व्यक्तियों को जन्म दिया; यह दूसरी बात है कि उनके विचारों में भिन्नता है। विचारवान व्यक्तियों में भिन्नता होना स्वाभाविक एवं अनिवार्य है, और मुझे इसमें कोई बुराई नहीं दिखाई देती। मैं स्वयं भी भाईजी के बहुत से विचारों से सहमत नहीं हूँ, और यह स्वीकार करने में मुझे किसी प्रकार का भय नहीं लगता। लेकिन सत्य तो यह है कि भाईजी एक श्रेष्ठ व्यक्तित्व लिए हुए हैं और उनमें हृदय और मस्तिष्क के आश्चर्यजनक अनेकों गुण विद्यमान हैं। भाईजी का जन्म एक अत्यन्त साधारण घराने में हुआ, और जिन परिस्थितियों में उन्हें प्रारम्भिक जीवन में रहना पड़ा उन्हें देखते हुए जीवन के उच्च शिखिर पर पहुँच जाना कोई साधारण प्रतिभा के व्यक्ति का काम नहीं था। प्रतिकूल परिस्थि-

तियों पर विजय पाना भाईजी जैसे व्यक्तियों का ही काम है । प्रायः लोग बड़े हो जाने पर अपने उन साथियों को भूल जाते हैं, जिन्होंने कि उनका दुःख के दिनों में साथ दिया, परन्तु यह बात बियाणीजी के स्वभाव के प्रतिकूल है । वे कभी भी अपने साथियों को नहीं भूल पाते हैं और उनका दृष्टिकोण सदैव, अपने मित्रों एवं साथियों के साथ, मित्रता एवं सहृदयता का रहता है ।

सम्पूर्ण देश में बियाणीजी का प्रभाव है तथा राष्ट्र के जीवन में उनका एक विशिष्ट स्थान है । उन्होंने अपने कृत्यों से, उस कुटुम्ब को जिसमें कि उन्होंने जन्म लिया, उस नगर को जिसमें कि वे रहे, उस संस्था को जिससे कि उनका सम्बन्ध रहा तथा उस प्रदेश को जिसकी कि उन्होंने सेवा की, सम्मानित किया । जब मैं कानपुर में वहाँ के डी. ए. वी. कालेज में बी. ए. के लिए अध्ययन करने के लिए गया तो प्रायः वहाँ के मेरे साथी और प्राध्यापक मुझसे पूछा करते थे कि क्या मैं उसी अकोला का रहनेवाला हूँ जहाँ विदर्भ-केसरी श्री बियाणीजी रहते हैं ? मेरा यह दृढ़ विश्वास था कि बियाणीजी के कार्य के लिए अकोला बहुत छोटी जगह थी, यद्यपि उनका कार्यक्षेत्र केवल अकोला तक ही सीमित नहीं था । यदि उन्होंने अपना कार्य-स्थल कोई बड़ी जगह चुनी होती, तो अवश्य ही उनकी प्रतिभा और अधिक निखरती तथा समाज को उनके कार्यों का अधिक लाभ प्राप्त होता ।

भाईजी एक अत्यन्त स्वाभिमानी व्यक्ति हैं जो सदैव अपनी भावनाओं का ध्यान रखते हैं । जनमत उनके विचारों को परिवर्तित करने में असफल रहता है । जनमत के विरुद्ध अपने विचारों पर अडिग रहना बहुत ही साहस का काम है । चाहे कोई उनके विचारों से सहमत हो अथवा नहीं, परन्तु वे सदैव अपने विचारों पर कठोरता से डटे रहते हैं तथा अपने विरोधियों का विरोध करने की उनमें आश्चर्यजनक क्षमता है । अपने विचारों का अनुसरण करते समय वे कभी भी लाभ-हानि की बात नहीं सोचते । वास्तव में विजय सापेक्षिक है । अपने सिद्धान्तों का हनन करके विजय श्री प्राप्त करना कोई अच्छी बात नहीं । विजय वही है जो सिद्धान्तों पर अडिग रहकर तथा आत्म सम्मान के साथ प्राप्त की जा सके । यह तो केवल इतिहास ही बता सकेगा कि बियाणीजी कहाँ तक अपने आदर्शों को निभा सके तथा अपने उद्देश्यों की पूर्ति कर सके ? ★

बरार, बियाणीजी व महिलाएँ

लेखिका
श्रीमती शशिकला जोशी, बी. ए.—इन्दौर
(अध्यापिका एवं लेखिका।)

माननीय बियाणीजी ने समाज सुधार सम्बन्धी अनेक कार्य किए हैं। महिला समाज आपका अत्यन्त उपकृत है, क्योंकि आपने महिला समाज की उन्नति के लिए बेजोड़ प्रयत्न किए हैं। बरार की महिलाओं को राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्र में आगे लाने का श्रेय एकमात्र आपको ही है। इससे पहले बरार की महिलाएँ बहुत ही पिछड़ी हुई थीं। खासकर मारवाड़ी महिलाएँ तो घर की चहारदीवारी की जेल में ही बन्द थीं। पर्दे का भूत बुरी तरह उनके पीछे पड़ा था। बियाणीजी ने उनके साथ जो उपकार किया है वह अवर्णनीय है। आपने पर्दा प्रथा के खिलाफ आवाज़ बुलन्द की और यह प्रण किया कि वे वहाँ जाना पसन्द नहीं करेंगे जहाँ पर्दा प्रथा हो। जिन विवाहों में पर्दा प्रथा का मान किया जाता था, वहाँ बियाणीजी ने कभी कदम नहीं रखा। फल यह हुआ कि सैकड़ों मारवाड़ी बहनें पर्दे के बाहर खुली हवा में आ सकीं और देश की सेवा में भाग ले सकीं।

श्री बियाणीजी ने स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में भी बहुत कार्य किया है। आपके प्रयत्नों से बरार में स्त्रियों को उच्च शिक्षा देने के लिए विभिन्न प्रकार की संस्थाएँ खुलीं और सरकार ने भी इस ओर अधिक ध्यान दिया। इस प्रकार बरार की महिलाओं का अज्ञान दूर हुआ और वे भी कुछ समझने बूझने-लगीं। इसी प्रकार, बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह तथा अनमेल विवाह जैसी कुरीतियों के खिलाफ़ आपने आवाज़ उठाई, आन्दोलन किए और बरार से उन्हें जड़मूल से उखाड़ फेंका। इसी प्रकार आपने दहेज प्रथा पर भी कुठाराघात किया। यहाँ तक कि स्वयं अपनी लड़की का विवाह सुधारवादी ढंग से करके एक आदर्श उपस्थित किया। इस सम्बन्ध में श्रीमती राधादेवी गोयनका का श्री बियाणीजी सम्बन्धी उद्‌गार उल्लेखनीय हैं। आप लिखती हैं, "श्री बियाणीजी मारवाड़ी

समाज के एक तेजस्वी रत्न हैं। स्वर्गीय श्री जमनालालजी बजाज के बाद समाज सुधार के क्षेत्र में यदि कोई सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति हैं तो वह श्री बियाणीजी ही हैं। बियाणीजी जैसे रत्न प्राप्त करने पर समाज को अभिमान होना स्वाभाविक ही है।"

बरार की महिलायों को जाग्रत करके उन्हें राजनैतिक क्षेत्र में आपने महिलाओं को पुरुषों की समता में खड़ा किया। फलस्वरूप देश में हुए विभिन्न आन्दोलनों में बरार की महिलाओं ने आगे बढ़कर भाग लिया। सन् १९३० के कांग्रेस द्वारा संचालित सत्याग्रह में आपकी प्रेरणा से बरार की महिलाओं ने पहली बार भाग लिया। उस समय उनका उत्साह अवर्णनीय था। उस समय अकोला में महिलाओं की पहली सभा हुई जिसमें श्री बियाणीजी ने एक अत्यन्त उद्-बोधक भाषण दिया। जिसका फल यह हुआ कि श्रीमती दुर्गाबाई जोशी, प्रमिला-ताई ओक, राधाबाई और लीलाबाई चाफ़ेकर, सुभद्राताई जोशी आदि अनेक महिलाएँ आगे आईं और अपने कंधों पर महत्वपूर्ण कार्य लिया। सन् १९३० के सत्याग्रह में दुर्गाताई जोशी जेल गईं। इतना ही नहीं, १९३२ के सत्याग्रह में बरार की महिलाएँ एक बड़ी संख्या में जेल गईं। इसी प्रकार सन् १९३९ व १९४२ में भी कई बहनें आन्दोलनों में भाग लेकर जेल गईं। श्री बियाणीजी की धर्म पत्नी सौ. सावित्री देवी ने भी सत्याग्रहों में भाग लिया और अनेक प्रसंगों पर महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व वहन किया।

शराब बन्दी आन्दोलन के समय जबकि अन्य नेताओं का नारा था कि इस आन्दोलन से महिलाओं को दूर रखा जावे तब भी श्री बियाणीजी ने महिलाओं को आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। फलस्वरूप दुर्गाताई जोशी, प्रमिला ताई ओक आदि बहनों के सहयोग से बरार की महिलाओं ने बड़ी संख्या में भाग लिया। उस समय उन्हें बड़े-बड़े संकटों का सामना करना पड़ा, परन्तु बियाणीजी की प्रेरणा से वे ड़टी रहीं और आन्दोलन को यशस्वी बनाया। उनके इस कार्य पर बरार को अभिमान होना स्वाभाविक ही है। इसी प्रकार नमक सत्याग्रह के समय भी दुर्गाताई जोशी के नेतृत्व में बरार की महिलाओं ने जो उल्लेखनीय कार्य किया, वह इतिहास में गर्व के साथ लिखा जावेगा।

अकोला में अखिल भारतीय महिला परिषद् का अधिवेशन करने के मूल में भी श्री बियाणीजी के ही प्रयत्न थे। यह परिषद् अकोला की एक अविस्मरणीय घटना है। श्री बियाणीजी की प्रेरणा से जो महिलाएँ आगे आईं उनमें प्रमिला-ताई ओक का नाम प्रमुख है। उपरोक्त परिषद् के लिए प्रमिलाताई ने बेजोड़ प्रयत्न किया था। बरार की महिलाओं को राजनैतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में

आगे आने की प्रेरणा मिल सके इस उद्देश्य से प्रमिलाताई ने "मातृभूमि" का सम्पादन किया, लघु ग्रन्थ माला के अन्तर्गत प्रचारार्थ पुस्तकें लिखी और व्याख्यानादि देकर खूब प्रचार किया। आप बरार प्रान्तीय कांग्रेस कार्यकारिणी की सदस्या भी थी तथा आपने कांग्रेस में अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किए। इस प्रकार श्री बियाणीजी की प्रेरणा से एक ही नहीं अनेक महिलाएँ आगे आईं।

श्री बियाणीजी ही ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने बरार की महिलाओं को आगे लाने और उनसे महत्वपूर्ण कार्य करा लेने का काम किया है। उनका यह कार्य आज भी जारी है और आप आज भी महिलाओं को बराबर स्फूर्ति प्रदान कर रहे हैं।

यह इन्दौर का सौभाग्य है कि आपने इसे अपना कार्य क्षेत्र चुना है। यहाँ की बहनें निश्चय ही आपका स्वागत करती हैं। ★

गांधी युग की देन-बियाणीजी

लेखक
बद्रीप्रसाद पुरोहित 'विशारद'—बीकानेर
(लेखक एवं सामाजिक कार्यकर्त्ता ।)

खद्दर का कुरता, सिर पर गांधी टोपी, आँखों पर चश्मा, ढ़ीली-ढ़ाली घुटनों तक सफेद धोती में लिपटे हुए, देखने में अस्त व्यस्त पर बोलने में तेज़, आप सहसा कल्पना भी न करेंगे यह हैं-'बरार केसरी', प्रवासी राजस्थानी समाज की विभूति, स्वतन्त्रता संग्राम के अजेय योद्धा, ख्याति प्राप्त पत्रकार-सम्पादक-लेखक, भूतपूर्व बरार मध्य प्रदेश के अर्थ मंत्री, मारवाड़ी समाज में सामाजिक क्रांति के अग्रदूत, गांधीजी के सच्चे अनुयायी, कांग्रेस के लोकप्रिय नेता श्री ब्रजलाल बियाणी !

बियाणीजी ने सार्वजनिक क्षेत्र में उस समय भाग लिया जिस समय देश में असहयोग आन्दोलन चल रहा था। राष्ट्रीय एवं सामाजिक चेतना का सीधा प्रवेश मारवाड़ी समाज में उस समय हो सकना बड़ा असम्भव था। सन् १६२० में नागपुर कांग्रेस के अधिवेशन पर महात्मा गांधी के आदेश पर आप वकालात की अन्तिम पढ़ाई छोड़कर नागपुर से अकोला आए थे। फिर राष्ट्रीय आन्दोलन में कूद पड़े। फिर क्या था? आजन्म देश सेवा, समाज सेवा का प्रमुख व्रत धारण किया !

उस समय आज़ादी का नाम लेना भी गम्भीर आरोप था। देशी रजवाड़े इतने क्रूर निर्दयी-अत्याचारी थे कि अपने ज़ुल्मों द्वारा निरपराध लोगों को यातनाएँ देते। उस समय मध्य प्रदेश जैसे राज्य में स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करना मानो तलवार की धार पर चलना था। फिर भी आजादी का सच्चा सिपाही, मारवाड़ी समाज का लाड़ला सपूत किशोर ब्रजलाल बियाणी दृढ़ता के साथ उन घोर दमनों का सामना करता रहा। उनका अद्‌भुत साहस प्रान्त की सरकार व सामन्तशाही और ब्रिटिश हाकिमों का कोप उन्हें मार्ग से तनिक भी विचलित नहीं कर सका। बियाणीजी जीवन भर अंग्रेजों तथा रियासती सामन्तशाही के विरुद्ध संघर्ष करते रहे तथा समाज में प्रचलित कुरीतियों से जूझते रहे।

घोर आर्थिक व सामाजिक कष्ट उठाते हुए भी अपने मार्ग से विचलित नहीं हुए, प्रताप की भाँति दृढ़ता से लड़ते रहे। यहाँ तक कि उन्हें समाज से बहिष्कृत भी होना पड़ा।

आपके जीवन में तूफानों के बड़े बड़े बवन्डर आए, फिर भी कर्तव्य-पथ का सजग सेनानी माहेश्वरी सपूत अपने ध्येय की मंज़िल की तरफ बढ़ता रहा। स्वतन्त्रता संग्राम में आपको पाँच बार जेल यात्रा भी करनी पड़ी व उस अपनी जन्म भूमि से निर्वासित भी होना पड़ा।

बियाणीजी ने गांधीजी के कहने पर जो आजन्म देश सेवा का व्रत धारण किया, उसके हेतु निष्ठा के साथ अपना तन-मन-धन होम दिया। आप बरार प्रादेशिक कांग्रेस कमेटी के वर्षों तक सदस्य रहे। केन्द्रीय एसेम्बली व संविधान परिषद् के मेम्बर तथा बरार-मध्य प्रान्त विधान सभा के सदस्य भी रह चुके हैं। बरार मध्य प्रान्त के अर्थ मन्त्री पद पर भी सफलता के साथ कार्य कर चुके हैं। कुछ ही वर्षों पहले बरार मध्य प्रान्त के प्रश्न को लेकर आपका कांग्रेस से मतभेद हो गया, जिस कांग्रेस को आपने खून से सींचा था। और बरार प्रदेश की प्रादेशिक अखण्डता के लिए आपने आन्दोलन भी किए। यद्यपि बियाणीजी पद-लोलुप्ता तथा स्वार्थी तत्वों से गठबंधन करके अपने नेतृत्व के साथ अपनी नेतागीरी को क़ायम रख सकते थे, लेकिन आपने ऐसा नहीं किया। आप उसूलों के आगे झुकना नहीं चाहते थे, चाहे भले ही टूट जाएँ। बियाणीजी उन देश भक्तों में से हैं जो कि आदर्शों को सर्वोपरि मानते हैं। आज राजनीति में पदलौलुप्ता, अवसरवादिता घर कर गई है, स्वार्थी लोगों को अखाड़ेबाज़ी का आश्रय मिला हुआ है, इससे ब्रजलालजी बड़े दु:खी हैं।

आपका सारा जीवन संघर्षमय एवं सक्रिय राजनीति में रहते हुए बीता है, फिर भी आपने समाज सेवा, साहित्य लेखन, पत्रकारिता की सेवा की है। आप केवल राजनैतिक नेता ही नहीं हैं, बल्कि एक सुप्रसिद्ध विचारक एवं लेखक भी हैं। सार्वजनिक जीवन के प्रथम काल में आपने अकोला से "राजस्थान" मासिक प्रकाशित किया; उसके बाद आपने "नव-राजस्थान" साप्ताहिक की नींव डाली। कई वर्षों तक सफलता पूर्वक सम्पादन कार्य करते रहे। इस पत्र के सुप्रसिद्ध पत्रकार राम गोपाल जी माहेश्वरी भी सम्पादक रहे। बाद में "नव राजस्थान" के रूप को बदलकर "नव-भारत" दैनिक कर दिया गया जो आजकल नागपुर, रायपुर, भोपाल से एक साथ प्रकाशित होता है। आप सन् १९२० में "माहेश्वरी स्वयं सेवक संघ", जो नागपुर में स्थापित किया गया, के प्रथम

अध्यक्ष रहे हैं। उस समय संघ ने राष्ट्रोंन्नति व सामाजिक जागरण की भावना लोगों में पैदा की। "राजस्थानी नव जीवन मंडल" के सेक्रेटरी पद पर आप अभूतपूर्व कार्य कर चुके हैं। आप अखिल भारतीय मारवाड़ी सम्मेलन के सभापति तथा अखिल भारतीय माहेश्वरी महासभा के सभापति भी रहकर समाजोत्थान में ऐतिहासिक कार्य कर चुके हैं। इसके अलावा सेकड़ों सामाजिक संस्थाओं के आप कार्यकर्ता रहे हैं। मारवाड़ी समाज की अन्धी परम्पराओं, व्याघात करने वाली कुप्रथाओं को तोड़कर एक आदर्श प्रस्तुत किया है। हमारे जननायक बियाणीजी ने अपने सुपुत्र का विवाह सर्व प्रथम खत्री परिवार में करके अन्त-र्जातीय विवाह को प्रेरणा दी है, और यश के भागी बने हैं। इस विवाह से उस समय आन्दोलन को बड़ा भारी बल मिला। आपने समाज को नए मोड़ की दिशा दी है तथा "मायड़ भाषा राजस्थानी" द्वारा जो विचारों की देन दी है वह सदैव इतिहास के पृष्ठों में अमर रहेगी। आप राजस्थानी भाषा के प्रमुख गद्य लेखक भी हैं।

जिन लोगों के साथ आपका सीधा सम्पर्क रहा है उनके हृदयों पर संस्मरणों की छाप चिर-स्मरणीय रहेगी। आपका सामिप्य और सम्पर्क कितना कोमल एवं मधुर है, यह तो प्रथम भेंट में ही मालूम पड़ जाता है। जीवन संग्राम में कर्तव्य ही आपके पथ में सदा प्रेरणा का स्रोत रहा है। छोटे से छोटे और बड़े से बड़े मानव के साथ एकसा व्यवहार करने वाले प्रतिभा के धनी बियाणीजी हैं। आपके व्यक्तित्व की ओर आकृष्ट होने का दूसरा पहलू आपके स्वभाव की कोमलता है।

आपने अपने जीवन में अनेक उतार चढ़ाव देखे, सामन्तशाही का प्रौढ़-काल और पतन भी देखा, अंग्रेज हाकिमों का ज़ुल्म सहा, सामाजिक कुरीतियों से लड़े। आज़ादी प्राप्ति की लम्बी लड़ाई में जेल यात्राएँ कीं। स्वतन्त्रता के बाद बरार मध्य प्रदेश का शासन सूत्र अर्थ मंत्री पद को संभाला। देश की अनेकों सरकारी कमेटियों, कमीशनों, आयोगों के सदस्य रहे। पत्रकारिता के कटु अनुभव प्राप्त किए। अब इन्दौर से निकलने वाले "विश्व-विलोक" पत्र के आप सम्पादक हैं।

बियाणीजी अपने जीवनकाल के ७० बसन्त पार करके ७१ वें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। मैं उनके दीर्घ जीवन की मंगल कामना भगवान से करता हूँ। ★

फूल के माधुर्य पर भौंरे का शुक्रिया

लेखक
ज्वाला प्रसाद ज्योतिषी—सागर
(सदस्य, लोकसभा; भूतपूर्व विधान-सभा सदस्य, मध्य प्रदेश; लेखक एवं सामाजिक कार्यकर्ता।)

लगभग चौदह वर्ष हो चले ! मुख्य मन्त्री के बंगले पर कांग्रेस दल के विधायकों की बैठक थी। नागपुर की बात है। नागपुर तब मध्य प्रदेश की राजधानी था। मैं सड़क के बाजू से चला जा रहा था—सोचता हुआ ! क्या हम मौज और मस्ती में भूल जाएँगे उन संकल्पों को जिन्हें आज़ादी के पहले दोहराया है—बार बार ऊँचे मंचों से ? क्या चेतना का यह विराट पुंज डूब जाएगा किसी निष्क्रियता के महा खड्ड में ? गांधी का देश, जिसने आंधी जैसा उमड़कर तहस-नहस कर दिया ब्रिटिश साम्राज्य को, क्या खो जायगा फिर संकुचित दल बन्दियों और स्वार्थों के दलदल में ?

अचानक ठीक पीठ के पीछे आकर प्रेम की आवाज़ के साथ एक मिनिस्टीरियल कार रुक गई। मैंने मुड़कर देखा। बियाणीजी की सवारी थी। भाई मरौठीजी चीख उठे, "अरे पंडत क्या कोई नशा वशा करने लगे ?"

"हमारे नशे की कुछ न पूछो !" मैंने हँसते हुए कहा। "अब तो यही एक तमन्ना हो सकती है कि ऐसी किसी कार के नीचे दब मरें कि शहादत का शौक पूरा हो जाए। नशा तो साथियों को हो जाता है मिनिस्टर की कार पर चढ़ कर।"

"उसी नशे में शामिल करने को गाड़ी रोकी गई है हुज़ूर", बियाणीजी बोले।

"पर कार में जगह भी तो हो सरकार, और अब मंजिल भी आ चुकी है," मैंने कहा।

"अजी दिल में जगह चाहिए ! फिर भले आदमियों की सोहबत एक मिनिट की भी भली", बियाणीजी ने कहा।

"दिलों की जगह की बात तो दिल वाले ही करें; रही भले आदमियों की

सोहबत की बात, सो आप पर कोई शक नहीं; पर अपने पास सनद नहीं !" मैंने कहा !

"क्या सब को पैदल चलाएगा भले आदमी ?" मरौठी ने यह कहते हुए मुझे गाड़ी के भीतर खींच लिया ! और उसी समय बियाणीजी पूछ बैठे : "हाँ भई और आपके दिल को क्या हुआ ?"

मरौठी को धक्का देते हुए मैंने कहा : "कुछ न पूछिए उसका हाल। उसे बेकार समझ इस बनिए के छोकरे ने कबाड़ी को बेच दिया !" गाड़ी में बैठे सभी लोग खिल खिलाकर हँस पड़े। शुक्लजी के बंगले में गाड़ी पहुँच चुकी थी। हम लोग गाड़ी से उतरे। एक अर्से के बाद बियाणीजी से भेंट हुई थी। लगभग तीन साढ़े तीन बरस हम लोग विधान सभा में साथ साथ रहे। मैंने देखा—उनकी कार के दरवाज़े की तरह, उनके घर के दरवाज़े, उनके अतिथि गृह के दरवाज़े और एक बड़ी हद तक उनके हृदय के दरवाज़े भी सब के लिए खुले रहते थे और अब भी खुले रहते हैं। उनकी कार के ब्रेक ने जो आवाज़ की थी, मीठी और द्वार के भीतर बुलाती सी, वही आवाज़, स्पष्ट और प्रेम भरी, हमेशा सब का स्वागत करने को प्रस्तुत रहती है।

१९३० में जबलपुर जेल में मैंने पहले पहल देखा था बियाणीजी को। छोटे से क़द का एक दुबला-पतला सा नौजवान, बीच में से मांग काढ़े हुए एक काफ़ी चमकता सा चेहरा। आँखों में काफ़ी तेज़। शायद पाँच दस दिन ही रहे थे वे जबलपुर जेल में। फिर कहीं बाहर खिसका दिए गए थे। उन दिनों की सरकारी भाषा में पोलिटिकल बदमाशों के साथ यही सुलूक किया जाता था। तो बियाणीजी सरकार की नजर में पोलिटिकल बदमाश थे। ओह हम सभी पोलीटिकल्ली आवारा, शोहदे और उचक्के ही तो समझे जाते थे। कोई बड़े, कोई छोटे। हम तीसरे दर्जे के कैदियों में चर्चा थी—किसी बड़े सेठिये का लौंडा है ये ! बाप की मिलें चलती हैं। आन्दोलन में रुपया उलीच दिया इसने ! बुजुर्गों में चर्चा थी, बरार के बहुत बड़े नेता हैं। नेता नामधारी जीवों से अपने राम का कभी कोई नज़दीक का रिश्ता नहीं रहा। अपने गले ने उनका जय जयकार बोला है। उनके रथों के पीछे अपने राम दौड़े हैं और उनके पहियों की धूल खाई है। नेता की हैसियत से भी बियाणीजी से अपना कोई बड़ा रिश्ता नहीं।

इस देश का बड़ा दुर्भाग्य है कि इसमें राजनीति को बहुत महत्व मिल रहा है। कल की बात अलग थी। कल की राजनीति युद्ध की राजनीति थी। संघर्ष की राजनीति थी। कल जो राजनीति में भाग लेता था वह एक राष्ट्रीय महापुरुष था।

लेकिन राजनीति की संदूक में बन्द रहने वाला, लोगों की जेबें काटने वाला चूहा भी पचास वर्ष बाद क्या पुजापा पाता रहेगा ? मैं समझता हूँ कि देश अब ये सोचे कि अच्छी नसल की गाय तैयार करना, लदबद फलने वाली धान और गेहूँ का बीज तैयार करना भी बड़ी देश सेवा है। एक ऐसा गीत लिख देना जिस पर छयालीस करोड़ जिन्दगियाँ तलवार बनकर चमक उठें—एक ऐसी ईजाद कर देना जिससे मोर्चे पर खड़ा शत्रु का टैंक पानी बनकर बह पड़े, एक बहुत बड़ी देश सेवा है। ज़रूरी है कि देश का नेतृत्व देश को उन क्षेत्रों में गतिशील होने को प्रेरित करे।

गांधीजी के युग में कहते हैं देश में राजनीति के क्षेत्र में गांधीजी बागवानी करते थे। वे देखते थे कि किस क्षेत्र में कौन पौधा रोपा जाए। किसे कैसा खाद और पानी दिया जाए। किन तत्वों से किसकी रक्षा की जाए, इसका उन्हें ख्याल था। और इसी का नतीजा था कि बियाणीजी जैसे व्यक्ति भी उभर सके, अपना सम्पूर्ण व्यक्तित्व लेकर राष्ट्र मां की सेवा कर सके। दुर्भाग्यवश गांधीजी के बाद यह बागवानी खत्म हो गई। राजनीति का बगीचा जंगल बन गया और उसमें फूलों और फलों के पौधों की परवरिश के बजाय जंगल जैसी दरख्तों की बेतहाशा कटाई शुरू हो गई। मेरी खिड़की के सामने यदि एक बहुत मीठा फल-दार आम है, लेकिन अगर मेरी बिल्ली का डाक्टर बिल्ली की बीमारी का कारण आम से पैदा होने वाली एलर्जी बताता है, तो आम का दरख्त काट दिया जाता है।

अगर हम राजनीति के बाग को व्यक्तियों का कत्ल-गाह नहीं बनाना चाहते, तो हमें सोचना होगा कि हम लोकोपयोगी तत्वों को उठने और उभरने दें। यह सच है कि बाग जंगल नहीं होता। उसमें पौधों का एक योजनाबद्ध क्रम होता है। उनकी एक संगति होती है, साम्य होता है। उसका निर्वाह ज़रूरी है। इसीलिए एक सीमा तक उसमें काट-छांट होती है। लेकिन उस काट-छाँट का अर्थ होता है एक संतुलित—उन्नततर महत्तर विकास। बागवान की कैंची परशुराम का कुल्हाड़ा नहीं जो किसी भी गर्दन को कहीं से भी काट दे। मुझे लगता है कि आज का समाज का बहुत सा असंतोष निर्माण के क्षेत्र में बागवान जैसी सूझ की कमी के कारण है। मैं जानता हूँ कि कितने बहुत से लोग हैं जो वक्त पर प्रेम भरे हाथों की पुचकार न मिलने के कारण ही बाग़ी हो उठते हैं। कितनी बहुत सी शाखें हैं, सार्वजनिक जीवन के उपवन की, जो यदि प्यार भीने हाथों से सँवारी गई होतीं तो कटती नहीं, और बाग का उनसे श्रृंगार होता।

मुझे शेक्सपियर के कोर्यालिनस की याद आती है। मैं जानता हूँ, प्रतिभा दब्बू नहीं होती। वह कुत्ती नहीं जो किसी की जूतियाँ चाटकर जिए। वह तो आकाश की छाती पर दमकनेवाले सूर्य की प्रखर ज्योति है जो अपने गौरव में राजमंदिर के शिखर पर ही दमकती है। हाँ अपनी प्रीति और समर्पण भावना के कारण अकिंचन कुटीरों के आँगन में लौटती है। प्रतिभा को जब भी और जहाँ भी ठुकराया जावेगा--उसके साथ नासमझी की जावेगी---उसे दुलारा ना आवेगा--वह विद्रोह करेगी। श्री बियाणीजी ने भी एक दिन विद्रोह किया था---ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ, विद्रोह का बिगुल फूंकने वाला वीर एक दिन उस माँ के विरुद्ध कर बैठा था---मेरा मतलब कांग्रेस से है क्योंकि उसे लगा था---माँ उसकी चीख नहीं सुन रही!

मुझे बियाणीजी का वह विद्रोह अच्छा नहीं लगा था। मेरे बीसों साथी भी ऐसे मौकों पर विद्रोह करके बाहर चले गए थे। मुझे उनका विद्रोह भी अच्छा नहीं लगा था। लेकिन सच है कि सूरत में वे उतने पुरुष और पौरुष युक्त न दिखते हों, परन्तु वह उनके सशक्त पौरुष का ज्वलन्त प्रमाण है। निश्चय ही यह आत्महत्या जैसी बात है। लेकिन अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने पर उपेक्षा होती हो तो आत्म हत्या करके भी लोगों को सोचने के लिए विवश कर देना अनुचित न होगा। श्री बियाणीजी ने एक दिन अपने को राजनैतिक फाँसी के फंदे पर लटकाकर देश को पुकारा था कि वह विचार करे कि उनका कहना सही है।

मैं किसी तथ्य विशेष के औचित्य पर चर्चा नहीं करूँगा। मैं दीपक के प्रकाश की उज्जवलता और दृष्टि की शुद्धता के बिना सही तत्व की उपलब्धि की अपेक्षा नहीं करता। हम सभी के चिन्तन में कितना दोष है। हम सभी अधिकांश भीख में मिली ज्योति के प्रकाश में सत्य को पहचानने और पकड़ने की कोशिश करते हैं। पता नहीं रहता हमें कि कौनसी प्रेत छाया हमारे दृष्टिपथ को दूषित कर रही है। स्वस्थ आत्मचिंतन के प्रकाश के बिना कितने लोग कब कब गुमराह नहीं हुए। लेकिन अपनी आस्था और विश्वास के प्रकाश में--भले ही ग़लत क्यों न रहा हो---कठिन से कठिन साधना के रास्ते पर चल पड़ना अपने आप में प्रशंसनीय है। मेरी समझ में ऐसी राह पर, जो वाक़ई में अंततः सही सिद्ध हो, चलना अत्यन्त प्रशंसनीय है। लेकिन अंगारों को कुचलते हुए अपनी आस्था के प्रकाश में दौड़ना पुरुषत्व की एक जीवनमयी निशानी है।

श्री बियाणीजी ने विद्रोह करके--कांग्रेस से झगड़ा करके--अपने पौरुष का परि-

चय दिया और फिर धुंधलके उठ जाने पर, दृष्टि पथ के साफ हो जाने पर, पश्चाताप करके पुराने पथ पर आकर अपनी विवेकशीलता का भी परिचय दिया। विराट विश्व के इतिहास में क्षुद्र आदमी की सफलताओं और विफलताओं का कितना मूल्य ! एक अंगुल आगे सफलता है। एक अंगुल पीछे विफलता। मुझे तो लगता है–जिन्दगी की सफलता अपनी आस्था के पथ पर अपने विश्वास के डग रखते हुए चलते जाने में ही है : चरैवेति ! चरैवेति ! श्री बियाणीजी यत्नशील रहे, सदैव सफलता और विफलता का खयाल न करते हुए अपने साधना पथ पर चलते रहने में। वणिक होकर भी वणिक बुद्धि युक्त न होना उनका–मुझे बहुत अच्छा और बहुत मीठा लगता है। यदि हम फलों को खुद खाने की कामना के दायरे में अपनी सब साधना बाँध लेंगे तो बहुत वर्षों में पकने वाले फलों के झाड़ कौन उगाएगा ?

मुझे लगता है, आज की दुनिया अधिकाधिक वाणिज्यमयी होती जा रही है। श्री बियाणीजी ने प्रीति का वाणिज्य किया। जहाँ तक मुझे ज्ञात हुआ वे सचमुच कोई बड़े दौलतमंद न थे। पर प्रीति ने उनके लिए दौलतमंदों की तिजोरी के द्वार खोल रखे थे। उन्होंने अपनी तिजोरी खोली और दूसरों की तिजोरी भी खोली। मैं नहीं जानता कि ये सब कहाँ तक सच है ? पर मुझे लगता है कि महल में रह कर भी उन्होंने फकीरी से मुहब्बत की। अगर किसी जेल यात्री छोकरे ने मिठाई की माँग की तो ५० कोपर मिठाई आकर बट गई। मैं नहीं जानता कि बियाणीजी का बैंक बैलेंस पहले कितना था और अब कितना है ? मैं यह जानता हूँ कि रुपए पैसों का जोड़-तोड़ लगाने वाली दुनिया इन चीजों की कद्रदानी भूल रही है। लेकिन यह सच है कि औरों के सुख के लिए अपने घर में आग लगाने वाले फक्कड़ों के बादशाहों को दो दस आँखों के आँसुओं का प्यार भी मिल जाता है, तो उनके लिए वह संसार की दौलत से बढ़कर होता है। अर्थ के क्षेत्र में मैंने ज़िंदगीभर अनर्थ ही किया है, पर मुझे बियाणीजी के साथ में मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अर्थ मंत्री की तरह काम करने का मौक़ा मिला। मैंने देखा कि वे एक कर्मठ व्यक्ति हैं। मुझे खुशी है कि उनके नेतृत्व में मोर भवन खड़ा हो सका, जिसका अनुष्ठान राष्ट्रप्राण पंडित नेहरू के हाथों से पूरा हुआ। मैंने देखा कि बियाणीजी एक मधुर होते हुए भी सख्त व्यक्ति हैं। मधुरता शायद उनकी उपार्जित सम्पत्ति है। दृढ़ता उनकी रीढ़ की हड्डी का नाम है। ये दुनिया दांवों पेंचों से भरी है। हमने कभी पतंग नहीं लड़ाई। हमने कभी मंझा तैयार नहीं किया। बियाणीजी प्रदेश की राजनीति

के एक धग्गड़ हैं। पतंगों के डोर मंझे की बात वे जानें। हमने उन्हें आदमी की तरह ज्यादा देखा। एक साहित्यिक की तरह थोड़ा पढ़ा। एक सहृदय आदमी हैं वे–निश्चित ही सरल-उदार और प्रेम भरे। साहित्यकार की पूंजी--सहृदयता, संवेदनशीलता और सूझ–है उनके पास काफी मात्रा में! मुश्किल यह है कि राजनीति की भैंस हम सब के हृदय के बगीचों में घुस जाती है। चरती रहती है वह हमारी मधुर कोमल भावनाएँ! कितना गोबर फैला देती है वह चारों ओर! कितने गड्ढे कर देती है वह सब में! बियाणीजी का एक छोटा सा लेख मुझे ज़िंदगी भर याद रहेगा–'नव भारत' दीपावली अंक का वह लेख। पत्नी की पेटी में मिला पुराना चालीसा सिक्का--शुद्ध चांदी का सिक्का। इसका बाज़ार में चलन नहीं है। ओह राजनीति के बाजार में किस सिक्के का कितने दिन का चलना। कब कहाँ कौन बन्द हो जाए, क्या पता? प्रीति के बाजार में लेकिन हर चीज का अपना स्थान है। मैं तो कहता हूँ, साहित्य की दुनिया में हर ईमानदार अभिव्यक्ति का स्थायी मूल्य है। बियाणीजी के अभिनन्दन के इन क्षणों में मैं उनका अभिनन्दन करता हुआ उनके दीर्घजीवन की कामना करता हूँ। मैं इस बात पर विश्वास करता हूँ कि राजनीति की टकसालें बन्द हो जाती हैं, पुराने सिक्के काटकर कवाड़खाने में फेंक दिए जाते हैं। क्रामवेल के ज़माने की बात है: कितने राजनायकों की लाशें कब्रों से निकालकर शूली पर टाँगी गईं थीं। मुझे भरोसा है साहित्य की दुनिया में ऐसा कभी नहीं हुआ–ऐसा कभी नहीं होगा। कुछ दूकानदारों की बात अलग है जो कागज़ के फूलों पर नकली इत्र मलकर उन्हें नये नये नाम देकर बेचते रहे हैं और बेचते रहेंगे। लेकिन रसिक भौंरों की आँखों में वे कभी धूल न झोंक सकेंगे। अगर किसी उपवन से दूर किसी अज्ञात कोने में खड़े रसहीन जैसा दीखते वृक्ष की शाख पर भी कभी कोई रस भरी कली खिलेगी, तो प्रीति भरा भौंरा सुगन्ध से झूमता हुआ निश्चिय ही उसके पास जाएगा। श्री बियाणीजी की रस भरी ज़िन्दगी के झक्कड़ से दीखते दरख्त ने कुछ कुछ मधुर फूल दिए हैं—बहुत मधुर फूल दिए हैं। मेरे मन का माधुर्य लोभी भौंरा उनकी माधुरी का शुक्रिया अदा करता है। ★

हिन्दू मुस्लिम एकता की कड़ी श्री बियाणीजी

लेखक—
महेशचन्द्र जोशी, एम.ए., एल एल.बी.—इन्दौर
(प्राध्यापक एवं लेखक)

भारत में हिन्दू और मुसलमानों के बीच वैमनस्यता के बीज बोकर अंग्रेजों ने जो एक घातक कार्य किया वह किसी से छिपा नहीं है। इसने भारतवर्ष में जो एक लम्बी अशान्ति के बीज बोए उसके प्रति सारे कर्मठ नेता सतर्क रहे; उनमें लगनशील कार्यकर्ता श्री ब्रजलाल बियाणी का स्थान महत्वपूर्ण है। आपने सोलह वर्षों तक विदर्भ में हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के लिए निरंतर अथक परिश्रम किया, मुस्लिम समाज से निकट सम्बन्ध स्थापित किया, उनके कार्यकर्ताओं को विश्वास में लिया और हर तरह से हर क्षेत्र में मुसलमानों का साथ दिया। फलतः बरार के मुसलमानों ने आपको अपना एकमात्र विश्वासपात्र नेता माना। बरार के मुस्लिम समाज को कांग्रेस में दीक्षित करने का श्रेय आप ही को है।

विदर्भ में जब जब हिन्दू-मुस्लिम दंगे की स्थिति पैदा हुई, तब तब आपने न्याय का पक्ष ग्रहण किया तथा अपनी कुशलता से वहां दंगे की आँच नहीं पहुँचने दी। उनकी न्यायप्रियता के सम्बन्ध में एक उदाहरण पर्याप्त होगा—एक बार एक पीपल के पेड़ को लेकर बरार में हिन्दू-मुसलमान संघर्ष स्थापित हुआ। बात यह थी कि पीपल की एक डाली मुसलमानों के ताजियों को निकालने में बाधा पहुँचाती थी। इस प्रश्न को लेकर तनातनी का वातावरण पैदा हो गया। आखिर दोनों पक्षों के नेता श्री बियाणीजी के पास पहुँचे। बियाणीजी ने गम्भीरतापूर्वक दोनों पक्षों के तर्क सुने, मौक़ा देखा और निश्चित तथा दृढ़ शब्दों में निर्णय दिया कि पीपल की डाली को ऊपर खींचकर पास की गैलरी से बाँध दी जाय और यदि इतने पर भी ताजियों के निकलने में अड़चन पड़ती हो तो उस डाली को काट दी जाय। आपके इस निर्णय में जो निर्भयता दृष्टिगत होती है वह आपके चरित्र की एक उल्लेखनीय विशेषता है। इस निर्भीक वृत्ति ने ही आपको 'विदर्भ केसरी' नाम से प्रसिद्ध किया।

जब बरार में परिस्थिति बिगड़ी और वहाँ के मुसलमानों ने मुस्लिम लीग से सम्बन्ध स्थापित किया, तब भी श्री बियाणीजी ने मुस्लिम समाज की सेवा में अपनी ओर से कोई कमी नहीं आने दी। मुसलमानों के प्रति आपकी आत्मीयता पहले जैसी ही बनी रही। जब पाकिस्तान का निर्माण हुआ और हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्यता ने उग्ररूप धारण किया, तब भी आपने अपने अथक प्रयत्नों से मुस्लिम समाज में विश्वास उत्पन्न किया और उन्हें फिर से कांग्रेस में लिया। बरार की मुस्लिम लीग श्री बियाणीजी के प्रयत्नों के फलस्वरूप वहाँ नाममात्र के लिए शेष रह गई। सारे मुसलमान समाज को कांग्रेस के झण्डे के नीचे ले आना कोई साधारण कार्य नहीं था।

हैदराबाद प्रकरण के समय भयभीत मुसलमानों ने जब बरार छोड़कर जाने की तैयारी की तब भी बियाणीजी ने मुसलमानों को अभय देकर उनके मन में विश्वास जागृत किया और उन्हें प्रेम से वापस रोक लिया। अकोला के श्री गयासुद्दीन काज़ी वकील को प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के प्रतिनिधि के रूप में लाने तथा बुलढाना जिले से असेम्बली में मुसलमानों के लिए सुरक्षित स्थान की पूर्ति के समय किए गए आपके प्रयत्न सर्व विदित हैं।

श्री बियाणीजी के सम्बन्ध में यदि यह कहा जाय कि वे हिन्दुओं और मुसलमानों के हृदयों को जोड़ने की एक कड़ी हैं, तो अत्युक्ति नहीं होगी। राजनैतिक मतभेदों के कारण किसी प्रकार की कटुता न उत्पन्न होने देना और सम्बन्धों की मधुरता को बनाए रखना, आपकी अपनी विशेषता है। यहाँ तक कि हिन्दू महासभा के अध्यक्ष मामा जोगलेकर से आपके जो सम्बन्ध रहे, राजनैतिक सम्बन्धों के बावजूद भी उनकी मधुरता में किसी प्रकार की कमी नहीं आई। आपकी स्वर्ण जयन्ती के समय श्री जोगलेकर ने ही सभापतित्व किया और श्री बियाणीजी के सम्बन्ध में आपने कहा कि "सन् १९२७ में एक सभा में मैंने श्री बियाणीजी को 'विदर्भ के जवाहरलाल' कहा था और आज आप अपने गुणों से वास्तव में जवाहरलाल बन गए हैं। आप विदर्भ के सुपुत्र हैं।"

श्री बियाणीजी ने हिन्दू मुसलमानों में आत्मीयता एवं परस्पर विश्वास पैदा करने, उन्हें कांग्रेस में लाने तथा उनका नेतृत्व करने का कार्य अत्यन्त सफलतापूर्वक किया है। बरार क्षेत्र में दूसरा कोई भी नेता सफलतापूर्वक ऐसा कार्य नहीं कर पाया है। वहाँ के मुसलमानों में और हिन्दुओं में अटूट प्रेम और विश्वास उत्पन्न कर आपने देश की चिरस्मरणीय सेवा की है। ★

मारवाड़ी समाज के कार्यकर्ता

लेखक—

नथमल झुन्झुनवाल——अकोला

(बियाणीजी के बाल मित्र एवं व्यवसायी ।)

भाई ब्रजलालजी का और मेरा परिचय सन् १९२२ में जब वे अकोला में अखिल भारतवर्षीय महासभा का अधिवेशन का कार्य भार सम्भालने के लिए आए तब हुआ था। उन्होंने उस अधिवेशन को अपनी कुशलता से बहुत सरलता पूर्वक सम्पन्न किया। उनकी बुद्धिमत्ता और संघठन कुशलता देखकर उस अधिवेशन में पधारे हुए दूसरे प्रान्त के सज्जनों पर भी बहुत छाप पड़ी, और तभी से ब्रजलालजी माहेश्वरी समाज के एक प्रमुख नेता हो गए।

भाई ब्रजलालजी ने अकोला में रहकर सामाजिक सुधार का कार्य करके मारवाड़ी समाज की बहुत सेवा की है। मारवाड़ी समाज की पर्दा प्रथा, वृद्ध-विवाह, मृत्युभोज आदि कुरीतियों को समाज में बन्द कराने के लिए बहुत कार्य किया है। उन्होंने इस काम को करने के लिए अपनी बुद्धिमत्ता से तथा मृदु वाणी से अकोला के तरुण युवकों को तथा अपने से बड़ी उम्र के धन सम्पन्न सज्जनों को भी तैयार किया। उनमें मुख्यतः श्री आईदानजी मोहता, श्री लक्ष्मीनारायणजी श्रावगी, श्री रामप्रसादजी भरतिया, श्री बंसीधरजी झुंझणुवाल, श्री रामगोपालजी कोठारी, श्री बन्सीधरजी तोषणीवाल के नाम उल्लेखनीय हैं। मृत्युभोज बन्द कराने के लिए जहां आवश्यकता मालूम पड़ी वहाँ पिकेटिंग भी बहुत से युवकों के साथ में किया। वृद्ध विवाह रोकने के लिए जहाँ आवश्यकता पड़ी वहाँ कोर्ट का सहारा लेकर वृद्ध विवाह को रोका। हींगणघाट के माहेश्वरी समाज के एक धनवान वृद्ध सज्जन का विवाह अकोला के डिस्ट्रिक्ट कोर्ट में गार्डियन और लार्ड एक्ट के अनुसार दाखिल कराकर केस जीतकर वृद्ध विवाह को रोक दिया। श्री किशन-लालजी गोयनका १९२९ में विलायत यात्रा करके आए थे, तब अकोला के मार-वाड़ी समाज में काफ़ी संघर्ष हुआ था। उस समय भाई ब्रजलालजी तथा इनके साथियों ने श्री किसनलालजी गोयनका का साथ दिया था। तब मारवाड़ी समाज

के सनातनी कहलाने वाले सज्जनों ने पंचायत भराकर, श्री किसनलालजी गोयनका का साथ देने वालों में से कुछ सज्जनों को जाति बहिष्कृत कर दिया और कुछ को अपने साथ में रखकर पक्षपातपूर्ण निर्णय किया था। तब बड़ी कुशलता से प्रचार द्वारा सनातनी कहलाने वालों का भ्रम-निवारण किया और उनको पक्ष में कर लिया।

भाई ब्रजलालजी को अन्य कई प्रान्तों में वहाँ के मारवाड़ी समाज के सम्मेलनों में अध्यक्ष बनकर जाना पड़ता था। इनके साथ सहारनपुर, बम्बई, कलकत्ता आदि स्थानों में मुझे भी जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वहाँ पर भी सभा के प्रस्ताव आदि बहुत-सी कार्यवाही इनकी सलाह से ही होती थी, और इनके व्याख्यान का प्रभाव वहाँ के समाज पर बहुत अच्छा होता था।

भाई ब्रजलालजी फिर अपना कार्यक्षेत्र बहुत बढ़ाकर विदर्भ के राजकार्य में भी काम करने लगे और थोड़े ही समय में विदर्भ के प्रमुख नेता बन गए। उन्होंने अपने सतत् प्रयत्न से विदर्भ में बहुजन समाज में काम करके उसे जागृत किया। उसमें से अनेकों को कांग्रेस का अनुयायी बनाया। बहुजन समाज इनकी सेवा से प्रभावित होकर इनको विदर्भ केसरी के नाम से सम्बोधित करने लग गया। इन्होंने अपने त्याग के बल पर ही विदर्भ कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष पद १२ वर्ष निरन्तर सुशोभित किया। विदर्भ की ओर से दिल्ली स्टेट कौंसिल के मेम्बर भी चुने गए। पुराने मध्य प्रान्त में आपने अर्थ मन्त्री की हैसियत से भी बहुत कार्य किया।

आजकल आप 'विश्व-विलोक' नामक पाक्षिक हिन्दी पत्रिका का सम्पादन कर रहे हैं तथा अपने उच्चकोटि के विचारों द्वारा भारतीय समाज का मार्गदर्शन करने में संलग्न हैं।

★

ढर्रे से अलग नेता

लेखक
राहुल बारपुते—इन्दौर
(सम्पादक, नई दुनिया; नाटककार एवं वक्ता।)

बियाणीजी के बारे में मेरी जानकारी कम है, इसलिए मैं उनके बारे में काफ़ी कुछ लिख सकता हूँ। क्योंकि, सही बात कहने की जिम्मेदारी जानकार की होती है, अज्ञानी की नहीं। जो बियाणीजी को काफी लम्बे अरसे से जानते हैं, उनके निकट के हैं या जिन्होंने उनके साथ उनकी विविध प्रवृत्तियों में काम किया है और इस प्रकार उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को जाना है वे "क्या लिखूं और क्या न लिखूं" की दुविधा में अवश्य ही उलझेंगे। सौभाग्य से मेरी स्थिति ऐसी नहीं है।

बेशक, "विदर्भ केसरी" ब्रजलाल बियाणी का नाम मैं वर्षों पूर्व से सुनता और पढ़ता चला आ रहा हूँ। स्वाभाविक भी है। न सिर्फ वे कांग्रेस के नेताओं में से एक रहे हैं; बल्कि मध्यप्रदेश के मन्त्रिमण्डल में भी थे। फिर "मातृभूमि" नामक उनका एक अखवार भी है। राज्य पुनर्गठन के दिनों में "नाग विदर्भ" के आन्दोलन के सिलसिले में तो खैर बियाणीजी का नाम, अणे साहब के साथ सुर्खियों में छपता ही था। एक अखबार में काम करने वाला होने के कारण यदि मैं चाहता भी तो उक्त सारी जानकारी से अपने आपको अनभिज्ञ नहीं रख सकता था। लेकिन यह जानकारी मेरे लिए मेरे व्यक्तित्व का कोई भाग नहीं थी। ठीक उसी प्रकार जैसे ज्यामिती के अनेक प्रयोगों से, जिन्हें मैं बचपन से ही अच्छी तरह जानता रहा हूँ, मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु पिछले डेढ़ दो वर्षों से हालत कुछ बदली है। क्योंकि इस अर्से में विभिन्न मंचों पर तथा व्यक्तिगत रूप से भी उनसे मिलने के अवसर आए। यही नहीं, उनके प्रति एक-दो छोटे-मोटे प्रमादों के लिए भी मैं जिम्मेदार रहा हूँ। जिनके लिए वे चाहते तो मुझे उलहना दे सकते थे (अब भी दे सकते हैं), पर दिया नहीं। मतलब, अब बियाणीजी मेरे लिए मात्र जानकारी

नहीं एक सजीव व्यक्तित्व हैं, जिनसे तथा जिनके बारे में विवाद किया जा सकता है और सहमत भी हुआ जा सकता है ।

'विदर्भ केसरी' के भारी-भरकम ख़िताब से अलंकृत ब्रजलालजी बियाणी का व्यक्तित्व सौम्य है । केसरी शब्द में साहस के साथ एक प्रकार की हिंस्र रक्तिमता भी झलकती है । साहस तो उनमें है, पर हिंस्र रक्तिमता का, मेरी राय में पूरी तरह अभाव है । बल्कि उनमें रसिकता का जो माद्दा है वह केसरी में शायद नहीं होता । 'शायद' इसलिए कि मैं किसी अन्य केसरी से उतना भी परिचित नहीं हूँ (और न होना चाहता हूँ) कि जितना बियाणीजी से हूँ ।

एक बात अवश्य है कि बियाणीजी को जब कुछ मैं जानने लगा तो मुझे लगा कि राजनीतिक नेताओं का जो एक सामान्य परिचित ढर्रा है उससे वे भिन्न हैं । मतलब यह कि वे मौलिक सोच-विचार से कतराते नहीं । जिन्होंने उनकी पुस्तकें पढ़ी हैं, वे इस बात से सहमत होंगे । एक किस्म की दार्शनिकता और सच्चाई उनके लेखन में है जो औसत राजनीतिक कार्यकर्ताओं में पायी नहीं जा सकती । उनका एक लेख है जिसमें उन्होंने एक नृत्यांगना के कार्यक्रम का माध्यम लेकर कला के बारे में अपनी मान्यताएँ व्यक्त की है । महत्व की बात, मेरी दृष्टि में उक्त मान्यताएँ नहीं, बल्कि उस कार्यक्रम में जाने के पूर्व की स्वयं की मनोदशाओं का जो विवरण उन्होंने किया है, वह है । एक ओर भद्रता, प्रतिष्ठा, समाज के लोग क्या कहेंगे, क्या ऐसे कार्यक्रम में जाना उचित होगा यह सारे डर तो दूसरी ओर जाने की इच्छा । बड़ा मज़ेदार अन्तर द्वन्द्व है । अपने बारे में इस प्रकार लिखना, खुद को ही स्वयं से अलग होकर देखने की कोशिश करना लीक से चिपक कर चलने वालों के लिए सम्भव नहीं है । अपनी कमज़ोरी छिपाने के प्रयास ही ज़्यादा होते हैं । बियाणीजी का अपना एक दृष्टिकोण है, इसमें शक नहीं ।

पर इस मानसिक पहलु तक पहुँचने के पहले ही मैं जिस बात से प्रभावित हुआ, वह है उनकी नफ़ासत । चीज़ों को ही नहीं, स्वयं को भी करीने से सजा कर रखने की उनकी प्रवृत्ति । बड़े व्यवस्थित आदमी हैं बियाणीजी ! जो काम करेंगे, व्यवस्थित ढंग से । सम्भव है कि मैं इसीलिए प्रभावित हुआ कि मैं स्वयं कुछ बेतरतीब हूँ, मित्रों की राय में कुछ नहीं, "बहुत अधिक" (बेतरतीब हूँ, लेकिन शिष्टाचार का तकाजा है कि आदमी स्वयं का बखान विनम्रता पूर्वक ही करे, इसलिए मैंने 'कुछ' का उपयोग किया है ।) परन्तु इस बात की छूट काटकर ही मैंने उनकी नफ़ासत का जिक्र किया है । नफ़ासत की खातिर जो उनका आग्रह है वह उनके स्वभाव का अंग बन गया है । जैसे किसी विषय पर लेख लिखने का निवेदन करने

पर तत्काल उत्तर आवेगा और फिर लेख भी, व्यवस्थित रूप से टाइप किया हुआ। ऐसा कि जिसे सीधे कम्पोज़ में दे दिया जावे। सम्पादक भी खुश और कम्पोज़ीटर प्रूफरीडर भी प्रसन्न।

अब, बियाणीजी पिछली पीढ़ी के नेता हैं। किन्तु यदि उन्होंने नाग विदर्भ आन्दोलन से स्वयं को पृथक रक्खा होता तो? यों राजनीति में 'यदि' और 'ऐसा होता तो' जैसी बातों के लिए विशेष स्थान उन्हीं के विचारों में होता है कि जो पराजित हैं। फिर भी मेरी मान्यता है कि यदि बियाणीजी नाग विदर्भ के आन्दोलन में शरीक न होते तो महाराष्ट्र सरकार में निश्चय ही ऊंचे ओहदे को सम्मानित करते। क्योंकि, वे उन लोगों से कि जो आज महाराष्ट्र में सत्ता की बागडोर थामे हैं, काफ़ी सीनियर हैं। शैक्षणिक परीक्षाओं में सप्लीमेन्टरी की गुंजाइश है, राजनीति में कम। बिरले ही सौभाग्यशाली होते हैं। लेकिन सत्तासीन होने पर भी आज की सक्रिय प्रभावशाली पीढ़ी में और उनमें अन्तर होना अनिवार्य ही था, यद्यपि उनका प्रयास बराबर बना रहता है कि वे आधुनिक विचार प्रवाहों से निकट का सम्पर्क बनाए रक्खें। पाक्षिक "विश्व विलोक" उक्त भावना के साथ ही साथ उनकी सचेष्ट उद्यमशीलता का परिचायक है, जो उनकी उम्र के अनुपात से कहीं अधिक है।

उम्र, पार्श्वभूमि, दृष्टिकोण आदि के अन्तर से उपजी कई चिलमनों के परे से मैंने बियाणीजी को देखा है, और उनके व्यक्तित्व की जो धुंधली सी रेखाएँ नज़र आई हैं, उनसे मैं प्रभावित हूँ, निःसन्देह।

★

विरोधी के भी हितैषी बियाणी

लेखक
दिनकर वासुदेव पिंगले—अकोला
(एडवोकेट एवं लेखक ।)

मेरा व भाईजी का खास सम्बन्ध व परिचय सन् १९२५ में हुआ। अकोला नगरपालिका में उस वर्ष मैं सिविल स्टेशन वार्ड में से सभासद चुना गया था तथा श्री भाईजी उपाध्यक्ष चुने गए थे। वे दूसरे दल के और मैं दूसरे पक्ष का था। दूसरे पक्ष का कहने के बजाय मैं जिस दल का अधिकृत रूप से सभासद चुना गया था बाद में उस दल में शामिल नहीं हो सका। परन्तु अन्य सभासद बहुत से विषयों में मेरा विरोध करते। श्री भाईजी फिर भी मेरी बातों को सहानुभूति से मान्यता देते। इतना ही नहीं सन् १९२६-२७ में उस संस्था का आठ महीने के लिए ऑनरेरी सेक्रेटरी का कार्य भी करना पड़ा। मेरे उस काम में उन्होंने अपने दल के बहुत से सदस्यों की बात न मानते हुए मुझे उचित सहायता दी इसलिए मेरे उल्लिखित कार्य को यशस्वी करने में भाईजी का काफी हिस्सा है। पक्ष-विपक्ष के कारण नगरपालिका का कार्य असमाधानकारक होने लगा तथा सभासद रहकर कोई उपयोग नहीं ऐसा उन्हें लगने लगा। उन्होंने अपने पक्ष के सभासदों के समक्ष त्याग देना चाहिए ऐसा कहा। सभी को यह जँचा परन्तु उन लोगों को कहना पड़ा कि यदि पिंगले त्याग-पत्र देंगे तभी कमेटी का विसर्जन हो सकेगा। भाईजी ने कहा कि पिंगले बिना कहे त्यागपत्र दे ही देंगे। उनका निदान अचूक ठहरा। उन्होंने तथा उनके पक्ष के सभी सदस्यों ने त्यागपत्र दिया और भाईजी मेरे पास यह समाचार कहने आए। तब मैंने उन्हे सूचित किया कि जिस समय आपने त्यागपत्र दिया उसी समय मेरा भी राजीनामा दिया गया है और वह अध्यक्ष के पास है।

इस तरह प्रतीत होनेवाले विरोधभाव में से ही उनका और मेरा स्नेह सम्बन्ध हुआ और उत्तरोत्तर बढ़ता गया और हम एक दूसरे को परममित्र समझते हैं। तत्पश्चात् भाईजी ने अपना सारा लक्ष व्यापक और ठोस राजकारण में केन्द्रित

किया। राष्ट्रीय आन्दोलन में पूर्णतया व दिल से भाग लेने लगे। कांग्रेस के निस्सीम सेवक और उपासक, महात्मा गांधी का तत्वज्ञान आचार-विचार के लिए जितना सम्भव होता आत्मसात कर तदनुसार वे आचरण करते। कांग्रेस के यद्यपि वे अत्यन्त ध्येयनिष्ठ कार्यकर्ता होने पर भी उनकी लोकसंग्रह की वृत्ति होने से उन्होंने सभी से चाहे कोई किसी भी पक्ष या धर्म का क्यों न हो मिलना-जुलना रखा। अहंकार उन्हें छू भी नहीं गया। अपने ध्येय के लिए कार्य सिद्धि के लिए उन्होंने अपना कार्य बिना किसी अवरोध के निर्मल एवं निरलस भाव से जारी रखा।

मैं कांग्रेस का सभासद नहीं था। तो भी उनका व मेरा स्नेह सम्बन्ध वृद्धि करता गया। सन् १९३०-३१ से हमारे राष्ट्रपिता ने जो आन्दोलन शुरू किया उसमें अकोला से स्वतन्त्रता संग्राम के पहले वीर अपने भाईजी थे। उनकी इच्छानुसार मैं कांग्रेस कार्यकर्ताओं के विरुद्ध न्यायालय में जो मुकदमे होते उस पर ध्यान दिया करता और जिस किसी का बचाव करना होता उसका न्यायालय में उचित ढंग से बचाव करने का काम करता। उनका मुझ पर बहुत विश्वास था और अभी भी है।

कार्य सरल भाव से व शुद्ध अन्तःकरण से, देश व लोकहित की दृष्टि से पर कांग्रेस का ध्येय न टालते हुए, सद्विवेक की रुचि के अनुसार कार्य करने की पद्धति उनकी होती थी।

उनका नम्र स्वभाव और मधुरवाणी जिसमें कटुता का लेश भी नहीं। बोलते हुए एकदम शान्तचित्त, किसी ने उनके विरुद्ध कोई टीकाटिप्पणी की या परुष भाषा का उपयोग किया तो भी वे अपना सन्तुलन नहीं छोड़ते और सभी का मन ठीक तरह से ढल सके ऐसे शब्दों में बोलते। श्रोतागण उनके भाषणों में बिलकुल तल्लीन हो जाते, जिस सभा में वे भाषण किया करते उस समय सभा में गड़बड़ नहीं हुआ करती थी। उनका राजस्थान (राजस्थान भवन) यानी सभी के ठहरने, रहने व विश्रान्ति का स्थान-छोटे-बड़े, सभी जाति व पंथ के लोग उनके यहाँ बराबर जाते और भाईजी भी उन्हें यथायोग्य परामर्श दिया करते। उनके घर कोई मिलने जाए तो उसे मिलने की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। अतिथि कुछ खाए जलपान करे ऐसा उनका आग्रह बराबर रहता। उसी तरह आए हुए अतिथि को जबतक सम्भव हो तब तक वे जाने नहीं देते। इसमें शक नहीं कि उनके इस काम में उनकी सुशील पत्नी और परिवार के लोग भी सहभागी रहा करते और अभी भी हैं।

मध्य प्रदेश मन्त्रिमण्डल में उन्हें मन्त्री के रूप में लेने के सम्बन्ध में काफ़ी विरोध था फिर भी उन्होंने अपना पथ नहीं छोड़ा और आखिरकार उनसे मन्त्रीपद स्वीकार करने का अनुरोध किया गया। उन्होंने अर्थमन्त्रीपद अत्यन्त कुशलता से और उत्तम ढंग से किया। साथ ही अनेक लोकोपयोगी कार्य भी उनके कार्यकाल में हुए। अकोला में कृषि महाविद्यालय उनके ही कारण खुला। मन्त्रिपद पर होते हुए भी उन्होंने कितने ही लोगों को आगत-स्वागत के लिए बुलाया और सभी से प्रसन्नचित्त होकर कुशल समाचार पूछा करते।

दुनिया में कभी-कभी ऐसा पाया जाता है कि 'बहुत अच्छा होना कम या ज्यादा प्रमाण में कष्टकर होता है।' (It is dangerous to be too good.) भाईजी सभी से निष्कपट भाव से व्यवहार करते हैं और वह प्रत्येक जो उनके सानिध्य में आता है सचमुच में वे उसे अपना ही पूरी ईमानदारी से समझते हैं। बहुत से लोग उनके प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के अधिकार एवं मन्त्रिपद का फ़ायदा उठाने के लिए उनके पीछे लगते और कुछ समय के लिए उनकी वाहवाह भी करते। स्वार्थसिद्धि के लिए बहुत से लोग उनके भक्तजन बनते व दिखावा करते। भाईजी को इसकी जानकारी (ज़रा देर से) हुई तो भी उन्होंने उनका साथ नहीं छोड़ा। स्वार्थकारण जिसे राजकारण कह सकते हैं, अगर वह राजकरण है तो उसमें से खुद ऊपर उठकर बियाणीजी को राजकारण में कैसे आघात पहुँचाया जाय ऐसी परिस्थिति निर्माण की गई। भाईजी डिगे नहीं। सभी परिस्थिति से टक्कर लेने की आदत होने के कारण उनकी महत्ता कम नहीं हो सकी। उल्टे विवेकशील व्यक्तियों की दृष्टि से वे अधिक ऊँचे दिखने लगे।

"विदर्भ स्वतन्त्र प्रान्त हो" इसलिए उन्होंने लोकनायक बापूजी अणे, जिन्हें वे गुरुतर स्थान पर मानते हैं, और संयोग की बात यही बापूजी मेरे अमरावती हाई स्कूल में शिक्षक भी थे, के सहयोग से बहुत ज़ोरों का आन्दोलन किया। उस वजह से उन पर कुछ लोग सकारण या अकारण नाराज भी हुए। विदर्भ के आठ ज़िले महाराष्ट्र में शामिल हुए, इसकी प्रान्तीय विधान सभा में भी भाईजी सदस्य चुन गए। परन्तु उनकी कुल वृत्ति के कारण वे बहुत दिनों तक नहीं रह सके अथवा उन्हें वैसा रहना असह्य प्रतीत हुआ। उन्होंने उस पद से यद्यपि त्यागपत्र दिया, तो भी किसी से शत्रुता उस कारण से नहीं निर्मित हुई। उन्हें इस कारण कष्ट भी सहन करने पड़े और मुकदमेबाजी भी उन पर हुई। भाईजी समाज सुधारक हैं। समयानुरूप तर्कशुद्ध आचार-विचार एवं समाज रचना हो ऐसी उनकी मान्यता है। वे अत्यन्त अध्ययनशील हैं, अंग्रेजी, मराठी और हिन्दी भाषा साहित्य का वे

सदैव पारायण करते हैं। सरस्वती तो उन पर प्रसन्न हैं; वे साहित्यिक भी हैं। हिन्दी भाषा की उन्होंने कितनी ही सेवा की है और खूब लिखा है।

कुछ दिन पहले उनसे मेरी उनके अकोला स्थित निवास स्थान पर मुलाक़ात हुई। पक्षाघात की बीमारी में से उनका स्वास्थ्य बहुत कुछ सुधरा हुआ प्रतीत हुआ और शीघ्र ही इन्दौर लौटने का मन्तव्य मुझे बताया। उन्होंने शेष जीवन साहित्य की सेवा में बिताने की उत्कट इच्छा व्यक्त की। ऐसे हैं हमारे व्रजलालजी बियाणी। उन्हें दीर्घायुष्य, आरोग्य व सुखी जीवन मिलता रहे यही मेरी प्रार्थना है। ★

निर्भीक व्यक्तित्व

लेखक
कल्याणराव—नागपुर
(लेखक एवं विदर्भ आन्दोलन के कार्यकर्ता।)

बियाणीजी गांधीजी के सच्चे अनुयायी हैं, वे कांग्रेस के पक्के निष्ठावान सेवक हैं और कई बार उनकी निष्ठा की परीक्षा भी हुई है। आखिरी परीक्षा उस समय हुई जबकि विदर्भ राज्य की स्थापना करने का निर्णय राज्य पुनर्गठन समिति ने लिया था। महाराष्ट्र में कांग्रेस को चुनौती से बड़ा भारी धक्का लगा था। महाराष्ट्र में कांग्रेस का पराभव हुआ और राष्ट्र नायकों को चिन्ता हुई कि क्या करना चाहिए ? बम्बई राज्य को, केरल जैसे कम्युनिस्टों के हाथ में चला गया, वैसा छोड़ देना या विदर्भ को बम्बई में मिलाकर कांग्रेस को संकट से ऊपर उठाना यह प्रश्न नेताओं के समक्ष था। इसके लिए राष्ट्र के नेताओं ने श्री ब्रजलालजी बियाणी को समझाया और स्थिति से पूर्णरूपेण अवगत कराया। बियाणी ने अपनी कमाई के विदर्भ राज्य का बलिदान दिया, और अपने विदर्भ राज्यवादी साथियों के साथ अपने कांग्रेस प्रेम का परिचय भी !

भाईजी वैसे तो कांग्रेस में सन् १९२०-२१ में आए, परन्तु विदर्भ के राज्य-कार्य में तब चमके, जबकि १९३१ में निज़ाम ने विदर्भ अर्थात् अकोला, अमरावती, यवतमाल और बुलडाना को वापस माँगना शुरू किया। स्वतन्त्र विदर्भ का नारा उस समय भाईजी ने लगाया। लोकनायक बापूजी अणे इस स्वतन्त्र विदर्भ समिति के अध्यक्ष थे और भाईजी मन्त्री थे। स्वतन्त्र विदर्भ समिति ने बहुत बड़ी जंग निज़ाम के विरुद्ध छेड़ी जिसका परिणाम यह हुआ कि लॉर्ड रीडिंग ने निज़ाम के विरुद्ध फैसला किया।

सन् १९३६ के बाद भाईजी विदर्भ के राज्यकार्य में बहुत ही चमक उठे। वणिक होने के कारण, इनके प्रति हीन-भावना दर्शाने का काम महाराष्ट्र के कई नेताओं ने किया, लेकिन फिर भी उनको विदर्भ को महाराष्ट्र में मिलाने में

बड़ी कठिनाई प्रतीत हुई। इस कठिनाई का अनुभव करते हुए उन महाराष्ट्रीय नेताओं ने अकोला क़रार किया।

इसके पूर्व भी विदर्भ महाराष्ट्र को मिलाने के लिए महाविदर्भ सभा ने अपने १९४३ के अमरावती अधिवेशन में इस आशय का सुझाव रखा था, लेकिन उनका विदर्भ महाराष्ट्र को एक विभाग है यह कहने का साहस नहीं हुआ। इसका कारण बियाणीजी ही है।

इसके बाद भाईजी के ख़िलाफ ज़ोरों का प्रचार शुरू हुआ पर भाईजी डरे नहीं और उन्होंने प्रसन्नचित्त एवं लगन से कांग्रेस की पूरी-पूरी सेवा की।

सन् १९३६ से १९४८ तक विदर्भ प्रदेश कांग्रेस के वे अध्यक्ष रहे। इसी काल में उनके विरुद्ध ज़हरीला प्रचार भी शुरू हुआ। जिस प्रकार विदर्भ के अन्तर्गत यह प्रचार जातीय भावना का आधार लेकर प्रारम्भ हुआ उसी प्रकार कांग्रेस के अन्दर भी। उसका नेतृत्व सरदार वल्लभभाई पटेल कर रहे थे। सन् १९४८ में नागपुर की एक आम सभा में बियाणीजी के ख़िलाफ 'कि वे आकर क्या करनेवाले हैं' ऐसे उद्गार विरोधियों तथा सरदार पटेल ने निकाले, लेकिन भाईजी उससे डरे नहीं। मध्यप्रदेश के तत्कालीन राज्य ने विदर्भ नागपुर प्रदेश कमेटी के मातहत जो प्रदेश था उसमें Divide and Rule की पॉलिसी चलाई। भाईजी के खिलाफ बड़ा बवण्डर उठा, पर वे अचल रहे।

सरदार वल्लभभाई पटेल पहले से ही नागपुर और विदर्भ प्रदेश के खिलाफ अपनी मनोवृत्ति बताकर बैठे थे। इसका कारण यह था कि भारत की राजनीति में उनका जैसा अभंग अस्तित्व था वैसा ही वे विदर्भ प्रदेश की राजनीति में रखना चाहते थे। सन् १९३६ के क़रार के अनुसार विदर्भ में निज़ाम का झण्डा अंग्रेजी झण्डे के साथ रहता था। सन् १९४७ में जब भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई उस समय १५ अगस्त के दिन उस क़रार के अनुसार निज़ाम के झण्डे को भी अभिवादन करने का प्रश्न उत्पन्न हुआ। भाईजी ने निज़ाम के झण्डे का अभिवादन करने से इन्कार कर दिया। सरदार वल्लभभाई पटेल का कहना था कि दिल्लीश्वरों ने यह क़रार किया है, अतः भाईजी को भी उस क़रार को अपनी मान्यता देकर निज़ाम के झण्डे का अभिवादन करना चाहिए। भाईजी ने इस दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं किया, और अन्त में सरदार पटेल को भाईजी के सामने झुकना पड़ा।

इसका दु:ख सरदार वल्लभभाई को बहुत था, और उन्होंने यह ठान लिया कि भाईजी को विदर्भ के राजकारण से परे किए बिना गति नहीं। वे विदर्भ में जो

भाईजी के प्रति शत्रु भाव पैदा करनेवाली शक्तियाँ सुप्त रूप से मौजूद थीं उनको साथ में लेकर राजनीति में दखल देने लगे, फिर भी भाईजी ने साहसपूर्वक संघर्ष किया और मध्यप्रदेश के अर्थ मन्त्री बने।

विदर्भ का विलीनीकरण जब महाराष्ट्र में भाईजी की सहमति से हुआ, तब भाईजी को राजकारण से नष्ट करने की कोशिश की जाती रही, और उनको महाराष्ट्र मन्त्रिमण्डल में स्थान नहीं मिला। फिर भी वे कांग्रेस की सेवा करते रहे।

लेकिन जब उन्होंने देखा कि लोकनायक बापूजी अणे अब विदर्भ के आठ जिलों के अधिनायक होकर लोक सभा में जा रहे हैं और नागपुरवालों ने उनको बहुमत से निर्वाचित किया है, तब वे नाग-विदर्भ आन्दोलन समिति में प्रविष्ठ हुए और उसे बहुत शक्तिशाली बनाया। तत्पश्चात् सन् १९६२ का चुनाव आया। नाग-विदर्भ आन्दोलन समिति की ओर से अकोला क्षेत्र से वे लोक सभा के लिए खड़े हो गए। उस समय उनके विरुद्ध प्रचार करने के हेतु स्व. नेहरूजी भी अकोला में आए।

ऐसा महान व्यक्तित्व आज ७० वर्ष को पार करके आगे जा रहा है। शरीर रोग ग्रस्त है, परन्तु फिर भी उनका मन राजनीति से ऊबा नहीं है। ऐसे महान व्यक्तित्व को भगवान पुनः आरोग्य प्रदान करे और भाईजी फिर से हमारा नेतृत्व करने को आगे आएँ, यही मेरी मनोकामना है। ★

श्री बियाणीजी के साथ मेरे १२ वर्ष

लेखक
विनयकुमार पाराशर—अकोला
(सदस्य, राज्य परिषद-महाराष्ट्र; अध्यक्ष, अकोला म्यूनीसिपेलिटि;
अध्यक्ष, अकोला जिला कांग्रेस कमेटी, वक्ता एवं लेखक।)

श्री ब्रजलालजी बियाणी अनेक वर्षों तक विदर्भ के एक मान्य नेता रहे। मेरा उनका प्रथम परिचय १९३१ में बुरहानपुर में हुआ। वे वहाँ निमाड़ ज़िला राजकीय सम्मेलन का उद्घाटन करने पधारे थे और तब मैं वहाँ कांग्रेस सेवादल का एक स्वयंसेवक था। इसी परिचय का लाभ उठाकर १९३७ के प्रारम्भ में सेवाग्राम (वर्धा) से उन्हें नौकरी के लिए एक पत्र लिखा। १९३७ से से १९४९ तक अर्थात् पूरे १२ वर्ष मैंने उनके साथ सेवा-कार्य किया। इन वर्षों में अन्त के ३ वर्ष छोड़कर, शेष समय में उनके साथ रहते हुए, मेरा सार्वजनिक कार्यकर्ता के रूप में उनसे सम्बन्ध आकर व्यक्तिगत सेवा कार्य के रूप में ही संपर्क रहा। इस कारण मैं उनके व्यक्तिगत सद्गुणों को नज़दीक से देख सका।

श्री बियाणीजी के जीवन में उल्लेखनीय बात उनकी सुसंस्कृतता थी, जो न केवल अनुभव की जा सकती थी वरन टपकती देखी भी जा सकती थी। एक राजकीय नेता के साथ अपने समाज के सुधारक भी थे। इस रूप में वक्ता होना स्वाभाविक ही था। व्यक्तिगत चर्चा अथवा सार्वजनिक भाषण में मैंने उन्हें अपना स्तर छोड़ते हुए अथवा उससे नीचे उतरे हुए कभी भी नहीं पाया। कौटुम्बिक जीवन में पत्नि, पुत्र, पुत्री, किंवा अन्य कुटुम्बियों के साथ, सार्वजनिक कार्यकर्ता और अपने कर्मचारी के साथ भी मैंने कभी उन्हें दुर्व्यवहार करते नहीं देखा। यदि कोई शिकायत थी तो यह कि वे जरूरत से अधिक अच्छा व्यवहार करते हैं? परन्तु इसके बावजूद वे करते वही थे जो वे ठीक समझते थे।

एकरूपता एवं अपनत्व निर्माण कर लेने के उनके गुण अपने ही हैं। मुझे स्मरण है, उनके साथ काम करते हुए बहुत कम समय हुआ था। हम दोनों ही खण्डवा से इन्दौर जा रहे थे। वैसे श्री बियाणीजी बहुत पहिले से प्राकृतिक

चिकित्सा और उस पर आधारित भोजन सम्बन्धी नियमों पर चलते थे। और इस कारण कभी भी, कहीं भी कुछ भी खाने का उनका स्वभाव बहुत कम रहा है। खण्डवा और इन्दौर के बीच कालाकुण्ड या इसी तरह के किसी स्टेशन पर उस काल में 'कलाकंद' बहुत अच्छा मिलता था। मैं उनके साथ नया ही था। प्रातःकाल का समय था। स्टेशन पर गाड़ी रुकी। अनेक लोग हरे पत्ते पर रखे कलाकंद को लेने दौड़ पड़े। इससे पहिले कि मैं कुछ कहूँ श्री बियाणीजी ने मुझसे कहा "देखिए विनयकुमारजी लोग कहते हैं कि यहाँ कलाकंद बहुत अच्छा मिलता है।" मैं संकेत समझ गया। नीचे उतर कर दो हरे पत्तों पर रखा कलाकंद अलग-अलग ले आया। श्री बियाणीजी ने उसमें से थोड़ा चखा और कहा "बहुत अच्छा है, आप ले लीजिए।" मैं शर्मिन्दा हुआ, संकोच बढ़ गया पर व्यवहार और अपनत्व पैदा करने का अविस्मरणीय तरीक़ा सीखा और कभी भुला न सका।

अगस्त १९३७ की बात है। श्री बियाणीजी को राज्य परिषद् (Council of State) की सभा के लिए शिमला जाना था। एक दिन शाम को मुझे उन्होंने अचानक बुलाया और कहा "शिमला चलना है, वहाँ सर्दी बहुत रहती है। आपके पास गरम कपड़े तो नहीं होंगे?" मैं चुप था। गरम कपड़े तो क्या दो जोड़ी के अलावा दूसरे कपड़े न थे। नौकरी पर आए २, ३ महीने ही हुए थे। उससे पूर्व बहुत कष्ट के दिन निकाले थे। उनके प्रश्न से मैंने यह अर्थ निकाला कि चूँकि गरम कपड़े नहीं है, अतः मैं तो उनके साथ शिमला जा नहीं सकता। मैं दिल मसोसकर रह गया। ज़िन्दगी में पहिली बार शिमला जाने को मिल सकता था, पर गरीबी की गाड़ी ने वहाँ भी ब्रेक लगा दिया। श्री बियाणीजी ने घंटी बजाई। नौकर आया और उसके मार्फ़त राजस्थान प्रेस का केशियर भी। "विनयकुमारजी को गरम कपड़े बनाने के लिए 'जितने' पैसे चाहिए दे दो।" एक कर्मचारी, दूसरा मालिक--व्यवसायी मालिक। छोटी सी, किन्तु महत्वपूर्ण घटना ने जीवन में एक व्यावहारिक दृष्टिकोण दिया। संपूर्ण मानवतावादी!

सन् १९३८ की बात है। केन्द्रीय विधान मंडल का बजट अधिवेशन चल रहा था। किसी कार्य से श्री बियाणीजी दिल्ली से अकोला आए थे। मैं दिल्ली में अकेला ही था। किसी कारण श्री बियाणीजी दिल्ली शीघ्र लौट न सके। इस बीच होली का त्यौहार आ गया। मेरे माता पिता दूर एक ग्राम में रहते थे। आर्थिक परिस्थिति के कारण मैं बार बार अपने गाँव नहीं जा पाता था। दो वर्षों में मैंने प्रायः सभी त्यौहार बियाणी परिवार के सदस्य के रूप में ही मनाए

थे, क्योंकि अकेला ही था और उनके यहाँ ही रहता था। आदरणीया श्रीमती सावित्री देवीजी से मुझे पुत्र-वत स्नेह मिला था। नई दिल्ली में न जान न पहिचान। एक नौकर वह भी होली मनाने चला गया। खाना भी हाथ ही से बनाना था। त्यौहार के दिन एकाकी जीवन में माता-पिता, भाई-बहनों का स्मरण, मानव स्वभाव की कमजोरी है। मैं सवेरे १० बजे काफ़ी उदासीनता का अनुभव कर रहा था। बंगला अच्छा, फर्नीचर अच्छा, बाहर का वातावरण आल्हादकारक, किन्तु मन में एक अजीब उत्साहहीनता घर कर गई थी। बन्द कमरे में आराम कुर्सी पर पड़े मन बहलाव के लिए अखबार के पन्ने पलट रहा था, पर पढ़ कुछ भी न पाता था। दरवाज़े के खटखटाने की आवाज से कार्य और विचार का क्रम टूटा। एक क्षण के लिए दरवाज़ा खोला। जीवन में अस्थायी सुखद क्षण पैदा करने वाला डाकिया देखा। पत्र लिया। खत का मज़मून जान लेते हैं, लिफाफा देखकर। जाने पहिचाने अक्षर। पत्र खोलते ही पढ़ा, "मुझे प्रतिक्षण अनुभव हो रहा था कि इस आनन्ददायक त्यौहार के दिन आप वहाँ अकेले ही हैं। उदास न हों मैं शीघ्र ही दिल्ली पहुँचूंगा।" गणित जिस प्रकार दो ऋण चिन्ह एक धन चिन्ह बना देते हैं, (Two negatives make one affirmative), उस प्रकार मानों मन ने कुछ खोया पा लिया। साहस बँधा। अपनत्व जागृत हुआ। उत्साह आया और मैं गुनगुनाते हुए अपने काम में लग गया। श्री बियाणीजी की यह मानवता और सुसंस्कृत व्यवहार आज भी मुझसे भुलाया नहीं जा सकता। यह मेरी अमूल्य निधि है। इसे संजोकर मैंने रखा। वह बढ़ती तो गई ही, पर शक्ति भी देती गई। आज मैं जो कुछ हूँ, उनके इन सद्गुणों के आत्मसात् के आधार पर हूँ, यह कहने में मुझे संकोच नहीं होता। ★

भाईजी की असफलता

लेखक

फ़कीरचन्द जैन–भुसावल

(प्रसिद्ध रुई के व्यापारी एवं कारख़ानेदार।)

एक महान समाजसेवक की असफलताओं के बारे में सोचना और लिखना कठिन कार्य है। परन्तु मनुष्य का जीवन सफलता और असफलता के ताने-बाने से ही बुना जाता है। असफलताएँ जीवन की कसौटी हैं। केवल सफलता मानव को महान नहीं बनाती, अपितु-व्यक्ति का सही स्वरूप असफलता में ही उभर कर आता है। ऐसे कठिन क्षणों में भी भाईजी कहीं झुके नहीं हैं, कोई समझौता नहीं किया है। वही गर्व से उद्दीप्त भाल, वही सन्तुलन, वही स्थिरता और अडिगता। भाईजी का जीवन एक कर्मयोगी का जीवन है। आपका प्रभाव विदर्भ नें काफ़ी गहरा था. वहाँ की मराठी भाषी जनता एवं उनके कार्य कर्ताओं पर भी भाईजी के विचार और आचरण का गहरा असर था। विदर्भ में राष्ट्रीय विचार धारा का केन्द्र अकोला बन गया था। जो भी राजनैतिक घटना उस प्रदेश से होती उसका प्रारम्भ वहीं से होता था। महात्मा गाँधी वर्धा (सेवा-ग्राम) में थे, तो भारत के गणमान्य नेता वहाँ आते थे। परन्तु अकोला में श्री बियाणीजी के पास प्रदेश के कार्यकर्ताओं का जमघट जमा रहता था। आपके सौजन्य और आदरपूर्ण आतिथ्य से लोग सहज प्रसन्न रहते थे। भाईजी की प्रेरणा से विदर्भ में व अन्य स्थानों में भी अनेक राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं का निर्माण हुआ है। देश की आज़ादी में आपका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। देश की स्वतन्त्रता के बाद आप मध्य प्रदेश के वित्त मन्त्री नियुक्त हुए। मन्त्रित्व काल में भी आपका जनसम्पर्क खूब रहा। जहाँ भी और जब भी चुनावों की सभाएँ और आन्दोलन होते, मन्त्रि मण्डल की ओर से आपको ही कांग्रेस के चुनाव प्रचार हेतु जाना पड़ता था। आपकी भाषा शैली और ओजपूर्ण वक्तव्य जनमानस को विभोर कर देते थे। वैचारिक क्रान्ति द्वारा समाज व देश को ऊपर उठाने में भाईजी के भाषण अपना विशेष स्थान रखते हैं।

आन्ध्र के निर्माण के बाद भारतीय राज्यों की पुनर्रचना के समय आपने सोचा कि नागपुर विदर्भ के आठ ज़िलों का एक राज्य क्यों न हो ? और आपने यह विचार वहाँ के कार्यकर्ताओं के सन्मुख रखा और जनता का आकर्षण नाग-विदर्भ प्रदेश के प्रति तीव्रता से बढ़ने लगा। परन्तु भाईजी के प्रबल बुद्धिवाद ने प्रतिस्पर्धा को जन्म दिया। उनके साथ एवं उनके मार्ग-दर्शन में कार्य करने वालों के हृदय में भी भाईजी का बढ़ता हुआ प्रभाव सहन न हो सका। भाईजी अल्पमत वाले राजस्थानी क़ौम के हैं। इस वर्ग विद्वेष व सत्ता लौलुपता ने प्रत्यक्ष ही विरोधियों को खड़ा किया। यहाँ तक कि बियाणीजी जैसे प्रभावाशाली नेता को कैसे गिराया जाए, इस हेतु व्यूह रचना की गई। कहते हैं कि दुश्मनों के विरोध का सामना करना सहज है, परन्तु मित्र के विरोध को समझना भी कठिन है।

राजनैतिक जीवन में जिन सहयोगियों को आपने तैयार किया और जिन्होंने आपसे राजनीति का 'क', 'ख', 'ग' सीखा, उन्हीं का प्रहार आप पर होने लगा। यहाँ तक कि जिस कांग्रेस के प्लेटफार्म से आपने वर्षों कार्य किया, और स्वतन्त्रता के युद्ध में अपनी बड़ी से बड़ी कुर्बानी दी, उसी कांग्रेस से इस एकनिष्ठ कार्यकर्ता और स्वतन्त्रता के महान सेनानी को साथियों के असहयोग एवं स्वार्थ-परता के कारण हटना पड़ा। आपके द्वारा प्रेरित नाग-विदर्भ आन्दोलन में वहाँ की जनता ने अपना बलिदान दिया। कई व्यक्ति शहीद हुए। बियाणीजी का ऐसा व्यापक प्रभाव देखकर सत्ता चिन्तत हो उठी, और बहुजन समाज के कार्यकर्ताओं को भय हुआ कि श्री बियाणीजी नाग-विदर्भ के प्रणेता बनकर कहीं वहाँ के सर्वे सर्वा न बन जाएँ। जनता में आपके इस बढ़ते हुए प्रभाव ने लोगों में ईर्ष्या बढ़ाई और ईर्ष्या तो द्वेष की जननी है। मित्रता के नक़ाब में ऊपर से साफ़ रह कर और योजना बनाकर तथा षड़यन्त्र रचकर आन्दोलन की जड़ें काटी जाने लगी। महाराष्ट्र का सत्ताधारी दल यों भी चौकन्ना था। समाचार पहुँचने लगे, और परिणाम स्वरूप बहुजन-समाज के कार्यकर्ता अलग हटने लगे। साथ ही अल्पमत वाले भी साथ देने में हिचकिचाहट रखने लगे। जातीयता के विष ने बियाणीजी की महत्वाकांक्षा को सफल नहीं होने दिया। आपके तर्क-पूर्ण बुद्धिवाद को सत्तालोलुप लोग पचा न सके। इसी कारण भाईजी का उपयोग और लाभ जितना देश को चाहिए था, उतना न मिल सका। परन्तु जिस गौरव के साथ भाईजी ने विफ़लताओं का सामना किया, वह असफलता भी अपने आप में बड़ी सफलता है।

★

विदर्भ केसरी श्री ब्रजलालजी बियाणी

लेखक
ब० ना० एकबोटे——यवतमाल
(सम्पादक, 'स्वदेश'-यवतमाल; लेखक एवं वक्ता; सार्वजनिक कार्यकर्ता।)

मान्यवर ब्रजलालजी बियाणी मुझसे आयु में दस वर्ष बड़े हैं, इसलिए उन्हें मित्र कहकर मानना उपयुक्त नहीं होगा इसके विपरीत यदि मैं उनसे १० वर्ष बड़ा भी होता तो भी मैं उन्हें 'मित्र' कहने की धृष्टता नहीं कर सकता, क्योंकि जहाँ बियाणीजी में नेतृत्व के अनेक गुण कूट-कूटकर भरे हुए हैं, उसकी तुलना में मैं तो स्वतन्त्रता आन्दोलन में एक विनम्र सेवक के रूप में कार्य कर रहा था। असहयोग आन्दोलन के समय विद्यालय छोड़कर सार्वजनिक क्षेत्र में सहसा पदार्पण करने का प्रसंग मुझ पर आ जाने के कारण अनेक महान देशभक्तों के सानिध्य में आने का अवसर मुझे बीसवीं के पूर्व ही मिल गया हो तो भी मैं बियाणीजी जैसे देश भक्तों का 'सहकारी' कहलाने का अधिकारी बनने के बजाय उन जैसे नेताओं का एक नम्र स्वयंसेवक कहलाना ही अधिक पसन्द करूँगा, और ऐसा ही मैं अपने आपको समझता आया हूँ।

राजकीय मतभेदानुसार कभी किसी के निकट और किसी से दूर रहना भी पड़ा हो तो उस वजह से किसी की विशिष्टताओं के विषय में मैंने मन में किसी प्रकार का अनादर नहीं रखा अथवा किसी की योग्यता का अनादर करते हुए व्यवहार नहीं किया। इस तरह की विचार प्रणाली से अपना जीवन व्यतीत करते हुए, शुरूआत में मैं अमरावती के देशभक्तों के सम्पर्क में आया। उन्होंने मुझे बहुत प्रभावित किया। तत्पश्चात् यवतमाल ज़िले के देशभक्तों के जीवन से मुझे काफ़ी प्रेरणा मिली और सन् १९३० में सविनय अवज्ञा भंग आन्दोलन के वक्त मेरा ध्यान अकोला की ओर आकृष्ट हुआ।

तथा उस समय मान्यवर बियाणीजी को देखने उनके भाषण सुनने की प्रबल इच्छा जागृत हुई और मैंने ब्रजलालजी को उमरखेड़ा (अपने गाँव) आने का निमन्त्रण दिया। सन् १९२० में और उसके पूर्व भी लोकनायक अणे, तपस्वी

वाबा साहेब परांजपे, कै. शामराव दादा देशपांडे उमरखेड़ी आ चुके थे। सन् १९३० के पूर्व ही उमरखेड़ी के देशभक्त नाना साहेब साकले का देहावसान हो गया था। उनके समकालीन गाँव के बुज़ुर्गों ने मेरे ऊपर छत्र-छाया रखी थी और मैं भी आन्दोलन सम्बन्धी सभी गतिविधियों में सक्रिय भाग लेता था। एक छोटे से कार्यकर्ता होने के नाते मैंने यह पत्र बियाणीजी को भेजा था। उन्होंने मेरा निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। मैं खुशी से भर उठा। बियाणीजी के आगमन की सूचना पूरे गाँव में दे दी गई और मैं निर्दिष्ट समय पर गाँव की तत्कालीन सीमा पर उनकी प्रतीक्षा में कुछ अजीब हर्षोन्माद के भाव लिए हुए खड़ा रहा।

मोटर की बत्तियाँ चमकीं—लो बियाणीजी आ गए! उस समय अधिकतर बैल-गाड़ियों में ही यात्रा होती थी। बसें तो थी ही नहीं और छोटी-मोटी मोटर कार के भी कभी-कभी दर्शन हो जाया करते थे। यदि किसी नेता को आना भी होता तो वे पुसद से अर्थात् २५ मील दूरी से निकलकर मार्ग के अन्य गाँवों के कार्य-क्रम करते हुए वहाँ आते थे। लेकिन ११० मील की दूरी से मरखेड़ा के लिए मोटर से और दिए हुए समय पर प्रवेश करने वाले बियाणीजी पहले ही नेता रहे। मोटर आई, उसमें स्वयं बियाणीजी को देख मैं तो रोमांचित हो उठा। उनके साथ कै. श्रीमती दुर्गाताई जोशी एवं सौ. प्रमिलाताई ओक भी आई थीं। बियाणीजी जैसे नेता के आने का हमारे गाँववालों को कौतूहल तो था ही पर उससे भी अधिक आन्दोलन में सहयोगी होने वाली दो महिलाओं को हमने पहली बार ही देखा। श्रीमती दुर्गाताई प्रौढ़ विधवा महिला और सौ. प्रमिला ताई एक गृहिणी, किन्तु इन दोनों को सार्वजनिक जीवन में और स्वतन्त्रता के कठिन तपाचरण में सहभागी बनाने का श्रेय बियाणीजी को ही देना पड़ेगा। दुर्गा-ताई बियाणीजी से आयु में थोड़ी बड़ी भी थी। तो भी क्या हुआ बियाणीजी नेतृत्व के उदयकाल से ही उनसे भी अधिक आयु के देश भक्ति का कार्य करने वाले लोग उनके इर्द-गिर्द इकट्ठा हो सके थे। और यही उनके नेतृत्व के युग का वास्तविक साक्षात्कार था जो उन्हें अपने सार्वजनिक जीवन के प्रारम्भ में ही देखने को मिल सका।

इस तरह ब्रजलालजी उमरखेड़ (हमारे गाँव) आए। सभास्थल पर उनका स्वागत किया गया। जिले के बाहर के विख्यात नेता पधारे हैं। उनके साथ मध्यमवर्गी दो विदुषी महिलाएँ भी आई हैं, यह सारा दृश्य उमरखेड़ के निवा-सियों के लिए अनोखा ही था। सभी श्रोता चकित एवं उत्सुक थे। प्रमिलाताई

एवं दुर्गाताई के भाषण हुए और सब से बाद भाईजी बोलने के लिए उठे । भाईजी के भाषण का क्या कहना अति मधुर वाणी, सुन्दर देहयष्टि, तरुणाई के तेज एवं विद्या तथा देश भक्ति की कान्ति से दीप्त युवक द्वारा दिया हुआ जादूभरा भाषण था । जब हिन्दी की कोमल कान्त भाषा में उनका वक्तव्य शुरू हुआ तब तो सारे श्रोता मन्त्रमुग्ध हो उठे । बियाणीजी के वक्तव्य के ५ वर्ष पूर्व कै. डा० नारायण-राव सावरकरजी ने भी अपने ओजस्वी वक्तव्य से उमरखेड़ के निवासियों को आज़ादी का दीवाना बनाकर छोड़ा था । श्री सावरकर के नाम से लोग पूर्व परिचित थे । उस समय यानी सन् १९३० में बियाणीजी सरीखा देशभक्त और उत्साही युवक मारवाड़ी समाज में नया-नया ही उदित हुआ था । महात्मा गांधी ने नमक सत्याग्रह का शंख फूंका था । सारा देश मानों सुलग चुका था, वातावरण बिल्कुल प्रज्जवलित हो उठा था । हम जैसे किशोर युवकों में स्वतन्त्रता के लिए सर्वस्व त्याग करने की अदम्य लालसा उत्पन्न हो गई थी और ऐसे समय माननीय बियाणीजी ने उमरखेड़ में सत्याग्रह के बारे में पहला भाषण किया । भाईजी का खादी का वेश प्रभाव शाली भाषा में उनके भाषण का प्रभाव मराठी-भाषी जनता पर अत्यन्त कारगर साबित हुआ । भाईजी के व्यक्तित्व से हम सब बहुत प्रभावित हुए थे । भाईजी का आभार मानते समय दुर्गाताई व प्रमिलाताई के विषय में मैंने कहा 'एक आई आल्या' एक बाई 'पण आल्या' (एक माँ आई और एक बहन आई), अब तो हमारी माताओं और बहिनों को सत्याग्रह के संग्राम में हमारा साथ देना चाहिए । मेरे 'आई आणि बाई' (माँ और बहिन) ये शब्द प्रमिलाताई को बहुत अच्छे लगे । कितने ही दिन तक उनकी जबान पर छाये रहे । सन् १९३१ में हम सब अकोला के कारावास से छूटकर आए और जब कै. सेठ श्रीराम सूरजमलजी के यहाँ भोजन करने बैठे तब सभी सत्याग्रहियों को पंगत में परोसने में 'आई और बाई' भी साथ दे रही थी । उनमें से प्रमिला-ताई ने 'आई नि बाई' मेरे इन शब्दों की याद बड़े आनन्द से किया और वास्तव में उस सत्याग्रह संग्राम में उमरखेड़ जैसे छोटे से गांव की आभिजात वर्गीय बहनों ने प्रभात फेरियाँ आदि निकालकर सत्याग्रह की ज्योति जलती हुई रखी । उसका श्रेय दुर्गाताई-प्रमीलाताई को है और ऐसी नारी रत्नों को स्वतन्त्रता संग्राम में लाने का सारा श्रेय श्री बियाणीजी को है ।

तो यह था बियाणीजी का प्रथम दर्शन । तत्पश्चात् लोक नायक बापूजी अणे ने अखिल भारतीय वन सत्याग्रह का प्रथम केन्द्र यवतमाल ज़िले के पुसद ग्राम में उद्घाटित किया गया । सारे मध्य प्रदेश के उस समय के देश भक्त कार्यकर्ता

इस निमित्त पुसद में एकत्रित हुए । पुसद ग्राम में और तहसील में प्रचार की धूम हो गई । उस प्रचार मुहिम में बियाणीजी द्वारा किया गया प्रचार कार्य मेरे लिए अविस्मरणीय बन गया है । वन सत्याग्रह का यह आन्दोलन जब विशाल पुसद में पैमाने पर आयोजित किया गया था, तो इसका नेतृत्व बियाणीजी के ही हाथों में था । सत्याग्रह के पहिले दिन बापूजी अणे धारा ३७९ के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिए गए थे और दूसरे ही दिन मेरे सत्याग्रह करने के पहले ही पकड़ने की योजना बनाई गई थी । हम सब लोग दूसरे दिन कै. डॉ. मुंजे द्वारा किया गया सत्याग्रह पूर्ण कर वापस गाँव पहुँचे तब तक मुझे व वणी निवासी दे. भ. विठ्ठलराव किखुले दोनों को पुलिस थाने पर बुलाए जाने का संदेशा मिला । अर्थात् अब हमारी जेल यात्रा होगी—यह मानकर अन्य सत्याग्रही स्वयंसेवकों ने एक जुलूस निकालकर पुलिस स्टेशन तक हमें विदा देने का निर्णय किया । उस समय मान्यवर भाईजी एवं डा. शिवाजी पटवर्धन स्वयंसेवकों के जुलूस का नेतृत्व कर रहे थे । हमेशा की आदत रही कि मैं कमीज़ या लंबी अचकन का ऊपरी बटन नहीं लगाया करता था और दूसरी ओर बियाणीजी का रहन-सहन अत्यन्त व्यवस्थित और चुस्त था–उन्हें अस्त व्यस्त पसन्द नहीं । मैं जेल के मार्ग पर जुलूस के अग्रभाग में खड़ा होकर पहला क़दम रखने जा ही रहा था कि मेरा खुला गला देखकर बियाणीजी मेरे बिल्कुल समीप आए । मैं कुछ समझ न पाया कि तुरन्त उन्होंने मेरा ऊपरी बटन अपने हाथों से लगा दिया, मानों अब कुछ महिने के लिए गले से बाहर निकलने वाले शब्द बन्द रहेंगे ऐसी प्रतीति हुई । उन्होंने मेरी इस अव्यस्तता पर संयम की मोहर लगा दी । अपने स्वयंसेवक की वेश-भूषा तक पर बियाणीजी की सूक्ष्म दृष्टि जा सकती है । यह जानकर मैं गद्-गद् हो गया । इस छोटी सी घटना पर से मुझे बियाणीजी के सम्बन्ध में जो पाठकों को कहना है वह यह कि 'बियाणीजी के नेतृत्व में एक विशेष गुण होता था कौन सा स्वयंसेवक कहाँ का है, उसकी आर्थिक परिस्थिति कैसी है ? उसमें सार्वजनिक जीवन की कार्यक्षमता कितनी है और उसे सार्वजनिक जीवन में कार्य करने की छूट देने का मौका यदि दिया गया तो उसके प्रति उनकी स्वयं की क्या जवाबदारी है ।' इस तरह राजकीय आन्दोलन के प्रत्येक स्वयंसेवक के बाबद वे कर्तव्य बुद्धि और अत्यन्त प्रेम से जानकारी रखते और देखकर कार्य किया करते थे ।

बियाणीजी के नवोदित नेतृत्व का यह तरीक़ा एक प्रकार से अनूठा ही कहा जावेगा । उससे पहले के समय में उन्हीं युवकों को आना चाहिए जिनमें त्याग

करने का सामर्थ्य है क्योंकि उनका भार वहन करने के लिए कोई तैयार नहीं। सर्वस्वबलिदान की यदि तैयारी न हो तो न आए। युवकों को यह अपेक्षा रखनी ही नहीं चाहिये कि स्वयं की निजी अड़चनों का निवारण हो सकेगा—इस सब परम्परा में बियाणीजी ने परिवर्तन किया। जो मेरे शब्दों के कारण सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करता है—उनके प्रति नेता के नाते मेरी भी कुछ ज़िम्मेदारी है। और इस जवाबदारी का भान मुझे सभी को भी करा देना है। इन सब का ख्याल रखने वाले नेता को ऐसा यदि नाम भी देना पड़े तो तैयार रहना चाहिए। अपने आस-पास एकत्रित सभी छोटे बड़े कार्यकर्त्ताओं के "योग क्षेम" की चिन्ता करने का कार्य उन्होंने अत्यन्त समर्थता से किया। स्वतन्त्रता आन्दोलन की परिधि विदर्भ तक करने का महान कार्य वे १९३० से आज तक सतत करते रहे हैं, और उनके तेजस्वी व्यक्तित्व के आसपास सच्चे कार्यकर्त्ताओं का एक जमघट लगा रहता है।

कांग्रेस के राजकारण में वैदर्भीय नेतृत्व का भव्य आविष्कार 'विदर्भ केसरी' ब्रजलालजी के विविध आन्दोलनों से कैसे होता गया, इस १९३० से १९५९ तक के कालखण्ड की उथल-पुथल का विवेचन मैं नहीं करता। वह उनके निकट सहवास में रहे हुए तथा उनके अनुयायी और सहकारी करेंगे ही। उस सुगन्ध का आस्वाद मेरे द्वारा जिस तरह किया जा सके उसका वर्णन पहले ही मैंने कर दिया। अब बीच के कालखण्ड से छलाँग लगाकर भाईजी के नेतृत्व के नए पहलू के विषय में अपना कथन कहने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

यह काल ६ साल पहले का है। साठवीं के बाद भाईजी द्वारा किया हुआ यह एक नया मोर्चा है। साठवें वर्ष के पहले भाईजी का नेतृत्व यानी भरी हुई गंगा में का एक प्रवाह था। पर वृद्धावस्था का यह नया नेतृत्व यानी बहते हुए प्रवाह को नया मोड़ देने वाला था। राजनैतिक जीवन में दुर्बलता निर्माण हुई कि उसका प्रवाह पतन को प्राप्त होता है और फलस्वरूप नवचैतन्य-नव स्फुरण उसमें न मिल सकने-सा हो जाता है। यह बात राजकीय जीवन में उद्भूत होती देख भाईजी के लिए उपयुक्त ऐसा कुछ शेष नहीं रहा था। प्रज्ञावान को दूसरे की आँख से देखना कभी गवारा नहीं होता। विदर्भ के हिस्से में भारतीय लोकराज्य की आई हुई यह कुण्ठा विपरीत गति का एक दुर्भाग्यपूर्ण विलास था और भाईजी से वह देखा नहीं जाता था। उस समय बियाणीजी द्विभाषीय बम्बई राज्य में एक साधारण विधायक बनकर बैठे थे। मध्यप्रदेश में जब विदर्भ संलग्न था और जब ब्रजलालजी ने वित्त-मन्त्री पद विभूषित किया था, उन्हें द्विभाषी राज्य में साधारण विधायक बनकर रहना पड़ा। द्विभाषिक राज्य में गुणवान मनुष्य भरपूर थे इसलिएक्या? मध्यप्रदेश राज्य के इस अनुभवी नेता की ऐसी उपेक्षा क्यों?

गुणों का पैरों तले रौंदकर विदर्भ का अपमान बम्बई प्रदेश कांग्रेस को करने का साहस कैसे हुआ ? और भारतीय कांग्रेस के लोक नेताओं ने इस तरह विदर्भ के हो रहे अपमान में हस्तक्षेप क्यों न किया, इन प्रश्नों की चर्चा आज व्यर्थ भी हुई तो भी लोकतन्त्र में ऐसी अवहेलना होने से लोकतन्त्र का बल क्षीण होता है। इसका अहसास बड़े-बड़े नेताओं के ध्यान में होने के कारण १६५६ के साल के मार्च महीने की चौथी तारीख को द्विभाषी बम्बई राज्य की विधान सभा में एक वैचारिक बमगोला फूटा। इसके पहले इतिहास में दिल्ली की लोकसभा में क्रान्तिकारियों ने बीच-बीच में बम डाले, वे ब्रिटिश परतन्त्रता की प्रतिक्रिया स्वरूप थे और प्राण-घातक भी थे। द्विभाषी राज्य की विधान सभा में डाला गया यह बम प्राणघातक नहीं था पर विचारप्रवर्त्तक था। बहुमत के बल पर जैसे चाहे वैसे नचाने वाले राज-नीतिज्ञों की नींद उड़ानेवाला वह बम था और उसे डाला भी किसने ? एक गांधी-भक्त, अहिंसानिष्ठ वयोवृद्ध नेता ने—ब्रजलाल बियाणी ने।

अनुशासन का भोक्ता कहे जानेवाला , अनुशासन के शस्त्र से अनेक विरो-धियों को घायल करनेवाला, कांग्रेस में यह वृद्ध शेलारमामा (मराठा इतिहास का प्रसिद्ध पुरुष) बम्बई की विधान सभा में ४ मार्च १६५६ को जो भाषण दिया उसकी कल्पना भी तत्कालीन नेताओं को नहीं थी। मेरी याददाश्त के मुताबिक मुख्यमन्त्री भी उस समय सभागृह में नहीं थे और यह मानकर चल रहे थे कि मेरे बहुमत की आबादी आबाद असेम्बली में सब कुछ ठीक है— खुशहाली है। ऐसी अजीब हालत में बहुमत के राजनेता रहते हुए भाईजी ने स्वायत्त विदर्भ की घोषणा की—'विदर्भ की अस्सी लाख जनता की भावना मैं व्यक्त कर रहा हूँ।' ऐसी खरी-खरी सुना, उन्होंने अनुशासन का इन्द्रधनुष छिन्न-विच्छिन्न कर दिया। विदर्भ के वृद्ध नेता भी समय आते ही लोकहित के लिए विद्रोह करने के लिए उठ सकते हैं, नेता वैश्यवृत्ति का हो तो भी अपने असली स्वरूप का दर्शन दिला सकता है, ऐसा अकल्पिक स्वप्न महाराष्ट्र के महानेताओं ने जागृत अवस्था में साक्षात् देखा। "यह स्वप्न तो नहीं", हम नींद में हैं या जगे हुए, ऐसा भ्रम तत्कालीन प्रादे-शिक प्रमुख के समक्ष दत्तरूप उपस्थित हो गया। अर्थात् उसकी प्रादेशिक प्रति-क्रिया क्या हुई यह विस्तारपूर्वक कहने की आवश्यकता न भी हो तो भी, महाराष्ट्र के तत्कालीन राजनेताओं ने भाईजी पर अनुशासन भंग का आरोप लगाया। 'उनका विधायक पद रद्द कर दिया जाय' ऐसा प्रस्ताव कर वह अखिल भारतीय नेताओं को पहुँचाया गया, किन्तु आश्चर्य यह है कि उच्च वृत्तों में इस प्रस्ताव का अर्थ अलग ही ढंग से निकाला गया और श्रीमती इन्दिरा गांधी ने स्वयं विधायक बियाणीजी को

अपना विधान सभा का दायित्व निभाते रहें—ऐसा आदेश भेजा। विदर्भ का यह विद्रोह उतने तक विजयी हुआ। बियाणीजी ने महाराष्ट्र के राजकर्ताओं के विरुद्ध नैतिक विजय सम्पादित की। किन्तु वह आदेश मान्य नहीं किया। उतनी सैद्धान्तिक विजय से संतोष पाने के बाद, विधायक की कुर्सी क़ायम रखने की आस भाईजी के मन से कभी की निकल गई थी। स्वायत्त विदर्भ का राज्य बने यह आकांक्षा उनके मन में उदित हो गई थी। कांग्रेस श्रेष्ठि वर्ग से उन्हें वैसा ही आश्वासन चाहिए था; वह न मिलने के कारण उन्होंने अपनी सदस्यता का त्याग कर दिया। इतना ही नहीं उठे हुए अनुशासन की दुहाई देनेवाले प्रादेशिक नेताओं के प्रत्युत्तर स्वरूप कांग्रेस का भी त्याग कर दिया।

भाईजी की वृद्धावस्था में यह दूसरा विद्रोह था। कांग्रेस की सत्ता में बाढ़ सी आ गई थी। विदर्भ का स्वतन्त्र राज्य उस जल-प्रलय में खूब गहरे अर्थात् तल में पड़ा हुआ था। सत्ता के उस उन्मत्त जलोद्रेक में भाईजी ने स्वेच्छा से छलाँग लगा दी तथा विरोधी जनता को संगठित कर शासनारूढ़ लोगों का विदर्भ राज्य के खातिर प्राणपण से विरोध करना शुरू किया। और उस निमित्त उन्होंने जो कार्यक्रम बनाया वह उनके जीवन का एक तेजस्वी प्रसंग तो है ही, परन्तु विदर्भ के इतिहास का एक तेजस्वी स्वर्णिम हस्तलेख ऐसा कहे बिना नहीं रहा जावेगा।

और वह उनकी पदयात्रा का कदम! पू. लोकनायक अणे नागपुर में निवास कर रहे थे। उन्होंने विदर्भ की रणदुन्दुभी नागपुर और वैसे ही भारत की राजधानी में भी निनाधित कर दी थी। नागपुर टी. जी. देशमुख, वीर हरकरे आदि नेताओं के त्यागमय तपाचरण से प्रज्वलित हो रहा था। बापूजी की पुण्यप्रेरणा तो उन्हें सतत मिल ही रही थी, किन्तु बापूजी सरीखे प्रखर बुद्धि वाले तपोवृद्धनेता को विदर्भ-केसरी बियाणीजी सरीखे पराक्रमी नेता की जोड़ मिल गई। ८१ वर्ष का श्रीकृष्ण और बियाणीजी सरीखा साठ वर्षीय धनुर्धारी पार्थ विदर्भ के कुरुक्षेत्र पर विदर्भ राज्य के खातिर संग्राम करने हेतु सन्नद्ध हुए, और भाईजी ने २६ जनवरी, १९६० को इस स्वतन्त्रता दिवस का मुहूर्त विशेष रूप से चुना। ब्रजलालजी ने पैंतीस दिन की पदयात्रा करने का संकल्प घोषित किया। अकोला से निकलना और नए वर्ष के ४ मार्च की तिथि को नागपुर में पदार्पण करना। वहां विदर्भ राज्य के लिए सत्याग्रह का युद्ध शंख फूंकना ऐसा उन्होंने ज़ाहिर किया। सभी विदर्भ नेता २६ जनवरी को प्रातः प्रयाण से पूर्व अकोला आ पहुँचें, भाईजी ने अपने सहकारी नेताओं को सूचित किया।

पुसद शहर से विदर्भवीर मुखरे भाईजी की पदयात्रा में प्रविष्ट होने के लिए

निकलनेवाले हैं, इसलिए दि. २५ को रात में श्री मुखरे को विदा देने का ऐतिहासिक प्रसंग मनाया गया।

पूज्य लोक नायक अणे विदर्भ के एकमेव श्रद्धास्थान साक्षात मंच पर विराजित थे। इस विराट सभा में पुसद निवासियों ने बाबा साहब मुखरे को गद्गद् हृदय से विदा दी। वे बुखार होने के बावजूद भी बाहर निकल पड़े। बापूजी अणे ने उस सभा में आशीर्वाद स्वरूप भाषण दिया। जिन बाबा साहब मुखरे ने कभी मोटर के नीचे पैर नहीं रखा, ३५ दिन तक पदयात्रा करेंगे और नागपुर जाकर भाईजी के साथ एक नया चमत्कार करेंगे यह सोच सहस्त्रों स्त्री-पुरुषों के मानस व्यथित वैसे ही प्रमुदित भी हो रहे थे। वीर मुखरे निकल पड़े, बापूजी अणे भी पुसद से अपने अनुयायियों के साथ उसी रात निकलकर २६ को भोर में अकोला पहुँच गए। बियाणीजी अधिकतर अपने प्रासाद के दूसरे मंजिल पर रहते आए हैं। सीढ़ियाँ उतरते ही घर के बाहर सदैव उनकी मोटर प्रतीक्षा किया करती थी। पिछले ३० वर्षों में विदर्भ का प्रवास मोटर से कर उन्होंने विदर्भ को प्रेम के वश कर लिया था। आज वही भाईजी सभा स्थान पर जाने के लिए प्रातः समय अपने मकान की सीढ़ियाँ उतर रहे थे तथा उनकी धर्मपत्नी का मुख, उनकी पदयात्रा से चिन्तित होने के उपरान्त भी, सात्विक तेज से उजला दिख रहा था। भाईजी के इकलौते पुत्र ने उन्हें घर से विदा दी। उनकी सौम्य और शालीन बहू ने भीगी हुई आँखों से भाईजी को प्रणाम किया। नीचे उतरते ही भाईजी की सेविका मोटर वहाँ नहीं थी। हाँ! हजारों स्त्री-पुरुष जरूर खड़े थे। इन सबके साथ भाईजी सभा स्थल पर पाँवों चलते गए। सभा में विशाल जनसमुदाय के समक्ष पूज्य लोकनायक अणे ने ब्रजलालजी को आशीर्वाद दिया। वीर मुखरे, आचार्य दाण्डेकर आदि ३१ पदयात्री उस जगह उपस्थित थे। सौभाग्यशालिनी महिलाओं ने उनकी आरती उतारी, आशीर्वाद दिए। भाईजी ने सबसे विदा ली और विदर्भ के स्वतन्त्र राज्य के हेतु भाईजी ने पदयात्रा के रूप में एक नवीन अनुष्ठान प्रारम्भ किया।

सभी छोटे या बड़े गाँवों में भाईजी के पहुँचते ही सभी सत्याग्रही पदयात्रियों का जनता स्वागत करती, सभाएँ आयोजित की जातीं, सभी नेताओं के भाषण हुआ करते, ऐसा करते करते आकोट, अंचलपुर, अमरावती, वर्धा, नागपुर इस मार्ग से ३५ दिवस में यह यात्रा नागपुर पहुँची। भाईजी का सब यात्रियों के साथ नागपुर नगर ने हार्दिक स्वागत किया। उसी तारीख को अर्थात् गत वर्ष बम्बई की विधान सभा में जब उन्होंने भाषण किया था, उसी दिन नागपुर में उन्होंने

सत्याग्रह किया। सौ. भाई साहब मुखरे ने दूसरे दिन उसी जगह सामुदायिक सत्याग्रह किया। उनके साथ सैकड़ों सत्याग्रही महिलाएँ थीं और उसी दिन अकोला के नजदीक के वन में सौ. सावित्री देवी बियाणी ने भी सत्याग्रह किया।

सत्याग्रह का रणयज्ञ प्रज्वलित हुआ। इस प्रकार नागपुर, पुसद, अकोला, वर्धा, यवतमाल, अमरावती आदि नगरों, वैसे ही छोटे मोटे गाँवों में, सत्याग्रह की चिन्गारी फैल गई। जगह-जगह धर पकड़ हुई। नागपुर नगर के रणयज्ञ का स्वरूप अतिशय भीषण था और वैसा ही पुसद में भी। जिस तरह नागपुर के त्याग की तुलना नहीं थी, वैसे ही पुसद का उत्साह अनुकरणीय था। विदर्भ सत्याग्रह का इतिहास इस निमित्त विस्तारपूर्वक कहना अप्रासंगिक होगा, इसलिए उसके मोह में नहीं पड़ता। द्विभाषिक राज्य के सत्ताधारियों द्वारा भाईजी का पीछा कर उन्हें पकड़ा गया। उन्हें अमरावती की जेल में बन्द कर रखा गया और गम्भीर अपराधी की तरह उनकी शय्या पर जंजीर बाँधकर उनके सात्विक प्रतिकार के विरुद्ध क्रूरता का हिंसा प्रदर्शन किया गया। गाँधीजी की कांग्रेस को विदर्भ के गाँवों में लोकप्रिय बना देने वाले इस विदर्भ नेता को अपने प्रामाणिक मत प्रचार करने के निमित्त अपने सहकारियों और अनुयायियों की ओर से अति विश्वासघात सहना पड़ा।

यह प्रवंचकता ख़तम हुई, चुनाव आए। चुनाव के पहले राजनीति की हाँडी पक गई थी। दिल्ली की राजनीति में वही षड़यंत्र खेला गया, जिसके कारण पं. नेहरू के वचनों को हर प्रकार से बाँध लिया गया। पूज्य लोकनायक अणे की स्पष्टवादिता का श्रवण दिल्ली के लोक नेताओं ने नीची गर्दन डालकर किया। विदर्भ में फ़ितूर फैलाकर तथा उसके जननेताओं को लालच में डालकर, विदर्भ के प्रश्न पर पर्दा डालने का प्रयत्न किया गया। आम चुनाव में जिन तरह-तरह के कारनामों से यश पा लिया जाता है, वे सारे तौर-तरीके अपनाकर कांग्रेस ने बहुमत पाया। जो इज्ज़त महाराष्ट्र में गंवा दी थी, वह विदर्भ में बचा रखने के लिए, विदर्भ का बलिदान विदर्भ के ही कांग्रेसजनों की सहायता से कर दिया गया। महाराष्ट्र में कांग्रेस का राज्य प्रस्थापित हो गया। विदर्भ की लौकिक दृष्टि से भले ही पराजय हुई हो, किन्तु नीति और आचरण के स्तर पर बुद्धिमानव के द्वारा विदर्भ के प्रश्न की उपेक्षा नहीं की जा सकती, और न भविष्य में की जा सकेगी। भाईजी द्वारा इस लड़ाई में जी जान लगा देने के बाद प्रान्त और केन्द्र दोनों स्थान की कांग्रेस से जो विरोध हुआ, उसे देख भाईजी ने इस विषय में से अपना लक्ष्य हटा लिया। स्वास्थ्य साथ न देने से उन्होंने आकोला छोड़कर इन्दौर

रहना शुरु किया। चार दोस्तों के आग्रह से पुनः कांग्रेस में प्रवेश भी किया और अब वहाँ अस्वस्थ होकर भी भारत के जनहित के लिए चिन्तन करते हैं। उसी तरह विदर्भ की जनता का अपने अटूट प्रेम के कारण उसी आत्मीयता से वे कल्याण की कामना कर रहे होंगे, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

किसी भी कार्यक्षेत्र में कोई भी नेता या कार्यकर्ता कितने समय तक रहे, यह प्रश्न अलहदा है; लेकिन भाईजी जब तक इस संग्राम के सेनापति थे तब तक उन्होंने जो प्रयत्नों की पराकाष्ठा कर दी उसका मूल्य कभी नष्ट नहीं होनेवाला है। लोकहित का आदर्श और उसके लिए प्राण-प्रण से किए गए प्रयत्न से ही इतिहास बनाया जाता है। इस दृष्टि से भाईजी द्वारा विदर्भ के लिए किया गया त्याग उनके जीवन के नेतृत्व का कलश है। ऐसा मैं मानता हूँ और उनका यह जीवन स्मृति-पुष्प उनके ही चरणों अर्पित कर मैं उनके लिए दीर्घायु तथा आरोग्य की कामना करता हूँ। ★

चिन्तक बियाणीजी

लेखक

निरंजन ज़मींदार—इन्दौर

(रईस; लेखक, वक्ता एवं सार्वजनिक कार्यकर्ता।)

श्री बियाणीजी से मेरा सम्पर्क कुछ वर्षों पहले ही हुआ था। यह सम्पर्क भी विशेष घनिष्ठ नहीं कहा जा सकता। अतः मेरे इस लेख में व्यक्तिगत संस्मरणों की कमी दिखलाई दे तो आश्चर्य नहीं। वैसे ही बियाणीजी की तीन पुस्तकों और 'विश्व-विलोक' के अन्दर प्रकाशित उनके लेखों को छोड़ मैं उनकी साहित्य सृष्टि से भी विशेष परिचित नहीं हूँ।

इन बातों के कारण मैं बियाणीजी को अधिक तटस्थता से देख सकता हूँ। मेरे सामने हर बार यह सवाल उठा कि बियाणीजी जैसे बुद्धिमान तथा साधन-सम्पन्न व्यक्ति राजनीति के क्षेत्र में अपना स्थान क्योंकर नहीं बना पाएँ? क्या वजह है कि वे आज शासन को परामर्शदाता के रूप में भी उपलब्ध नहीं हैं। उनकी मिलनसारिता अद्‌भुत है, फिर भी कई व्यक्ति उनसे चौंके हुए हैं। मैंने इन बातों पर काफी विचार किया और मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि बियाणी जी में जो बुद्धिवादिता है वह उन्हें समझौतों के लिए प्रवृत्त नहीं कर पाती। मुझे लगता है कि बौद्धिक क्षेत्र में वे अकेले पड़ गए और इस तरह उनके बौद्धिक विकास को भी हम पूरी तरह नहीं देख पाए। मैं यह मानता हूँ कि बियाणीजी यदि केवल बौद्धिक क्षेत्र में ही रहते तो उनका स्थान आज की अपेक्षा बहुत ऊँचा होता।

'विश्व विलोक' के अंकों में उनके लेखों और उनकी टिप्पणियों ने एक नई विचारधारा को जन्म दिया है। मैं उस विचारधारा को महायानी गांधीवाद के नाम से सम्बोधित करना चाहूँगा। गांधीजी के सिद्धान्तों में जो एक लचीलापन रहता था उसका कुछ दर्शन हमें बियाणीजी के विचारों में मिलता है। बियाणीजी के विचारों में हमें ऐसी दृढ़ता का दर्शन होता है जो हमें आज भारत के केवल

प्रखर विचारकों में मिलता है। राजाजी, मुंशीजी, आचार्य कृपलानी आदि की विचारधारा बियाणीजी के समान नज़र आती है।

कट्टर कांग्रेसी होते हुए भी श्री बियाणीजी, बुद्धिवादी एवं विचार स्वातन्त्रय में विश्वास रखने के नाते, अपने विचारों द्वारा सत्ताधारी दल में बौद्धिक उहापोह को प्रारम्भ करने का अभिनन्दनीय प्रयास कर रहे हैं।

सम्भवतः वे अपनी बुद्धिवादिता के कारण राजनीति के क्षेत्र में उतने सफल नहीं हो सके हैं, जितना कि उन्हें होना चाहिए। साधारण व्यक्ति जिस बात को विफलता मानते हैं, वे वास्तव में व्यक्तित्व की दृढ़ता का परिचय देती हैं। बियाणीजी का चरित्र किसी अच्छे राजनैतिक चरित्र लेखक द्वारा जब लिखा जावेगा तब उनकी महानता का सच्चा दर्शन हमें होगा।

उनकी ७१ वीं वर्ष-ग्रन्थि पर मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ अर्पित करता हूँ, और आशा करता हूँ कि वे अपने जीवन के सन्ध्याकाल में अपनी लेखनी का प्रसाद हमें देते रहेंगे।

★

समान शीलेषु व्यसनेषु सख्यम्

लेखक

नारायण अग्रवाल—धामणगाँव

(रईस एवं सार्वजनिक कार्यकर्ता।)

भाई ब्रजलालजी बियाणी ने सारी जिन्दगी देश की सेवा में बिता दी, यह बात विदर्भ के किसी आदमी से छिपी नहीं है। आपके सुश्राव्य व्याख्यान सुनकर कौन ऐसा है जो मुग्ध नहीं हुआ। आपके लेख पढ़कर कौन ऐसा व्यक्ति है जिसके चित्त में प्रसन्नता नहीं हुई। बियाणीजी जब नागपुर कॉलेज में पढ़ते थे तथा नागपुर बोर्डिंग में रहते थे तब उनसे मैंने मिलकर प्रस्ताव किया कि मारवाड़ी भाषा में एक मासिक निकाला जाए। बियाणीजी ने वह प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार किया और अग्रवाल महासभा के वर्धा अधिवेशन के समय "मार-वाड़ी हितकारक" नामक पत्र निकालना आरम्भ किया।

श्री बियाणीजी ने "मारवाड़ी-हितकारक" के प्रकाशन में लगन से भाग लिया। उन्होंने अनेक लेख लिखे। उनके सारे लेखों में सामाजिक सुधार की मात्रा झलकती थी। उन्होंने मण्डल के लिए "विजया-दशमी" एक पुस्तिका और "बाल-रामायण" एक पुस्तक लिखी, जो प्रकाशित भी हुई है। देश तथा समाज की सेवा में सारा आयुष्य खर्च करनेवाले व्यक्ति बहुत थोड़े ही मिलेंगे, जिनमें बियाणीजी का एक स्थान है। उनकी सेवा की लगन इतनी उत्कट है कि उनकी बीमारी के बाद भी सेवा की लगन रत्ती भर भी कम नहीं हुई है।

वे नागपुर में जब वित्तमन्त्री थे तब उन्होंने प्रशासन के क्षेत्र में अपनी सराहनीय चमक दिखाई थी। बम्बई अधिवेशन के असेम्बली अधिवेशन में जब उन्होंने विदर्भ का प्रस्ताव रखा तो महाराष्ट्र हिल गया, पर अन्त में उसका परिणाम गुजरात और महाराष्ट्र दो प्रान्त होने में हुआ। उन्होंने विदर्भ का अलग प्रान्त बनाने की अविस्मरणीय सेवा की है, चाहे उसमें सफल न हुए हों, पर इस सेवा का मूल्य भुलाया नहीं जा सकता, और मुझे विश्वास है कि भविष्य की पीढ़ी भी उनके विदर्भ आन्दोलन के लिए उन्हें सदैव याद करेगी। ★

काकाजी का सानिध्य

लेखिका
श्रीमती मीरादेवी बियाणी–कलकत्ता
(बियाणीजी की पुत्रवधु; श्री बाबूलालजी बियाणी की धर्मपत्नि ।)

बहू बनकर इस घर में आनेसे पूर्व काकाजी के विषयमें उनकी तारीफ़ एक बड़े सामाजिक एवं राजनैतिक नेता के रूप में बहुत सुन चुकी थी। ईश्वरकृपा से शादी के बाद उनके मंगल आशीर्वाद तथा प्रेमभरी छत्रछाया मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ ।

काकाजीके व्यक्तित्व ने मेरे मन पर गहरी छाप डाली है तथा जीवन में मैं बहुतही प्रभावित हुई हूँ । उनके विचारों से उनके सान्निध्यसे मेरी विचारधारा को नया प्रवाह मिला । मेरा महत् भाग्य है जो मुझे उनके साथ कुछ समय बिताने को मिलता है, नई बातें सीखने का अवसर प्राप्त होता है, नये विचार सुननेको मिलते हैं । जीवनके कई पहलुओं में अपने आपका विकास करनेकी प्रेरणा मुझे सदैव काकाजी से मिलती रही और मिलती रहेगी ।

काकाजीका व्यक्तित्व बहुगुणी तथा बहुरुपी है । स्वभाव से अति कोमल और मृदु हैं । वे शासन कर्ता भी उत्कृष्ट श्रेणी के हैं । कई वर्षों तक विदर्भ कांग्रेस में उनका एक छत्र राज्य इसका प्रमाण है । जिनसे वे एक बार मिले हैं उस व्यक्ति के मन पर वे हमेशा अपने व्यक्तित्व की छाप छोड़ देते हैं ।

जीवन के पहलू में आनन्द का अनुभव कैसे लेना, यह कला तो उनसे सीखते ही बनती है । मेरी छोटी सी दुनिया में और जीवन में जितने लोगों से मेरा सम्पर्क आया है उनमें काकाजी जैसे विशाल हृदयी व्यक्ति बहुत कम देखने को मिलते हैं ।

काकाजीके बारे में क्या क्या बताऊँ ? उनके महान् व्यक्तित्व को मेरी क्षुद्र-बुद्धि तथा क्षीण लेखनीसे आकलन कर शब्दों में संवार कर आपके सामने उप-स्थित करना-सही स्वरूप में बहुत कठिन है । ★

मानवीय गुणों से सम्पन्न श्री बियाणाजी

लेखक

कौशल प्रसाद–इन्दौर

(सम्पादक, 'रजतपट'–इन्दौर; सार्वजनिक कार्यकर्ता; साहित्यिक एवं लेखक।)

"बियाणीजी आ रहे हैं।"

"विदर्भ केसरी बियाणीजी विद्याजी को देखने आ रहे हैं।"

"मध्यप्रदेश के अर्थ मन्त्री बियाणीजी तुम्हारे घर आ रहे हैं।"

बारह तेरह वर्ष पुरानी बात है एक दिन मैं अपनी पत्नी विद्या की अस्वस्थता के कारण, महू में घर पर ही था, कि स्व. पं. सत्यदेव विद्यालंकार ने कार से जल्दी जल्दी उतरते हुए मुझसे उपरोक्त शब्द कहे।

मैं असमंजस में पड़ गया और सत्यदेवजी से बोला–"भाईजी ! विद्या की तबियत ऐसी ख़राब तो नहीं है कि इतने प्रमुख व्यक्ति को कष्ट दिया जाए !"

"मुझे यह कुछ नहीं मालूम, बियाणीजी ने तुम्हारे बारे में पूछा था, मैंने विद्याजी की बीमारी की बात कह दी, तो बोले–"इस कार्यक्रम से निबटकर विद्याजी को देखने चलेंगे।"

"मैं और सत्यदेवजी उपरोक्त बातचीत कर ही रहे थे कि बाहर अहाते में दो तीन शासकीय कारें आकर रूकी और बियाणीजी वही परिचित मुस्कान लिए ड्यौढ़ी पर दिखाई दिए।

मैं संकोच से दब गया। भाईजी उन दिनों मध्यप्रदेश के अर्थ मन्त्री थे और मुख्य मन्त्री स्व. पं. रविशंकर शुक्ल के साथ मध्यप्रदेश के शासकीय दौरे पर आए थे। उनके कार्यक्रम बड़े व्यस्त थे और हर सार्वजनिक कार्यकर्ता प्रत्येक मिनिस्टर को जैसे अपने घर बुलाकर जनता की नज़रों में ऊँचा उठना चाहता है, उसी प्रकार का प्रोग्राम बियाणीजी के साथ भी था।

पर मेरे यहाँ तो बात उल्टी थी। यहाँ तो विदुर के घर कृष्ण के पधारने का अवसर था, और मैं जानता था कि कितने आवश्यक प्रोग्रामों में कटौती करके और कितनों को नाराज़ करके वे मुझ तक आ सके होंगे।

पर यही तो बियाणीजी की विशेषता है कि वे कितने ही बड़े बन जाएँ, कितने ही व्यस्त हों, न साथी कार्यकर्ता को भूलते हैं और न ही उसकी व्यक्तिगत समस्याओं को। इसीलिए तो विदर्भ के सार्वजनिक क्षेत्र में उन्होंने राजस्थानी कार्यकर्ताओं की पूरी सेना खड़ी कर दी है।

बियाणीजी के सम्बन्ध में मानवीय गुणों की, यह मेरे जीवन में पहली घटना नहीं है। जब मैं पीछे की ओर देखता हूँ तो मानस पटल पर कई उज्जवल स्पष्ट चित्र दिखाई देते हैं।

सन् १९३६-३७ में दिल्ली वाले लाला तनसुखराज जैन के साथ मैं तिलक इन्शोरेन्स कम्पनी के कार्यकर्ता की हैसियत से, बियाणीजी से उनके घर पर मिला था। प्रथम भेंट में ही उन्होंने मेरे साथ छोटे भाई सरीखा स्नेह दिखाया। मेरे परिवार, शिक्षा-दीक्षा, कार्य व्यवहार के बारे में आत्मीय जैसी जिज्ञासा दिखाई। आज तीस वर्ष होने को आए, वही स्नेह, वही अपनत्व आज भी, जब भी मैं मिलने का सौभाग्य पाता हुँ, दिखाई देता है।

उनके प्रति मेरा आकर्षण, उस समय शायद एक साहित्यकार के नाते ही हुआ था। वे उन दिनों एक साप्ताहिक पत्र 'नव राजस्थान' श्री रामगोपाल माहेश्वरी द्वारा चलाते थे। वही शायद बाद में अर्ध साप्ताहिक और फिर दैनिक नव भारत के रूप में सामने आया। उच्च कोटि के साहित्य निर्माण के साथ हिन्दी प्रेम और हिन्दी प्रचार-प्रसार की भी भारी लगन है। तभी तो विदर्भ जैसे मराठी भाषा-भाषी प्रान्त में वे हिन्दी की नींव डाल सके। विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष और संस्थापकों में होने के अलावा विदर्भ के कई स्कूल, कॉलेज और संस्थाएँ उनकी प्रेरणा की देन है। अकोला का राजस्थान प्रेम तो जीता जागता उदाहरण है।

राजनीति में जाने के बाद प्राय: मनुष्य साहित्य, समाज, भाषा आदि सभी बातों को भूल जाता है। राजनीति का राक्षस, व्यक्ति की सभी शक्तियों का उपयोग केवल अपने लिए कराने में सक्षम होता है। पर बियाणीजी शायद इसके विकल्प रहे हैं। राजनैतिक कार्यों में पूर्णरूप से डूबे रहने के बाद भी आपने साहित्य, समाज सुधार और अन्य सार्वजनिक कार्यों को भुला नहीं दिया है।

तीसरी बार बियाणीजी से मैं एक फिल्म पत्रकार के रूप में भारत पिक्चर्स के मैंनजिंग डायरेक्टर सेठ सुगनचन्द तापड़िया के साथ मिला। उस भेंट में हममें दो तीन घंटे फिल्म क्षेत्र की ही चर्चा हुई। मैं उस बारे में बियाणीजी का ज्ञान देखकर दंग रह गया। इतनी व्यस्तताओं और कार्यों के बीच भी वे फिल्म जैसे उपेक्षनीय विषय में कैसे इतनी जानकारी याद रख सके।

बाद में मुझे पता चला कि वे भारत पिक्चर्स के केवल संचालक मण्डल में ही नहीं रहे हैं बल्कि उसके संस्थापकों में से हैं।

उन दिनों बियाणीजी साहित्यिक मासिक का प्रकाशन करा रहे थे। उसकी प्रति उन्होंने मुझे दी और फिर पारिवारिक बातों में उलझ गए।

बियाणीजी से बारबार मिलने, उनके विचार सुनने से मुझे लगा कि वे मूल में राजनीतिज्ञ नहीं हैं। वे उससे भिन्न कोमल-भावुक और माननीय भावनाओं से ओतप्रोत हैं। परिस्थिति, समय और राष्ट्र की आश्यकता ने चाहे उन्हें राजनैतिक नेता बना दिया हो, पर वे मन से मानव हैं और एक दीपक से दूसरा दिया जलाने में विश्वास रखते हैं। इसीलिए उनके साथ कार्यकर्ताओं का पूरा दल है। उनका संगठन आत्मीयता लिए हुए है। वे साथियों को विश्वास में लेकर चलते हैं। इसीलिए उनके कार्यकर्ताओं को उन सब कार्यों में पाएँगे, जिनमें बियाणीजी की रुचि है।

मैंने बियाणीजी को मिनिस्टर की हैसियत से कार्य करते हुए उस समय देखा जब फिल्म व्यवसाइयों का एक प्रतिनिधि मण्डल मनोरंजन कर वृद्धि के विरोध में उनसे मिलने गया।

मैंने देखा ज़िम्मेदारी के बोझ से दबे रहने पर भी उनकी स्वाभाविक नम्रता और मिलन सारिता के साथ साथ राजनीतिज्ञ वाली दृढ़ता भी उनमें मौजूद थी। उन्होंने शिष्टमण्डल की बातें ध्यानपूर्वक सुनीं, नोट कीं और आगामी बजट में कुछ करने का आश्वासन दिया। मैंने उस समय इसे वैसा ही कोरा आश्वासन समझा जैसा प्रायः सरकार की ओर से जनता को मिला करता है। पर मेरे आश्चर्य की सीमा न रही जब अगले वर्ष न केवल मनोरंजन कर में कमी की गई बल्कि दो आना का प्रवेश शुल्क कर मुक्त रखा गया। भारतीय फ़िल्मों के इतिहास में यह शायद प्रथम अवसर था कि कोई टैक्स बढ़ाकर कम किया गया हो।

मैंने फिर एक बार महसूस किया कि बियाणीजी आज के उन राजनीतिज्ञों में से नहीं है जो दो मुख रखते हैं। जो जनता को आश्वासन पूरे करने के लिए नहीं देते हैं। जो सेवा का नारा अपनी नेतागिरी जमाते रखने के लिए लगाते हैं। जो कार्यकर्त्ता को अपने से नीचा मानकर चलते हैं और इसीलिए कार्यकर्त्ता नेताजी की पीठ पीछे आलोचना करता है।

इस सब के साथ ही मन में प्रश्न उठा कि क्या बियाणीजी आज की मुंह देखी और स्वार्थी राजनीति में सफलता प्राप्त करते रहेंगे ?

जैसा कि मैंने ऊपर कहा है कि बियाणीजी अपनी नेता गिरी के लिए कार्य

नहीं करते हैं। वे अपने साथियों, कार्यकर्ताओं के हित को ध्यान में रखते हैं। भाषावार प्रान्तों के पुर्ननिर्माण के समय उन्हें महसूस हुआ कि विदर्भ प्रान्त अलग होने में वहाँ की अस्सी लाख जनता का अधिक लाभ है। उन्होंने इसके लिए प्रयत्न शुरू कर दिया और आन्दोलन उठ खड़ा हुआ।

उनके सामने पूरे महाराष्ट्र की मिनिस्टरी के चांस थे। वे नेहरूजी के प्रिय थे और यह बहुत सम्भव था कि उन्हें केन्द्रीय सरकार में आने का निमंत्रण प्राप्त हो, पर वे विद्रोही हो गए। अपने व्यक्तिगत स्वार्थ को भूलकर वे उस जनता के हित की बात पर अड़े रहे जिसने उन्हें 'विदर्भ केसरी' बनाया था। पर कितने आश्चर्य की बात है कि उनमें से ही कुछ लोग दूसरों के हाथों में खेले गए और बियाणीजी के साथ विश्वासघात कर गए। इसमें बियाणीजी को भारी क्षोभ, निराशा और असफलता हाथ लगी। उन्होंने अपना घर, अपना वह प्रान्त जिसमें उन्होंने जीवन के श्रेष्ठ पचास वर्ष बिताए थे, क्षण मात्र में छोड़ दिया और इन्दौर को अपना नया घर बनाया।

उनके स्थान पर कोई अन्य व्यक्ति होता तो मन व मस्तिष्क से टूट जाता, सार्वजनिक जीवन से सन्यास ले लेता, पर उन्होंने ७० वर्ष की आयु में नये क्षेत्र में नए उत्साह से युवकों जैसी उमंग के साथ साहित्यिक और सामाजिक कार्य आरम्भ किया और दो वर्ष तक खूब किया। कार्य करना, निरन्तर चलते रहना और सेवाव्रत लिए रहना उनके जीवन का ध्येय रहा है। इसलिए वे सब कुछ भूल कर कार्य में जुट गए, पर शरीर ने इस अवस्था में उनका साथ नहीं दिया और वे अस्वस्थ हो गए। अब वे स्वस्थ हैं और अपने मित्रों-स्नेहियों के बीच प्रेरणा स्रोत बने हुए हैं।

बस अपने पन का एक संस्मरण और! इन्दौर आते ही बियाणीजी ने मुझसे शिकायत की कि 'रजतपट' उन्हें बराबर नहीं मिलता।

मैं संकोच से दब गया। बियाणीजी उच्च कोटि का साहित्य पढ़ते हैं और आधुनिकतम उनका ज्ञान रहता है। उसके बीच रजतपट क्या है?

मैंने धीमे स्वर में कहा—भाईजी! रजतपट तो साधारण व्यवसायिक और आम पाठक का पत्र है। आप जैसे विद्वान के लिए उसमें देखने का क्या है?

"अपना कुरूप बच्चा भी सबको बहुत अच्छा लगता है। फिर रजतपट में तो मनोरंजन भी रहता है"—उनका उत्तर था।

मैंने उनके मन को परखा कि, कि मेरी गतिविधि की जानकारी के लिए ही उनकी रजत पट में दिलचस्पी है।

उन्होंने पाक्षिक 'विश्व विलोक' का प्रकाशन आरम्भ किया तो मैंने और अन्य साथियों ने भी उनसे कहा कि पत्र को वर्तमान पत्र कारिता की तरह पाठक के मनोनुकूल बनाया जावे।

उनका उत्तर था-मैं इस पत्र को ऐसे पाठकों के लिए प्रारम्भ कर रहा हूँ जो उच्च स्तर का ही साहित्य पढ़ते हैं। आज पाठक के लिए तो बहुत से पत्र प्रकाशित होते रहते हैं। हमें अपना रास्ता दूसरों के रास्ते से भिन्न बनाना है। और वास्तव में 'विश्व-विलोक' के जितने अंक प्रकाशित हुए हैं वे अपने में निराले हैं।

★

एक व्यक्तित्व विश्लेषण

लेखक
चम्पालाल गणपत मेवाड़े—देवलगाँवराजा
(कांग्रेस के विविध क्षेत्रों के कार्यकर्ता।)

सम्भवतः सन् १९२८ का साल होगा, अकोला में वहाँ स्वर्गीय शिदोरेजी ने माननीय बियाणीजी से मेरा परिचय कराया था। राजस्थान भवन उस समय बना नहीं था। जिस समय हम उनसे मिलने गए तब सतेज चेहरे-वाले, गौरांग, ऊँचे पूरे कद के श्री बियाणीजी हँसते हुए हम दोनों का उचित स्वागत करते हुए दिखाई पड़े। प्रथम दर्शन में उनकी भाषा-शैली, वार्ता आदि से मैं प्रभावित हुआ। खादीधारी तो मैं चार-पाँच वर्ष पूर्व ही बन चुका था, परन्तु फिर भी मेरा हुलिया हिन्दू महासभावादी जैसा था। देवलगाँव हिन्दू महासभा का अधिवेशन डा. मुन्जे साहब की अध्यक्षता में हुआ था। सावरकर बन्धुओं से भी मैं परिचित था; उनके ओजस्वी विचारों तथा रहन-सहन से कुछ क्रान्ति की सी झलक मिलती थी। पुराने क्रान्तिकारियों की कुछ ज़प्त किताबें लाना, उन्हें प्रसारित करना, अखाड़े आदि चलाकर विचार प्रसार करना आदि कार्य के साथ शुद्धि, संगठन आदि कार्य चालू था। स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दजी का भी मन पर काफी असर पड़ा हुआ था, तो भी मेरे मन में द्विविधा भाव था। पूज्य गांधीजी की ओर भी खयाल था। उनकी किताबों ने, नवजीवन आदि ने भी मन को आकर्षित कर रखा था, कि उसी समय बियाणीजी से भी परिचय हुआ। जब-जब अकोला जाता तो स्वर्गीय शिदोरेजी, मामा-साहब जोगलेकरजी आदि से बहस करता, परन्तु बियाणीजी से बातचीत करने पर मन एकदम शान्त हो जाता था। उनके व्यक्तित्व का मेरे ऊपर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। मैं कांग्रेस का सभासद बन गया।

बियाणीजी के स्वभाव की एक बहुत बड़ी विशेषता है। व्यक्तिगत आचार हो, दैनिक कार्यक्रम हो, गृह व्यवस्था हो, जाति-प्रथा सुधारने का कार्य हो अथवा समाज सुधार विषयक कोई समस्या हो, अतिथि सत्कार हो, पत्र पत्रिका, पुस्तक

आदि का प्रकाशन हो, पत्र-व्यवहार का काम हो, चुनाव हो, विदर्भ का आन्दोलन करना हो, सत्याग्रही बनना हो, व्याख्यान आदि हो अथवा और कोई भी कार्य हो सभी में बियाणीजी की कुछ विशेषता रहती है—ऐसे मित्र परिवार एवं परिचित जनों के उद्‌गार उनके सम्बन्ध में सुनाई देते थे। उनके प्रत्येक कार्य में सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की झलक दिखाई देती थी।

एक समय की बात है, देवलगाँवराजा में माहेश्वरी महासभा का अधिवेशन होने जा रहा था। स्वर्गीय श्री कृष्णदासजी जाजू, स्वर्गीय गुलाबचन्दजी नागोरी एवं श्री गंगाविसनजी करवा, जालना से टाँगे में देवलगाँव आए। रास्ते में सब लोग मेरे यहाँ ठहरे। श्री बियाणीजी की अध्यक्षता में अधिवेशन होगा, यह उनसे जानकर मुझे एक विशेष प्रकार का आनन्द हुआ। पण्डाल आदि बनवाने का कार्य मुझे सौंपा गया था। हर कार्य के समय बियाणीजी के सौन्दर्य बोध की मुझे याद हो आती थी। क्या पण्डाल ठीक बना है? शौचालय व्यवस्थित है, अथवा नहीं? बोर्ड आदि उचित स्थान पर लगे हैं या नहीं? हर बात का उन्हें ध्यान रहेगा और वे इन सब के सम्बन्ध में हमसे उचित जानकारी चाहेंगे। इस बात का हम सबको डर था। जब बियाणीजी राजागाँव आए तो उनका उचित स्वागत किया गया। सबने उनका भाषण सुना तथा उसकी एक पुस्तिका भी तैयार की गई। उनके भाषण की एक प्रति मुझे भी प्राप्त हुई। मैं उस भाषण को कई बार पढ़ता रहा और मेरा मन इस आश्चर्य से भर गया कि इतना वैचारिक भाषण बियाणीजी जैसे तरुणों का हो सकता है? परन्तु जैसे बियाणीजी से मेरा परिचय बढ़ता गया उस शंका का शनैः शनैः समाधान होता गया। मुझे उनकी भाषा, शैली एवं मधुर वाणी में एक विशेष तेज दिखाई दिया। उस समय मैं 'राजस्थान', 'नव-राजस्थान' आदि में उनके उत्तेजना एवं प्रेरणा देनेवाले लेख भी पढ़ा करता था। उनकी 'कल्पना-कानन' पुस्तक को भी पढ़ चुका था। यह पुस्तक भाषा और भाव सभी दृष्टि से मुझे उत्कृष्ट कृति दिखाई देती है। बियाणीजी की प्रतिभा का प्रभाव केवल मेरे ऊपर ही नहीं था, बल्कि हमारा सारा गाँव उन्हें अत्यन्त आदर से देखता था। वे देवलगाँवराजा में इतने लोकप्रिय थे कि जब भी वे उधर आते तो सारा गाँव उनके स्वागत के लिए उतावला हो उठता; घरों, दुकानों तथा सड़कों को पुष्पों और गुलाल से सुसज्जित किया जाता तथा उनके आगमन पर उनके ऊपर पुष्पों की वर्षा होने लगती। सब लोग भाषण को मन्त्र-मुग्ध हो सुनते थे।

बियाणीजी विदर्भ कांग्रेस के अध्यक्ष बने और वे उस पद पर कई वर्षों तक

रहे। जिस समय वे अध्यक्ष थे उस समय उनके सेवाभाव को देखने का मुझे पूर्ण अवसर प्राप्त हुआ। बियाणीजी सदैव तथा प्रत्येक समय छोटे-बड़े सभी का समान आदर करते हुए दिखाई पड़ते। किसको किस वस्तु की किस समय आवश्यकता है इसका उन्हें निरन्तर ध्यान रहता था। भोजन कराते समय वे जाति-पाँति छोटे-बड़े तथा ऊँच-नीच सभी भेद-भावों को विस्मृत कर देते थे; और तन्मय होकर सबको पूछ-पूछकर भोजन कराते थे। उनके घर की महिलाएँ भी समानता का बर्ताव करने में किसी से कम नहीं थीं। मारवाड़ी समाज में जहाँ शताब्दियों से पर्दा-प्रथा चली आ रही हो, स्त्रियों का बिना पर्दा किए सब को भोजन कराना तथा सबके खाने का उचित खयाल रखना उस समय एक आश्चर्य की बात थी। परन्तु श्री बियाणीजी का प्रभाव सब पर था, और उनके रंग में सब पूर्ण रूप से रंगे थे।

श्री बियाणीजी के स्वभाव की यह विशेषता भी मैंने देखी है कि किस प्रकार से दूसरों की बात का, उन्हें निस्तेज किए बिना, उचित उत्तर दिया जाए। इस सम्बन्ध में मुझे एक घटना याद आती है। १९३४ के बम्बई कांग्रेस के समय में प्रतिनिधि के रूप में मैं वहाँ उपस्थित था। एक विषय पर मुझे वोट देना था। एक तरफ मेरे ऊपर स्वर्गीय मालवीयजी का आकर्षण था और दूसरी ओर राजाजी और वल्लभभाई का। वोट किधर दूँ? यह समस्या मेरे सामने थी। बियाणीजी के निवास स्थान पर गया, किन्तु वे वहाँ नहीं थे। अधिवेशन से लौटने पर मैं गाँव वापस आया तो मैंने बियाणीजी को एक शिकायत भरा पत्र भेज ही दिया। उसमें मैंने लिखा कि जब आपको प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष बनाया गया है तो आपने हमारा मार्ग दर्शन क्यों नहीं किया? उन्होंने जवाब में लिखा कि मैं काम में अत्यधिक व्यस्त रहा और आपसे मिल नहीं सका। जब मैं आपके निवास स्थान पर आता तो आप लोग बाहर गए हुए होते थे और जब आप लोग मेरे यहाँ आते तो मैं किसी कार्यवश बाहर गया हुआ होता था। अतः हम मिलने में असमर्थ रहे। इस बात का मुझे हार्दिक दुःख है और भविष्य में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाएगा। उनकी इस विनम्रता को देखकर मैं नतमस्तक हो गया।

श्री बियाणीजी केवल माधुर्य और सौजन्यता की ही मूर्ति नहीं हैं, वरन् वे अथक परिश्रम करने वाले सेनानी भी हैं। मुझे स्मरण है कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की राजस्थान भवन में बैठक हो रही थी। उसमें बियाणीजी प्रातः से बैठे तो सारा दिन और सारी रात्रि एक आसन पर बैठे ही रहे। पूरे २४ घण्टे वे

कार्य में इतने व्यस्त रहे कि न उनको खाने की चिन्ता थी और न पीने की। यहाँ तक कि आप लघुशंका आदि को भी नहीं गए। इसी प्रकार जब कभी भी वे चुनाव के दौरे पर जाते, निरन्तर इधर-उधर घूमते फिरते रहते। घण्टों मैंने उन्हें खड़े-खड़े काम करते, अभिवादन करते देखा है। उनके कार्य करने की क्षमता को देखकर कोई भी आश्चर्य चकित हुए बिना नहीं रह सकता। वास्तव में उनमें कोई अजीब सी शक्ति काम करती है।

श्री बियाणीजी के साथ सौ. सावित्रीदेवी भी निरन्तर काम में जुटी रहती थीं। बियाणीजी काम में व्यस्त रहते तो सबकी यथोचित आहार पानी की व्यवस्था, उनकी देखभाल करना सावित्रीदेवीजी का ही काम था, जिसे वे बड़ी दत्तचित्त होकर करती थीं। एकबार पंडित जवाहरलालजी आए। बड़ी पार्टी थी, जिसकी व्यवस्था सावित्रीदेवीजी ने की। वे ज्यादा पढ़ी हुई महिला नहीं हैं, पर कितनी व्यवस्था है उनके काम में यह देखते ही बनता है।

यदि बियाणीजी की प्रखर बुद्धि को देखना है तो उनके मन्त्रित्व काल का अवलोकन करना होगा। अपने मन्त्रित्व काल में न जाने कितने ही मन्त्रियों का आपने मार्गदर्शन किया, तथा स्वयं के कार्य को जिस सुचारु रूप से चलाया वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। आपके कार्य से जनता तथा आपके सभी साथी––मुख्य मन्त्री माननीय पण्डित रविशंकर शुक्ल भी––प्रसन्न थे तथा आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते थे। उचित बजट, जानकारी पूर्ण नियोजन, सुचारू एवं शीघ्रतम शासन, सभी छोटे बड़े कर्मचारियों का निरन्तर ध्यान रखना आपकी विशेषता रही है। आप सदैव अपने सिद्धान्तों पर डटे रहे। "टूट जाना पर झुकना नहीं" वाली बात आप पर पूर्णरूपेण चरितार्थ होती है।

स्वभाव से कोमल होते हुए भी आपके जीवन में कठोर नियमितता है। प्रातः जल्दी उठना, थोड़ी सी कसरत करना, स्नान आदि से निवृत्त होकर सात-साढ़े सात बजे तक काम में जुट जाना आपकी पुरानी आदत है। इस आदत में कभी भी उलट फेर करते नहीं देखा गया।

जिस प्रकार पूज्य बापूजी (महात्मा गांधीजी) के जीवन के छोटे-मोटे हर काम में उनकी दृष्टि, स्वभाव, ज्ञान-लालसा, कर्तव्य, तत्परता, तात्विकता आदि दिख पड़ती थी, सर्वसाधारण के लिए मार्गदर्शन कर सकती थी, उसी प्रकार बियाणीजी के भी प्रत्येक कार्य से उनके आचार-विचार, सौन्दर्य-बोध, बुद्धिमत्ता, साहित्यिक अभिरुचि, मानवतावादी दृष्टिकोण तथा सुसंस्कृत होने का बोध होता है। बियाणीजी को जो विदर्भ-केसरी कहकर पुकारा जाता है, वह उचित ही है।

आजकल आप सक्रिय राजनीति छोड़कर साहित्य के सृजन में लगे हुए हैं। एक वर्ष से भी अधिक से आप 'विश्व-विलोक' पाक्षिक पत्रिका निकालने में संलग्न है। आप उसके प्रमुख सम्पादक हैं। यह पत्रिका विचार प्रधान है। इसके माध्यम से आप भारतीय नेताओं तथा भारतीय समाज को नवीन विचार दे रहे हैं तथा उनका विधिवत् मार्गदर्शन कर रहे हैं।

मेरी तो यही कामना है कि भगवान उन्हें शतायु करें और वे जीवन के अन्तिम क्षणों तक इस समाज का मार्गदर्शन करते रहें। ★

कुशल राजनीतिज्ञ

लेखक
दादा धर्माधिकारी—नागपुर
(भूतपूर्व विधानसभा के सदस्य; सर्वोदय के प्रमुख कार्यकर्ता, वक्ता एवं लेखक।)

बियाणीजी का और मेरा स्नेह सम्बन्ध कम से कम तीस-बत्तीस वर्ष पुराना है। उनसे मैंने हमेशा निरपेक्ष स्नेह ही पाया है। व्यक्तिगत जीवन में या सार्वजनिक जीवन में कई उतार-चढ़ाव आए, तीव्र मतभेद के भी अनेक प्रसंग आए, परन्तु हमारा पारस्परिक स्नेह अक्षुण्ण ही बना रहा। मेरा राजनैतिक जीवन समय और विस्तार की दृष्टि से अत्यन्त परिमित ही रहा। बियाणीजी एक कुशल, चतुर और सफल राजनीतिज्ञ थे। सत्ता के विशाल वैभव का उन्हें अनुभव है। इसलिए हमारे स्नेह सम्बन्ध की अविकलता का मुख्य श्रेय उन्हीं को है। मानवीय जीवन का मैत्री अनमोल ऐश्वर्य है। उसे निबाहना बियाणीजी ने सीखा है।

बियाणीजी से कुछ निकट परिचय १९३२ में अकोला, सिवनी की जेलों में हुआ। एक बात की छाप मेरे मन पर विशेष रूप से पड़ी। जेल में जितने 'स्वराजी कैदी' थे, मानो सबके सब बियाणीजी के अतिथि थे। बियाणीजी सबका आतिथ्य बड़ी उदारता से और नम्रता से करते थे। सबकी विशेष आवश्यकताओं का वे ध्यान रखते थे। हम सबके वे 'यजमान' थे और हम उनके मेहमान थे। हममें से कुछ लोग आलोचक थे परन्तु उनमें से भी कई उनकी आतिथ्यशीलता से लाभ उठाने में अपनी चतुराई समझते थे।

उनके और मेरे बीच मतभेद का एक प्रसंग याद आता है। संयुक्त महाराष्ट्र के आन्दोलन का समय था। महाराष्ट्र के एक सर्वमान्य आदरणीय और सच्चरित विद्वान तथा भारत के अग्रगण्य अर्थशास्त्री श्री धनजंय गाडगिल के साथ हम कुछ मित्र दौरा कर रहे थे। भाषिक राज्यों का विरोधी होते हुए भी मैं उस समय विदर्भवाद के विपक्ष में संयुक्त महाराष्ट्र का समर्थन करता था। बियाणीजी उस समय विदर्भवादी नहीं बने थे। हम सब लोग अकोला में उन्हीं के मेहमान

थे। बियाणीजी ने हम लोगों का आतिथ्य बहुत मधुर भाव से किया। परन्तु हमारे कार्य का विरोध उन्होंने उतनी ही मधुर दृढ़ता से किया। वे मराठी बहुत शुद्ध, मुहावरेदार और सुन्दर बोलते हैं। फिर भी उस अवसर पर आग्रहपूर्वक हिन्दी भाषा में उन्होंने भाषिक राज्यों का विरोध किया। बाद में वे विदर्भ-वादी बने और उस व्यापक भूमिका से च्युत हुए। लेकिन शीघ्र ही सम्हल गए। संयुक्त महाराष्ट्र आन्दोलन का उन्होंने जिस व्यापक राष्ट्रीय भूमिका से विरोध किया था, वह भूमिका मेरी भूमिका से अधिक शुद्ध और निर्दोष थी।

आज वे फिर से एक सत्ता विरहित नागरिक हैं। इस देश में जबकि साम्प्रदायिक, जातीय, भाषिक और क्षेत्रीय संकीर्ण नागरिकता और सामाजिक नागरिकता का बोलबाला है, बियाणीजी की उन दिनों की व्यापक, राष्ट्रीय भूमिका का हठात् स्मरण हो आता है। ★

शक्ति और प्रेम की ज्योति

लेखक
राधाकृष्ण लाहोटी—बम्बई
(माहेश्वरी महासभा के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री; 'माहेश्वरी' के सम्पादक; समाज सुधारक एवं लेखक।)

इस लम्बे जीवन में मैं कई सन्त-महात्माओं के निकट सम्पर्क में आया—ऐसे सन्त जो काल के विशाल तट पर अपने अमिट चरण-चिह्न छोड़ गए हैं।

किन-किन के नाम गिनूं ?

दो के नाम तो साथ-साथ मेरे मन की आँखों के आगे उभरते हैं।

सर्वप्रथम श्रद्धेय जाजूजी और फिर श्री भाईसाहब ! यूं तो हम दम्पत्ति को कइयों ने अपने आतिथ्य सत्कार का सुयोग प्रदान किया, परन्तु इनमें श्रद्धेय जाजूजी और श्री भाईसाहब का स्थान सर्वोपरि है।

श्रद्धेय जाजूजी का कृपाछत्र तो अन्तिम क्षण तक बना रहा। श्री बियाणीजी के आतिथ्य का अवसर मन्त्रिपद पर उनके आसीन होने तक मिलता रहा।

यदि कोई मुझसे पूछे कि इन व्यक्तियों में से किससे मैं अधिक प्रभावित रहा, तो यह ठीक-ठीक बताना मेरे लिए कठिन ही होगा। मैं इन उभय व्यक्तियों का सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन करता रहा। दोनों ने ही विमल प्रेम की मुझपर एक-सी वर्षा की है।

यूं तो इन दोनों से जितना भी पाया वह मेरे लिए अपरिमित ही है। दोनों ही समस्त रूप से मेधावी और एक समान बुद्धिवादी भी ! दोनों की ही सदा यही सीख रही है कि हर बात को गहराई में जाकर सोचा-परखा जाय। फिर भी दोनों की वैचारिक पृष्ठभूमि का आधार अलग-अलग रहा है। जहाँ प्रथमोक्त सज्जन हर बात को आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सोचने के आदी थे, वहाँ दूसरे ने आधिभौतिक विचारधारा को अपना रखा था। फलत: इन दोनों से प्रभावित रहने के कारण मेरे मन में निरन्तर विचार-संघर्ष चलता रहा।

एक घरेलू उदाहरण ही देखिए। मेरे परिवार के सभी व्यक्ति, और विशेष-कर परम आदरणीय भाईसाहब झुम्बरलालजी, हमारे घर श्रद्धेय जाजूजी के आगमन और निवास पर प्रसन्नता अनुभव करते रहे। यही बात भाई बियाणीजी के बारे में नहीं कही जा सकती। उनके प्रति हमारे शिष्टाचार में तो कभी कोई कमी नहीं रही, परन्तु अपने आपसी सम्बन्धों को लेकर हम दोनों के मन में कहीं कोई विचार ज़रूर बना रहा।

मैं इस बात को बराबर अनुभव करता रहा। फिर भी भाई बियाणीजी के जीवन-क्रम से जो सीख मैंने पाई वह इतनी ठोस और गहरी थी कि जिससे जीवन में आगे बढ़ने की कोशिश करने के लिए मुझे प्रेरणा और बढ़ावा मिला।

श्री भाई साहब के जीवन-क्रम ने मेरे पथप्रदर्शन में ठीक वैसी ही सहायता पहुँचायी है, जैसी कि कवीन्द्र रवीन्द्र की इन पंक्तियों ने—

They who are nearer to me do not know
that you are nearer to me than they are
They who speak to me do not know
that my heart is full with your unspoken words
They who crowd in my path do not know
that I am walking alone with you
They who love me do not know
that their love brings you to my heart.

उनके इन उपकारों को मैं किसी पर, और खासकर अपने कुटुम्बीजनों पर कैसे व्यक्त कर सकता था? मैं उनके अधिकाधिक निकट पहुँचता गया और उनके जीवन के साथ समरस होने के लिए प्रयत्नशील रहा। श्री बियाणीजी के परिवार और इस शरीर के छोटे से परिवार को अभिन्नता में देखने की मुराद को पूरी करने की मेरी अपनी जो ख़्वाहिश रही उसके रहस्य को मैं आज तक समझ नहीं पाया हूँ। श्री बियाणीजी की जीवन-माधुरी ने मुझे इतना अधिक मुग्ध कर दिया कि जिसको मैं अब तक देख नहीं सका।

मेरे जीवन में ऐसे भी क्षण आए जब कुछ धुँधला कुहरा हम दोनों के दिलों में छा जाता था, जिसे साफ करने का काम परम आदरणीय प्रमिला ताई ने किया, और किया पूजनीया सौ. सावित्रीबाई के उज्ज्वल एवं पावन व्यक्तित्व ने। जैसे—

'रवि तेज पायी दशहुं दिशि
दोष कुहर को फाट्यो !'

जीवन प्रांगण में उतर रहा था। देश की दशों दिशाओं से, प्रत्येक क्षेत्र में, तरह-तरह के नारे बुलन्द हो रहे थे; फिर ये क्षेत्र राजनैतिक, धार्मिक या सामाजिक कुछ भी क्यों न रहे हों। लोगों के दिल-दिमाग में ये नारे घर करते जा रहे थे—

'शंखन् दध्मौ पृथक् पृथक्'

इन नारों से, इस शंखध्वनि से कैसे अछूता रहा जा सकता था?

इसी बीच, १९२१ ई. में, बम्बई प्रान्तीय माहेश्वरी सभा के चौथे अधिवेशन में उपदेशक पं. अमृतलालजी की कृपा से श्री बियाणीजी से परिचय हुआ। उनकी वेशभूषा, रहन-सहन, उठने-बैठने और चलने-फिरने के तौर-तरीके सबमें एक खासियत थी। यद्यपि उस समय उनका कोई भाषण सुनने का सौभाग्य नहीं मिला तथापि उनकी पैनी दृष्टि ने वही असर कर दिया, जो उनका भाषण सुनने से होता। हाँ, उनकी यह छाप अस्पष्ट थी। अलबत्ता उन दिनों की कुछ बातें, जैसे 'जो यज्ञोपवीत धारण नहीं करता वह महासभा का पदाधिकारी नहीं बन सकता' इस विषय को लेकर माहेश्वरी महासभा के बम्बई-अधिवेशन में छिड़ी हुई बहस और उसपर गरमागरम बहस; महासभा के इसके अगले ही पण्ढरपुर-अधिवेशन में 'कोलवार-माहेश्वरी' सवाल पर हुआ यादगार वाद-विवाद; बाबू गोविन्ददासजी मालपाणी द्वारा लॉर्ड मोर्ले की सुप्रसिद्ध पुस्तक 'Compromise' के सहारे अपने मन की पुष्टि का प्रयास और इसी सन्दर्भ में श्री बियाणीजी द्वारा मोर्ले महाशय के उल्लिखित ग्रन्थ का अपने पक्ष-समर्थन के लिए किया गया उपयोग तथा उन्हीं का वह समारोपात्मक भाषण, जिसे सुनकर उपस्थित समुदाय गद्गद हो उठा, इतने दिनों बाद आज भी 'वैद्यो नारायणो हरि' उक्ति का स्मरण कराता है।

आज भी उनके उक्त भाषण के प्रेरणाप्रद अंश मानो कानों में गूंज रहे हैं।

इसके बाद आया बम्बई प्रान्तीय माहेश्वरी सभा का शिवगाँव-अधिवेशन। उन दिनों सामाजिक क्रान्ति की ज्वालाएँ जोरों से भड़क उठी थीं। दो दलों में शक्ति-परीक्षण चल रहा था। एक ओर नवीनतावादी प्रथमोक्त दल 'बोल बालासाहब की जय' से जगह-जगह तूफान मचा रहा था।

१९२० ई. से लगाकर १९३० ई. तक श्री भाईसाहब का क्षेत्र अधिकांश में सामाजिक सुधार के कामों तक सीमित रहा। सामाजिक सुधार के क्षेत्र की अपनी अनुपम कार्य-पद्धति से श्रद्धेय जाजूजी, जमनालालजी बजाज और श्री बियाणीजी ने समूचे मारवाड़ी समाज के सदस्यों के दिल-दिमाग में 'तत्वयसि' अर्थात्

'तू अपने को पहचान' का सन्देश अत्यन्त दृढ़ता के साथ प्रवाहित कर दिया। बात अस्पृश्यता-निवारण की हो, या व्रत-वैकल्प की पालनविधि की—लोगों में, ख़ासकर युवा वर्ग में, हर विषय पर गहराई से सोचने की आदत डालने के लिए उक्त तीनों महानुभावों ने अथक परिश्रम किया। उन्होंने समाज के सभी वर्गों को विचार करना सिखाया और हर बात को 'क्यों' और 'कैसे' की कसौटी पर परखने की राह दिखाई।

एक बात और ! उस प्रक्षुब्ध वातावरण में जबकि 'जात-बाहर' की आलोचना और उत्तर-प्रत्युतर का बाज़ार बहुत गर्म था, श्री बियाणीजी को मैंने कभी अपना सन्तुलन खोते नहीं देखा। प्रतिपक्षी भी उनके मीठे और सुन्दर व्यवहार से निरुत्तर तो ही हो जाते थे, कभी-कभी शर्मिन्दा भी हो उठते थे। उनके सद्व्यवहार से वे प्रसन्न भी कम नहीं रहते थे।

जिस प्रकार उन्होंने सामाजिक क्रान्ति के शंखनाद से लोगों को झकझोरा, ठीक उसी प्रकार महात्माजी द्वारा नमक-सत्याग्रह आन्दोलन का सूत्रपात किए जाते ही, सी. पी.-बरार में, जो समुद्री-किनारे से दूर है और जहाँ नमक के दर्शन नहीं हो सकते, बापू की इजाजत से जंगल-सत्याग्रह के रूप में श्री बियाणीजी ने जनता के हाथों में एक अमोघ अस्त्र थमा दिया। इसके लिए बनायी गयी 'युद्ध-समिति' के श्री बियाणीजी ही सर्वाधिकारी (डिक्टेटर) चुने गए। अपने प्रान्तवासियों में नव-जागरण का शंख फूंकने के लिए आपने जिस अदम्य उत्साह और अनुपम लगन से कार्य किया उसको शब्दों में व्यक्त करना इस कलम की ताकत के बाहर की बात है।

मैंने भली भाँति देखा है कि श्री बियाणीजी आतप-वर्षा-हिम की, भूख-प्यास की, रात-दिन, सुबह-शाम, दोपहर-आधीरात आदि की परवाह किए बगैर सी. पी. बरार के कोने-कोने की रेत छानते हुए जन-मानस के मन्दिरों में स्वतन्त्रता-प्रेम के दीप को प्रज्ज्वलित रखने के लिए सचेष्ट रहे। यह दीप कभी बुझे नहीं इसके लिए उन्होंने पहरेदारी की। ऐसे सेवकों के खून-पसीना बहाने के कारण ही देश आज़ाद हो सका है।

जिन लोगों ने अकोला स्थित श्री बियाणीजी के निवास-स्थान 'राजस्थान-भवन' के व्यस्त जीवन को देखा है वे ही समझ सकते हैं कि कैसे इस भवन की प्रत्येक सीढ़ी ने आगन्तुकों की चरण-धूलि को अपने सिर-आँखों पर चढ़ाया और कैसे सबका स्नेह-सिक्त हृदय से स्वागत किया ? इन मेहमानों के कण्ठ से निकली हुई 'भाईजी, भाईजी' की आवाज से उक्त भवन जब-तब गूँजता रहा है। लगता है, वह सब चहल-पहल, वह आवाज़ आज कहीं लुप्त हो गई है। आज उसका

कहीं पता नहीं चलता, उसका कोई ठोर-ठिकाना दिखायी नहीं देता। पर उसकी स्मृति मन:स्थल पर ज्यों की त्यों बनी हुई है।

मैं तो यही चाहता हूँ, उनकी विशालता, स्निग्ध, शुभ्र जीवन-गाथा को गाते-गाते इस संसार से विदा हो जाऊँ——

'Let me sing and sing and die !'

मैं जब भाई बियाणीजी के मधुर जीवन को देखता हूँ, तब भगवान की ओर मेरा मन दौड़ता है और मैं प्रार्थना करता हूँ :

'Teach me half in gladness
Thy brain must know
Such harmonious madness
From my lips would flow
The world should listen then,
as I am listening now.'

भाईजी के जीवन की वास्तविक शक्ति सौ० सावित्रीदेवी रही हैं।

वास्तव में जहाँ ब्रह्म का विचार है वहाँ ब्रह्म की शक्ति का, जहाँ सूर्य का वहाँ उसके प्रकाश का, जहाँ चन्द्रमा का वहाँ चाँदनी का अत: जहाँ श्री भाईसाहब का विचार है वहाँ उनकी पूरक सौ. बाई का भी। सौ. सावित्रीदेवी ने सदैव क्या सामाजिक क्षेत्र और क्या राजनैतिक सभी क्षेत्रों में श्रद्धेय बियाणीजी की शक्ति के रूप में कार्य किया है।

जिस समय श्री बियाणीजी सुधार क्षेत्र में प्रगति पथ पर थे, उस समय सुधार की बात घरों के बाहर बैठक खाने की थी, उसका प्रवेश घरों के आंतरिक भाग में नहीं हुआ था। दो वर्षों में इतनी हवा बदल गई कि एक ओर श्री बियाणीजी माहेश्वरी महासभा के धामणगाँव अधिवेशन में महिलाओं के बैठने के लिए कनात तना रहे थे, तो दूसरी ओर श्री सौ. सावित्रीबाई 'मन की गुंडी' खोलने में चुस्त थीं। अन्त में 'मन की गुंडी' खुली, हृदय के कपाट खुले और यों 'मंगल मंदिर' के द्वार खुलने से जनता जनार्दन की सेवा के लिए चल निकली।

राजनैतिक हवा बदली। स्वातंत्र संग्राम का बिगुल बजा। मध्यप्रदेश में जंगल सत्याग्रह करने का तय हुआ। श्री बियाणीजी ने इस युद्ध की सदारत ली। इस दौरान में श्री बियाणीजी जेल के मेहमान बने। देश में चहुँ ओर स्त्री-शक्ति का विराट रूप दिखा, वैसे ही अकोला में सौ. सावित्रीबाई, 'राजस्थानी रमणी के जौहर के स्वप्न देखने वाली', पीछे कैसे रहतीं। हँसते-हँसते पति को जेल को बिदा करने का तिलक किया और आप भी पति-पथानुगामी

बनीं। अपना दल बनाकर मदिरालयों पर धरने का साहसीक काम हाथ में लिया।

जिन्होंने उस समय के आन्दोलन को देखा है वह इससे दो मत नहीं रखते कि वह कार्य साहस का था।

श्री भाई साहब के जीवन में सौ. सावित्रीबाई मनसा, वाचा, कर्मणा समा गई हैं। श्री सौ. बाई का यह आत्म-समर्पण अविस्मरणीय और प्रशंसनीय है। ऐसा सुखमय दांपत्य जीवन बहुत थोड़ों के भाग्य में बदा है। सजीवन की एक और विशेषता यह है कि इस मधुर जीवन की देन कमल, कमला, सरला, सौ. प्रभा आदि को तो मिली और वे सब चित्त विभोर हैं ही, पर जो भी उनके सम्पर्क में आए वे भी अपने जीवन में तर हो गए। श्री सौ. बाई का स्नेहपूर्ण जीवन विशुद्धता से ओतप्रोत है। घर पर कोई भी अतिथि आया है, फिर वह कोई बड़ा आदमी हो या अदना कार्यकर्ता हो, उसके आवभगत में, व्यवहार से द्वैत भाव को स्थान नहीं। राजस्थान भवन में सुबह से लगाकर रात तक आगंतुकों का आवागमन रहता है पर समय समय पर उनके आदरातिथ्य में किसी प्रकार की कमी नहीं होती। 'प्रसन्न वदनं ध्यायेत्' यही उनके जीवन का सार रहा है, मूल मंत्र रहा है। ★

मा० बियाणी-जीवन का शान्तिपर्व

लेखक
बिशनदास उदासी, बी० ए० एल-एल० बी०—अकोला
(एडवोकेट; पत्रकार; सामाजिक कार्यकर्ता; वक्ता एवं लेखक।)

बियाणीजी के साथ सन् १६३६ से १६४६ तक मैं सार्वजनिक जीवन में काम करता रहा। महाभारत में महारथी कर्ण का चरित्र मुझे बहुत पसन्द है। उसका जीवन जन्मजात श्रेष्ठता के घमण्ड को चूर करने की विद्रोही वीरता में सर्व-श्रेष्ठ है। "दैवायत्तं कुले जन्म, मदायत्तं तु पौरुषम्" यह तेजस्वी जीवन-सिद्धान्त मानव-समाज को देनेवाला कर्ण, अपने कवचकुण्डल भी दानवीरता का व्रत निबाहने के हेतु दान देने वाला मृत्युनिर्भय कर्ण, रणविद्या में सफलता प्राप्त करने के लिए असामान्य प्रयास करनेवाला कर्ण महाभारत का महापुरुष है। वह कौरवपक्ष में सम्मिलित था, किन्तु कापुरुष नहीं था। क्या बियाणीजी में कर्ण के कुछ गुण हैं? आज बियाणीजी का जीवन धनी-मानी व्यक्ति का है, किन्तु उनके सार्वजनिक जीवन के आरम्भ में वैसा नहीं था। जीवन-संग्राम की सफलता प्राप्त करने के लिए विद्या, योजकता, पर्याप्त धन-साधन तथा साथी प्राप्त करने में उन्हें महारथी कर्ण की कठिनाई तथा पुरुषार्थ भावना अनायास ही प्राप्त थीं। विदर्भ के सार्वजनिक जीवन में योजनापूर्वक धन जुटाकर बहुत कुशलता से तथा उदारता से कार्य तथा कार्यकर्ताओं पर खर्च करने का काम बियाणीजी सरीखा अन्य किसी ने नहीं किया। हाँ, कर्ण की मृत्युंजय निर्भयता बियाणीजी में नहीं है, ऐसा मेरा नम्रमत है। हो सकता है, मेरी यह गलती हो! लेकिन मेरा तर्क है कि अपनी परिश्रमशीलता, योजकता, यथाप्रसंगउदारता होकर भी बियाणीजी का उत्तर आयुष्य क्यों असफल रहा? इसका उत्तर तर्कसंगत रीति से तथा निजी अनुभव के आधार पर निर्भयता से देना हो तो मेरा उपरिनिर्दिष्ट निदान सही है। यदि इस तरीक़े से निदान करना न हो तो मैं निम्न विवेचन विकल्प में प्रस्तुत कर सकता हूँ!

चार वर्ष पहले श्री देवराज नामक हिन्दी कवि की निम्न पंक्तियाँ मेरे पढ़ने

में आई थीं। उनमें की कुछ मुझे याद हैं, और श्री बियाणीजी के जीवन का कुछ रहस्य उसमें खुलने का आभास होता है। कवि की पंक्तियाँ निम्न प्रकार हैं:—

जीवन के अगणित रहस्य हैं,
मानव हित अज्ञात।
अक्सर तट भी दे देते हैं
मझधारों को मात।।

० ० ०

जिस मंजिल के लिए नहीं था
अन्तर में उत्साह।
आखिर ऐसे भटके, हम को
वहीं ले गई राह।।

० ० ०

उनसे नाता जुड़ा, न था
जिनके प्रति कोई मोह।
दिखलावे को ममता लेकिन
अन्तर में विद्रोह।।

० ० ०

साँसों के सरगम पर गाने
पड़े हमें वे गीत।
थी जिनकी हर पंक्ति हमारे
जीवन के विपरीत।।

० ० ०

उनकी खातिर रोए जिनके
न था दृगों में नीर।
बेपीरों के लिए सँजोई
हमने अतिशय पीर।।

० ० ०

अनजाने में हो जाती है
ऐसी कोई बात।

जिसके कारण नयनों में
घिर आती है बरसात ।।

बियाणीजी के जीवन का रहस्य वे खुद ही अच्छी तरह से जान सकते हैं। मैं तो इतना ही कहूँगा कि पुरुषार्थ और पराक्रम में उन्हें बहुत कुछ सफलता मिली, किन्तु मानसिक या आध्यात्मिक साधना में उनकी लगन कुछ कम रही। मुझे तो लगता है गत १० सालों में उनके विचार तथा भाव किस प्रकार के रहे होंगे इसकी झांकी हम देवराज कवि के भावों में देख सकते हैं। ★

भाईजी के जीवन के दो पहलू

लेखक
श्री मो० बि० झँवर–अमरावती
(एडवोकेट, पत्रकार एवं लेखक।)

भाषावार प्रान्त रचना के तत्व पर आधारित विदर्भ राज्य निर्मित हो, अतएव प्रचार का नारियल फोड़ने के हेतु आज के महाराष्ट्र की पहली आम सभा स्व. कन्नमवार और ब्रजलालजी बियाणी इन दोनों नेताओं ने अमरावती के जोग चौक में पहली नवम्बर को आयोजित की। साधारण शिष्टाचार और सन्तुलन को तिलाञ्जली देकर सभा भंग करने के अनेक प्रयत्न किए जाएँगे, ऐसी गुनगुनाहट कानों पर पहले ही आ चुकी थी। गुण्डागिरी में बाधा नहीं डालेंगे, स्थानीय शासन भी ऐसी इच्छा से चुप था। मुझे पत्थर लगा तथा हाथ और माथे से रक्तस्राव होने लगा। भाईजी द्वारा सूचना होने पर भी मैंने तथा मेरे मित्रों ने व्यासपीठ की शरण नहीं छोड़ी, क्योंकि हमारे दोनों ही सेनापति अपने अपने स्थान पर अटल थे। अपने राजकीय जीवन की आखिरी लड़ाई पूरी दृढ़ता से लड़ने के लिए भाईजी तत्पर हो गए थे। तर्क सम्मत भाषा में भाईजी श्रोताओं को विदर्भ निर्माण की आवश्यकता समझा रहे थे। असन्तुष्ट तत्वों के द्वारा पत्थरों की वर्षा शुरू हो चुकी थी, और रात्रि के एक बजे तक यह वर्षा सतत चलती रही। भाईजी के प्रभावी भाषण का उत्तर देने हेतु श्री शंकरराव देव ख़ासतौर पर आए और भाईजी की सभा के दो दिन बाद ही उसी जोग चौक में पुलिस बन्दोबस्त के अन्दर संयुक्त महाराष्ट्रवादियों की आमसभा हुई, इसके बाद तो महाराष्ट्र में युद्ध भड़क उठा। परन्तु विदर्भ की खातिर की हुई यह लड़ाई भाईजी के राजकीय जीवन का खग्रास बन जाएगी, यह कल्पना तक नहीं थी, किन्तु इस पराभव से हतोत्साहित न होकर अपनी शेष आयु अपनी जनता के खातिर विधायक कार्य में बिताने के संकल्प का निर्णय स्वागत योग्य नहीं है क्या?

राजकारण चलाना हो तो समाचारपत्रों की सहायता की आवश्यकता है, इसमें भाईजी की प्रतीति थी। इसलिए भाईजी ने कितने ही समाचारपत्रों को,

पत्रकारों को, संवाददाताओं को जन्म दिया। पत्रकारों एवं संवाददाताओं की बैठक में उनसे प्रेम से बातें करने में भाईजी को हमेशा हर्ष अनुभव हुआ करता था। बहुश्रुत एवं चतुर लोगों को किस तरह अपना बनाना चाहिए इसकी जन्मजात कला मानो भाईजी के पास है। विदर्भ के आठ ज़िलों में पत्रकारों को प्रतिष्ठा का स्थान दिलाने का एकमात्र श्रेय भाईजी को ही है। मैं व मेरे सहयोगी 'ग्रामसेवा' और 'संग्राम' दो साप्ताहिक चलाते थे। मेरे लेखों को भाईजी सदा आस्था व आत्मीयता से पढ़ा करते थे तथा मेरी लेखनी की मुक्त-कण्ठ से सराहना करने में भाईजी सदैव आतुर रहते थे। केवल उनके निरन्तर प्रोत्साहन के कारण ही मैं विभिन्न विषयों पर लिखने में सफल हो सका।

हमारे प्यारे भाईजी शतायु हों, ऐसी मैं शुभप्रसंग पर सद्इच्छा प्रकट करता हूँ।

भाव-पुष्पांजली

लेखक

गोस्वामी सहदेव भारती—घाटंजी

(भूतपूर्व लोकसभा के सदस्य; कांग्रेस एवं सामाजिक कार्यकर्ता।)

माननीय ब्रजलालजी बियाणी आगामी ६ दिसम्बर, १९६५ को प्रभु की कृपा से ७० वर्ष पूर्ण कर ७१ वें वर्ष में पदार्पण कर रहे हैं। इस शुभ प्रसंग पर इन्दौर निवासी तथा उनके कुछ मित्रों के द्वारा अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पित करने के निश्चय को पढ़कर मुझे अत्यन्त आनन्द हुआ। वस्तुत: बियाणीजी की कर्मभूमि विदर्भ प्रान्त में उनके वैदर्भीय मित्रों द्वारा किया जाना था, परन्तु अभी-अभी बियाणीजी द्वारा इन्दौर को अपना कार्यक्षेत्र बना लेने के कारण इन्दौर नगर को ही यह गौरव मिल पाया है। बियाणीजी के वैदर्भीय मित्रों को उपलब्ध होने वाला श्रेय उनके इन्दौर स्थित मित्रों को मिल रहा है। अत: वे बधाई के पात्र हैं। इस सत्प्रयत्न से बियाणीजी के प्रति मुझे भी अपनी भाव-पुष्पांजली अर्पित करने का अवसर मिल रहा है, अतएव मैं बियाणीजी सत्कार समिति का अन्त:करण से आभार मानता हूँ।

प्रथम जन आन्दोलन के समय अर्थात् १९२० में मैं अमरावती में शिक्षा ग्रहण कर रहा था। उस समय वीर वामनरावजी कांग्रेस के प्रमुख नेता थे, उनके प्रभावशाली वक्तव्यों के कारण कांग्रेस प्रेम का स्थायी प्रभाव मेरे मन पर पड़ा। इस कारण मैंने लोकनायक श्री अणे द्वारा स्थापित 'लोकमत' साप्ताहिक के व्यवस्थापक एवं सह-सम्पादक का कार्य सन् १९२२ में ग्रहण किया। दो वर्ष पश्चात् मेरे पिताजी के देहावसान के कारण मैं अपने गाँव में स्थायी रूप से रहने लगा। यहाँ सुप्रसिद्ध बिरला बन्धुओं का कपास का कारखाना था। इस कारखाने के व्यवस्थापक वर्धा निवासी स्व. द्वारकादास भैया थे। वे सुप्रसिद्ध स्व. देशभक्त जमनालालजी के सान्निध्य में बढ़ने के कारण पक्के कांग्रेस भक्त और खद्दरधारी थे तथा वैसे ही कट्टर समाज-सुधारक भी थे। इसलिए मेरा और उनका जल्दी ही स्नेह हो गया। उनके विशेष आग्रह पर मैं सन् १९२८ में धामणगाँव में आयोजित माहेश्वरी सम्मेलन में उपस्थित हुआ। वे दिन कोलवार आन्दोलन के थे। सुधारवादी और रूढ़ि-

वादियों के बीच का संघर्ष था। इस सम्मेलन में श्री भैयाजी ने बियाणीजी से मेरा परिचय कराया था, यह मेरी और उनकी पहली भेंट थी। माहेश्वरी सम्मेलन में बियाणीजी के वक्तव्य में ओजपूर्ण और प्रगतिशील विचारों को देखकर मुझे लगा कि वे शीघ्र ही जनता में प्रभावशाली बन जाएँगे, और मेरा यह अन्दाज़ बिल्कुल सही निकला।

सन् १९३० के सत्याग्रह आन्दोलन में कारावास से मुक्त हो राजस्थान प्रेस में बियाणीजी से दूसरी बार मिलने का अवसर मिला। सन् १९३२ में मेरे विदर्भ प्रदेश कांग्रेस कमेटी का प्रतिनिधि चुना जाने और आगे बियाणीजी के विदर्भ कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष हो जाने के बाद हमारा परिचय मैत्री में परिणत हो गया। मेरा उनसे घनिष्ट परिचय होने के बाद से ही मैं उन्हें बड़े भाई के समान पूज्य मानने लगा और वे मुझे छोटे भाई के रूप में मानने लगे। तत्पश्चात् मैं उन्हें भाईजी कहकर सम्बोधित करने लगा और शीघ्र ही वे विदर्भ वासियों के प्रिय और आदरणीय भाईजी बन गए।

जब विदर्भ प्रदेश कांग्रेस कमेटी का नेतृत्व उनके पास आया, उस समय विदर्भ के बुद्धिजीवी लोगों पर लोकमान्य तिलक का महत्वपूर्ण प्रभाव था। इस वर्ग का पूज्य महात्मा गांधी द्वारा प्रतिपादित कार्यक्रम से और कांग्रेस से सतत विरोध हुआ करता था। इस विरोध की चिन्ता न करते हुए बियाणीजी ने अपनी संगठन कुशलता एवं ओजस्वी वक्तृत्व और अविश्रान्त परिश्रम से कांग्रेस के सन्देश को गाँव-गाँव पहुँचाने का महान कार्य किया। इस अवधि में प्रान्त में काफ़ी तूफानी दौरे, शिविर, सभा और सम्मेलन आदि की भरमार रहती थी। इस प्रभावपूर्ण और अविरत कार्य के कारण ग्रामीण भागों में सैकड़ों तरुण कार्यकर्ता निर्मित हुए और विदर्भ शीघ्र ही कांग्रेस का गढ़ बन गया। अकोला शहर वैदर्भीय देश-भक्तों का केन्द्र बन गया। राजस्थान भवन कांग्रेस कार्यकर्ताओं का कार्य-स्थल बन गया था। बियाणीजी ने अपनी निरपेक्ष कांग्रेस सेवा से और प्रेमी स्वभाव से वैदर्भीय जनता का दिल ही जीत लिया था। जनता ने उन्हें 'विदर्भ-केसरी' के गौरव से सम्मानित किया।

सन् १९४२ में मैं बम्बई के कांग्रेस अधिवेशन में सम्मिलित हुआ था। इतिहास प्रसिद्ध 'भारत-छोड़ो' आन्दोलन के प्रस्ताव के पास होने के बाद सम्मेलन समाप्त हुआ। दूसरे दिन प्रातःकाल कांग्रेस कार्यकर्ताओं के मार्ग दर्शन के लिए पूज्य बापूजी भाषण करने वाले थे, परन्तु मध्य-रात्रि में ही बापू और कांग्रेस समिति के सभी सभासद बन्दी बना लिए गए, इस कारण उक्त सभा रद्द हो गई। तत्पश्चात्

बियाणीजी ने सभी वैदर्भीय कार्यकर्ताओं को सरदार गृह में मार्गदर्शन दिया और सन्ध्याकाल की मेल ट्रेन से वापिस जाने को कहा। जब मैंने अपने दो दिन बाद वापस पहुँचने को कहा तो वे मुझ पर क्रुद्ध हुए, और जब मैंने उन्हें वस्तु स्थिति बताई तब वे शान्त हुए। उनके क्रोध में देशभक्ति और कर्तव्यपरायणता की अमिट छाप मेरे मन पर पड़ी।

दूसरा महायुद्ध समाप्त हुआ। सभी देशभक्त नेता कारागार से मुक्त हुए। अल्प विश्रान्ति के बाद पुन: कांग्रेस का कार्य ज़ोरों से शुरू हो गया। १९४६ के चुनाव में सर्वत्र कांग्रेस की प्रचण्ड विजय हुई। तत्पश्चात् १५ अगस्त, १९४७ का महत्वपूर्ण दिन आया। भारत भूमि स्वतन्त्र हुई। देशोद्धार के लिए जीवन अर्पित करनेवाले देशभक्तों को सन्तश्रेष्ठ तुकाराम द्वारा अभंग वाणी में वर्णित भाग 'गेला शीण गेला' का अवर्णनीय आनन्द मिला। भारत की राजनीति में नया मोड़ आया। पुराने मध्यप्रदेश के दो वरिष्ठ कार्यकर्ताओं—श्री बियाणीजी और श्री द्वारकाप्रसादजी मिश्र में किसी कारण से संघर्ष उत्पन्न हो गया। संघर्ष में अन्ततः बियाणीजी की ही जीत हुई। इस विजय के ठीक बाद कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से डा. पट्टाभि सीतारमैया का विदर्भ का दौरा निश्चित हुआ। इस समय मैं ज़िला कांग्रेस कमेटी का प्रधान सचिव था। कांग्रेस अध्यक्ष का विदर्भ में यह पहला ही दौरा था। डा. पट्टाभि सीतारमैया इस दौरे से इतने अधिक प्रभावित हुए कि वे बियाणीजी के समक्ष मुझ से बोले—"सरदार बियाणी ने विदर्भ में जितनी जन-जागृति उत्पन्न की है वैसा भारत के किसी दूसरे भाग में मैंने नहीं देखी।" स्पष्टवादी डा. रमैया के उक्त उद्‌गार सुनकर हम धन्य हो गए।

श्री बियाणीजी के पास पैतृक सम्पत्ति नहीं थी। उन्होंने स्वावलम्बी बनकर अपने परिवार को समुचित ढंग से संवारा-सजाया। सभी देशकार्य में समुचित भाग लेने के उपरान्त भी वे कौटुम्बिक खर्च की पूरी-पूरी व्यवस्था कर लेते थे। इस प्रकार उनका कुटुम्ब अत्यन्त सन्तुलित रहा। उनके एक पुत्र और दो पुत्रियाँ हैं जो सभी सुशिक्षित एवं सुशील हैं। परिवार में आश्रम समान स्वच्छ और अनुशासित जीवन है। बियाणीजी के कितने ही मित्रों का उनके घर पर आवागमन हो, सदैव उनके आतिथ्य का यथोचित ध्यान रखा जाता है और किसी को किसी भी प्रकार की असुविधा महसूस नहीं होती। सम्पूर्ण गृह कार्य यथोचित चलता था, जिसमें श्रीमती सावित्रीदेवी का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। उनकी सेवा भावना को देखकर सदैव राष्ट्रमाता कस्तूरबा गांधी का चित्र मेरे सामने आ जाता है। ४० वर्ष के राजनैतिक जीवन में श्रीमती सावित्रीदेवीजी ने शिव की शक्ति की भाँति निरन्तर उनका साथ दिया है।

व्यवसायी घराने में उत्पन्न होकर भी स्वभाव से बियाणीजी व्यवसायी नहीं है तथा पैसे के स्थान पर सामाजिक सेवा, संघर्षमय जीवन तथा मानवोद्धार को अधिक महत्व देते हैं।

सन् १९५२ के चुनाव में बियाणीजी बहुमत से निर्वाचित हुए तथा स्व. रविशंकर शुक्ल के मन्त्रिमण्डल में वित्तमन्त्री बने। उनके कार्य से सभी सभासद प्रसन्न थे।

तत्पश्चात् बियाणीजी ने स्वतन्त्र विदर्भ की मांग के लिए आन्दोलन छेड़ा। उस आन्दोलन में माननीय श्री अणेजी और बियाणीजी ने अपनी समस्त प्रतिष्ठा दाव पर लगा दी। सन् १९६२ का चुनाव लड़ा पर विदर्भ की जनता का अनुकूल साथ नहीं मिला।

गन्दी राजनीति से ऊबकर श्री बियाणीजी ने अपनी कार्य शक्ति को साहित्य सृजन में लगाने का निश्चय किया और उसके लिए उन्होंने इन्दौर को अपना कार्य क्षेत्र चुना।

यह कहना अनुचित न होगा कि श्री बियाणीजी यदि मध्यप्रदेश विधान सभा में जाने की अपेक्षा लोकसभा में गए होते तो निश्चय ही केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल में स्व. नेहरू के विश्वसनीय सहयोगी बने होते। यदि वे चाहते तो उन्हें राजदूत अथवा राज्यपाल का पद भी प्राप्त हो सकता था, परन्तु श्री बियाणीजी में पदलोलुपता कभी भी नहीं थी और न है। वे तो केवल समाज सेवा के कार्य में रत रहकर अपना जीवन व्यतीत करना चाहते हैं। समाज की सेवा करने के लिए राजकीय क्षेत्र हो अथवा सामाजिक अथवा साहित्यिक सभी में व्यक्ति यदि चाहे तो अपनी शक्ति के अनुसार कार्य कर सकता है। श्री बियाणीजी ने जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है सक्रिय राजनीति से ऊबकर साहित्य के क्षेत्र को चुना। उन्होंने इन्दौर से वैचारिक क्रान्ति करने हेतु 'विश्व-विलोक' का सम्पादन एवं प्रकाशन करना प्रारम्भ कर दिया। इस पाक्षिक पत्रिका में श्री बियाणीजी के विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं पर अत्यन्त विचार गर्भित लेख रहते हैं। इन लेखों के द्वारा एक ओर हिन्दी साहित्य की सेवा में वे रत हैं तथा दूसरी ओर आज की राजनीति के तथा भावी पीढ़ी के लोगों के मार्गदर्शन में संलग्न हैं। उनका यह कार्य सभी दृष्टि से स्तुत्य है।

भगवान से यह प्रार्थना है कि वे श्री बियाणीजी को आयु एवं आरोग्य प्रदान करें जिससे कि वे वर्तमान समाज का मार्गदर्शन करते रहें तथा भावी पीढ़ी को विवेकपूर्ण नागरिक बनने के लिए प्रोत्साहित करते रहें। ★

मेरी पुरानी यादों के बियाणीजी

लेखक
डॉ० एस० एस० कुलकर्णी—नागपुर
(उपमन्त्री, पुराना मध्य प्रदेश शासन; कांग्रेस तथा
सामाजिक कार्यकर्ता एवं वक्ता ।)

श्री ब्रजलालजी बियाणी का व्यक्तित्व अनेक पहलुओं से बना हुआ है, इसमें कोई सन्देह नहीं, किन्तु इन सभी पहलुओं का व्यवस्थित आकलन कर उन सबका संकलन करते हुए उनका यथार्थ दर्शन करा पाना मेरी शक्ति के बाहर है। पाँच अंधे हाथी का वर्णन करते हैं और जिसके हाथ जो हिस्सा लग जाता है उतना ही वर्णन कर हाथी वैसा ही है का दुराग्रह कर देते हैं। इस सिद्धहस्त सिद्धान्त को किसी के असत्य व्यवहार को दर्शाने के लिए उपयोग में लाया जाता है, किन्तु मुझे वैसा कार्य नहीं करना है। श्री बियाणीजी वास्तव में कैसे हैं इसका सांगोपांग वर्णन मैं कर सकूं इतना सामर्थ्य मुझमें नहीं। यह पहले ही क़बूल कर लेता हूँ।

श्री बियाणीजी को विदर्भ कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष के रूप में मैंने उन्हें जाना, उससे पहले उनका और मेरा परिचय नहीं था। महात्मा गांधी के सन् १९३०-३२ के सत्याग्रह आन्दोलन में बियाणीजी ने कार्य किया था। बरार के चार ज़िलों से जेल में जाने वालों की संख्या बहुत अधिक थी। जनसंख्या के अनुपात में जेल जाने में उस समय बरार का नम्बर दूसरा था। इस यश का श्रेय श्री बियाणीजी को है। गांधी-प्रणीत तत्व प्रणाली के अनुसार जनता तक आन्दोलन का सन्देश उन्होंने पहुँचाया था और जनता ने भी वह तत्व प्रणाली आत्मसात कर प्रत्युत्तर दिया था। इस परिस्थिति में जनता का योग्य नेतृत्व कर दो कदम आगे ही रहने का पराक्रम श्री बियाणीजी ने कर दिखाया और इसी पराक्रम के कारण उन्हें कीर्ति भी मिली और यश भी।

सत्याग्रह के आन्दोलन में विच्छिन्न हुई कांग्रेस कमेटियाँ पुनः बनाने का कार्य शुरू हुआ और विदर्भ प्रदेश (बरार प्रान्त) कांग्रेस कमेटी की अध्यक्षता का

मुकुट श्री बियाणीजी के मस्तक पर रखा गया। यह मुकुट अपने मस्तक से अपने ही हाथों उतारकर श्री बियाणीजी के मस्तक पर रखने का कार्य स्वर्गीय श्री वीर वामनराव जोशी ने किया था। यह सत्तान्तर परशुराम और राम के अवतार प्रसंग के उदाहरण की याद दिला गया। इस पर श्री बियाणीजी को विराजित करने का कार्य जिस तरह श्री वीर वामनराव ने किया उसी तरह उनके अभिषेक का मन्त्रोच्चार लोकनायक बापूजी अणे ने किया और इस तरह उन्होंने राजपुरोहित की भूमिका निभायी।

यह मुकुट जो उनके मस्तक पर पहनाया गया उसका कारण उनका कार्य, उनकी बुद्धिमत्ता और उनका संगठन चातुर्य था। इसलिए यह मुकुट यानी उनकी कीर्ति का चन्द्र चिह्न; इस कीर्ति-चन्द्र के प्रकाश में उन्होंने सतत कुछ वर्ष शायद वह अरसा १३ साल का रहा हो, नेता के रूप में प्रगति की और इस प्रगति पंथ पर उन्होंने अनेक साथी इकट्ठे किए। इन साथियों में उनके अनन्य अनुगामियों की संख्या बहुत अधिक थी। कोई उनका मानसपुत्र बना तो कोई दाहिना हाथ और कोई बाँया हाथ तो कोई Brain trust बना, पर सबकी निष्ठा उन पर थी। एक नेता और एक निशान ऐसा दृश्य उस समय दिखा करता। मस्तक पर राजमुकुट धारण करने वाले व्यक्ति को मन का आरोग्य नहीं मिलता, इस लोकोक्ति के अनुसार उन्हें स्वस्थता न भी मिली हो तो भी कुल मिलाकर उनका कार्यकाल संतुलित एवं प्रगतिमय रहा। उनका संगठन मज़बूत था और उनकी शक्ति अमर्यादित थी। वे ऐसी अवस्था में थे कि उस समय उन्हें पराभूत करना बहुत कठिन काम था। बियाणीजी को जीतना सरल है, किन्तु हराना कठिन, यह परिस्थिति उस समय थी। अलग-अलग पक्षों के नामों के पीछे स्वयंभू व्यक्तियों ने उनसे लोहा लेना चाहा, किन्तु इस कसौटी में भी वे अपराजित रहे और उन्होंने कांग्रेस को और अधिक मज़बूत किया। बियाणीजी की एक विशिष्ठता और प्रमुख रूप से मेरे ध्यान में आई। संघर्षों के बीच जो अधिक विरोधों के बावजूद भी दीपित होते हैं, उनके अन्दर का आदर्श पुरुष और भी अधिक तेजस्वी हो जाता है। संघर्ष प्रखर किन्तु वृत्ति और उपाय में शान्त, विरुद्ध पक्ष के व्यक्ति को झुकाने का तरीका दिखने में सौम्य रहता है, किन्तु वास्तव में बहुत प्रभावी होता है। विधान मण्डल के चुनाव में उनकी इस कार्य प्रणाली का मुझे अनुभव हुआ और उनका यह तरीक़ा मुझे अभिनव ही लगा। एक बार कौंसिल ऑफ स्टेट के चुनाव में वे खड़े थे। विरोधी उम्मीदवार राजनैतिक क्षेत्र में नगण्य-सा ही था। इस चुनाव में उन्हें विशेष प्रचार

वगैरह करने की कोई आवश्यकता नहीं थी, किन्तु उन्होंने दौरे और प्रचार की धूम मचा दी थी। और 'ऐसा करने की या इस पर पैसा खर्च करने की कोई आवश्यकता नहीं' मेरे इस कथन पर बियाणीजी ने कहा—"आप इसके महत्व को नहीं जानते।" इसके पश्चात् उन्होंने प्रचार कार्य और भी जोरों से शुरू कर दिया। जब मैंने इसकी पृष्ठभूमि को खोजने का प्रयत्न किया तो मुझे ज्ञात हुआ कि विरोधी उम्मीदवार न केवल पूर्णतया पराजित ही हो, वरन् उस नगण्य उम्मीदवार को किसी प्रकार की प्रसिद्धि न मिले। बियाणीजी को यह बात सहन न थी कि एक अप्रसिद्ध व्यक्ति को अनायास ही प्रसिद्धि मिल जाए, इसीलिए पर्याप्त प्रचार कार्य करके बियाणीजी ने वातावरण को अपनी विजय से आच्छादित कर दिया। उनके इस प्रचारकौशल का प्रभाव उनके दूसरे चुनाव पर भी पड़ा। नागपुर विधान सभा के चुनाव में उनके विरुद्ध एक प्रसिद्ध व्यक्ति उनके प्रतिद्वन्दी थे। इस चुनाव में भी बियाणीजी बहुमत से चुने गए। इस चुनाव से न केवल बियाणीजी की राजनैतिक प्रतिष्ठा ही बढ़ी, वरन् प्रतिद्वन्दी उम्मीदवार की पूर्व प्रतिष्ठा को बड़ा आघात लगा।

संघर्ष में अधिक प्रखरता से उद्दीप्त होना यह उनका स्थायी भाव है। तत्कालीन मन्त्रिमण्डल से उनका एक बार संघर्ष हुआ, उस समय हमें उनकी दृढ़ता का दर्शन हुआ। यह संघर्ष प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी और मध्यप्रदेश के मन्त्रिमण्डल के बीच हुआ था, जिसमें साम, दाम, दण्ड और भेद सभी नीतियों का प्रयोग किया गया था। बियाणीजी के पास केवल साम था। जिसे उन्होंने बड़ी चतुराई से उपयोग किया था और अपने पक्ष को विजयी बनाया था। बियाणीजी ने अपनी विलक्षण बुद्धि से प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की प्रतिष्ठा रख ली थी, इसमें उनकी जागरूकता और तेजस्विता के दर्शन मिलते हैं।

स्वतन्त्र विदर्भ के लिए संघर्ष करना उनके जीवन का तेजस्वी प्रसंग है। सारी परिस्थिति प्रतिकूल होते हुए भी बियाणीजी ने स्वतन्त्र विदर्भ का आन्दोलन छेड़ा। उनके आस-पास विरोधियों का बीजारोपण शुरू हो गया था। जो प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी एकमत से वर्षों से बियाणीजी का चुनाव करती आई थी, उसी ने उनके विरुद्ध उम्मीदवार खड़ा किया गया। बियाणीजी बहुमत से जीते तो अवश्य, किन्तु कांग्रेस कमेटी का अन्तरप्रवाह अब बदल गया था। लोग तो वही थे पर बियाणीजी के प्रति उनकी निष्ठा बदल गई थी। आन्तरिक विरोध बढ़ने पर बियाणीजी ने अध्यक्ष पद त्याग दिया।

मैंने लगभग २५ वर्ष बियाणीजी के सान्निध्य में व्यतीत किए। उनसे मुझे

जो स्नेह, आत्मीयता मिली, उसे आजन्म मैं भुला नहीं सकता। उनके पास काम करने में मुझे अपार सुख मिला है। इन दिनों मैं बियाणीजी की पुरानी यादों के आनन्द में विचरता हूँ।

★

किया। असहयोग आन्दोलन में विदर्भ के महाराष्ट्रियन नेता गांधीजी की रीति-नीति के विरुद्ध थे और वे कौंसिलों में प्रवेश करके सरकार को सहयोग देना राष्ट्रीय हित की बात समझते थे। इनके कारण विदर्भ में कांग्रेस का आन्दोलन बड़ी क्षीण स्थिति में था, उसे ऐसे सबल और लोकप्रिय नेता की आवश्यकता थी जो राष्ट्रीयता के आधार पर कांग्रेस संगठन को बलशाली बना सके। श्री बियाणीजी ने सार्वजनिक क्षेत्र में आते ही जनता के हृदय पर अधिकार कर लिया। आप म्युनिसिपल कमेटी के वाइस प्रेसिडेन्ट चुने गए। आपका जन्म यद्यपि मारवाड़ी समाज में हुआ, किन्तु व्यवसाय प्रधान जाति में जन्म लेकर भी बियाणीजी व्यवसाई और उद्योगपति न बन सके। उन्होंने व्यवसाय तथा अनन्त वैभव का अधीश्वर बनने के बजाय विदेशी शासन की दासता से त्रस्त भारतीय जनता के उद्धार का काम करना अपने जीवन का ध्येय निश्चित किया, और वे उत्तरोत्तर दरिद्रनारायण की सेवा की ओर झुकते गए। १९२४ में जब कांग्रेस ने कौंसिल प्रवेश का कार्यक्रम स्वीकार किया तो बियाणीजी के नेतृत्व में स्वराज्य पार्टी संगठित हुई और आप कांग्रेस की टिकिट पर प्रान्तीय कौंसिल के सदस्य चुने गए। विधान परिषद् में जाकर आपने बड़ी योग्यता के साथ जनता का प्रतिनिधित्व किया और जनता की अनेक तकलीफों के निवारण कराने में सफलता प्राप्त की। १९२७ में ब्रिटिश सरकार ने सायमन की अध्यक्षता में एक कमीशन भेजा था ताकि भारत की स्थिति की जाँच करके उसके लिए उपयुक्त शासन व्यवस्था की जाँच कर सके। इस तरह अंग्रेज सरकार ने अपना शासन विधान चुनने के अधिकार से भारतवासियों को वंचित कर दिया। यह एक भारी राष्ट्रीय अपमान था, कांग्रेस ने इसका तीव्र विरोध किया और सारे देश में सायमन कमीशन का बहिष्कार किया गया। असेम्बली और विधान परिषदों में भी सायमन कमीशन के विरोध में प्रस्ताव पास कराए गए। श्री बियाणीजी विधान परिषद् के नेता थे और स्वराज्य पार्टी के नेता के नाते आपने सी. पी. लेजिसलेटिव कौंसिल में सायमन कमीशन के बहिष्कार का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। भारत में सम्भवतः सायमन कमीशन ने बहिष्कार का प्रस्ताव सी. पी. विधान परिषद द्वारा ही स्वीकृत किया गया। श्री बियाणीजी उस समय धारा सभा के बाहर और भीतर अत्यन्त लोकप्रिय थे। कांग्रेस संगठन को सबल और लोकप्रिय बनाने के लिए आपने गाँव-गाँव का भ्रमण किया था। यद्यपि आप अल्पसंख्यक मारवाड़ी समाज के व्यक्ति थे, परन्तु कांग्रेस के नेता के रूप में आप महाराष्ट्रीय जनता के हृदयासन पर विराजमान थे। आपने समस्त विरोधी शक्तियों को छिन्न-भिन्न करके विदर्भ में कांग्रेस संगठन

को शक्तिशाली बनाया। विधान परिषद् के हर चुनाव में कांग्रेस विजयी होती रही। विदर्भ की जनता ने आपको 'विदर्भ-केसरी' के रूप में विभूषित किया। श्री बियाणीजी १५ वर्ष तक लगातार विदर्भ प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद पर आसीन रहे। जनता का इस प्रकार का अखण्ड विश्वास बिरले ही व्यक्तियों को प्राप्त होता है।

श्री बियाणीजी स्वाधीनता आन्दोलन में कई बार जेल गए। १६३२ के सत्याग्रह आन्दोलन में आप प्रान्तीय डिक्टेटर मनोनीत किए गए। आपने अनेक बार जेल यात्रा की। हमें भी श्री बियाणीजी के साथ १६४१ में छः महीने जेल में साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है। वहाँ हमने बड़ी निकटता के साथ श्री बियाणीजी के महान व्यक्तित्व, सहृदयता और सैद्धान्तिक निष्ठा के दर्शन किए। श्री बियाणीजी की प्रेरणा से विदर्भ में सैकड़ों कांग्रेस कार्यकर्ताओं का निर्माण हुआ, जो इस समय मन्त्रिपद पर आसीन हैं और विदर्भ के एक-छत्र नेता बनने का गर्व करते हैं। जिन बियाणीजी ने उनका निर्माण किया आज वे बियाणीजी के विरोधी बने हुए हैं।

कांग्रेस के प्रति अपनी अनन्य निष्ठा के कारण श्री बियाणीजी १६४० में महात्मा गांधी द्वारा आरम्भ किए गए युद्ध विरोधी व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन के द्वितीय डिक्टेटर मनोनीत किए गए। पहले डिक्टेटर मनोनीत किए जानेवाले देश के आचार्य विनोबाजी थे, और उनकी गिरफ्तारी के पश्चात् द्वितीय डिक्टेटर बनने का सम्मान श्री बियाणीजी को प्राप्त हुआ। डिक्टेटर के रूप में आपको एक वर्ष के कठोर कारावास की क़ैद दी गई। इससे पहले लगातर ८-१० वर्षों से श्री बियाणीजी कौंसिल ऑफ स्टेट के (केन्द्रीय राज्य सभा के) सदस्य चुने जाते रहे। १६४२ के तूफानी आन्दोलन में आपको लम्बी सजा हुई और देश के अनेक नेताओं के साथ आपको वैलोर जेल में रखा गया। स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् १६५१ में जब कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों का निर्माण हुआ तो श्री बियाणीजी मध्य प्रदेश विधान सभा के सदस्य चुने गए और आपको शुक्ल मन्त्रिमण्डल में मन्त्रिपद पर आसीन किया गया। श्री बियाणीजी के प्रति कांग्रेस हाई कमाण्ड का अटूट विश्वास था। एक बार का प्रसंग है कि श्री बियाणीजी की सम्मति पर कांग्रेस हाई कमाण्ड ने वीर वामनराव जोशी को केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव के लिए खड़ा कर दिया। उस समय विदर्भ में कांग्रेस का बड़ा विरोध किया जा रहा था और श्री जोशी को हराने के लिए समस्त राजनैतिक दल संगठित हो गए थे। कांग्रेस पार्लियामेण्टरी पार्टी में इस सम्बन्ध में चर्चा हुई तो सरदार पटेल ने श्री बियाणीजी के नेतृत्व की प्रशंसा करते हुए विनोद में

कहा कि श्री बियाणीजी की शक्ति पर जोशीजी को खड़ा किया गया है और अगर वह हार गए तो श्री बियाणीजी को कांग्रेस से निकाल दिया जाएगा, और वास्तव में उस समय यह चुनाव श्री बियाणीजी के व्यक्तित्व की परीक्षा का समय था, परन्तु श्री जोशी इस चुनाव में विजयी हुए और समस्त कांग्रेसी विरोधी शक्तियों को परास्त होना पड़ा। इस घटना से स्पष्ट है कि श्री बियाणीजी का विदर्भ की राजनीति में कितना बड़ा योगदान रहा और किस प्रकार उन्हें जन-जन का आदर और स्नेह प्राप्त हुआ। इसी लोकप्रियता के कारण आप जननायक कहलाए।

एक और घटना १९३० के आन्दोलन की हमारे आँखों के सामने घूम रही है—कांग्रेस की ओर से उस समय विदेशी वस्त्रों और शराब की दूकानों पर धरने दिया जा रहा था। महात्मा गांधीजी ने स्त्रियों के जिम्मे इस प्रकार के धरने का उत्तरदायित्व सौंपा था और देश में प्रायः सब जगह महिलाएँ ही शराब की दूकानों और विदेशी कपड़ों की दूकानों पर धरना देती थीं। स्त्रियाँ स्वभाव से शान्तिप्रिय और अहिंसावादी होती हैं, अतः गुण्डे भी सहसा उनके समक्ष शरारत नहीं कर सकते। अकोला में भी महिलाओं द्वारा धरना दिया जा रहा था, इनमें अधिकांश महाराष्ट्रीयन महिलाएं होती थीं, क्योंकि महाराष्ट्रीयन बहिनें शिक्षित होती हैं और उनके यहाँ पर्दा नहीं होता। मारवाड़ी तथा अन्य बहिनें पर्दे के कारण इस प्रकार के कार्यों में भाग लेने में प्रायः संकोच करती थीं। श्री बियाणीजी इस अभियान के नेता थे और उनका नेतृत्व अनेकों महाराष्ट्रीयन सज्जनों को खटकता था। उन्होंने एक दिन खुले आम बियाणीजी पर यह आक्षेप लगाया कि वे शराब की दुकानों पर धरना देने के लिए जान बूझकर महाराष्ट्रीयन महिलाओं को भिजवाते हैं। श्री बियाणीजी ने कहा कि कांग्रेस इस प्रकार की साम्प्रदायिकता को कोई महत्व नहीं देती, उसकी दृष्टि में महाराष्ट्रीयन महिलाएँ समान हैं और जो सहर्ष इस सेवा के लिए आगे आती हैं उन्हें धरना देने का अवसर दिया जाता है। मगर विरोधी लोग उससे संतुष्ट नहीं हुए। दूसरे दिन शाम को जब शराब की दूकानों पर धरना देने के लिए महिलाएँ आईं, तो विरोधी लोगों को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि उनमें अधिकांशतः महाराष्ट्रीयन महिलाएँ न थीं। श्रीमती सावित्रीदेवी के नेतृत्व में राजस्थानी महिलाएँ तथा अन्य कुछ महिलाएँ झण्डा लिये दूकानों पर धरना दे रही थीं। ये सभी महिलाएँ बिना पर्दे की थीं और महात्मा गांधी के जय के नारे लगा रही थीं। इसी बीच एक व्यक्ति ने बताया कि श्रीमती बियाणीजी के नेतृत्व में

आज महिलाओं का दल धरना दे रहा है। श्रीमती बियाणीजी ने उस समय तक अच्छी तरह पर्दे का परित्याग नहीं किया था, परन्तु अपने पति की सच्ची अनुगामिनी होने के कारण उन्होंने सत्याग्रह में भाग लेने में संकोच नहीं किया और राजस्थानी महिलाओं के स्वभावजन्य शौर्य को प्रदर्शित कर अपने पति की कीर्ति को चार चाँद लगा दिए। महिलाओं के धरने को देखने के लिए भीड़ द्वारा श्रीमती बियाणी के जयनारों से आकाश गूंज उठा था। ये घटनाएँ यह सिद्ध करती हैं कि श्री बियाणीजी में युगनेता के वास्तविक गुण हैं और उनमें युग को अपने साथ लेकर चलाने की सामर्थ्य है।

जिस समय ब्रिटिश सरकार ने हैदराबाद निज़ाम के साथ समझौता किया और निजाम के युवराज को प्रिन्स ऑफ बरार की पदवी से विभूषित करके विदर्भ पर निज़ाम का अधिकार स्वीकार कराना चाहा बियाणीजी ने स्वतन्त्र विदर्भ की घोषणा कर सत्याग्रह की तैयारी शुरू की। आगे चलकर इस सम्बन्ध में समझौते का मार्ग निकला और विदर्भ की जनता के स्वाभिमान को सुरक्षित रखने की घोषणा की गई। इस आन्दोलन के समय विदर्भ की समस्त जनता एक स्वर से श्री बियाणीजी के साथ थी। उस समय श्री बियाणीजी विदर्भ के स्वाभिमान की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिए उद्यत थे। १९५६ में जब राज्यों का पुनर्गठन हुआ और नए मध्यप्रदेश के निर्माण के साथ द्विभाषी बम्बई राज्य की स्थापना की गई, उस समय बम्बई विधानसभा में श्री बियाणीजी ने हाई कमाण्ड की नाराज़गी की परवाह किए बिना अपनी अन्तरात्मा की आवाज़ के अनुसार स्वतन्त्र विदर्भ का नारा बुलन्द किया और इस प्रश्न को लेकर विधान सभा की सदस्यता से त्याग-पत्र दे दिया। श्री बियाणीजी के नेतृत्व में उस समय बड़े शक्तिशाली रूप में महाविदर्भ आन्दोलन का आरम्भ हुआ, परन्तु आगे चलकर यह आन्दोलन कांग्रेस हाई कमाण्ड की उपेक्षा के कारण शिथिल हो गया। उस समय श्री बियाणीजी कांग्रेस से पृथक हो गए थे, परन्तु आम चुनाव के पश्चात् जब जनता ने पृथक विदर्भ राज्य की स्थापना की माँग का समर्थन न किया तो बियाणीजी इस आन्दोलन से पृथक हो गए और पुनः कांग्रेस में शामिल हो गए।

इस समय यद्यपि श्री बियाणीजी का कांग्रेस संगठन में कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है, परन्तु उन्होंने कांग्रेस संगठन को सबल और तेजस्वी बनाने में जो योगदान दिया और भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन को तेजस्वी बनाने में जो उत्सर्ग किया तथा उसके पश्चात् स्वतन्त्र भारत को विकासोन्मुख बनाने में जो सहयोग दिया वह सदा स्मरणीय रहेगा।

श्री बियाणीजी बहुमुखी प्रतिमा के व्यक्ति हैं। राजनीति के क्षेत्र में इतने अधिक व्यस्त होते हुए भी सामाजिक व साहित्यिक प्रवृत्तियों में भी उनका कम योगदान नहीं है। श्री बियाणीजी आरम्भ से ही एक कुशल लेखक और वक्ता रहे हैं। उन्होंने अ. भा. माहेश्वरी महासभा के संगठन को तेजस्वी बनाया, उसे वैधानिक स्वरूप प्रदान किया। अनेक वर्षों तक उसके मन्त्री पद पर आसीन रहे तथा उसके देवलगाँव अधिवेशन के अध्यक्ष पद को सुशोभित कर उसे एक शक्तिशाली और सामाजिक क्रान्तिकारी संगठन बनाया। मारवाड़ी समाज में और विशेषत: विदर्भ के मारवाड़ी समाज में हम जिस सामाजिक जागृति और राष्ट्रीय चेतना को देख रहे हैं वह श्री बियाणीजी के कुशल नेतृत्व का ही परिणाम है। श्री बियाणीजी की प्रेरणा से हज़ारों राजस्थानी युवक राजनीति में आए--विधान सभा के सदस्य चुने गए---म्युनिसिपल कमेटियों और ज़िला कौंसिलों के अध्यक्ष निर्वाचित हुए और अपने-अपने क्षेत्रों में बड़ी सुयोग्यता के साथ जनता का नेतृत्व किया। इस सब का श्रेय श्री बियाणीजी को ही है।

श्री बियाणीजी सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत हैं। मारवाड़ी समाज और विशेषत: माहेश्वरी समाज में विचार स्वातन्त्र्य की भावना को बलवती बनाना श्री बियाणीजी का ही काम है। श्री बियाणीजी ने सामाजिक बहिष्कार की प्रथा के विरुद्ध ज़बरदस्त अभियान आरम्भ किया और माहेश्वरी महासभा में जाति बहिष्कार के उन्मूलन का प्रस्ताव पास करवाकर हमेशा के लिए समाज सुधार के मार्ग को निष्कंटक कर दिया। सामाजिक बहिष्कार के डर से समाज में कोई प्रगतिशील विचार पनपने नहीं पाते थे, सामाजिक क्रान्ति का कोई आन्दोलन आगे नहीं बढ़ पाता था। सामाजिक बहिष्कार के उन्मूलन से यह सब बाधाएँ दूर हो गईं, और लोगों के लिए अधिक से अधिक तेज़ी के साथ सामाजिक क्रान्ति के मार्ग पर अग्रसर होने की स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई।

श्री बियाणीजी ने अ. भा. मारवाड़ी सम्मेलन के अध्यक्ष पद से मारवाड़ी समाज को सामाजिक और राजनीतिक जागरण का एक नया सन्देश दिया। आपने कहा कि मारवाड़ी समाज को राष्ट्रहित के लिए अपना सर्वस्व बलिदान करने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए। मारवाड़ी समाज के एक प्रमुख नेता होते हुए भी आपने सदा समाजवादी सिद्धान्तों का प्रचार किया और लोगों को यही प्रेरणा दी कि वे समय के अनुसार अपने जीवन में परिवर्तन करें और देश में जिस समाजवादी व्यवस्था की प्रतिष्ठा की जा रही है उसे न केवल

अपनाएँ, बल्कि उसका नेतृत्व करें और राष्ट्र तथा जनहित को सदा प्रधानता दें। श्री बियाणीजी ने मारवाड़ी महिलाओं को पर्दे से मुक्त होने । के लिए ज़बरदस्त प्रेरणा दी। आपके नेतृत्व में एक देशव्यापी दल का संगठन हुआ कि जिसके हजारों सदस्यों ने यह प्रतिज्ञा की कि वे विवाहों में सम्मिलित नहीं होंगे, जिनमें पर्दा होगा। आज भी हज़ारों व्यक्ति इस प्रतिज्ञा का पालन करते हुए दिखाई देते हैं, और इस अभियान के फलस्वरूप मारवाड़ी समाज में बहुत बड़े भाग से पर्दे की कुप्रथा का उन्मूलन हो गया है और आज हज़ारों मारवाड़ी कन्याएँ विविध प्रदेशों में सार्वजनिक आन्दोलन में भाग लेती हुई दृष्टिगोचर होती हैं।

साहित्य के क्षेत्र में श्री बियाणीजी का कुछ कम योगदान नहीं है। असहयोग आन्दोलन में शामिल होते ही सबसे पहले आपने अकोला में राजस्थान प्रेस की स्थापना की। राजस्थान प्रेस से आपकी प्रेरणा के फलस्वरूप समय-समय पर बहुत-सा साहित्य और अनेक पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं। सबसे पहले आपने 'राजस्थान' मासिक का प्रकाशन किया। उसके पश्चात् एक उच्चकोटि का 'नव-राजस्थान' नाम का साप्ताहिक पत्र निकाला जो अनेक वर्षों तक देश में सामाजिक व सांस्कृतिक जागरण का शंखनाद करता रहा। राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रमुख सेनानी के रूप में आपने मराठी में साप्ताहिक 'मातृभूमि' को जन्म दिया जो आगे चलकर दैनिक बना और आज एक लोकप्रिय मराठी दैनिक पत्र के रूप में दो-दो स्थानों से एक साथ प्रकाशित हो रहा है। अपनी साहित्यिक अभिरुचि के अनुसार श्री बियाणीजी ने एक उत्कृष्ट हिन्दी मासिक 'प्रवाह' को जन्म दिया, जो अनेक वर्षों तक साहित्यिक जगत के लिए प्रेरणास्रोत बना रहा। और दो वर्ष पूर्व आपने इन्दौर से 'विश्व-विलोक' नामक एक हिन्दी पाक्षिक को जन्म दिया जिसने अल्पकाल में ही हिन्दी पत्रकारिता में सम्मानपूर्ण स्थान बना लिया। 'विश्व-विलोक' के द्वारा श्री बियाणीजी ने विविध विषयों पर हिन्दी जगत् को अनूठे और मौलिक विचार प्रस्तुत किए। श्री बियाणीजी उच्चकोटि के विचारक और स्वतन्त्र चिन्तक हैं। किसी प्रकार के विचारों से प्रभावित हुए बिना आप निर्भीकता के साथ अपने स्वतन्त्र विचारों का प्रतिपादन करते हैं। भले ही किसी को उनके यह विचार पसन्द न आवें, परन्तु इस प्रकार के स्वातन्त्र्य का प्रतिपादन किया जाना एक स्वस्थ साहित्यिक परम्परा की रक्षा करना है।

श्री बियाणीजी ने अनेक पुस्तकों की रचना करके हिन्दी साहित्य के भण्डार को भरा है। १९४२ के आन्दोलन में आप जेल गए और वहाँ इस लम्बी

कारावास यात्रा में आपने 'कल्पना-कानन' के रूप में दो भागों में जिस ग्रन्थ की रचना की है, उसे हम हिन्दी साहित्य की एक अमूल्य निधि कह सकते हैं। यदि श्री बियाणीजी को राजनीति से कुछ अवकाश मिल जाता या वे केवल साहित्यिक क्षेत्र में ही अपनी प्रतिभा का उपयोग करते तो निस्संदेह उनके रूप में हमें एक युग प्रवर्तक साहित्य निर्माता के दर्शन होते। किन्तु राजनीति से जितना समय वे निकाल सके, उसमें ही उन्होंने हिन्दी साहित्य की बहुत बड़ी सेवा की। विदर्भ में राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार का बहुत बड़ा श्रेय श्री बियाणीजी को है। १९३५ में नागपुर में अ. भा. हिन्दी साहित्य सम्मेलन का २५वाँ अधिवेशन हुआ था। श्री बियाणीजी उसके स्वागताध्यक्ष थे। इस अधिवेशन को सफल बनाने में तो आपने महत्वपूर्ण योगदान दिया ही, परन्तु स्वागताध्यक्ष के पद से आपने जो अभिभाषण दिया वह बहुत ही प्रेरणाप्रद और राष्ट्रभाषा हिन्दी के गौरव को बढ़ानेवाला था। इस समय आप अनेक वर्षों से विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष हैं और आपकी ही प्रेरणा से नागपुर में इस सम्मेलन का विशाल भवन निर्मित हुआ है।

श्री बियाणीजी के सम्बन्ध में कुछ लिखते हुए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि हम दो शब्द श्रीमती बियाणीजी के सम्बन्ध में भी निवेदन करें। यद्यपि श्रीमती बियाणीजी सुशिक्षित महिला नहीं हैं, परन्तु आप एक आदर्श जीवन सहचरी और आदर्श पत्नी हैं। श्री बियाणीजी अपने राजनैतिक और सार्वजनिक जीवन में जो सफलताएँ उपलब्ध कर सके उसका बहुत बड़ा श्रेय उनकी जीवन सहचरी के रूप में श्रीमती बियाणी को प्राप्त है। अपने पति के पद्चिह्न पर चलने और उनकी हर आकांक्षा को पूर्ण करने तथा प्रतिपल उन्हें सुख पहुँचाने की जो भावना एक साध्वी आर्य नारी में होनी चाहिए, वह श्रीमती बियाणी में कूट-कूटकर भरी हुई है। श्री बियाणीजी भी अपनी अतिथि सेवा और शिष्टाचार के लिए प्रसिद्ध हैं। कोई व्यक्ति जो एक बार उनका स्नेहपूर्ण आतिथ्य प्राप्त कर लेता है वह कभी उनका विस्मरण नहीं कर सकता। हमने राजनैतिक और सामाजिक आन्दोलन के समय देखा कि सैकड़ों अतिथियों का आवागमन उनके यहाँ रहता था, परन्तु प्रत्येक अतिथि की आवश्यकता के अनुरूप उसकी ख़ातिरदारी की जाती थी, और श्री बियाणीजी तथा बहिन सावित्रीदेवी बड़ी सजगता के साथ इस अतिथि सेवा को सम्पन्न करने में संलग्न रहते थे। श्री बियाणीजी की सफल अतिथि सेवा का सारा श्रेय श्रीमती बियाणी को है, जो स्वास्थ्य की अनुकूलता न रहने पर भी हर क्षण अतिथि सत्कार में लगी रहती थीं।

इस समय ६ दिसम्बर १९६५ को श्री बियाणीजी ७१ वें वर्ष में पदार्पण कर रहे हैं। उनका सारा जीवन राष्ट्र देवता व जनता जनार्दन की सेवा में उत्सर्ग हुआ है । आज यद्यपि उनका स्वास्थ्य उतना अच्छा नहीं है, परन्तु उनकी सहृदयता और उदात्त विचारसरणी उसी निर्मल रूप में प्रवाहित हो रही है। मेरे ऊपर सदा ही उनकी विशेष कृपा रही है और उनका स्नेह मिलता रहा है। मैं आदरणीय बियाणीजी और श्रद्धेया बहिन श्रीमती सावित्रीदेवी बियाणी का इस शुभ प्रसंग पर श्रद्धापूर्वक अभिनन्दन करता हूँ। परमात्मा से प्रार्थना है कि वे शतायु हों और चिरकाल तक राष्ट्र तथा समाज उनके मार्ग दर्शन का लाभ उठाता रहे । ★

हिन्दू-मुस्लिम एकता के हामी

लेखक

एस० ए० एम० हादी नख्शबन्दी, बी. ए., एम. आर. ए. एस. (लन्दन)

आदिब-ए-कामिल, फाजिल-ए-दीनिअत——बालापुर

(सज्जादाह नशीन, खान्काह, नख़शबन्दीया, बालापुर (विदर्भ) ।)

भाईजी को मेरे पिता हज़रत मौलाना सैय्यद शाह इमामुल्इस्लाम नख्शबंदी (सज्जादानशी खान्काह नख्शबंदीया, बालापुर, बरार) से विशेष लगाव था और वे उनके श्रद्धेय थे। इसी कारण मुझे अक्सर भाईजी को निकट से देखने का मौक़ा मिला, और अगस्त १९३७ में बालापुर में जब मैं उर्दू सप्ताह मना रहा था, जिसके पहले जलसे के अध्यक्ष बाबाए उर्दू डा. मौलवी अब्दुल हक़ थे, मैंने इस जलसे की अध्यक्षता के लिए भाईजी से अनुरोध किया। यहीं से भाईजी से मेरे सम्बन्धों का श्रीगणेश हुआ। इसके बाद मैं जितना उनके निकट पहुँचा, उतनी ही मेरे हृदय में उनकी क़द्र और इज्ज़त बढ़ती गई।

भाईजी न केवल हिन्दी के प्रेमी, बल्कि उसके ज़बरदस्त प्रचारक और कई किताबों के लेखक हैं। उर्दू के एक सेवक के नाते मेरा उनका साथ रहा है। उन्होंने न केवल उर्दू सप्ताह समारोहों की अध्यक्षता की, वरन् जब कभी और जहाँ कहीं हमें उर्दू के सम्बन्ध में भाईजी की मदद की आवश्यकता हुई, उन्होंने अपना सम्पूर्ण और क्रियाशील सहयोग दिया है। भाईजी की तरह अगर हिन्दी के दूसरे प्रेमी और प्रचारक भी हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा उर्दू भाषा की प्रगति में सक्रिय भाग लें तो हिन्दू-मुसलमान एक दूसरे के निकट आकर देश की बड़ी सेवा कर सकते हैं।

विदर्भ की गत अर्ध शताब्दि का इतिहास भाईजी की जिन्दगी में निहित है। वे शुरूआत से ही कांग्रेसी हैं। अगर यह कहा जाए तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी, कि विदर्भ कांग्रेस को बनाने में उनका बड़ा हाथ रहा है। विगत पचास वर्षों में विदर्भ की ऐसी कौनसी सामाजिक और राजनैतिक हलचल है, जिसके भाईजी अगुए न रहे हो? उनके जीवन का सब से प्रशंसनीय पहलू

यह है कि आपका प्रेममय, पवित्र और साफ रहन सहन गांधीजी की कहावत "सादा जीवन, उच्च विचार" के अनुसार पूर्णरूप से सही उतरता है।

भाईजी की कार्य प्रणाली का एक खास ढंग है; जिसमें कोई भेद-भाव नहीं, वरन् केवल प्रेम ही है। वे अपने साधारण से साधारण साथी का भी दिल मोह लेते हैं, जिसके कारण उनके साथ काम करने में आनन्द और मजा आता है। वह स्वयं एक उच्च संस्था हैं, जहाँ बहुतों ने लाभ उठाया है, और आज भी विदर्भ के सामाजिक एवं राजकीय जीवन में, विशेषरूप से कांग्रेस पक्ष के, अधिकांश नेता भाईजी के ही शिष्य हैं।

भाईजी के जीवन में भी चढ़ाव उतार आए हैं। इससे कोई भी व्यक्ति अपवाद नहीं हो सकता। बावजूद इसके, वे दृढ़निश्चयी, दृढ़ प्रतिज्ञ, अपूर्व साहसी एवं अतुलनीय धैर्यशाली हैं। आप विरोध एवं मुक़ाबले में सदैव विजयी रहे हैं। विदर्भ आन्दोलन उनके इस अतुलनीय धैर्य और निश्चय का सब से प्रकाशमान उदाहरण है।

भाईजी की ७१ वीं सालगिरह के अवसर पर मैं हार्दिक बधाई पेश करता हूँ, और परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वे सकुशल रहें और तन्दुरुस्ती के साथ आजीवन देश का पथ प्रदर्शन करें।

★

दार्शनिक बियाणीजी

लेखक
सत्यनारायन गोयनका—अकोला
(सम्पादक, 'विदर्भ सारथी', अकोला; वक्ता एवं लेखक ।)

अंग्रेज़ों के दमनकारी शासन से त्रस्त गुलाम भारत के वे दिन । देश के कोने कोने से आज़ादी की लहर उठी और उसी लहर का एक झोंका उठा विदर्भ के प्रमुख नगर अकोला स्थित राजस्थान-भवन से । पूरे तीन दशक राजस्थान भवन विदर्भ की राजनीति का केन्द्र-बिन्दु रहा और प्रेरणा-स्रोत थे श्री ब्रजलालजी बियाणी जो अपनी कर्मठता से विदर्भ में कांग्रेस का झण्डा गांव-गांव फहराकर जनता को तन-मन-धन से आज़ादी की जंग में उतारते जाते थे । यह अतिशयोक्ति नहीं है कि आज का विदर्भ जो भी है और वर्तमान नेतृत्व मार्गदर्शन की जो ज़िम्मेदारी उठाए हुए है, उसकी शिक्षा बियाणीजी के स्कूल की ही है ।

श्री बियाणीजी के जीवन को अनेक भागों में बांटा जा सकता है, किन्तु प्रधान दो ही रहे—राजनैतिक और सामाजिक । उनके राजनैतिक व सामाजिक-सिद्धान्त मानवतावादी रहे हैं । अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन में अपनी मान्यताओं को उन्होंने कभी गिरने नहीं दिया । साथ ही अपने विरोधियों तक को अपनाया । व्यक्ति से प्रेम, पर सिद्धान्त की लड़ाई का मन्त्र उन्होंने अपने जीवन में अपनाया है ।

लोकसेवी के रूप में विदर्भ की भिन्न-भिन्न तरीकों से की गई सामाजिक व राष्ट्रीय सेवा कभी भुलाई नहीं जा सकती । निष्पक्ष इतिहास इस सत्य को प्रमाणित करेगा । साहसी, निर्भीक, और सत्यवादी के रूप में बियाणीजी ने कभी किसी के सामने झुकना नहीं सीखा । न्याय के लिए मस्तक सदा उठा रहा है । अपने विरोधियों और दुश्मनों को भी चोट करने के पहिले सजग कर देने की उनकी आन-बान रही है । उनके वचनों की हृदय स्पर्शकारी शक्ति, शील की ओर प्रवृत्ति, विपत्ति में धैर्य्य, बुराई पर ग्लानि और मानव-जीवन के महत्व का अनुभव आदि गुणों से ओत-प्रोत उनका व्यक्तित्व नेतृत्व की राह में उठ

रहे नए क़दमों को प्रकाश-स्तम्भ है। मैं छोटा था जब उनकी राजनैतिक कीर्ति का सूर्य प्रखर किरणों से चमक रहा था परन्तु दिन-प्रति-दिन उनकी यश-गाथाएँ सुन आनन्दानुभव करता था। उमर और समझ के साथ मेरी आस्था उनके प्रति अधिक होती गई। मारवाड़ी समाज के होने के नाते, राजस्थान के होने के नाते, बिड़ला और शारदा के सम्बन्धी होने के कारण अथवा सत्ता के किसी पद विशेष पर रहने से मैं उनकी ओर आकृष्ट नहीं हुआ, परन्तु उनके यथार्थ-वादी दृष्टिकोण और एक व्यक्ति में अनेक संस्थाओं के अनुपम समन्वय से प्रभावित अवश्य हुआ हूँ। उनके ललित साहित्य ने तो एक अमिट छाप मुझ पर छोड़ रखी है।

राष्ट्रकर्मी-समाजसेवी के साथ-साथ बियाणीजी उच्च कोटि के साहित्यिक व विचारक भी हैं। साहित्यिक रचनाओं में उनकी भावनाएँ मूर्तिमती हो उठी हैं। यदि राजनीति से दूर साहित्य सेवा में बियाणीजी रत रहते तो प्रबुद्ध कल्पना शक्ति और प्रत्युत्पन्न मौलिक विचारों से परिपूर्ण अपनी शैली की विशेषता से साहित्यिकों में उच्च कोटि का स्थान प्राप्त किए दिखाई देते।

कविवर रवीन्द्र के साथ श्री बियाणीजी की रचनाओं की निकटता है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ के साथ ब्रजलालजी का नाम लेने का साहस करना भी एक आश्चर्य ही होगा। बियाणीजी राजकीय और सामाजिक आन्दोलनों में सदा व्यस्त रहे, फिर भला रवीन्द्रनाथ के साथ उनका नाम कैसे? यह भी कहा जा सकता है कि बियाणीजी का साहित्य में ललित लेखन से सम्बन्ध है लेकिन वह लेखन तो चिन्तन और दार्शनिक तथ्यों के आविष्कार की गद्यचेष्टा है और रवीन्द्र तो एक महान कवि। हाँ, यह सत्य है कि बियाणीजी ने गद्य लिखा है—वह दार्शनिक चिन्तन है, फिर भी वह वास्तविक जीवन से परे नहीं है। बियाणीजी ने अभी अभी प्रकाशित पुस्तक का नाम शायद इसी बात का सूचक समझकर दिया है– "धरती और आकाश"। इस नाम में आकाश चिन्तन और कल्पना का प्रतीक है, लेकिन वह धरती से यानि वास्तविक जीवन से संलग्न है। बियाणीजी के ललित लेखन की वास्तविकता या कल्पना रम्य चिन्तन इन दोनों अंगों के बारे में लिखना एक स्वतन्त्र विषय है, लेकिन ये दोनों जिस क्षितिज पर एक दूसरे से मिल जाते हैं उस स्थल पर बियाणीजी के साहित्य में भी मुझे महाकवि रवीन्द्र की याद आ जाती है।

श्री बियाणीजी की जिस पुस्तक का मैंने उल्लेख किया है, उस पुस्तक के चित्रकार मेरे सहयोगी हैं। साहित्य, काव्य, कला इन विषयों की चर्चा का हम

लोग हमेशा साथ साथ आनन्द लेते हैं। बियाणीजी के ललित साहित्य का ज़िक्र करते ही वे प्रभावित हुए और साहित्य पर विश्लेषणात्मक चर्चा करते हुए धरती-आकाश इन दो विशेषों को अलग दिखाते समय जब क्षितिज रेखा का विषय निकला तो मुझे रवीन्द्र की याद आई। मैं सोचने लगा कि रवीन्द्र बाबू के काव्य-किरण की आभा बियाणीजी की गद्य-ज्योति में भी है।

"धरती और आकाश" इस पुस्तक में सम्मिलित "पूर-प्रवाह" रचना मैंने पढ़ी है। प्रसंग तो बिलकुल परिचित है। नायक रोज़ सुबह घूमने नदी की ओर जाता है। नदी तट से थोड़ी ही दूर पर कुछ झोपड़ियाँ हैं। वहाँ गरीब लोग रहते हैं। एक बहिन नदी से माटी का घट भरकर लाती है। उसको नायक ने कई बार देखा है। घट में बन्द पानी और नदी के बहते पानी इस विषय को लेकर जो चिन्तन किया गया उसमें बियाणीजी की क़लम ने दार्शनिक का नया पहलू सामने रखा है। झोपड़ी में रहने वाली बहिन के रूप में यह दर्शन वास्तविक जीवन की धरती से संलग्न है। लेकिन अन्त में एक प्रसंग है। नायक जब एक दिन घूमने जाता है तो उसे ज्ञात होता है कि रोज घट भर कर ले जाने वाली वह युवा बहिन नदी के पूर-प्रवाह में बह गई। यहाँ पर भी बियाणीजी की कलम पूर प्रवाह और एक व्यक्ति का बह जाना इन घटनाओं पर अपनी हमेशा की शैली से लिखती गई, किन्तु एक विचार नायक के मन में आया। जिस युवती के साथ नायक ने कभी बातचीत नहीं की है न कभी उसके जीवन से सम्बन्ध आया केवल कई बार एक दूसरे को देखा है, फिर भी एक क्षण उसे ऐसा महसूस हुआ कि "हो सकता है, शायद पानी में डूबते-डूबते उसे मेरा स्मरण हुआ होगा।" बियाणीजी की लेखनी ने यहाँ पर एक नई और अछूती अनुभूति को स्पर्श किया है। युवावस्था की यह एक रहस्यमय अनुभूति है जिसे कलात्मक शैली में लिखने का प्रयास केवल रवीन्द्रनाथ टैगोर ने ही किया है। युवावस्था में कुछ मनोभाव ऐसे भी होते हैं जो प्रणय और वात्सल्य इन दोनों भावों की सीमा रेखा पर होते हैं। इन भावों को केवल रवीन्द्र जैसे कवियों की लेखनी ने ही स्पर्श किया है और वही किरण मैंने बियाणीजी की लेखनी में पाई है।

इसी तरह और भी उदाहरण देना चाहूँ तो मैं 'अमा-निशा' इस रचना का दूँगा। इस लेख में प्रणय या युवा मन के भाव नहीं हैं, फिर भी अँधियारे में बैठे एक चिन्तनशील नायक के विचार के रूप में बियाणीजी की लेखनी ने उसी धरती और आकाश की मिलन रेखा को स्पर्श किया है, जहाँ नई अनुभूतियों की अभिव्यक्ति की गई है।

बियाणीजी ग्रौर रवीन्द्रनाथ टैगोर का नाम इस सन्दर्भ में मैं ले लूं तो ग्राश्चर्य की बात नहीं। इतनी निकटता दोनों की लेखनी ने पाई है। ★

बियाणीजी का कलात्मक जीवन

लेखक
नन्दकिशोर खण्डेलवाल–इन्दौर
(संचालक, आरोग्य भवन, प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र, इन्दौर ।)

श्री बियाणीजी से मेरा परिचय उनके इन्दौर में आने के बाद पाक्षिक पत्र 'विश्व विलोक' के प्रिंटिंग से कार्य हुआ। ('विश्व विलोक' हमारे प्रेस में छपता था) वैसे मैं 'विदर्भ केसरी' के नाम से कई वर्षों से उन्हें जानता था। कई बार आपके विद्वत्तापूर्ण लेख व पुस्तकें पढ़ने को मिलीं, किन्तु दर्शन करने का सौभाग्य नहीं हुआ था। 'विश्व विलोक' के प्रकाशन के बाद आपसे मेरा दैनिक सम्बन्ध रहा। भाईजी मुझे भी 'विश्व विलोक' का एक सदस्य समझते थे। 'विश्व विलोक' में आपके उच्चकोटि के विचार, अनेक वर्षों से चल रही राज्य सत्ता के अनुचित कार्यों पर टिप्पणी व मार्ग-दर्शन लोग पढ़ने के लिए उत्सुक रहते थे।

इन्दौर में आने के बाद मैं उन्हें प्राकृतिक चिकित्सा की प्रेरणा देता रहा क्योंकि उनका स्वास्थ्य कुछ ठीक नहीं रहता था। उन्होंने भी उपवास व दूध-कल्प का निश्चय कर लिया। उपवास के समय में मैं उनका इलाज करता था, तो कभी मुझे ऐसा अवगत नहीं हुआ कि वे अपने को कमज़ोर महसूस करते हों। प्राकृतिक जीवन पर श्री बियाणीजी को बड़ी श्रद्धा है। उपवास के समय में जीना चढ़कर चाँदनी पर सूर्य किरण व कम्बल पट्टी सहर्ष लेते थे और बिना किसी उपद्रव के एक हफ्ते का पूर्ण उपवास कर डाला। परिचित व्यक्ति ताज्जुब करते थे, उनको विश्वास ही नहीं था कि वे उपवास पूर्ण कर सकेंगे, किन्तु यह सफलता उनके गुप्त आत्मबल का प्रमाण थी, जो उनके पास दैवी शक्ति के रूप में है।

सौन्दर्य ईश्वर का प्रतिबिम्ब है। यह सौन्दर्य चरित्रवान व्यक्ति के व्यक्तित्व से ही प्रस्फुटित होता है। सौन्दर्य मनुष्य के रंग अथवा उसकी बनावट में नहीं, उसके अच्छे कार्यों में निहित होता है। अच्छे कार्य विरक्ति और सन्तोष की भावना से होते हैं, जो श्री बियाणीजी के खास गुण हैं। स्वच्छता तो आपके रोम-रोम में भरी है।

समय के पाबन्द श्री बियाणीजी कहते हैं कि समय ही तो जीवन है। जीवन के सारे घण्टे, दिन, महीने और वर्ष अपने जीवन को उच्च और सफल बनाने में लगाए जा सकते हैं अथवा यों ही व्यर्थ गँवाए जा सकते हैं। आपने अपने जीवन में निश्चित समय पर कार्य करना अपना ध्येय बना रखा है।

श्री बियाणीजी के मीठे बोल और प्रत्येक के प्रति सहानुभूतिपूर्ण कार्य सहज ही जन-जन के मन को मोह लेते हैं।

श्री बियाणीजी दृढ़ निश्चयी हैं। अपने विरोधियों से भी झगड़ा नहीं करते। सब से बड़े प्रेम व आदर से मिलते हैं और सभी गुटबन्दी से पृथक रहते हैं। आज संसार को जिस वस्तु की अधिक-से-अधिक आवश्यकता है, वह है बुद्धि। संसार में सहृदयता और सद्भावना की कमी नहीं है, पर क्योंकि लोग बुद्धि का उपयोग नहीं करते इसीलिए असफल रहते हैं। आज के संसार की समस्या का समाधान राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं पर सामूहिक रूप से बुद्धि का उपयोग करना है। श्री बियाणीजी व्यक्तिगत रूप से बुद्धि का उपयोग करते हैं। यह बुद्धि ईश्वर-प्रदत्त आत्मा का दीपक है। इस बुद्धि के प्रयोग का आनन्दप्रद खेल दुनिया को अवलोकन कराते हैं। श्री बियाणीजी सरल, निष्कपट, प्रसन्नचित्त, विश्वासी, धैर्यवान, शान्ति प्रिय, ईमानदार, स्वस्थ, बुद्धिमान, उदार व प्रत्येक के प्रति शुभ-चिन्तक व्यक्ति हैं। मैं उनके ७१ वें जन्म दिवस पर उनके दीर्घायु होने की ईश्वर से मंगल कामना करता हूँ। ★

भाईजी : एक प्रशासक के रूप में

लेखक
देवेन्द्र कोचर—नागपुर
(श्री बियाणीजी के मन्त्रीत्व काल के उनके सरकारी निजी सचिव ।)

फरवरी या मार्च १९५२ की बात है, जब प्रथम आम चुनाव के बाद स्व० पं० रविशंकर शुक्ल ने भूतपूर्व मध्य प्रदेश का मन्त्रिमण्डल घोषित कर दिया था। जैसी कि आशाएँ थीं उसमें विदर्भ-केसरी श्री ब्रजलालजी बियाणी भी शामिल किए गए थे। मन्त्रिमण्डल की घोषणा होने के बाद कई तरह की टीका-टिप्पणियाँ सुनने को मिलीं। उनमें से कुछ लोगों द्वारा यह भी सन्देह प्रकट किया गया था कि बियाणीजी सम्भवतः कुशल प्रशासक सिद्ध न हो सकें। इस आशंका की पुष्टि में यह दलील पेश की गई थी कि पूर्व में श्री बियाणीजी ने किसी प्रशासकीय पद पर, जैसे कि डिस्ट्रिक्ट कौन्सिल अथवा म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन के पद पर, कभी भी काम नहीं किया था, जबकि मन्त्रिमण्डल के अधिकांश सदस्य अपने राजनैतिक जीवन में ऐसे पदों पर रह चुके थे। थोड़े ही दिनों बाद मन्त्रिमण्डल के सदस्यों में विभागों के बँटवारे की घोषणा कर दी गई, और उसके अनुसार श्री बियाणीजी को वित्त तथा पृथक आगम विभाग (इसमें आबकारी, विक्रयकर तथा पंजीयन विभाग शामिल थे) सौंपे गए। फिर से कानाफूसी सुनने में आई कि वित्त सरीखे पेचीदा विभाग को उन्हें दिया गया है, इसलिए बियाणीजी शायद ही सफलतापूर्वक उसे सँभाल सकें।

आरम्भ में बियाणीजी को उपरोक्त विभागों की फाइलें निपटाने का पूर्ण समय नहीं मिल पाया। कारण यह था कि एक तो उन्हें शपथ ग्रहण करने के बाद अपने निर्वाचन क्षेत्र, अकोला, जाना पड़ा जहाँ से वे अनगिनत स्वागत समूहों के बीच में से कठिनाई से वापस आ सके। नागपुर में सबेरे से शाम तक मिलनेवालों का उनके यहाँ ताँता लगा रहता था। कोई बधाई देने आता, कोई किसी समारोह में उन्हें आमन्त्रित करने आता, आदि-आदि। इस सबका परिणाम यह हुआ कि बियाणीजी के यहाँ फाइलों के गट्ठे इकट्ठे होने लगे। यह अवस्था देखकर

समय के पाबन्द श्री बियाणीजी कहते हैं कि समय ही तो जीवन है । जीवन के सारे घण्टे, दिन, महीने और वर्ष अपने जीवन को उच्च और सफल बनाने में लगाए जा सकते हैं अथवा यों ही व्यर्थ गँवाए जा सकते हैं । आपने अपने जीवन में निश्चित समय पर कार्य करना अपना ध्येय बना रखा है ।

श्री बियाणीजी के मीठे बोल और प्रत्येक के प्रति सहानुभूतिपूर्ण कार्य सहज ही जन-जन के मन को मोह लेते हैं ।

श्री बियाणीजी दृढ़ निश्चयी हैं । अपने विरोधियों से भी झगड़ा नहीं करते । सब से बड़े प्रेम व आदर से मिलते हैं और सभी गुटबन्दी से पृथक रहते हैं । आज संसार को जिस वस्तु की अधिक-से-अधिक आवश्यकता है, वह है बुद्धि । संसार में सहृदयता और सद्भावना की कमी नहीं है, पर क्योंकि लोग बुद्धि का उपयोग नहीं करते इसीलिए असफल रहते हैं । आज के संसार की समस्या का समाधान राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं पर सामूहिक रूप से बुद्धि का उपयोग करना है । श्री बियाणीजी व्यक्तिगत रूप से बुद्धि का उपयोग करते हैं । यह बुद्धि ईश्वर-प्रदत्त आत्मा का दीपक है । इस बुद्धि के प्रयोग का आनन्दप्रद खेल दुनिया को अवलोकन कराते हैं । श्री बियाणीजी सरल, निष्कपट, प्रसन्नचित्त, विश्वासी, धैर्यवान, शान्ति प्रिय, ईमानदार, स्वस्थ , बुद्धिमान, उदार व प्रत्येक के प्रति शुभ-चिन्तक व्यक्ति हैं । मैं उनके ७१ वें जन्म दिवस पर उनके दीर्घायु होने की ईश्वर से मंगल कामना करता हूँ । ★

भाईजी : एक प्रशासक के रूप में

लेखक

देवेन्द्र कोचर—नागपुर

(श्री बियाणीजी के मन्त्रीत्व काल के उनके सरकारी निजी सचिव ।)

फरवरी या मार्च १९५२ की बात है, जब प्रथम आम चुनाव के बाद स्व० पं० रविशंकर शुक्ल ने भूतपूर्व मध्य प्रदेश का मन्त्रिमण्डल घोषित कर दिया था। जैसी कि आशाएँ थीं उसमें विदर्भ-केसरी श्री ब्रजलालजी बियाणी भी शामिल किए गए थे। मन्त्रिमण्डल की घोषणा होने के बाद कई तरह की टीका-टिप्पणियाँ सुनने को मिलीं। उनमें से कुछ लोगों द्वारा यह भी सन्देह प्रकट किया गया था कि बियाणीजी सम्भवतः कुशल प्रशासक सिद्ध न हो सकें। इस आशंका की पुष्टि में यह दलील पेश की गई थी कि पूर्व में श्री बियाणीजी ने किसी प्रशासकीय पद पर, जैसे कि डिस्ट्रिक्ट कौन्सिल अथवा म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन के पद पर, कभी भी काम नहीं किया था, जबकि मन्त्रिमण्डल के अधिकांश सदस्य अपने राजनैतिक जीवन में ऐसे पदों पर रह चुके थे। थोड़े ही दिनों बाद मन्त्रिमण्डल के सदस्यों में विभागों के बँटवारे की घोषणा कर दी गई, और उसके अनुसार श्री बियाणीजी को वित्त तथा पृथक आगम विभाग (इसमें आबकारी, विक्रयकर तथा पंजीयन विभाग शामिल थे) सौंपे गए। फिर से कानाफूँसी सुनने में आई कि वित्त सरीखे पेचीदा विभाग को उन्हें दिया गया है, इसलिए बियाणीजी शायद ही सफलतापूर्वक उसे सँभाल सकें।

आरम्भ में बियाणीजी को उपरोक्त विभागों की फाइलें निपटाने का पूर्ण समय नहीं मिल पाया। कारण यह था कि एक तो उन्हें शपथ ग्रहण करने के बाद अपने निर्वाचन क्षेत्र, अकोला, जाना पड़ा जहाँ से वे अनगिनत स्वागत समूहों के बीच में से कठिनाई से वापस आ सके। नागपुर में सबेरे से शाम तक मिलनेवालों का उनके यहाँ ताँता लगा रहता था। कोई बधाई देने आता, कोई किसी समारोह में उन्हें आमन्त्रित करने आता, आदि-आदि। इस सबका परिणाम यह हुआ कि बियाणीजी के यहाँ फाइलों के गट्ठे इकट्ठे होने लगे। यह अवस्था देखकर

बियाणीजी ने रोज दो घण्टे सचिवालय जाना शुरू किया और वहाँ फाइलों को निपटाने लगे। ऐसा करते समय वे वित्त विभाग के सम्बन्धित अधिकारियों को भी बुला लेते थे। उनमें कभी-कभी स्व० श्री प्रेमशंकर धगट उप-वित्त-मन्त्री भी रहते थे। श्री बियाणीजी पेचीदा-से-पेचीदा मामले को समझने में देरी नहीं लगाते थे और उस पर तुरन्त आदेश दे दिया करते थे। वित्त विभाग के अधिकारी उनकी इस प्रशासकीय योग्यता को देखकर दाँतों उँगली चबाने लगे।

वित्त-विभाग में सब विभागों से वित्तीय मञ्जूरी के लिए प्रस्ताव आया करते हैं। अपने मन्त्री-पद के शैशव काल में ही उन्होंने ऐसे प्रस्तावों पर निर्भीकतापूर्वक अपने विचार व्यक्त करना शुरू कर दिए। इसमें दिलचस्प बात यह है कि उन्होंने अपने से वरिष्ठ मन्त्रियों के प्रस्तावों पर भी, जिनमें तत्कालीन मुख्यमन्त्रीजी भी शामिल थे, काँट-छाँट शुरू कर दी। अभी तक ऐसे प्रस्तावों पर अक्सर वित्त-विभाग की ओर से 'नो आबजेक्शन' लिखकर चला जाता था। इसलिए जब बियाणीजी ने ऐसा रुख अपनाना शुरू किया तब मन्त्रिमण्डलीय क्षेत्र में खलबली मची। जो लोग उनकी प्रशासकीय योग्यता के बारे में आशंकाएँ करते थे उनकी आशंकाएँ निर्मूल सिद्ध होने लगीं।

अपने मन्त्रित्व काल में बियाणीजी ने रजिस्ट्रेशन कार्यालयों की ओर भी, जोकि भ्रष्टाचार के लिए कुख्यात थे, अपना ध्यान दिया। मन्त्रीपद ग्रहण करने के कुछ ही सप्ताहों बाद वे एक दिन अचानक नागपुर सब-रजिस्ट्रार के कार्यालय में जा धमके। साथ में उनके तत्कालीन पंजीयन महानिरीक्षक श्री रघुराजसिंह भी थे। सब-रजिस्ट्रार उन्हें देखकर घबरा गए और अवाक्-से रह गए। बियाणीजी ने कार्यालय का बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से लेकिन फुर्ती से निरीक्षण किया और पेंडिंग मामलों में समुचित कार्यवाही की। दूसरे ही दिन यह समाचार पूरे प्रदेश में, विशेषकर पंजीयन कार्यालयों में, बिजली की तरह फैल गया। हर सब-रजिस्ट्रार को डर बैठ गया कि न मालूम कब मन्त्री महोदय उन्हें दर्शन दे दें। वे जब तक मन्त्री रहे उनके आधीन अधिकारियों को इस बात का डर बना रहा, जिसके फलस्वरूप वे अपने कार्य में चुस्ती और कार्य-तत्परता दिखलाने के लिए प्रयत्नशील रहे।

इससे यह अर्थ नहीं लगाना चाहिए कि बियाणीजी अपने अधीन अधिकारियों को हमेशा डराते ही रहे; उन्होंने उनकी समस्याओं और कठिनाइयों को समझने के प्रयत्न भी शुरू किए। इस हेतु उन्होंने समस्त प्रदेश के अधिकारियों की परिषदें बुलाईं। इसकी शुरुआत उन्होंने सब ज़िलों के विक्रयकर अधिकारियों

की नागपुर में बैठक बुलाकर की। इस बैठक में उन्होंने अधिकारियों को अपने 'न्याय और नीति' सिद्धान्त को समझाया और उनके कार्य में आनेवाली कठिनाइयों को पूछा और समझा। बाद में उन्होंने उनकी जाँचकर उचित निराकरण भी किया।

मध्यप्रदेश के इतिहास में सम्भवतः बियाणीजी ही ऐसे मन्त्री थे जिन्होंने अपने अधीन अधिकारियों की बैठक बुलवाने का सूत्रपात किया। यही कार्यक्रम उन्होंने बाद में लोककर्म विभाग में अपनाया, जिसका अतिरिक्त कार्य दिसम्बर १९५४ में मिला था।

मन्त्रीपद काल में उनके सामने बड़े-बड़े पेचीदे मामले आए। उनमें से ऐसे भी मामले थे जिनमें कानून के गहन ज्ञान की भी आवश्यकता थी। इस क्षेत्र में भी उन्होंने अपनी कानूनी बुद्धि का भली-भाँति परिचय दिया, जो कि इस एक उदाहरण से ही सिद्ध हो जाएगा। बात यों थी कि एक सरकारी कार्यालय में काम करनेवाले लिपिक की पत्नी म्युनिसिपल स्कूल में शिक्षक का काम करती थी। वह बीमार पड़ी और उसके इलाज खर्चे का मेडीकल बिल उस लिपिक ने अपने कार्यालय में प्रस्तुत किया। चूँकि ऐसे बिल को मञ्जूर करना सन्देह से परे नहीं था, इसलिए यह मामला शासन को भेजा गया। वित्त विभाग के अधिकारियों ने उसे तोड़-मरोड़कर मन्त्रीजी के सामने इस तरह प्रस्तुत किया कि जैसे लिपिक महोदय की पत्नी अपने जीवन-निर्वाह के लिए लिपिक पर आधारित हो। मन्त्रीजी मामले को तुरन्त समझ गए। रूलिंग दिया कि बिल मञ्जूर नहीं हो सकता, क्योंकि लिपिक की पत्नी ऐसी अवस्था में उस पर निर्भर नहीं कही जा सकती। साथ ही उन्होंने सम्बन्धित अधिकारियों को खरी-खरी सुनाई कि वे आगे से इस तरह किसी को भी अनुचित लाभ पहुँचाने का प्रयास न करें।

वित्तमन्त्री के नाते उन्हें बजट की कई टेक्नीकल समस्याओं का सामना करना पड़ा। इनफ्लेशन (Inflation), डिफ्लेशन (Deflation), रिफ्लेशन (Reflation) क्या है, और इनका बजट पर क्या असर पड़ता है ? यह भी सवाल उनके सामने प्रथम बजट प्रस्तुत करते समय आया। चूँकि उन्होंने अर्थशास्त्र का अध्ययन नहीं किया था, इसलिए उन्हें इस विषय को समझने के लिए तत्कालीन संचालक, आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग, की सहायता लेनी पड़ी। परन्तु उन्हें इसे समझने में देरी नहीं लगी। थोड़ी देर बाद उन्हें धारा सभा में जिस ढंग से समझाया उसको सुनने से ऐसा मालूम पड़ता था कि मानों अर्थशास्त्र का कोई वरिष्ठ प्रोफेसर अपने विद्यार्थियों को व्याख्यान

दे रहा है। खुद संचालक महोदय कहते सुने गए कि शायद वे खुद इतनी जल्दी और इस खूबी से इस पेचीदा विषय को समझने और समझाने में असमर्थ हैं।

अपने मन्त्रित्व काल में बियाणीजी ने अपनी प्रशासकीय कुशलता का हर क्षेत्र में परिचय दिया और अपनी अमिट छाप छोड़ी। इस सबका तो यहाँ स्थानाभाव के कारण उल्लेख करना संभव नहीं, परन्तु प्रशासन में हिन्दी शुरू करने का जो उन्होंने कदम उठाया वह चिरस्मरणीय रहेगा। मध्य प्रदेश की शासकीय भाषा हिन्दी तो सन् १९५३ में घोषित की गई, परन्तु बियाणीजी ही ऐसे मन्त्री थे जिन्होंने मन्त्रीपद ग्रहण करने के बाद ही फाइलों में हिन्दी की शुरूआत कर दी। उनकी सारगर्भित टिप्पणियों ने अन्य हिन्दी समर्थकों को बल और प्रोत्साहन दिया, जो आगे चलकर हिन्दी को शासकीय भाषा के रूप में लाया। शासन में हिन्दी लाने के समर्थकों में स्व० पं० रविशंकर शुक्ल के साथ श्री ब्रजलालजी बियाणी का नाम भी सुनहरे अक्षरों में लिखा जाना चाहिए। ★

मेरे काकाजी

लेखक
बाबूलाल बियाणी—कलकत्ता
(श्री बियाणीजी के भतीजे; टी बोर्ड समिति के सदस्य; कुशल व्यवसायी।)

काकाजी की बातें याद करने बैठा तो मानों सारे जीवन का सिंहावलोकन हो गया, जहाँ तक स्मृति के तट पर जो चित्रित है। ७-८ साल की उमर में एक दिन बड़ी सुबह की कंपकंपाती ठण्ड में पिताजी के साथ अकोला में रेल से उतरा। ताँगा करके—शायद जीवन में पहली बार ताँगे पर बैठा होऊँगा—घर पहुँचा। दूसरी मंजिल पर जाकर दरवाजे खटखटाए और काकी एवं काकाजी ने दरवाजे खोले। घर के साथ मन के भी दरवाजे मेरे प्रवेश ने सदा के लिए खोले। यह उनके वर्षों के सहवास की शुरूआत !

किन्तु अकोला आकर काकाजी के पास रहने के पश्चात् की स्मृतियाँ मानसपट पर धुँधली-सी हैं। कारण कि वहाँ के साथ इतना समरस हो गया। एक बात निश्चित है—वर्षों के अकोला निवास का परिणाम तथा काकी-काकाजी के प्यार के परिणाम स्वरूप हमारे परिवार को अत्यंत निकट से जानने वालों को छोड़कर सबको यही मालूम है कि काकाजी के दो पुत्र हैं—एक मैं और एक कमल। यह आभास पुनः पिताजी अकोला आकर रहने के पश्चात् भले ही कुछ दूर हुआ हो। स्कूल और कॉलेज की शिक्षा तो उन्होंने दी ही, परन्तु जीवन के ध्येय, जो उनसे सीखे, उनके निस्वार्थ जीवन में देखे उनसे भी बड़ी शिक्षा मिली। मनुष्य की सीमाहीन शक्ति का ज्वलन्त उदाहरण उनकी जीवनी है। शरीर की ताकत से मन की ताकत कितनी बड़ी होती है इसका नमूना ! संघर्ष और विजय की एक लम्बी कहानी !

जहाँ तक सुनकर ज्ञात है, बड़े कष्ट में, अर्थाभाव में, मीलों पैदल चलकर स्कूल एवं कॉलेज की शिक्षा उन्होंने ली। विषम परिस्थिति का सामना कर विद्यार्जन किया। और फिर साथ-साथ दो लड़ाइयाँ लड़ीं-देश की आज़ादी की तथा जीवन यापन की। देश की पुकार, गाँधीजी की आवाज़ को सुनकर, आज़ाद सेना के

सेनानी से न रहा गया। जीवन यापन के क्षेत्र में बिना साधन-सुविधा के शुरू किया व्यापार और प्रेस आज मूर्तिमन्त सामने विद्यमान है। देशसेवा और त्याग का उदाहरण विदर्भ के इतिहास में सदा ज्वलन्त रहेगा।

राजनीति की लड़ाई, बरार के प्रति उत्कट प्रेम, गाँव-गाँव में जान पहचान—स्नेहीजन और जनता का घण्टों राह देखकर उत्साह के साथ उनके भाषण की प्रतीक्षा करना, मन मोहक वाणी, उत्तम विचार, गहरे विश्वास के साथ ओजपूर्वक अपनी विचार धारा का प्रभाव दूसरों पर डालने की कला, स्वयं का सुख और आराम कोई चीज़ नहीं—घर, घरवाले, गाड़ी, पैसा सब "दूसरों के लिए पहले है"——इस भूमिका पर सारा केन्द्रित जीवन ! कोई आश्चर्य नहीं कि एक ऐसे प्रदेश में जहाँ "सेठजी व भट्टजी" के विरोध में सारी राजनीति हो—वहाँ बरसों एकछत्र राज सुनीति से चला सके 'सेठजी' होते हुए।

काकाजी पर लिखते-लिखते काकी की याद आना अनिवार्य ! मनुष्य रूप में देवी, हाथों में अन्नपूर्णा की शक्ति, मन में कूट-कूट कर भरी हुई करुणा, असीम प्रेम और दूसरों के संकट में समा जाने की उत्कण्ठा ! फिर मुझे एक 'माँ' और मिली तो क्या आश्चर्य ! काकी के इन सब गुणों की पार्श्वभूमि में काकाजी को अपनी देश-सेवा और समाज-सेवा को पूरा मनोबल-बाहुबल मिलता रहा, ऐसा मैं कहूँ तो अनुचित नहीं होगा।

समय की गति और बढ़ती उमर के तकाज़े को देखते हुए काकाजी का आज का उत्साह उनके जीवन का सम्बल है। आराम से काम अधिक प्रिय—नई नई चट्टानों से टकरा कर उन्हें ढँक लेने की समुद्र की सी तैय्यारी, बढ़ता हुआ साहित्य-प्रेम, मानों मन में रहे हुए "बीज" का पौधे के रूप में विकास है।

मन के सारे विचार इस लेखनी की सीमित शक्ति के कारण प्रकट करना सम्भव नहीं। भगवान काकाजी को दीर्घायु प्रदान करें, यही रग-रग से उस दयालु प्रभु से प्रार्थना है। ★

भाईजी की विशालता

लेखक
श्रीकिसन नथमल दायमा—जलगाँव
(**भूतपूर्व अध्यक्ष, नगरपालिका, जलगाँव; व्यवसायी।**)

माननीय श्री ब्रजलालजी बियाणी से मैं कई वर्षों से परिचित था, और उनकी वीरता, त्याग, देश-भक्ति, साहित्यिक विद्वत्ता, सामाजिक संगठन एवं सार्वजनिक कार्यों के सम्बन्ध में उनका गुणानुवाद अख़बारों और दूरध्वनि द्वारा सुनता रहता था।

सन् १९५५, सेप्टेम्बर २५ तारीख को जलगाँव शहर में हम व्यापारियों द्वारा देश गौरव नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की प्रतिमा बीच बाज़ार चौक में स्थापित की गई, जिसका मैं कार्यवाह था। उस प्रतिमा के उद्‌घाटन का शुभकार्य माननीय श्री ब्रजलाल बियाणीजी विदर्भ केसरी एवं अर्थ मन्त्री मध्यप्रदेश के करकमलों द्वारा सम्पन्न कराया था। उस समय दिन-भर में उनके १७ जगह अलग-अलग संस्थाओं में प्रोग्राम रखे थे, और रात्री में कांग्रेस कमेटी की ओर से उनका सार्वजनिक भाषण रखा गया था। ये सब प्रोग्राम उन्होंने कांग्रेस-विरोधी राजकीय पार्टियों का विरोध होते हुए भी बहादुरी के साथ, प्रश्नोत्तर देते हुए, निर्विघ्नता से पूरे किए थे। उस वक्त उनका समीप से मुझे और मेरे जलगाँव के मित्रों को सहवास हुआ। तब से जलगाँववासियों पर उनकी विद्वत्ता का गहरा असर हुआ, और श्री बियाणीजी के प्रति मेरी एवं जलगाँववासियों की अटूट श्रद्धा एवं आत्मीयता बढ़ी, और तब से ही सुभाष-चौक में से श्री नेताजी की प्रतिमा के पास से जब जब हम लोग दिन में गुज़रते हैं, तब-तब नेताजी की प्रतिमा के नीचे के शिलालेख पर श्री बियाणीजी का नाम पढ़ते ही उनकी मूर्ति हमारे सामने आ जाती है, और रोज़ाना श्री बियाणीजी की आत्मीयता का स्मरण हो जाता है। माननीय श्रीबियाणीजी जैसे महान साहित्यिक, विद्वान और निड़र देशभक्त हमारी नज़रों में इतने ऊँचे हैं कि वे शब्दों में नहीं बाँधे जा सकते। फिर भी इतना तो लिखने का साहस मैं ज़रूर करता हूँ कि वे भारत माता के एक सच्चे सुपुत्र और कर्मठ देशभक्त

हैं, और ऊँचे दर्जे के साहित्यिक हैं। हमारी नज़रों में श्री बियाणीजी हमारे समाज के प्रकाश-दीप हैं ।

मैं उनकी आयुष्य के ७१वें वर्ष के पदार्पण के शुभ दिन जगत्पिता से प्रार्थना करता हूँ की श्री भाईजी को वे आयुष्य एवं आरोग्य प्रदान करें। ★

पूँजीवादी अथवा मार्क्सवादी

लेखक

डॉ० रामचंद्र गुप्त, एम०ए०, पी-एच०डी०—इंदौर

(ग्रन्थ-समिति के सदस्य; अध्यक्ष, राजनीति विभाग—आई० के० कॉलेज; वक्ता एवं अनेकों अंग्रेज़ी तथा हिन्दी पुस्तकों के लेखक; सह-सम्पादक 'विश्व-विलोक'।)

यह कहना अनुचित न होगा कि आज का युग वादों का युग है। आज हममें से अधिकांश की यह धारणा बन गई है कि प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी 'वाद' का अवश्य ही अनुयायी होता है। अर्थात् हममें से प्रयेक किसी न किसी छाप (label) अथवा ब्राण्ड (brand) के अन्तर्गत अनिवार्य रूप से आता है, जैसे यदि कोई 'कम्यूनिस्ट ब्राण्ड' (Communist Brand) के अन्तर्गत आता है, तो कोई 'समाजवादी ब्राण्ड' अथवा 'गांधीवादी ब्राण्ड' (Socialist Brand or Gandhian Brand) के अन्तर्गत। जब भी हम किसी अपरिचित व्यक्ति से मिलते हैं, तो बातों-बातों में यह प्रश्न अक्सर पूछ लिया जाता है कि आप किस विचारधारा से सहमत हैं अथवा आप किस विचारधारा को श्रेष्ठ समझते हैं? अर्थ दोनों का यही है कि हम पर किस विचारधारा की छाप लगी है? यदि इन प्रश्नों के उत्तर में हममें से कोई यह कह दे कि मैं तो सीधा सादा एक निष्पक्ष मनुष्य हूँ और मेरा किसी विचारधारा से कोई सम्बन्ध नहीं, प्रश्नकर्ता उसे या तो मूर्ख समझेगा अथवा धूर्त और ढोंगी। इसका अर्थ यही है कि आज के युग में केवल मनुष्य होना पर्याप्त नहीं। मनुष्य होने के साथ-साथ प्रत्येक को किसी न किसी 'वाद' अथवा विचारधारा का समर्थक होना भी अपेक्षित है। यह बात सब के साथ भले ही लागू न होती हो, पर अधिकांश ऐसा ही देखने में आता है।

मेरा यद्यपि श्री बियाणीजी के साथ सम्बन्ध केवल एक वर्ष से ही है, परन्तु है वह बहुत निकट का, और इस अवधि में मैंने उन्हें अत्यन्त निकट से देखा है। मैं मनोविज्ञान और राजनीति दोनों का विद्यार्थी रहा हूँ, और इन दोनों विषयों

के ज्ञान ने मुझे बियाणीजी के मनोभावों तथा राजनैतिक विचारों एवं प्रति-क्रियाओं को ठीक से समझने में बहुत सहयोग दिया है। इसी तथ्य को दृष्टि में रखकर, कई बार कुछ लोगों ने मुझ से पूछा है कि बियाणीजी 'पूंजीवादी' हैं, अथवा 'मार्क्सवादी' अथवा और कुछ ? और मैंने सदैव इस प्रश्न का उत्तर देने में या तो आनाकानी की है अथवा अपनी असमर्थता बताई है। यह प्रश्न जितना सरल है, उसका उत्तर उतना ही कठिन है एवं अस्पष्ट।

कोई भी व्यक्ति श्री बियाणीजी के रहन-सहन को देखकर तथा उनके व्यय करने के ढंग को देखकर यह कह सकता है कि वे पूंजीवादी मनोवृत्ति के व्यक्ति हैं। और यदि उस व्यक्ति को यह बता दिया जाय कि बियाणीजी कभी 'बरार चेम्बर ऑफ़ कामर्स' के संस्थापक तथा 'आल इंडिया फेडरेशन आफ़ चेम्बर्स ऑफ़ कामर्स' की कार्यकारिणी के सम्मानित सदस्य रहे हैं, और आज भी आप राजस्थान प्रिंटिंग प्रेस, अकोला, के संचालक हैं, तब तो वह उन्हें सोलह आने पूंजीपति मानने लगेगा। पर मेरी दृष्टि में उनके प्रति यह धारणा भ्रम से अधिक और कुछ नहीं। किसी भी व्यक्ति के रहन-सहन को देखकर या उसके यत्र-तत्र छोटे-बड़े उद्योगों से सम्बन्ध को देखकर यह कैसे निर्णय दिया जा सकता है, कि वह व्यक्ति पूंजीपति है।

'पूंजीपति' शब्द अत्यन्त भ्रामक है। केवल पूंजी का होना पूंजीपति का लक्षण नहीं कहा जा सकता। न्यूनाधिक पूंजी प्रायः सभी के पास होती है तथा प्रत्येक व्यक्ति शालीनता से जीवन व्यतीत करने का इच्छुक रहता है। यह स्वाभाविक प्रवृत्ति है। वास्तव में पूंजीपति शब्द में शोषण और अधिकाधिक धन-संचय का भाव छिपा है। पूंजीवाद (Capitalism) का इतिहास शोषण और दमन का इतिहास है, और पूंजीपति दरिद्रों और निर्बलों के शोषण को प्रोत्साहित करने वाला एक ऐसा व्यक्ति है, जिसे आज का जागरूक समाज घृणा की दृष्टि से देखता है।

श्री बियाणीजी में इन दोनों ही प्रवृत्तियों का पूर्ण अभाव है। वे न तो मिलों के मालिक हैं, और न ही उनके पास कुबेर की-सी संपत्ति। वे हम आप जैसे ही साधारण श्रेणी के व्यक्ति हैं, और उन्होंने जो कुछ भी कमाया है वह किसी छल अथवा शोषण के आधार पर नहीं, प्रत्युत अपने कठोर परिश्रम के आधार पर कमाया है। प्रारम्भ में श्री बियाणीजी की आर्थिक स्थिति अत्यन्त कमज़ोर थी, परन्तु उन्होंने अपने परिश्रम तथा चातुर्य से 'राजस्थान प्रिंटिंग प्रेस' का निर्माण तथा संचालन किया। प्रारम्भ में आपको प्रेस की प्रगति की लिए दस-

दस बारह-बारह घण्टे कार्य करना पड़ा। कम्पोज़िंग से लेकर संचालक तक का कार्य आपने कई वर्षों तक स्वयं ही किया। आपकी लगन और ईमानदारी के कारण ही प्रेस प्रगति कर सका।

श्री बियाणीजी का व्यवहार, अपने कर्मचारियों के साथ, सदैव समानता का रहा है। उन्होंने अपने नीचे काम करने वालों को सदैव भाई की भाँति समझा है और आप हमेशा उनकी सुख-सुविधा का ध्यान रखते हैं। उनको समय पर तथा उचित वेतन प्राप्त हो इसका ध्यान आपको निरन्तर बना रहता है। उस समय भी, जबकि आप पुराने मध्य प्रदेश में वित्त मंत्री के पद पर आसीन थे, आपका अपने कर्मचारियों के प्रति व्यवहार अत्यन्त सौहार्दपूर्ण था। किसी को छोटा कहना या समझना आपके स्वभाव के सर्वथा प्रतिकूल है। आज भी आपके घर जाइए, तो आपको दो चार आपके पास काम करने वाले दिखाई देंगे। आपका उनके साथ जो व्यवहार है, उसको देखकर आपको आश्चर्य होगा। अपने कर्मचारियों को दिन में एक बार चाय पिलाना तथा नाश्ता आदि कराना आपका जैसे स्वभाव बन गया है। उन पर क्रोध करते हुए आप उन्हें कभी नहीं पायेंगे। ये सब बातें किसी भी पूंजीपति के स्वभाव के प्रतिकूल होती है। अतः बियाणीजी को पूंजीपति कहना 'पूंजीपति' शब्द का उपहास उड़ाने से अधिक कुछ नहीं।

श्री बियाणीजी एक लेखक हैं, और अनुभूति और विवेक उनका खाद्य है। उनका हृदय अत्यन्त कोमल है तथा उन्हें मानव मात्र से अत्यधिक प्यार एवं सहानुभूति है। अपनी लेखनी से आपने अपनी पुस्तक 'कल्पना कानन' में पूंजी-पतियों का उपहास उड़ाया है तथा उनकी शोषण नीति पर कठोर प्रहार किया है। आपने सदैव शोषितों एवं निर्बलों का पक्ष लिया है तथा उन्हें सहारा दिया है। किसी भी पीड़ित को देखकर आपकी आँखें छलछलाने लगती हैं, आपकी रागात्मक वृत्ति जागृत हो उठती है। ऐसे व्यक्ति को क्या पूँजीपति कहा जा सकता है ? वास्तव में पूंजीपति की मनोवृत्ति से आपको उतनी ही घृणा है, जितनी कि एक शोषित श्रमिक को होती है। यदि आप पूंजीवादी होते, तो आपका स्वभाव दूसरे ही प्रकार का होता तथा आपके पास भी अभी तक करोड़ों की सम्पत्ति होती। अवश्य ही आपका सम्बन्ध देश के अनेकों उद्योगपतियों के साथ रहा है तथा आज भी है। आपकी पुत्री का पाणिग्रहण भी श्री घन-श्यामदास बिड़ला के सुपुत्र के साथ हुआ है। परन्तु इन संबंधों के रहते हुए भी, श्री बियाणीजी ने सदैव अपने को पूंजीपतियों की मनोवृत्ति से बचाया है।

यदि वे चाहते, तो इन सम्बन्धों के आधार पर स्वयं भी भारत के एक बहुत बड़े उद्योगपति बन सकते थे, परन्तु आपने ऐसा नहीं किया। जो कुछ भी आप अपने अथक परिश्रम तथा न्यायपूर्ण ढंग से कमा सके, उसी पर आपने जीवन में सन्तोष किया। आपका पूंजीपतियों से केवल सम्बन्ध भर रहा, उनके कार्य में आपको कभी भी रुचि नहीं रही। इसके विपरीत आप पूंजीपतियों को शंका की दृष्टि से देखते रहे। अपनी लेखनी से आपने उनकी आलोचना भी की, परन्तु शांत प्रकृति के व्यक्ति होने के कारण आप उग्र रूप से उनका खुलकर विरोध नहीं कर सके। यह उनकी कमज़ोरी अवश्य कही जा सकती है, पर इस कमज़ोरी के आधार पर यह कभी नहीं स्वीकार किया जा सकता कि आप पूंजीवादी प्रथा में विश्वास करते हैं। मार्क्स के सहयोगी एँजेल्स (Engels) भी तो धनी व्यक्ति थे, परन्तु उन्हें कोई भी पूंजीपति कहने को तैयार नहीं। श्री बियाणीजी तो एँजेल्स की भाँति धनी व्यक्ति भी नहीं हैं, फिर उन्हें पूंजीवादी कैसे कहा जा सकता है ? वास्तव में किसी भी व्यक्ति को पूंजीपति उसकी मनोवृत्ति तथा कार्यपद्धति को ही देखकर कहा जा सकता है। केवल कुछ पूंजी के आधार पर किसी को पूंजीपति की संज्ञा देना अनुचित है। इस दृष्टि से बियाणीजी को पूंजीवादी नहीं कहा जा सकता। लेनिन के सहयोगी श्री एम. एन. राय (M. N. Roy) के साथ आपका अनेकों वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा तथा आप उनकी (श्री राय की) समय-समय पर धन से सहायता भी करते रहे। सर्वविदित है कि श्री राय साम्यवादी (Communist) थे, भले ही उनका साम्यवाद अपने ढंग का क्यों न रहा हो। क्या एक साम्यवादी का किसी शोषणकारी पूंजीपति के साथ घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित हो सकता है ? यदि नहीं, तो फिर उनका सम्बन्ध श्री बियाणीजी के साथ कैसे स्थापित हो सका ? इसका एकमात्र उत्तर यही है कि श्री बियाणीजी कभी भी मनोवृत्ति तथा कार्य से पूंजीपति नहीं बन सके।

श्री बियाणीजी के हृदय में शोषितों के प्रति सहानुभूति तथा मानव मात्र के लिए ममता का सागर लहराता है। उनके घर पर जो कोई भी उनसे सहायता माँगने आता है, वह चाहे किसी भी धर्म, जाति या विश्वास को मानने वाला क्यों न हो, कभी भी निराश नहीं लौटता। धन का संग्रह करना वे नहीं जानते, पर उसका उचित उपयोग करना वे जानते हैं। धन का उपयोग वे सदैव दूसरों की भलाई के लिए करते देखे जा सकते हैं। मानव की तन-मन-धन से सेवा करने के लिए वे सदैव लालायित रहते हैं। उनकी मान्यता है कि लोगों के विवेक को

जागृत करके उन्हें अपने धन का सदुपयोग करना सिखाया जा सकता है तथा पूंजीपति की धनसंग्रह तथा शोषण करने की मनोवृत्ति को बदला जा सकता है। ऐसे विचारों के व्यक्ति को चाहे और कुछ भले ही कहा जा सके, पर उसे पूंजीपति अथवा पूंजीवादी कभी नहीं कहा जा सकता।

श्री बियाणीजी को मार्क्सवादी अथवा समाजवादी भी नहीं कहा जा सकता। मार्क्सवादी होने के लिए मार्क्स के सिद्धान्तों में विश्वास होना आवश्यक है। बियाणीजी को न तो मार्क्स के सभी सिद्धान्तों में विश्वास है और न ही उसकी कार्य-प्रणाली में। मार्क्स को वे एक युगनेता अवश्य मानते हैं तथा उसके मानवतावाद के प्रति आपका आकर्षण अवश्य है, पर इनसे उनका मार्क्सवादी दृष्टिकोण सिद्ध नहीं किया जा सकता। मार्क्स के "State will wither away" सिद्धान्त में आपका तनिक भी विश्वास नहीं, और न ही आप मार्क्स के वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त में आस्था रखते हैं। रक्तपात और संघर्ष में आपका विश्वास नहीं। आपका मार्ग शान्ति, सद्भाव और विवेक का मार्ग है। ईसाई समाजवादियों (Christian Socialists) की भाँति आप विवेक और हृदय परिवर्तन के आधार पर पूंजीपतियों के सुधार करने की बात कहते हैं।

मार्क्स द्वारा दी गई इतिहास की आर्थिक व्याख्या के भी आप क़ायल नहीं। इतिहास की व्याख्या बियाणीजी की अपनी है। आप इतिहास के निर्माण में आर्थिक तत्वों की प्रधानता को स्वीकार नहीं करते। आपके अनुसार इतिहास का निर्माण, आर्थिक तत्वों में संघर्ष के द्वारा न होकर, भावना और बुद्धि तथा विवेक में संघर्ष के द्वारा होता है। आपके मतानुसार, भावना यदि बलवान निकले तो विचार की शक्ति निर्बल रहती है और इन्द्रियों के संतोष में ही मानव का जीवन व्यतीत हो जाता है। विचार-शक्ति यदि बलवान हो, तब वह भावना पर अपना आधिपत्य निर्माण कर लेती है और इन्द्रियों के सुखों से ऊपर उठकर आवश्यकतानुसार मनुष्य को त्याग की ओर प्रेरित करती है तथा उसे मानसिक सुख का अनुभव कराती है। यह भावना और बुद्धि का संघर्षमय क्षेत्र होता है। बुद्धि के विकास के साथ मानव का विकास होता है, और मानव के इतिहास के साथ समाज का उत्थान होता है। अतः बियाणीजी के मत में हमारा इतिहास बुद्धि के विकास का इतिहास है। इस प्रकार आपकी इतिहास की व्याख्या बहुत कुछ अपने में नवीन एवं मौलिक है।

क्योंकि बियाणीजी बुद्धि और विवेक को प्रधानता देते हैं, अतः वे मार्क्स के इस तर्क से भी सहमत नहीं कि व्यक्ति के विचारों का निर्माण उसकी आर्थिक

परिस्थितियों (जिनमें कि वह रहता है) से होता है। मार्क्स और लेनिन के इस कथन की पुष्टि स्वयं उनके तथा एंजेल्स के जीवन से भी नहीं होती। फिर बियाणीजी तो विवेकवादी हैं। अतः वे विचारों के निर्माण में आर्थिक परिस्थितियों का अधिक हाथ न मानकर बुद्धि और विवेक को प्रधान मानते हैं। बियाणीजी की मान्यता है कि बुद्धि और विवेक परिस्थितियों से अधिक शक्तिशाली होते हैं। बुद्धि के बल पर मनुष्य अपनी परिस्थितियों पर विजय पा सकता है तथा अपने जीवन की गति को बदलने में सफल हो सकता है। बुद्धि के बल पर ही मनुष्य नवीन आविष्कार करता है तथा नए-नए सिद्धान्तों का प्रतिपादन करता है। वास्तव में, मार्क्स ने मनुष्य को आर्थिक परिस्थितियों का दास मान लिया है तथा उसके सिद्धान्त में अकर्मण्यता की बू आती है। बियाणीजी एक कर्मठ व्यक्ति हैं तथा वे किसी भी ऐसे सिद्धान्त के क़ायल नहीं जो मनुष्य को परिस्थितियों का दास समझे।

जैसा कि कहा जा चुका है, बियाणीजी राज्य के लोप होने में भी विश्वास नहीं रखते। वे राज्य के बने रहने के पक्ष में हैं। उनका विश्वास तो यह है कि मनुष्य में विवेक के विकास के साथ राज्य की व्यवस्था का भी सही ढंग से विकास होगा तथा राज्य विश्व बंधुत्व की भावना को बलवती करने में सहायक होगा, और शनैः-शनैः पूंजीवादी और साम्यवादी संघर्ष लोप हो जाएगा। कहना उचित ही होगा कि बियाणीजी का यह विश्वदर्शन अपने में नवीनता रखता है, भले ही हम में से बहुत से इससे सहमत न हों। इस प्रकार के दर्शन को मार्क्सवादी दर्शन कदापि नहीं कहा जा सकता, और न ही बियाणीजी को मार्क्स का अनुयायी।

श्री बियाणीजी को समाजवादी भी नहीं कहा जा सकता। राजकीय समाजवाद (State Socialism) राज्य को अत्यधिक प्रधानता देता है। यह राज्य को एक ऐसी श्रेष्ठ संस्था के रूप में स्वीकार करता है जो अपने प्रयासों द्वारा अपने सदस्यों का अधिक से अधिक लाभ कर सकता है। क्योंकि बियाणीजी भी सामूहिक प्रयासों तथा राज्य की उपादेयता में विश्वास करते हैं, अतः वे राजकीय समाजवाद के सैद्धान्तिक पक्ष को तो स्वीकार करते दिखाई पड़ते हैं, परन्तु व्यवहार में इसके द्वारा जो नौकरशाही को बढ़ावा मिलता है उससे आप तनिक भी सहमत नहीं। श्री बियाणीजी, राज्य के महत्व को स्वीकार करते हुए भी, व्यक्ति-स्वातन्त्र्य को अत्यधिक प्रधानता देते हैं। अतः वे यह कभी सहन नहीं कर सकते कि राजकीय हस्तक्षेप अधिकाधिक परिवर्धित हो। समाजवाद में नौकरशाही की भावना की वे भर्त्सना करते हैं तथा इसे व्यक्तित्व के

नैतिक जीवन के लिए घातक मानते हैं। आपका कहना है कि राज्य के अत्यधिक हस्तक्षेप द्वारा व्यक्तियों का जीवन निरीह तथा सैनिकों जैसा शुष्क हो जाएगा। मनुष्य का रूप मशीन के उस पुर्ज़े की भाँति हो जाएगा जिसका संचालन केवल राज्य की इच्छा पर ही निर्भर होगा। मनुष्य की अपनी इच्छा समाप्त हो जाएगी, और उसे अपनी इच्छा के विरुद्ध भी कार्य करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। राज्य में केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति के वे सर्वथा प्रतिकूल हैं। श्री बियाणीजी राज्य की महत्ता को स्वीकार करते हुए भी, उसके संघात्मक (federalistic) स्वरूप के क़ायल हैं। बियाणीजी के ये विचार बहुत कुछ अंग्रेज, राजनीति के विचारक, प्रो. हेरेल्ड जे० लास्की (Harold J. Laski) के विचारों से मेल खाते हैं। पर, जबकि लास्की के विचारों में एकरूपता का अभाव है, आपके विचार सदैव एक जैसे रहे हैं तथा स्पष्ट हैं। यदि आप एक ओर सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने के हेतु तथा मनुष्य की आर्थिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए राज्य को आवश्यक मानते हैं, तो दूसरी ओर मनुष्य के बौद्धिक एवं आत्मिक विकास के लिए उचित मात्रा में मनुष्य की स्वतन्त्रता पर बल देते हैं। रसेल (Bertrand Russell) की भाँति आपका विश्वास है कि अत्यधिक राज्य-नियन्त्रण मनुष्य के व्यक्तित्व को कुंठित कर देगा तथा अत्यधिक स्वतन्त्रता समाज को विघटित कर देगी। इस प्रकार बियाणीजी राज्य की शक्ति तथा मनुष्य की स्वतन्त्रता दोनों पर उचित नियन्त्रण रखने के पक्ष में हैं।

वास्तव में बियाणीजी के विचारों को किसी भी 'वाद' के अन्तर्गत स्पष्ट रूप से नहीं रखा जा सकता। स्पष्ट रूप से न तो वे किसी 'वाद' का समर्थन ही करते हैं और न किसी का विरोध। वे बुद्धिवादी हैं, और उनका वास्तविक 'वाद' (यदि इसे 'वाद' की संज्ञा प्रदान की जा सकती है तो) विवेकवाद है। वे वादों के झमेले में पड़ने के विरुद्ध हैं, और उनका अपना कोई वाद नहीं है। वे हर प्रश्न को बौद्धिक तर्क पर कसने के पक्ष में हैं। उनके सभी विचार एवं तर्क बुद्धिपरक होते हैं। उनके हृदय में मनुष्य-मात्र के लिए प्रेम का सागर लहराता है, और वे सदैव विश्व शान्ति तथा विश्व प्रगति की कामना करते हैं। उनका विश्वास है कि यदि हम सभी विवेकपूर्वक कार्य करने लगें तो संसार से दरिद्रता, भुखमरी, शोषण तथा युद्ध की समाप्ति हो जाए और मानव समाज का स्वरूप ही बदल जाए। इस प्रकार के विचारों एवं आदर्शों को धारण करने वाले श्री बियाणीजी को केवल विवेकवादी और मानवतावादी कहना ही श्रेष्ठ होगा। अन्य कुछ नहीं!

★

जनमानस के राजहंस

लेखक

रामकृष्ण जाजू—सोलापुर

(मारवाड़ी समाज के कार्यकर्ता एवं लेखक।)

श्री बियाणीजी समाज-सेवा, देश-सेवा तथा साहित्य-सेवा में सदा अग्रणी रहे हैं। इतना ही नहीं हजारों देश-सेवक भी आपने तैयार किए हैं। भाईजी में अद्भुत संगठन-शक्ति है। इसी कारण आप जनमानस में राजहंस के समान विहार करते हैं।

आपकी मृदुवाणी, विनम्र स्वभाव तथा सौम्य व्यवहार का प्रथम दर्शन में ही विलक्षण प्रभाव पड़ता है। छोटा अपना छोटापन तथा बड़ा आपका बड़प्पन जैसे भूल जाता है। स्वागत-सत्कार में पूर्ण संयम तथा तत्परता दिखाना तो आपके व्यक्तित्व का अंग है। भाईजी के मुख-मण्डल पर मुस्कराहट सदा खेलती मिलती है।

नागपुर कांग्रेस अधिवेशन के समय आपने राजस्थानी सेवा संघ के माध्यम से उल्लेखनीय सेवाएँ की थीं। सन् १९२१ में खापरखेड़ा में प्रान्तीय माहेश्वरी सभा का आयोजन किया गया था, उस अवसर पर भाईजी के ओजस्वी भाषण का इतना गम्भीर प्रभाव पड़ा कि श्रोता मन्त्रमुग्ध हो गए थे। उसकी स्मृति आज भी बड़ी सुखद है।

माहेश्वरी प्रान्तीय सभा का ९वां अधिवेशन इगतपुरी में मेरी अध्यक्षता में हुआ था। उस अवसर पर अनेक वक्ताओं ने भाईजी पर व्यक्तिगत आक्षेप किए थे, किन्तु आश्चर्य है अपने १।। घण्टे के भाषण में श्री बियाणीजी ने एक शब्द भी व्यक्तिगत आक्षेप के नहीं कहे। बड़े संयमित ढंग से अपने तीखे विचारों की एक-एक बूँद श्रोताओं को पिलाते गए और सभी ने बिना मीन-मेख के उनके तथ्यों को स्वीकार किया।

भाईजी जनता के मनोविज्ञान के सच्चे पारखी हैं। किस समय क्या कहा जाए, किस ढंग से विचारों की लड़ी पिरोकर जनता के गले उतारी जाए, कैसे

वह जनता के गले का कण्ठहार बनकर उसकी शोभा द्विगुणित करेगा, इसका भाईजी को पूर्ण ज्ञान है। तभी तो विदर्भ की जनता अनायास ही उनकी एक गर्जना पर चुपचाप उनका अनुसरण करती रही। वे सदा विषम परिस्थितियों से जूझते रहे और जनता के हृदय पर एकछत्र राज्य करते रहे। ★

हृदय के धनी और व्यवहार के बादशाह

लेखक
डा० खूबचन्द बघेल—रायपुर
(भूतपूर्व विधानसभा सदस्य, पूर्व म० प्र०; लोकसभा सदस्य; सामाजिक कार्यकर्ता।)

मेरी नज़र में बियाणीजी हृदय के धनी और व्यवहार के बादशाह हैं।

मनुष्य के जीवन में उतार-चढ़ाव तो आते ही रहते हैं, पर जिस दिलेरी और बहादुरी से उन्होंने परिस्थितियों का मुकाबिला किया है वह प्रशंसनीय है। श्री बियाणीजी ने वक्त पड़ने पर अपने शत्रुओं की भी उदारता से मदद की है और यह गुण बहुत कम नेताओं में देखने में आता है।

मैं उनके पक्ष का साक्षी और विपक्ष का विरोधी भी रह चुका हूँ, लेकिन मैंने कभी यह नहीं पाया कि उनके प्रेम व्यवहार में कमी आई हो। मैदान में लड़ लिया और घर में एक भाई के स्नेह में बाँध लिया। उनका देश प्रेम, साहित्य-ज्ञान, कार्यकर्ताओं से कौटुम्बिक स्नेह और उदारता कभी भी भुलाई नहीं जा सकती।

मेरा उनका सम्बन्ध सदैव मधुर और प्रेमल रहा है।

बियाणीजी की सज्जनता

लेखक
काका कालेलकर
(राज्यसभा के सदस्य; प्रसिद्ध लेखक।)

जिनकी सज्जनता, देशभक्ति ग्रौर निस्पृहता के बारे में मेरे मन में विशेष ग्रादर है, ऐसे व्यक्तियों में श्री बियाणीजी का स्थान है ग्रौर वह ऊँचा है।

जेल में हम साथ थे। तब तो उनसे नज़दीक का परिचय हुग्रा। उसके सुखद संस्मरण मेरे चित्त में संग्रहीत है। उनके जैसे ग्रादरणीय व्यक्ति का समादर हो रहा है यह खुशी की बात है। उसमें शरीक होने का मुझे सुग्रवसर मिला है, यह प्रसन्नता की बात है। ★

बियाणीजी की कार्य-पद्धति

लेखिका

सौ० तारा मशरूवाला—अकोला

(संचालिका, कस्तूरबा केन्द्र-माधान; सामाजिक कार्यकर्ती।)

पूज्य बियाणीजी का और हमारे परिवार का सम्बन्ध बहुत निकट का है। मैंने आपके नेतृत्व में ८-१० वर्ष कांग्रेस का कार्य भी किया है। यद्यपि हमारे विचारों में कुछ मूलभूत भेद था, और मैं बियाणीजी से उमर में काफ़ी छोटी थी, तथापि हमारे मध्य कोई खास संघर्ष नहीं हुआ। इतना ही नहीं, वरन् आप मुझे सदैव अपना समझकर ही काम लेते थे। इस बात का मुझे सदैव कृतज्ञता-पूर्वक स्मरण रहता है। ★

प्रेरक एवं स्पृहणीय नेता

लेखक
ज़वाहरलाल मूणोत–अमरावती
(जैन समाज के कार्यकर्ता एवं व्यवसायी।)

श्री भाईजी (जो विदर्भ में उनके लिए सर्वप्रिय सम्बोधन रहा है) मेरे लिए मित्र के बजाय प्रेरक और स्पृहणीय नेता रहे हैं। विदर्भ का राजस्थानी समाज तो उनका विशेष रूप से ऋणी है। सामाजिक सुधारों की जो लहर सारे देश में पिछले ३-४ दशकों पूर्व बही थी, इस क्षेत्र में, राजस्थानी समाज के लिए, उसका प्रवाह भाईजी के अगुवापन से ही फैला था और अनेक कर्मठ, आदर्शवादी और ध्येय-निष्ठ नर-नारियों का सामाजिक व राजकीय जीवन में प्रवेश भाईजी के ही श्लाघ्य उत्साह और प्रोत्साहन से सम्भव हो सका था।

मेरा विश्वास है, आपका प्रकाशन श्री बियाणीजी के अभिनन्दन के माध्यम से भारतीय जन-जीवन के सामाजिक, राजनीतिक एवं तात्विक इतिहास के उन दशकों से परिचित कराएगा, जब भारत के राजनीतिज्ञ मूलतः समाज के सर्वांगीण नेता होते थे—जब वे समाज की नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक-सारी चेतनाओं के द्वन्द का भार वहन करते थे और राजनैतिक जागरण सार्वभौमिक पुनर्जागरण का पर्याय होता था। ★

बियाणीजी का स्थायी युवकत्व

लेखक
दुर्गाप्रसाद सराफ—नागपुर
(खदान मालिक; प्रसिद्ध व्यवसायी एवं सामाजिक कार्यकर्ता।)

श्री ब्रजलालजी बियाणी जीवन में एक युवा की लगन से सदा कार्यरत रहे हैं और उम्र उनकी लगन और कार्य-निष्ठा पर नियन्त्रण लगाने में कभी सफल नहीं हुई। विदर्भ अथवा भूतपूर्व मध्यप्रदेश क्षेत्र में उनकी सेवाएँ इतनी विविध और विख्यात हैं कि उसकी सहसा गणना नहीं हो सकती। उनका मूल्यांकन तो और कठिन है। उनकी कार्य-शक्ति, व्यापक दृष्टि, बुद्धिमत्ता और मधुरता की हर किसी पर छाप पड़ी है, और उनका नाम इस क्षेत्र के सार्वजनिक जीवन में गूँजता रहा है। नागपुर में विदर्भ (भूतपूर्व मध्य प्रदेश) हिन्दी साहित्य सम्मेलन का भवन, जिसके अनुष्ठान में हाथ लगाने का मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ, उन्हीं की प्रेरणा का सुफल है। ★

सादगी और आतिथ्य के प्रतीक

लेखक
मोतीलाल तापड़िया—बम्बई
(मिल मालिक एवं प्रसिद्ध व्यवसायी; सामाजिक कार्यकर्ता ।)

यों तो श्री बियाणीजी के विषय में कई वर्षों से मैं बहुत कुछ सुन रहा था, लेकिन २६ वर्ष पूर्व सन् १९३९ में जब कानपुर में अखिल भारतीय मारवाड़ी सम्मेलन का आयोजन हुआ तो श्री बियाणीजी से मिलने का प्रथम अवसर मुझे मिला। उनके व्यक्तित्व से मैं काफ़ी प्रभावित हुआ। तब से, जब-तब उनसे मिलने का सुअवसर मिलता रहता है। निरन्तर मेरा सम्बन्ध उनसे घनिष्ट होता गया। मैं जब भी उनसे मिलता हूँ, मुझे उनमें महानता दिखती है। समाज-सेवा और देश-सेवा तो उनका जीवन है ही, जैसा कि हम वर्षों से देख रहे हैं। समीप से, मैंने उनको मधुरभाषी, आत्मीय और व्यावहारिक भी पाया। इस विषय में एक घटना उल्लेखनीय है। एक बार मैं कलकत्ता से बम्बई जा रहा था। श्री बियाणीजी को अकोला स्टेशन पर पाकर मुझे काफ़ी विस्मय हुआ। मेरा एक छोटा-सा काम, जो कि उनका कोई भी कर्मचारी कर सकता था, उसके लिए स्वयं दौड़े आए। इस तरह मुझे श्री बियाणीजी की सादगी और आतिथ्य का परिचय हुआ।

★

सामाजिक एवं राजनैतिक नेता

लेखक

बाबूलाल मालू–इन्दौर

(ग्रन्थ-समिति के सदस्य एवं सामाजिक कार्यकर्ता ।)

आदरणीय बियाणीजी मध्यप्रदेश, बरार के ही नहीं, अपितु सारे भारतवर्ष के महान राजनैतिक एवं सामाजिक नेता हैं । देश और समाज के लिए उनका बलिदान एवं आदर्श अनुकरणीय है । बियाणीजी ने देश के लिए जो कष्ट सहे हैं तथा भारतवर्ष को आज़ादी दिलवाने में जो हिस्सा लिया, वह इतिहास में स्वर्ण-अक्षरों से लिखा जाएगा । बियाणीजी ने राजनैतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में सैकड़ों की संख्या में राज्य एवं समाज के नेताओं को जन्म दिया, जो उनके मार्ग-दर्शन में आगे बढ़े, और आज तो महाराष्ट्र राज्य में उनके कई शिष्य मंत्री पदों पर विराजमान हैं । बियाणीजी देश के कोने-कोने में आदर एवं श्रद्धा की दृष्टि से देखे जाते हैं । ★

बियाणी युग

लेखक
श्रीकरण शारदा, बी० ए०, एल-एल० बी०–अजमेर
(एडवोकेट; सम्पादक, 'परोपकारी'–अजमेर; आर्य समाज की संस्थाओं के संचालक।)

यों तो श्री बियाणीजी से मेरा पारिवारिक सम्बन्ध है, परन्तु उन्होंने सार्वजनिक जीवन में जो कार्य किये हैं, उनसे मेरा स्वयं का जीवन भी निरन्तर प्रभावित रहा है। बियाणीजी विदर्भ और मध्य प्रदेश की राजनीति पर एक युग तक छाये रहे, परन्तु वे सत्ता के मोह में वशीभूत कभी नहीं रहे। उनकी जो मान्यताएं रही हैं, उन पर वे आज भी चट्टान की तरह अडिग हैं; वे टूट जाना पसन्द करते हैं, परन्तु उन्होंने झुकना कभी भी पसन्द नहीं किया। महात्मा गाँधीजी से आपके घनिष्ठ सम्बन्ध रहे हैं और अपने राजनैतिक जीवन में उन्होंने गाँधीजी के दर्शन को अपनाया।

केवल राजनीति के क्षेत्र में ही नहीं, अपितु समाज सुधारक के रूप में भी उन्होंने महान कार्य किये हैं। बियाणीजी अ० भा० मारवाड़ी सम्मेलन तथा समस्त मारवाड़ी समाज के लिये प्रेरणा के स्रोत रहे हैं तथा जातीय सुधार के क्षेत्र में माहेश्वरी समाज को नई रोशनी देने हेतु उन्होंने उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

अहिन्दी प्रान्त में रहते हुए भी उन्होंने हिन्दी भाषा की महान सेवाएँ की हैं, और हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन कराने हेतु उन्होंने टण्डनजी के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर अथक प्रयास किए।

आप एक कुशल वक्ता, प्रखर लेखक और संगठक के रूप में देश भर में विख्यात हैं। मैं उनके पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ एवं दिर्घायु की कामना करता हूँ। ★

सर्वतोमुखी प्रतिभा

लेखक
मोहनलाल सुखाड़िया—जयपुर
(मुख्य-मंत्री, राजस्थान।)

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि श्री ब्रजलालजी बियाणी के इकहत्तरवें जन्म-दिवस के अवसर पर एक अभिनन्दन-समारोह का आयोजन कर उन्हें एक ग्रंथ "बियाणीजी : मित्रों की नज़र में" भेंट किया जा रहा है। बियाणीजी सर्वतोमुखी प्रतिभा वाले व्यक्ति हैं, जिनका सारा जीवन देश की सेवा में ही बीता है। इस अवसर पर मैं उनके दीर्घायु होने की कामना करता हूँ और आपके समारोह की सफलता चाहता हूँ। ★

शत वन्दन !

रचयिता
रामेश्वर दयाल दुबे—वर्धा
(प्रचार मंत्री, राष्ट्रभाषा समिति; कवि एवं लेखक ।)

वरण किया जिसने लघुता को
उस महानता को शत वन्दन !

हिम गिरि श्रृंग छोड़कर जिसने
मिट्टी से नित नाता जोड़ा ।
गाँव गाँव में गीत गुँजाने
गिरि-ममता का बन्धन तोड़ा ।।
सुरसरि के उस शुचि-प्रवाह को
है मेरा शत-शत अभिनन्दन !

तन मिट्टी का, स्नेह पूर्ण जो
पहने लघु किरणों की माला ।

बियाणीजी : मित्रों की नज़र में

भ्रान्त पथिक को ग्रामंत्रण दे
फैलाता ग्रालोक निराला ।।
परहित निरत जल रहा तिल-तिल
उस प्रदीप को शत-शत वन्दन !

उर विदीर्ण स्वाँसों में ज्वाला
तृषा-तृप्ति में जल की दूरी ।
धूल उड़ रही जिसके मुख पर
उस मरु की कितनी मजबूरी ।।
रिमझिम के स्वर में जो उतरे
उस घन को मेरा ग्रभिनन्दन !
जिसकी ममता भरी क्रोड़ ने
समता का संसार सजाया ।
दीन दलित पर द्रवित हुग्रा जो
पतित मनुज को गले लगाया ।।
मानवता के गौरीशंकर
को मेरा शत-शत ग्रभिनन्दन !
वरण किया जिसने लघुता को
उस महानता को शत वन्दन ! !

मृत्युंजय-यज्ञ

रचयिता

सतीशचन्द्र जैन, एम० ए०—इन्दौर

(ग्रन्थ-प्रकाशन समिति के सदस्य; सर्वोदय के सामाजिक कार्यकर्ता; वक्ता एवं लेखक ।)

★ ६ दिसम्बर १९६४—भाईजी की ७०वीं वर्षगाँठ । उनके द्वारा **मौत को चुनौती:—**

"मैंने जीवन में मौत से निरन्तर ६९ वर्ष तक संघर्ष किया है। मैं जब तक काम करने योग्य रहूँ मौत से लड़ता रहूँ। मैं काम करते-करते ही मरना चाहूँगा ।"

★ २३ दिसम्बर १९६४—**मौत से लड़ाई**

८ नवम्बर १९६३ के पहले आक्रमण के बाद पक्षाघात का दूसरा आक्रमण। शरीर के दाहिने भाग पर। जिह्वा पर विशेष परिणाम। अविराम युद्ध—युद्ध विराम—विरामहीन युद्ध।

☆ २२ फरवरी १९६५—**जिजीविषा**

इन्दौर से अकोला को प्रस्थान। भीगे गर्म हाथों और तरल चमकीली आँखों का सन्देश—"मैं दो महिने में लौट आऊँगा—और बोलना लेकर आऊँगा।"

★ ७ मई १९६५—**मौत पर विजय**

भाईजी अकोला से वापस लौटे। प्रातः ९ बजे टेलीफोन की घण्टी। भाईजी का पहला फोन मुझे। तुतलाते, नाचते अस्फुट बोल...."सतीश—मैं आ गया हूँ...देखो मैं बोल सकता हूँ... मैं दो महीने के पहिले आ गया।"

(और उसी समय उसी दिन बन गई यह कविता—मन में जो उमड़ी बरबस कागज़ पर उतरती चली गई।)

तुम पर रही कृपा वाणी की
...वरद पुत्र वाणी के!
जब जब मौके आए हैं
तुम बहुत बहुत बोले हो
नाहर समान गर्जे हो
भारत स्वतन्त्र करने को!

....वाणी पर पक्षाघात
अभिशाप लगा जग को
वज्रपात निर्झर पर
क्या विधि की विडम्बना थी!

नहीं!!

...था एक और वरदान
तुम्हारे पौरुष को आह्वान
संघर्ष व्यस्त जीवन को
एक और अवसर था
जो बिना लड़े रह जाता...

माना
पथ दुर्गम था....
पर यात्रा रोमांचक थी
(जैसा तुमने चाहा है)
कण्टकाकीर्ण राहों पर
साक्षात् मिलें सहने को
अनुभव कौतूहलमय...

चुप-चुप एकान्त क्षणों में
कितने जीवन्त विचार
तुम्हारे मित्र बन गए होंगे
कोलाहल से दूर
बेखबर बने चिन्तक से
तुम कितनी दूर चले हो

जग तुम्हें समझ न पाया
यह था जग का ही दोष
तैरे थे कितने भाव
तुम्हारी आँखों में
ज्ञात सभी हो जाता
यदि पढ़ पाता कोई....

....लिखा था
जब तक जिऊँगा
मौत से लड़ता रहूँगा
कर्तव्य नित करता रहूँगा

और तुम जीत गए !

कर दिया नाम
सार्थक अमृत पुत्रों का !
नहीं झुकाया शीश
और ना घुटने टिके
विपद स्वयं ही
पूँछ दबा कर भाग गई !

वे नर नाहर हैं
जो स्वगत किया करते हैं
स्वागत तूफानों का
झेला करते कष्टों को
फूलों से हँस-हँस कर
वे जीते हैं
जिनमें जीने की इच्छा अदम्य है
संघर्षों के लिए
सदा तत्पर रहते हैं....

पर हे वाणी के पुत्र !
अभिनन्दन की बेला में
एक विनय है
वेदना व्यथा अकुलाहट
माना तुम भरे-भरे रखे हो
उत्सुक हैं बहने को
तुतलाते बोलों से
वेदना अधीर यह व्याकुल
करुणा बन जाने दो
आत्मकथा यह
नहीं कहो वाणी से
वह स्याही में उतरेगी
तुम्हें लेखनी बुलाती है
इतिहास नया रचने को !

बियाणीजी का विचार प्रवाह

खण्ड–१

विश्व-विषयक मेरी कल्पना

अनादि काल से मनुष्य ने विश्व के सम्बन्ध में कल्पना की है। भिन्न-भिन्न समय में और भिन्न-भिन्न व्यक्तियों ने अपना विश्व-दर्शन दुनिया के सम्मुख रखा है। विज्ञान ने भी कुछ अंश में इस विषय में निश्चितता लाने का प्रयास किया है। पर अभी सफलता दूर है। मेरे ध्यान से विश्व का सही स्वरूप अभी तक किसी को मालूम नहीं है। आगे भी मालूम हो सकेगा, इसमें सन्देह है।

विश्व का स्वरूप कल्पना जगत में है, और इस कल्पना को हम सही मानकर जीवन व्यतीत करते हैं। अपनी अपनी कल्पना अपने अपने जीवन का आधार है, और हर व्यक्ति को कल्पना करने का पूरा अधिकार है। इस कल्पना को सत्य मानकर ही विश्व का अस्तित्व है, और हम विश्व को सत्य और काल्पनिक इन दो रूपों में देख सकते हैं। हर व्यक्ति के समान मुझे भी अपनी कल्पना के अनुसार इस विश्व की धारणा करने का अधिकार है, और वह इस प्रकार है:—

विश्व निर्माण

विश्व का किसने निर्माण किया और किस प्रकार किया, इसे निश्चित रूप में कहा नहीं जा सकता है, पर मेरी अपनी मान्यता है कि विश्व के मूल में कोई आधार-शक्ति है, इसकी कल्पना किए बिना कोई सहारा नहीं है।

०

विश्व का कार्य किन नियमों के आधार पर चलता है और उसका रूप क्या है, इसकी भिन्न भिन्न कल्पनाएँ हैं। पर मेरी धारणानुसार विश्व की मूल शक्ति एकरूपा है, पर उसके त्रिविध दर्शन निश्चित रूप से हो सकते हैं। विश्व के मूल में जो शक्ति है वह ज्ञानरूपा है और उस शक्ति का परिणाम आनन्द है। बिना शक्ति के कोई निर्माण नहीं हो सकता है और बिना ज्ञान के योग्य निर्माण नहीं होता है। इस निर्माण का परिणाम आनन्दरूपा है। जहाँ शक्ति

नहीं है, जहाँ ज्ञान नहीं है, उसका परिणाम आनन्ददायक नहीं है, वहाँ विश्व का सम्पूर्ण दर्शन असम्भव है।

विश्व का संचालन

विश्व का संचालन कुछ निश्चित नियमों के अनुसार होता है और विश्व निर्माता उन नियमों के आधीन विश्व को काम सौंपकर निश्चित है। उन नियमों में व्यतिक्रम किंचित् भी नहीं होता है; शायद उसकी अपनी शक्ति भी उन नियमों में परिवर्तन करने की नहीं है, या करता नहीं है। निर्माण करके यह शक्ति लोप-सी हो गई प्रतीत होती है। मूल शक्ति किसी का भला-बुरा नहीं करती है। सब के लिए वह समान है।

०

विश्व में विविधता है और भेद-भाव दिखाई देता है। यहाँ जड़ है, चेतन है, पशु-पक्षी हैं, मानव है। ज्यों ज्यों विकास होता है, त्यों त्यों भेद-भाव अधिक दृष्टिगोचर होते हैं। यही कारण है कि मानवों में भेदभाव की और विविधता की मात्रा अधिक है। पर यह सब विश्व नियमों के अनुसार है।

विश्व का स्थायित्व

विश्व जब से निर्माण हुआ है, तब से अखंड रूप से चल रहा है। अतः मूल शक्ति यदि स्थायी है तो विश्व भी स्थायी है। मूल शक्ति का कितना अंश विश्व निर्माण में लगा है या सर्व शक्ति लग गई है इसकी कल्पना कर सकना कठिन है। साथ ही आदि शक्ति का स्थान कहाँ है, यह भी कल्पना से परे है। विश्व के स्थायित्व में मूल शक्ति का दर्शन है।

विश्व परिवर्तन

विश्व स्थायी होने के साथ परिवर्तनशील भी है। विश्व का ज्ञानरूपा दर्शन विश्व के परिवर्तन में होता है, और साथ ही आनन्द से भी। ज्ञान और आनन्द दोनों एक साथ रहते हैं।

०

विश्व क्षण-क्षण बदलता है, उसमें ही उसका सौन्दर्य है, और निर्माता की कला है।

परिवर्तन का परिणाम

परिवर्तन शक्ति का परिणाम बुरा और भला है। भलाई निर्माण में दिखती

है और बुराई विनाश में। आदिशक्ति की निगाह में तो दोनों समान हैं। निर्माण और विनाश साथ साथ चलते हैं। पर मानव की दृष्टि में विनाश बुरा और निर्माण अच्छा है। पाप-पुण्य ये सब मानव की निगाह से हैं। मूल निगाह तो समान है।

०

विश्व की हरेक वस्तु चल है। हर कृति का निश्चित परिणाम होता है। कृति और प्रतिक्रिया साथ चलते हैं। तत्काल परिणाम का अवलोकन कभी कभी स्पष्ट दिखाई नहीं देता, यह मानव का अज्ञान है।

विश्व का अन्त

विश्व का कब निर्माण हुआ था और कब उसका अन्त होगा, यह कल्पनातीत बात है।

खण्ड—२

विश्व-शक्तियों का प्रवर्तन

(१) ईश्वर - विश्व

बीज रूपी ईश्वर का विकास या विस्तार विश्व-वृक्ष है। निर्गुण शक्ति का सगुण में रूपान्तर है। विश्व का अर्थ ही रूपान्तर है और है विविधता।

०

विश्व-वृक्ष विभिन्नतामय है। उसकी जड़ें हैं, तना है, डालियाँ हैं, पत्ते हैं, पुष्प हैं, फल हैं। जड़ों का रस समस्त वृक्ष का जीवनदाता है और उस रस का वृक्ष के जीवन में भिन्न-भिन्न परिणाम है।

०

विश्व की व्यापकता में जड़ है—चेतन है। निर्माण है—विनाश है। शक्तियों का संघर्ष है। सारा विश्व-वृक्ष एकता के आवरण से आच्छादित है, पर उस आवरण के अन्तर्गत विविधता का विकास है।

०

विश्व ईश्वरमय है पर ईश्वर विश्व नहीं। मछली सागर में है, वहीं जन्म लेती है और वहीं विलीन हो जाती है। मछली सागर नहीं, सागर का भिन्न स्वरूप है। विश्व शक्ति की व्यापकता विश्व निर्माण से अलिप्त है, पर है विश्व निर्माण में भी। मानव के जन्मकाल से यह पहेली है और उसका सर्वव्यापी निर्णय मानव को करना है। मानव उसी ओर जा रहा है। विश्व-वृक्ष का सर्व-श्रेष्ठ फल मानव है। उस फल में से पुनरपि विश्व-बीज का निर्माण मानव शक्ति का प्रयास है।

(२) सत्य - शक्ति

ईश्वर का विश्व-स्वरूप है—सत्य। सत्य की स्थायी अचल चट्टान पर विश्व-वृक्ष बद्धमूल है। सत्य की मूल शक्ति विविध रूपों में विश्व के समस्त क्षेत्रों में कार्य करती है। जड़—चेतन समस्त विश्व शक्तिरूपा है। सत्यरूपी शक्ति से संचालित है। जहाँ निर्माण शक्ति है, वहाँ विनाश शक्ति भी, और है शक्तियों का संघर्ष।

०

प्रेम में निर्माण का दर्शन है। मानव अपने निर्माण से प्रेम करता है। पशु-पक्षी अपने निर्माण से प्यार करते हैं। जड़ पदार्थ का एक कण दूसरे कण से आकर्षित है। शक्ति का अज्ञात अप्रकट प्रवाह सारे विश्व में व्याप्त है।

०

निर्माण के साथ विनाश का ताण्डव नृत्य भी है। चारों ओर विनाश का दृश्य है। परिवर्तन हर क्षण चला आ रहा है। छिपकली के लिए जन्तुओं का आहार है। बिल्ली के लिए अन्य छोटे जीवों का भोजन है। सिंह का शिकार सुन्दर हरिण का नाश है। मगर मछली को निगलता है। कुर्म जन्तुओं का विनाशक है। छोटे वृक्ष के नीचे बड़ा वृक्ष पनपता नहीं। मानव-समाज में मानव मानव का शोषण करता है, उसका विनाश भी करता है। विनाश शक्ति शोषण-मय है। परिणाम चाहे अप्रत्यक्ष हो चाहे प्रत्यक्ष। सबलों का जीवन निर्बलों पर आधारित है, और है विकसित।

विश्व की सत्यरूपा व्यवस्था में मानव ने न्यायरूपी नवशक्ति का निर्माण किया है। मानव की यह विशेषता है। पर सत्य स्थायी है, मानव का न्याय चल है। विभिन्न स्थानों में विभिन्न अवसरों पर न्याय का भिन्न-स्वरूप रहा है। न्याय की संपूर्ण रक्षा, जिस दिन न्याय और सत्य एकरूपा होंगे, तब ही होगी। सत्य अपनी शक्ति पर टिका हुआ है और न्याय को शक्ति के आधार की आवश्यकता है। सत्य क्रियात्मक शक्ति है। स्वयं प्रभावी है। न्याय स्वयं में निष्क्रिय है। किसी शक्ति के सहारे ही वह क्रियात्मक होता है। मानव का यह प्रयास हो कि जिससे सत्य और न्याय का सहअस्तित्व स्थापित हो सके।

(३) निर्माण-शक्ति

विश्व निर्माणमय है। चारों ओर निर्माण कार्य सतत चल रहा है। निर्माण शक्ति या निर्माण का कारण और निर्मित वस्तु अथवा निर्माण का फल इनका अभेद्य सम्बन्ध है। कारण का रूपान्तर कार्य है। निर्माण साधन है और निर्मित उससे अधिक मूल्यवान और प्रभावी बन जाता है। रूप-भिन्नता में शक्ति-भिन्नता है, और है, उपयोग-भिन्नता। यही विश्व-रहस्य है।

०

मूल से विकास अधिक मूल्यवान। वस्तु से उसका परिवर्तित रूप अधिक क़ीमती। मिट्टी से ईंट, ईंट से घर अधिक लाभदायक। कपास से कपड़ा अधिक मूल्यवान। स्वर्ण से गहने की कीमत अधिक। असंस्कृत हीरे से संस्कृत हीरा अधिक कीमती और सुन्दर। बीज से वृक्ष का अधिक महत्व और लाभ। कली से पुष्प, पुष्प से फल अधिक उपयोगी। चित्रकार से उसका चित्र अधिक सुन्दर। मूर्तिकार से उसकी कलामय कृति अधिक लावण्यमय और आकर्षक। गायक से उसका संगीत अधिक मनमोहक। नृत्यकार से उसका नृत्य अधिक चित्ताकर्षक। ईश्वर से विश्व अधिक कीमती। नारायण से नर अधिक महत्व का। नर इस विश्व-व्यवस्था को समझे, अपनी कीमत को जानकर उसकी हिफाजत करे, उसका मूल्य प्राप्त करे। निर्माण-शक्ति का दर्शन और उपयोग यही मानव की सफलता है।

(४) विनाश-शक्ति

विश्व का ध्येय निर्माण है। विनाश-शक्ति साधन है। निर्माण की नवीनता और सतत्ता स्थायी रखने के लिए विनाश-शक्ति का साधन स्वरूप उपयोग है। निर्माण में रूपान्तर का एक दर्शन है। विनाश में रूपान्तर का भिन्न स्वरूप। दोनों शक्तियों का सम-स्वरूप रूपान्तर क्षमता।

०

विश्व की मूलशक्ति अविनाशी है। विभिन्न रूपों में उसका दर्शन होता है। स्थिति का परिवर्तन होता है, पर समग्र शक्ति का माप अपरिवर्तनीय है। हर निर्मित वस्तु का नाश अवश्यंभावी है। बीज का नाश है, वृक्ष के रूप में।

फल का विनाश है पुनरपि बीज के रूप में। पुष्प का नाश है फल के रूप में या खाद के स्वरूप में। पत्तों का नाश है पतन में। जल-बिन्दु का नाश है वाष्प के रूप में, पुनरपि बरसता है वर्षा के रूप में। जिस-जिसका निर्माण है, उस सब का विलम्ब-अविलम्ब विनाश अवश्यंभावी है।

०

विनाश रूपान्तर है। निर्माण में सम्मिलित शक्तियाँ विनाश में विभक्त हो जाती है और अपने-अपने मूल रूपों में मिल जाती हैं। मूल से विविधता की ओर और विविधता से मूल की ओर यही विश्व का सतत चक्र है।

०

मानव का जन्म है तो उसका विनाश निश्चित है। जीवन प्रयास है। जीवन प्रकाश है। प्रकाश सायास और सप्रयत्न है। नृत्य अंधकार है, अनायास है। अन्त अवश्यंभावी है। अन्त अनाधीन है। जीवन का अभाव मृत्यु है। जीवन विकास प्रयास है, प्रयत्न है और शक्ति का प्रयोग। प्रयत्न में ही मानवता है। मानव-जीवन विश्व में परमेश्वर की सर्वश्रेष्ठ धरोहर है। अतः जीवन का जतन मानव का परमोच्च कर्तव्य है और है यही मानव जीवन की सफलता।

(५) शक्तियों का संघर्ष

समस्त विश्व शक्ति से संचालित है। एक ही शक्ति के विभिन्न रूपों में दर्शन है। वही शक्ति सूक्ष्म है, स्थूल है, मन्द है, तीव्र है। हर स्थिति में शक्ति का अस्तित्व है और है परस्पर संघर्ष। विशाल शक्ति स्वल्प शक्ति का विनाश कर देती है।

एक ही शक्ति के विशाल और स्वल्प रूप में संघर्ष है और विभिन्न शक्तियों में परस्पर शक्ति के अनुसार संघर्ष है। सूर्य का विशाल तेज, दीपों के तथा अन्य तेज को निस्तेज कर देता है। आँधी शान्त बहने वाली हवा पर विजय पा लेती है। दावाग्नि की विशालता साधारण अग्नि को स्वल्प कर देती है। नदी के विशाल पूर की तीव्रता उसकी धीमी गति को लुप्त कर देती है। विशाल ध्वनि अल्प ध्वनि को विनष्ट कर देती है। वीणा के मधुर संगीत को ढोल की

ध्वनि निस्तेज कर देती है। लहसन की तीव्र गंध गुलाब पुष्प की मोहक गंध को पराजित कर देती है।

०

आग पानी को जला देती है, यदि आग की शक्ति अधिक हो। पानी आग को बुझा देता है, यदि पानी की शक्ति प्रबल हो। शान्त जल को आँधी की शक्ति चलायमान कर देती है। मोती को पत्थर पीस डालता है। लोहा सोने को काट डालता है। हीरे की कठिनता सारी कठिनता को विनष्ट कर देती है। मानव की अहिंसा कभी हिंसा पर विजय पा जाती है। कभी हिंसा बलवान बन जाती है। मानव के करुणा, प्रेम आदि गुणों की शक्ति में और स्वार्थ, विद्वेष आदि गुणों में संघर्ष चलता है। गुण की शक्ति के अनुसार हार-जीत होती है। विश्व में सत्य-असत्य की शक्ति को शक्तियों के संघर्ष से ही मापा जा सकता है। अतः शक्ति-संग्रह या संचय और उसके ज्ञानमय उपयोग में ही मानव-जीवन की सफलता या विजय है।

खण्ड–३

विभिन्न विचार

शरीर और आत्मा

शरीर आत्मा का बन्दीवास है, कारागृह नहीं–वह उसका रक्षण या आवरण है और स्वयं क्षण-क्षण बदलता हुआ, विनाश की ओर जाता हुआ, वह आत्मा को स्थायी रखता है, बलवान बनाता है और अन्त में अपना विनाशकर आत्मा को अमरत्व देता है। जेलखाना भी बन्धन नहीं, विकास और स्वतन्त्रता का साधन है।

०

शारीरिक सुख की अपेक्षा मानसिक सन्तोष और आनन्द का जीवन में अधिक महत्व है।

●

हर योनि में सुख-दुःख है, प्रत्युत मानव योनि में दुःख की मात्रा अधिक प्रतीत होती है, फिर अन्य योनियों का भय क्यों ?

वर्तमान का सर्वोत्तम उपयोग ही हर योनि का धर्म है।

०

विश्व-नृत्य-अवलोकन में ही विश्वानन्द है। यही मानवी जीवन का सार और कार्य है। नृत्य के पीछे जो नर्तकी है, उसे नृत्य की गति की हर रेखा में देखता रहूँ और नृत्य का आनन्द लूटता रहूँ। नृत्य में नर्तकी का अनुमान है, पर नर्तकी में नृत्य अदृश्य है। दृश्य नृत्य और अनुमानिक नर्तकी—यही विश्व-दर्शन है।

०

....कौनसा जीवन श्रेष्ठ है ? संकटों से जूझते नाचता, अपने चारों ओर के वातावरण को नचाता या संकटों से अलिप्त हो शान्त जीवन बिताना ? संकट-हीन शान्ति में सौन्दर्य नहीं। सौन्दर्य के अभाव में सच्चा जीवन नहीं।

समस्त अन्यायों का नाश हमारा कर्तव्य है। मानवोचित पवित्र भावना की यही प्रथम आवाज़ हैं।

०

विश्व सृष्टि में नर्क है या नहीं इसका मुझे पता नहीं, पर मानव सृष्टि में भारत के आज के बन्दीगृह नर्कालय है।

०

अहिंसा के मार्ग से यदि स्वराज्य प्राप्त करना है तो जेलखानों का सुधार अत्यन्त जरूरी है।

०

जिस दिन मानव ज्ञान के द्वारा अपने रूप को पहचानेगा और अत्याचार को स्वीकार करने की अपेक्षा निर्भयता से मृत्यु का वरण करना अधिक पसन्द करेगा, उस दिन विश्व में नए मानव का निर्माण होगा। कार्य कठिन हैं, लम्बा है, पर मानव समाज को पहुँचना है, उस लक्ष्य तक।

ईश्वर

सत्य ईश्वर है, ईश्वर शक्ति है। शक्ति की विजय में सत्य की जय है। संसार में सदा शक्ति की जय होती आई है, और शक्ति के नानाविध रूप हैं। घड़े में शक्ति थी तब तक उसमें जल बन्द रहता था। घड़े की धारणा-शक्ति से जल की प्रसरण-शक्ति अधिक होते ही घड़ा हार गया। उसका अन्त हो गया।

०

ईश्वर ने इस सृष्टि का निर्माण किया, अतः उसके अस्तित्व और शक्ति का सब को ध्यान है। प्रलय के साथ इस ज्ञान का भी प्रलय होगा। जब तक मनुष्य पत्थर में परमेश्वर पाता है, उसकी पूजा करता है तब तक मानव में उसे ईश्वर नहीं दिखेगा और न मानवता की ही वह सच्ची आराधना करेगा। पत्थर की पूजा के अन्त में ही मानवता की पूजा का आरम्भ होगा। उसी दिन पृथ्वी पर स्वर्ग की स्थापना की नींव डाली जाएगी।

आकाश नयनों की सृष्टि है, परमेश्वर मन की अपरिमित सीमा है। जिसका आदि नहीं, अन्त नहीं, उसका अवलोकन कैसा ?

ईश्वर दर्शन में और मरीचिका अवलोकन में मुझे साम्यता दिखाई देती है। मैं तृष्णा के पीछे दौड़ूँ या व्यवहार में व्यस्त रहकर साक्षात् जल का पान करूं ?

शक्ति

सर्वश्रेष्ठ प्रणाली है "शक्ति का प्रयोग", चाहे वह हिंसा के मार्ग से हो या अहिंसा के। इस प्रणाली का हर स्थान, हर समय और हर अवस्था में उपयोग कठिन है। जीवन के मुख्य लक्ष्य के लिए इस प्रणाली की श्रेष्ठता है। पर हर बात के लिए उसका उपयोग अव्यवहार्य हो जाएगा। इसकी श्रेष्ठता में यह न्यूनता है। दूसरी प्रणाली में यह गुण है कि प्रधान ध्येय के लिए श्रेष्ठ प्रणाली का उपयोग करते हुए हर समय इस मध्यम प्रणाली का उपयोग किया जा सकता है। यह प्रणाली श्रेष्ठ प्रणाली पोषक है। अतः जीवन में श्रेष्ठ और मध्यम दोनों प्रणालियों का सामंजस्य जीवन सफलता का बड़ा साधन है। तीसरी प्रणाली श्रेष्ठ है पर हर स्थान पर उपयोगी नहीं। मध्यम प्रणाली गौण है पर हर जगह सहायक। तीसरी प्रणाली जीवन-संघर्ष में विशाल शक्तिशाली टैंक है पर वह जीवन की गलियों में रक्षा नहीं कर सकती है। मध्यम प्रणाली रिवाल्वर है जो हर स्थान में अल्पपरिमाण में हमारी आत्मरक्षा कर सकती है।

शोषण

महानों का सहारा उनकी महान कृति ही हो सकती है। महान कार्य में लगे हुए की यह आशा या अपेक्षा कि अन्य सब उसकी सेवा करें, सामाजिक औचित्य के भार से दबे हुए निर्बलों पर प्रभुत्व है या भावना के पवित्र और बलशाली बन्धनों से आकर्षित आत्मीयों का बे-मालूम सूक्ष्म शोषण है।

राजकीय स्वतन्त्रता

राजकीय स्वतन्त्रता का प्रथम हिस्सा है उसकी प्राप्ति और दूसरा हिस्सा है उसकी व्यवस्था, उपभोग ।

०

देश जितना स्वावलम्बी उतना ही वह बलवान देश, जितना परावलम्बी उतना ही वह निर्बल ।

०

भारत ने तत्वों का आदर किया पर व्यवहार की अवहेलना की । परिणाम-स्वरूप चीन ने हम पर आक्रमण किया, हम उसके प्रतिकार में असफल रहे और अपनी रक्षा के लिए दूसरे देशों का तत्क्षण सहारा लेना पड़ा । अन्यों की कृपा से हम अपने राष्ट्र की रक्षा कर सके । हमारा रक्षा का क्षेत्र हमारे १७ वर्षों के जमा-खर्च में घाटे का क्षेत्र रहा, यह निर्विवाद है ।

०

हमारा वर्तमान कार्य है, शासन पवित्र हो, जनता का स्तर ऊँचा हो और नई मानवता और राष्ट्रशक्ति-निर्माण के क्षेत्र में यह प्राचीन भारत वर्तमान युग में किसी से पीछे न रहे, यह आकांक्षा न्याययुक्त और उचित है ।

अणुबम

अणुबम का निर्माण, चीनी आक्रमण की सम्भावना, इसका प्रतिकार राष्ट्रीय रूप में करना है तो वह प्रतिकार से ही सम्भव है । किसी खास व्यक्ति की तुलना सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में नहीं हो सकती । जिन किन्हीं व्यक्तियों का अहिंसा के ऊपर सीमा से अधिक विश्वास है और अपने विश्वास में वे सीमा लाँघ मानसिक सन्तोष में विचरण करते हैं, उनका आदर करते हुए हम बहुत निश्चित रूप से यह कहना चाहते हैं कि भय और निर्भयता से अणुबम का जो व्यापक सम्बन्ध है उसका निर्भय वृत्ति से अवलम्ब कर प्रतिकार की शक्ति का निर्माण करने की क्षमता प्राप्त की जाए, यही है तत्व और यही है व्यवहार ।

निरस्त्रीकरण

चारों ओर चर्चा है, पर निरस्त्रीकरण हुआ नहीं। नेता चर्चा करते हैं। जनता आवश्यकतानुसार सेना में भरती होती है। युद्ध में नेता की अपेक्षा जनता का अधिक भाग। जन-जीवन का मूल्य कम। गरीबी, अज्ञानता इसका परिणाम- जीवन का मूल्य जानते नहीं। गरीब जब आत्मसम्मान समझेगा वह अपने जीवन का मूल्य जानेगा। सारी मानव जनता एक है, सबका सुख दुःख साथ है और शान्ति में ही साधारण जीवन का सच्चा विकास है, इस तत्व का अवलम्ब करेगा तब तब सेना में भरती नहीं होगा। मानव विनाश-कला नहीं सीखेगा। निर्माण-कला में प्रगति करेगा और सुखी होगा।

भूदान

आचार्य विनोबाजी ने अपनी शक्ति जनता के गिरे हुए या गिरते हुए स्तर को उठाने की अपेक्षा साधारण काम में समर्पित कर दी और वह कार्य है भूदान यज्ञ। भूदान का कार्य अपना कुछ स्थान रखता है पर इस आन्दोलन से जनता में कोई नैतिक शक्ति निर्माण नहीं हुई, प्रत्युत हमारी मान्यता है कि भूदान आन्दोलन ने सम्पत्ति के कम होने वाले प्रभाव को कुछ अंश में पुनःस्थापित करने का कार्य किया है।

वर्तमान सभ्यता

आज की विश्व परिस्थिति की सर्वव्यापी माँग नवनिर्माण की है। भविष्य-निर्माण के लिए वर्तमान की वास्तविकता का अवलोकन और अध्ययन आवश्यक है। वास्तविकता की माँग है कि हम प्रामाणिकता के साथ हमारे चारों ओर घटित होने वाली स्थिति का अवलोकन करें—केवल हमारे देहात, हमारे शहर, हमारे राष्ट्र की ही नहीं, पर सम्पूर्ण विश्व की।

०

आज की सभ्यता का बहुतांश भावनाओं पर अवलम्बित है। मानव का

जीवन यदि विकसित होना है, सुखी और समृद्ध होना है, उसे शान्ति मिलना है, और विभिन्नता से ऊपर उठना है तो इस बात की आवश्यकता है कि भावना का स्थान बुद्धि ले। आज की संस्कृति का तकाज़ा है कि जीवन बुद्धिमय हो और बुद्धि के आलोक में नव विश्व का निर्माण हो।

०

मानव जीवन में भावना और विचार इन दोनों गतियों का संगम है और इन गतियों की विकसित शक्ति मानव की प्रगति और महानता का लक्षण है।

दोनों गतियों की शक्ति का दर्शन के मानव विचारों में और कृति में होता है। इन दोनों के बीच मानव का जीवन झूलता है। मानव जीवन का झूला आदर्श की ओर बढ़ता है और व्यवहार की शृंखला उसे थामकर शक्ति प्रदान करती है। गति में झूले की उपयोगिता है और स्थायित्व में उसकी उड़ान शक्ति। इन दोनों के अवलम्ब में मानव जीवन के झूले का आनन्द है।

विचार एवं कृति

विश्व को आज उपदेशक की नितान्त आवश्यकता है, उन उपदेशकों की जिनके जीवन में उपदेश उतरा है और कृति में ढला है। अतः हर उपदेशक को अपने जीवन को तौलना है और फिर उपदेश देना है निरर्थक उपदेश व्यक्ति की निर्बलता है और समाज और राष्ट्र की हानि। आज चारों ओर इस निर्बलता के दर्शन हैं।

०

महापुरुषों के जीवन का अवलोकन इस बात का साक्षी है कि महानता की शक्ति प्रधानतः तीन क्षेत्रों में क्रियान्वित होते दिखाई देती है।

०

मानव-जीवन-सरिता में विचार एवं कृति की धारा सतत प्रवाहित है। एक वे महापुरुष होते हैं जो बहती हुई धारा को त्याग नई विचारधारा निर्माण करते हैं। दूसरे वे महापुरुष होते हैं जो बहती धारा में से अन्य धारा का प्रवाह प्रवाहित करते हैं। तीसरे वे होते हैं जो धारा को क़ायम रखते हुए उसमें आई बुराइयों का परिमार्जन करते हैं।

प्रथम महापुरुष महान निर्माता है, द्वितीय महापुरुष जीवन को कुछ अंश में नया मोड़ देते हैं। और तीसरे वर्तमान में सुधार का कार्य करते हैं।

मद्यपान

मद्यपान विष है तथा मद्यनिषेध अमृत है। मानवीय विकास के क्षेत्र में मद्यनिषेध सब से बड़ा सम्मानित सुधार है। मद्यपान के अभिशाप से सुधार के सब उपाय असफल हो जाते हैं। अतः मद्यनिषेध अत्यन्त आवश्यक है। इन्हीं उच्च विचारों का आधार लेकर, जनसेवा की भावना से प्रेरित होकर और राज्यकोष के लिए दूषित धन प्राप्त करने के सारे प्रलोभनों को त्याग कर मध्यप्रदेश सरकार ने उत्तरोत्तर मद्यनिषेध की नीति अपनाई है।

हिन्दी भाषा

हिन्दी भाषा आज तीन क्षेत्रों में कार्य करती है, कुछ प्रदेशों के निवासियों की वह मातृभाषा है। अंग्रेजी राज्य के काल में ही उसने इस देश की राष्ट्र-भाषा का स्थान प्राप्त कर लिया था। इस देश में यदि अन्तर्प्रान्तीय कोई भाषा थी और उसके प्रति सारे देश का ममत्व था तो वह हिन्दी ही थी। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् भारत ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के आसन पर आसीन किया और आज वह देश की राज्यभाषा भी हो गई है। इस प्रकार हिन्दी के तीन रूप हैं, प्रादेशिक भाषा, राष्ट्रभाषा और राज्य भाषा। इन सारे क्षेत्रों का भार वहन करने का महान उत्तरदायित्व हिन्दी भाषा पर आ गया है, और समस्त भारत-वासियों का कर्तव्य है कि वे हिन्दी को इस योग्य बनाएँ कि वह इस देश की सच्चे अर्थ में राष्ट्रभाषा और राज्यभाषा बने।

०

साधारणतः हिन्दी भाषा-भाषी जब हिन्दी की बात करते हैं तो वे हिन्दी को राष्ट्रभाषा इस गौरवपूर्ण नाम से सम्बोधित करते हैं। मैं उस दिन की राह देख रहा हूँ जिस दिन सही मायने में हिन्दी इस देश की राष्ट्रभाषा होगी।

राष्ट्रभाषा का अर्थ है वह भाषा जिस भाषा में समस्त राष्ट्र बोलता हो, राष्ट्र की शिक्षा का माध्यम हो और राष्ट्र का राज्य-कारभार उस भाषा में चलता हो। जिस भाषा में ये तीनों गुण हों, वह पूर्णतया देश की राष्ट्रभाषा कहलाने योग्य होती है। इस दृष्टि से हम हिन्दी के स्थान को देखें। जहाँ तक जनता की बोलचाल की भाषा का सवाल है, हिन्दी यद्यपि सारे राष्ट्र की बोलचाल की भाषा नहीं है, तथापि व्यापक रूप में यदि समस्त राष्ट्र में किसी भाषा द्वारा काम चल सकता है तो वह हिन्दी भाषा द्वारा। सारे देश में सब से अधिक बोली जाती है तो वह हिन्दी भाषा ही। इस नाते हिन्दी भाषा इस देश की व्यापक-जन-भाषा है और राष्ट्रभाषा का वह गुण उसमें है। परन्तु यह आज सारे देश में शिक्षा का माध्यम नहीं है और सारे प्रदेशों का राज्य भी उस भाषा में नहीं चलता है। तब फिर आज हिन्दी का कौनसा स्थान है, इसको समझ लेना आवश्यक है। हमारे संविधान में हिन्दी को संघ की राज्यभाषा स्वीकार किया है। साथ ही १४ भाषाओं को अन्य भाषाओं की सूचि में स्वीकृति दी है। अतः इस देश के भाषा क्षेत्र में हमारे संविधान ने हिन्दी को राज्यभाषा के रूप में और अन्य १४ भाषाओं को प्रादेशिक भाषाओं के क्षेत्र में मान्यता प्रदान की है। इस मान्यता के बीच हमें कार्य करना है और भाषाओं का समन्वय स्थापित करना है।

खेती का बोझ

चारों ओर खेती का बोझ कम करने की बात है। इसके दो अर्थ हो सकते हैं। (१) खेती पर उदर निर्वाह यानि अन्न, वसन की आवश्यकता। (२) आजीविका के लिए खेती पर काम करना। प्रथम अर्थ से तो बोझ कम हो नहीं सकता। देश में जितने व्यक्ति हैं चाहे किसी उद्योग में लगे हों उन्हें अन्न-वस्त्र तो खेती से ही प्राप्त करना होगा। इस अर्थ में सम्पूर्णतः जनता खेती पर निर्भर रहेगी। दूसरे अर्थ में आजीविका के लिए कमाई अन्य उद्योगों से की जाए, यह हो रहा है। खेतों के अलावा देहातों में अन्य उद्योग-कार्य आदि से आजीविका का साधन किया जाता है पर इसका यह अर्थ होगा कि खेती पर काम करने वालों की संख्या कम होगी। वेतन बढ़ेगा। खेतों का माल महँगा होगा, उसके साथ अन्य माल भी महँगा होगा। इस पहेली का निवारण ही देश की आर्थिक समस्या का सच्चा हल है।

समाजवाद, साम्यवाद तथा सर्वोदयवाद

समाज के नव निर्माण के लिए आज ये तीन वाद प्रधान हैं। प्रथम दो का जन्मदाता मार्क्स और तीसरे के गाँधीजी माने जाते हैं। सारे संसार में प्रथम दो वाद हैं। भारत में तीनों वाद हैं। प्रथम दो का भविष्य दिखाई देता है, पर तीसरे वाद का नहीं। वर्तमान युग में किसी तत्व का पालन राजसत्ता के द्वारा ही हो सकता है। प्रथम दो वादी राजसत्ता शासित करते हैं। सर्वोदयवादी इस मार्ग से नहीं जा रहे हैं। नैतिक संगठन विचारधारा निर्माण करने का कुछ कार्य कर सकते हैं, पर व्यावहारिक संपूर्ण सफलता असम्भव है। धार्मिक संगठन, ग्रामदान, भूदान आदि उदाहरण समक्ष हैं।

समाज और समाजवाद

समाज में आज समाजवाद की बातें प्रचलित हैं, पर उससे जिस प्रजातन्त्र की स्थापना होगी वह व्यक्ति के बलिदान पर प्रतिष्ठित होगा। उसमें हमारी मानवता के नाश का ख़तरा है। इसलिए हमारा ध्येय केवल आर्थिक ही नहीं नैतिक भी होना चाहिए।

परिश्रम का मूल्य

मानव के बाजार में परिश्रम बिकता है। क्षुधा खरीदी जा सकती है। कला का मूल्य है और सम्पत्ति का सौदा। इसी के चारों ओर धर्म-चक्र घूमता है। मानव भ्रमित है। राज-सत्ताएँ चलती हैं। भिन्न-भिन्न रूपों में उसका दर्शन होता है। मैं तो मानता हूँ कि प्रकृति का ही दूसरा नाम सम्पत्ति है। दुनिया को ठीक समझो, तभी जीवन के सही केन्द्र का अवलोकन कर सकोगे।

वैधव्य

स्त्रियों को साध्वी होने का अधिकार देकर हमने मान लिया कि जैन समाज

में स्त्रियों की स्थिति बहुत ऊँची है परन्तु आज जैन महिला वैष्णव महिला की अपेक्षा कहीं अधिक घर की बंदिनी है। इसलिए हमें धर्म के साथ स्त्री जाति के विकास और मुक्ति की भावना को भी जोड़ना है।

पर्दा

पर्दा हमारे सारे समाज का अभिशाप बना हुआ है। स्त्रियों की गुलामी सारे राष्ट्र की गुलामी है। कई बार तो मेरे मन ने चाहा है कि सारे देश के लिए क़ानून बनाकर हिन्दू स्त्रियों का घूंघट निकालकर घूँमना दण्डनीय कर दिया जाए।

बौद्धिक दासता

भारत की आज की स्थिति में जो हवा बह रही है उसमें स्वतन्त्र विचारों का कम स्थान है। और आज का साहित्य शासनाधीन बनता जा रहा है चाहे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष।

अनुशासन

जीवन में अनुशासन या कानून-पालन अत्यन्त आवश्यक है। उच्छृंखलता जीवन में विकास के लिए हानिकर है। उच्छृंखलता से गुलामी हेय है। उच्छृं-लता से मानव का निर्माण होना सम्भव है पर गुलामी से कुछ निर्माण नहीं हो सकता। मानसिक गुलामी अधिक हीन है। ★

बिहारी-चित्रावली

माली

शहरसे दूर एक निर्जन सुंदर उद्यानमें एक मध्यम उमरका माली, जिसका शरीर सुदृढ है, जिसके पूरे कपड़े नहीं है, एक नाजुक फूल वृक्षको जल सींचता हुआ, मधुर संगीतकी तानमें लगा हुआ है। मैं नजदीक पहुंच गया। वह अपने कार्यमें इतना तल्लीन है कि मेरे आनेको उसे मालूम ही नहीं है। वह एकाग्र है। अपने वृक्षके, अपने फल-फूलके विकासमें इतना लीन है कि सारी दुनियाके साथ वह अपने आपको भी भूल गया है। उसको यह अप्रतिम संगीत मानो निर्माणताकी तल्लीनताका साक्षात्कार हुए हैं। उसकी इस तानने कुछ भी वक्त मैं चकित और कुंठित सा ही रह गया। पर विचार प्रवाहमें बह गया।—

“यह माली इस कार्यका मालिक नहीं। अपने मालिकके लिये यह रात-दिन इसे तैयार किया, पर इस समय न वह अपने मालिकके अस्तित्वका ध्यान रखता है और न अपने उदरनिर्वाह कार्यकी याद करता है। वह अपने निर्माण कार्यमें लिप्त है और शेष सब भूल गया है। यह सच्चा अनासक्त कर्मी है। मालिकके काम

बियाणीजी का हस्तलेख

सौ० सावित्रीदेवी बियाणी एवं ब्रजलाल बियाणी